लोक धारा-1

डॉ. महेश 'दिवाकर'
डी-लिट्०

'लोक धारा-१

(डॉ॰ महेश 'दिवाकर' के दोहे)

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'
डी॰लिट्॰

विश्व पुस्तक प्रकाशन
नई दिल्ली

' लोक धारा-१ '

(डॉ॰ महेश 'दिवाकर' के दोहे)

ISBN: 978–81–89092-83-2

प्रकाशक : विश्व पुस्तक प्रकाशन
304-ए, बी॰/जी॰-6, पश्चिम विहार,
नई दिल्ली-63, भारत

प्रकाशन वर्ष : 2018 ई॰
मूल्य : ₹ 250.00 मात्र
आवरण पृष्ठ : डॉ॰ ऋजु पंवार, पी-एच॰डी॰ (अंग्रेजी, हिन्दी)
शब्द संयोजन : क्रियेशन प्रिंटिंग सर्विसेज़, पार्श्वनाथ प्लाजा-II,
देहली राजमार्ग, मुरादाबाद (उ॰प्र॰) भारत
मुद्रक : आर॰के॰ ऑफसेट्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

डॉ० ... आर्य, बिजनौर
की ... सादर भेंट–
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

अपनी बात

'लोक धारा–1' आपके कर–कमलों में भेंट करते हुए असीम हर्ष की अनुभूति हो रही है। इस काव्यकृति में मेरी पूर्व प्रकाशित काव्य कृतियों – **'भाव सुमन' (1996), 'पथ की अनुभूतियाँ' (1997), 'विविधा' (1999), 'यूवको सोचो!' (2003), 'सूत्रधार है मौन' (2007), 'रंग–रंग के दृश्य' (2009), 'नया भारत' (2012), 'हिन्दी की मुस्कान' (2018), 'फिर खिलेंगे फूल' (2018)** में प्रकाशित समग्र दोहों को सँजोया गया है। अर्थात् **'लोकधारा–1'** विशुद्ध रूप से सम्पादित एवं प्रकाशित मेरे दोहों का विशद संग्रह है जिसमें लगभग 6480 दोहे समाहित हैं।

मेरी हार्दिक इच्छा थी कि मेरे अब तक प्रकाशित समग्र दोहे एक ग्रन्थावली के रूप में आ जाएँ, क्योंकि समय–समय पर जो काव्य कृतियाँ प्रकाशित हुई, वे अब समाप्त प्रायः हो चली है। इस बीच यदि कोई साहित्यकार, हिन्दी प्रेमी, हिन्दी सेवी, हिन्दी आचार्य, हिन्दी के शोद्यार्थी आदि मुझसे कोई कृति की प्रति माँगते, तो मुझे उन्हें मना करते हुए बड़ा ही संकोच होता था। अस्तु! इसी संकोच ने **'लोकधारा – 1'** को जन्म दिया।

वस्तुतः इसी क्रम में गीत, कविता, प्रबन्धकाव्य, मुक्तक, संस्मरण, यात्रा–वृत्त, साक्षात्कार, निबन्ध आदि विधाओं को आधार मानते हुए **'लोकधारा'** के अन्य कई अंक–विशद ग्रन्थावली के रूप में आपको देखने मिलेंगे। बस सफलता हेतु आपकी अमोघ शुभकामनाओं की अपेक्षा सदैव की तरह रहेगी।

हाँ, यह भी शाश्वत सत्य है कि मेरे आराध्य प्रभो श्री राम जी की कृपा और माता सरस्वती जी अनुकम्पा के बिना कतई कुछ भी संभव नहीं है। उनकी कृपा का यह सारस्वत प्रसाद साहित्य–जगत को जनकल्याणार्थ समर्पित है।

सद्भावनाओं सहित!

भारतीय स्वतंत्रता दिवस–2018

विनीत

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'
डी॰लिट्॰

अनुक्रमणिका

भाव सुमन

अपनी बात

अपने प्रथम दोहा–संग्रह 'भाव–सुमन' को आपके कर–कमलों में सौंपते हुए अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। यह यथा नाम–तथा गुण का प्रतीक है। इसकी रचनाएँ मानवीय मूल्यों की धरोहर हैं। मैं एक शिक्षक हूँ और कृष्क–पुत्र भी, दोनों की भूमिका सामाजिक है। दोनों ही समाज का निर्माण चाहते हैं। मूल्य आधारित समाज बने, यही मनुष्य के जीवन का लक्ष्य होता है। इस संग्रह की रचनाएँ अपने पाठकों की यही सन्देश दे रही हैं। अधिक क्या कहूँ – इन रचनाओं के बारे में आपकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

मैंने आम बोलचाल की भाषा–शैली में अपने मन की अनुभूतियों को इस संग्रह में प्रस्तुत किया है अर्थात् भाषाई बनावट इस संग्रह की रचनाओं में नहीं है। सरलता, सहजता और मधुरता से भरी गॉव की आम आदमी की भाषा की शब्दावली भी इसमें आ गयी है। इसी कारण इस संग्रह की रचनाओं की भाषा आमबोल की हिन्दी ही है। वैसे भी मुझे भाषा में बनावटीपन कतई पसन्द नहीं है। हम जैसे हैं, वैसा ही क्यों न बोलें? और वैसा ही क्यों न लिखें। भाषा की दृष्टि से मुझे कबीर, तुलसी और सूरदास की त्रिवेणी बहुत पसन्द है। इन कवियों की भाषा–शैली ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। अपनी भाषा–शैली के कारण आज भी ये कवि जन–जन के कण्ठहार बने हुए हैं। इनकी रचनाओं में भारत झलकता है।

वस्तुतः इस संग्रह–**'भाव–सुमन'** की दोहा–रचनाओं ने आपको किंचिद रूपेण भी प्रभावित किया, तो मेरा श्रम–सार्थक हो जायेगा।

आपकी प्रतिक्रिया मेरा उत्साहवर्द्धन करेगी। मॉ सरस्वती की प्रेरणा के ये **'भाव–सुमन'** आपके कर–कमलों में सादर समर्पित हैं। अस्तु!:

मॉ वाणी! कृपा करो, रहे न मन में घात।
काव्य–साधना हो सफल, ऐसा वर दो मात।।

परहित, पर–उपकार में, जीवन आये काम।
रोम–रोम में 'राम' का, सदा रहे माँ! नाम।।

8 मार्च, 1996

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

माँ सरस्वती के नाम

|| 1 ||

हंसवाहिनी! दो मुझे, प्रतिभा का उपहार।
मानवता का कर सकूँ, माँ! पल-पल उपकार।।

|| 2 ||

तेरी कृपा से इला! किला फतह हो जाय।
सिर पर रखतीं कर-कमल, मनुज अमर हो जाय।।

|| 3 ||

माँ वाणी! वरदान दो! रखलो! सुत की लाज।
मानव-सेवारत रहूँ, हो परहित में काज।।

|| 4 ||

माँ वाणी! कृपा करो! रहे न मन में घात!
काव्य-साधना हो सफल, ऐसा वर दो! मात।।

|| 5 ||

हमने देखे जगत में, बड़े-बड़े धनवान।
जिसने पूजी सरस्वती, मिला उसे सम्मान।।

शिव के नाम

|| 6 ||

'ॐ नमोः शिवाय' का, जपो निरन्तर मंत्र।
जगे-माया ब्यापे नहीं, रहें निरर्थक तंत्र।।

|| 7 ||

चाहें बोलो 'राम' तुम, चाहे 'शिव', 'घनश्याम'।
राम-श्याम-शिव एक हैं, मन के पावन धाम।।

|| 8 ||

श्रद्धामय विश्वास ही, तुम संग भोलानाथ!
तुम्हें, तुम्हारे रूप को, सदा नवाता माथ।।

|| 9 ||

सकल जगत में हो रहा, सबद-कीर्तन खूब।
भाव-सुमन की अर्चना, करूँ समर्पित दूब।।

|| 10 ||

तन-मन-धन कुछ भी नहीं, सब कुछ तेरे हाथ।
तुम चाहे जैसे रखो, बुरा-भला सब साथ।।

|| 11 ||

तुम से जब-जब भी हुआ, बाबा! पल-भर दूर।
तब-तब छूटे आसरे, बहुत हुआ मजबूर।।

|| 12 ||

पल-पल ब्याकुल हो उठे, माँ बिन बाल-मराल।
बाबा! तेरे दरश को, तरस रहा यह लाल।।

|| 13 ||

नहीं वंदना जानता, पूजा - भोलेनाथ!
चरण-कमल में शीश है, बाबा! रख दो हाथ।।

|| 14 ||

पल-पल मन सधता रहे, प्रीत-डोर के संग।
जैसे अम्बर में उड़े, डोरी बंधी पतंग।।

|| 15 ||

पूजा - अर्चन - वंदना, क्या काशी - कैलाश।
जब तक मन निष्ठा नहीं, जप-तप सब उपहास।।

|| 16 ||

मैं हूँ, तू है, और भी, जग में कितने भूप।
हर कण-कण में रम रहा, बाबा! तेरा रूप।।

|| 17 ||

भटक रहा इस दौर में, पग-पग पर इन्सान।
बाबा! हम सब बाबरे, कर दो अब कल्यान।।

राम के नाम

|| 18 ||

वदन-सदन मन बाबरे! कैसे दूँ मैं छोड़।
ताके भीतर राम हैं, वासे मेरो जोड़।।

|| 19 ||

हृदय के घट में भरा, राम-नाम का नीर।
राम! सभी हरनी पड़े, मेरी जीवन-पीर।।

|| 20 ||

कितनी करी उपासना, मिले न अब तक राम।
कलियुग के इतिहास में, लिखवालो प्रभु!नाम।।

|| 21 ||

मेरे मन-मन्दिर बसा, तेरा पावन रूप।
मेरे जीवन-देश के, तुम ही केवल भूप।।

|| 22 ||

जबसे जाना है तुझे, मन भटका है नाय।
पल-पल रहता बावरा, फूला नहीं समाय।।

|| 23 ||

कितना तुमसे नेह है, करो न इसकी जाँच।
प्रीत-कसौटी पर कसे, आये तुम पर आँच।।

|| 24 ||

तुमसे साँची लौ लगी, तुम जीवन आधार।
मिल जाओगे एक दिन, मेरे प्राणाधार।।

|| 25 ||

चमन-चमन, हर सुमन में, तेरो रूप लखाय।
बलिहारी उस रूप की, मन-मयूर हरषाय।।

|| 26 ||

घर वह घर होता नहीं, जिसमें रमें न राम।
सदन राम का देखकर, तन-मन हो अभिराम।।

|| 27 ||

ऐसा कोई है नहीं, राम-नाम का मीत।
निश्छल मन से जो करे, कमल-नयन से प्रीत।।

|| 28 ||

सहज भाव से कर अरे! जग में सारे काम।
पता नहीं किस काम से, तुम पर रीझें राम।।

|| 29 ||

प्रीत अनूठी जुड़ गंयी, समा गयी उर-धाम।
रोम-रोम अब नाचता, ले-ले तेरा नाम।।

|| 30 ||

सोते-चलते-बैठते, और करे जब काम।
जपे 'राम' का नाम जो, पाता पावन धाम।।

|| 31 ||

पैदा तूने कर लिया, बहुत जगत में नाम।
बंदे! परहित कर्म कर, बसते जिसमें राम।।

|| 32 ||

कहाँ-कहाँ तू खोजता, धनिकों के धन-धाम।
निर्धन की कुटिया बसें, सबके दाता 'राम'।।

|| 33 ||

सब जीवन निष्फल गया, पूरा हुआ न काम।
मन साँचा पाया नहीं, मिला न मेरा 'राम'।।

|| 34 ||

अंतकाल तक आ गया, अहं न आया काम।
रावण जब चलता बना, लिया 'राम' का नाम।।

|| 35 ||

कहाँ-कहाँ तू खोजता, बहुत कठिन है काम।
हृदय! तू तो बावरा, तेरे भीतर राम।।

|| 36 ||

राम-लखन-सीता सहित, शिव-गौरा-हनुमान।
राधा-माधव उर बसो, करो जगत कल्यान।।

|| 37 ||

रामायण-गीता दोउ, जग में ग्रंथ महान।
नित अनुशीलन जो करे, टिकता नहीं गुमान।।

केशव के नाम

|| 38 ||

सारा जीवन कर दिया, केशव! तेरे नाम।
चाहें इसे संवार ले, चाहें कर नीलाम।।

|| 39 ||

जीवन के अभिलेख में, भये अनेकों काम।
पन्ने-पन्ने पर लिखा, मनमोहन का नाम।।

|| 40 ||

घंटा मन्दिर में बजे, नाद होय चहुँ ओर।
चरणों की रज दीजिये, ओ माखन के चोर।।

|| 41 ||

तुम बिन माधव! कौन है? जो देता हो साथ।
सदा तुम्हारे सामने, झुका हमारा माथ।।

|| 42 ||

बहुत किये अपराध हैं, जीवन हुआ पहाड़।
अब तो खाली हाथ हूँ, खोलो नाथ! किवाड़।।

|| 43 ||

अरे प्राण! उर की व्यथा, कौन सुनेगा आय?
तुम बिना मोहन! कौन है? जो सुनकर पतियाय।।

|| 44 ||

मेरा शीष न झुक सका, कभी न माने हार।
पर, गिरधर के सामने, सदा रहा लाचार।।

|| 45 ||

दीपक जैसे ही जले, रहे नहीं अंधियार।
मुरलीधर उर में बसें, खुलें ज्ञान के द्वार।।

|| 46 ||

मन्दिर मन-अनुकूल हो, जिसे देख मन भाय।
हरि का मन्दिर देखकर, मन मन्दिर बन जाय।।

|| 47 ||

मिले निमिष मुस्कान तो, होगा बेड़ा पार।
और नहीं कुछ चाहिये, मेरे प्राणाधार।।

|| 48 ||

इस दुनिया के लोग सब, बहुत गये बौराय।
दुनिया को ब्रज-सी खुशी, श्याम! देउ लौटाय।।

|| 49 ||

जब तक मुझसे दूर थे, तब तक रहा अनाथ।
अब तेरे आधीन हूँ, प्राण! प्राण के नाथ।।

|| 50 ||

मुझको तो तुमने लिया, हृदय नाथ! लगाय।
यदि छोड़ा मँझधार में, प्राण रहेंगे नायँ।।

|| 51 ||

प्राण! अरे तुम! प्राण हो, सारी दुनिया प्रेत।
तुम यह निश्चित जान लो, केवल तुमसे हेत।।

|| 52 ||

प्राण-प्राण में रम गये, रग-रग गये समाय।
देखूँ चारों ओर ही, जग प्रतिबिम्ब लखाय।।

|| 53 ||

वासुदेव नैनन बसें, हृदय हुआ पड़ाव।
जग चाहें कुछ भी कहे, छुटे नहीं लगाव।।

|| 54 ||

छवि नैनों में बस गयी, रग-रग प्रीत रमाय।
तुम-सा माधव कौन है? हृदय जहाँ समाय।।

|| 55 ||

निमिष झलक देखी प्रभो!, नैन सलौना रूप।
सखे! हृदय-प्रदेश के, बन बैठे तुम भूप।।

|| 56 ||

बीत गये पल प्यार के, रहे दिवस वे नाय।
गिरधर गोकुल छोड़कर, बसे द्वारिका जाय।।

|| 57 ||

माधव! मन मैला हुआ, छोड़ तुम्हारा द्वार।
लोक छोड़कर जा रहा, जाने जीत न हार।।

|| 58 ||

मोहन! मन बस में नहीं, चले हिरन की चाल।
कानन में उलझा फिरे, दुष्ट काल के गाल।।

|| 59 ||

श्याम! टूटते जा रहे, नेह-नियम-आचार।
पग-पग पलते देख लो! अविनय-अत्याचार।।

|| 60 ||

मेरे मन-मन्दिर बसा, तेरा रूप अनंग।
रोम-रोम अब पूजता, करता नित सत्संग।।

|| 61 ||

मन-कुसुमित, तन-जर्जरित, वृन्दावन चहुँ ओर।
तन-कुसुमित, मन-जर्जरित, श्याम मिलें किस छोर।।

|| 62 ||

प्रतिपल आती याद है, दिवस न बीते रैन।
श्याम! चन्द्र के दरश को, उर-चकवी बेचैन।।

|| 63 ||

अरे श्याम! कैसे भये, भली निभायी प्रीत।
पहले तो मन हर लिया, अब करते भयभीत।।

|| 64 ||

श्याम! प्रीत औ' मीत की, खूब करो पडताल।
जगत कसौटी दे बता, असल-नकली माल।।

|| 65 ||

माधव! हृदय हर लिया, अब कहते हो-'भूल'।
चटा प्रीत की लेहनी, धिक! चटवाते धूल।।

|| 66 ||

मेरा कुछ भी है नहीं, तन-मन-धन औ' धाम।
केशव! किस गुण पर करी, प्रीत हमारे नाम।।

|| 67 ||

मुझे नियति ने तो दिया, शोषण औ' उपहास।
माधव! जीवन-कुँज को, बना दिया मधुमास।।

|| 68 ||

मेरा तो निश्छल रहा, माधव! तुमसे प्रेम।
जैसा हूँ तेरा रहूँ, कभी न बिगड़े क्षेम।।

|| 69 ||

जाओ हमसे दूर तुम, अगर यही है चाह।
मोहन! हमको छोड़कर, कहाँ मिलेगी राह।।

|| 70 ||

आँखों में आँसू भरे, हृदय करे विलाप।
सारा तन-मन जल रहा, श्याम! हरो सन्ताप।।

|| 71 ||

रोम-रोम में लग रही, श्याम! भयंकर आग।
शिथिल गात सब हो गये, मुख से झरते झाग।।

|| 72 ||

श्याम निराले हो गये, क्षण-खुश, क्षण-बेचैन।
प्रीत-लोक में कर रहे, अरूण दिवस, नव रैन।।

|| 73 ||

श्याम! बुलाकर पास में, करते अतिशय क्रोध।
प्रभु! गोपी की प्रीत से, क्यों लेते प्रतिशोध।

|| 74 ||

दुनिया मरघट-सी बनी, सभी लोग अनजान।
मुझे नहीं अब चाहिये, श्याम! अलग पहचान।।

|| 75 ||

सूखा दरिया प्रीत का, मरूथल लगता खेत।
दूर-दूर तक दीखता, अब तो माधव! रेत।।

|| 76 ||

राधे! मन से दे रहे, श्याम तुम्हें उपहार।
उसको हँस अपनाइये, करो जगत उपकार।।

|| 77 ||

मन के मन में रह गये, दबकर मन के भाव।
मनमोहन आये नहीं, मन जाये कित ठाँव।।

|| 78 ||

माधव! मन पर चढ़ गयी, लोक-लाज की गर्द।
इसीलिये तो हो गयी, प्रीत आज की सर्द।।

|| 79 ||

बचा न कुछ भी शेष तो, मीत हुये नाराज।
गिरधर! तेरी छुप गयी, कहाँ मधुर आवाज।।

|| 80 ||

जबसे देखा श्याम-तन, बदल गयी है सोच।
प्रीत अनूठी जुड़ गयी, नयन हो गये पोच।।

|| 81 ||

श्याम! द्वार तेरे खड़ा, आस लिये दरवेश।
उलट दिया है नियति ने, जीवन का परिवेश।।

|| 82 ||

श्याम! बिना संघर्ष के, नहीं चाहिये जीत।
पीर जहाँ रहती नहीं, निष्फल है वह प्रीत।।

|| 83 ||

हँसते-हँसते सह लिये, माधव! अगणित घाव।
दर्द बहुत जग ने दिये, कभी न आया ताव।।

|| 84 ||

अमित प्रीत तुमसे मिली, बहुत मिला विश्वास।
श्याम! प्रीत-विश्वास में, कहाँ विरोधाभास।।

|| 85 ||

प्यार अमित जिसने दिया, करे वही उपहास।
मनमोहन! किसका करें, अब जग में विश्वास।।

|| 86 ||

दर्द बहुत तुमसे मिला, भूला सारी चाह।
गिरधर! तेरी प्रीत ने, बदली जीवन-राह।।

|| 87 ||

केशव! प्रीत न तोड़ना, दो मन चाहें शूल।
राधे को हर बोल हैं, ज्यों मधुबन के फूल।।

|| 88 ||

भला-बुरा कुछ भी कहो, सखा हमारे श्याम।
ऊधव! तुम तो प्रीत को, व्यर्थ करो बदनाम।।

|| 89 ||

नहीं भूल से भी किया, श्याम! कभी अपकर्म।
बदल गया व्यवहार क्यों? बदल गया क्यों धर्म।।

|| 90 ||

ऊधों! अब नीरस लगें, जीवन के व्यापार।
राधे बिन सूने हुये, जीत-सफलता-हार।।

|| 91 ||

तन-मन से करता रहा, केशव! तुमको प्यार।
तुम पल-पल देते रहे, मुझको पीड़ा-हार।।

|| 92 ||

माधव हमको ही करें, निश्छल मन से प्यार।
ऊधो! हम सब जानतीं, फिर क्यों माने हार।।

|| 93 ||

मुरलीधर! तुमको किया, सच्चे मन से प्यार।
बदले में आँसू मिले, दर्द-कसक उपहार।।

|| 94 ||

दूर रहूँ आता नहीं, माधव! मन को चैन।
आता हूँ यदि पास तो, होता उर बेचैन।।

|| 95 ||

जो कुछ मेरे पास है, सभी प्रीत-उपहार।
वरना, मैं किस योग्य हूँ, मोहन का उपकार।।

|| 96 ||

केवल अपनों ने किया, श्याम! हमें बदनाम।
दुनियावाले दे रहे, नये-नये अब नाम।।

|| 97 ||

केशव! जीवन में मिली, कभी न मुझको हार।
लेकिन, तेरे प्यार पर, जीत सदा दी बार।।

|| 98 ||

हृदय-सरवर जल जमा, देह-मीन अकुलाय।
श्याम! नेह-वर्षा करो, प्रणय-पथिक कुमलाय।।

|| 99 ||

कौन नजर मोहन! लगी, प्रीत करी स्वच्छंद।
तुम बिन तन-मन जल रहा, किस नृप का प्रतिबंध।।

|| 100 ||

युग बीते नैना जुड़े, अनुपम पाया प्यार।
कौन भूल गिरधर! हुई, मिली सजा में हार।।

|| 101 ||

माधव! तनिक विचारिये, कितना तुमसे प्यार।
लोक-लाज जाने नहीं, तुमसे करता प्यार।।

|| 102 ||

बार-बार क्यों नापते, श्याम! प्रीत की थाह?।
क्या मुखड़ा कहता नहीं, कितनी गहरी चाह।।

|| 103 ||

मन की कोमल भावना, प्रीत सघन विश्वास।
श्याम! कभी मत तोड़ना, इसमें जीवन-आस।।

|| 104 ||

निश्छल मन, जीवन सरल, सादा-कर्म-लिवास।
ऐसे मानव में सदा, माधव करें निवास।।

|| 105 ||

मेरे मन की हर दशा, जानों माखनचोर।
तुम्हें छोड़ देखा नहीं, कभी किसी की ओर।।

|| 106 ||

अपने मन का क्या कहें? तुमसे मोहन! हाल।
काल-कोठरी में पड़ा, कैदी ज्यों बदहाल।।

|| 107 ||

मन्दिर-मस्जिद-धाम में, पापी रहे अघाय।
ऊपर से पूजा करें, भीतर माल उड़ाय।।

|| 108 ||

सुमन-सुमन में फब रहा, अनुपम रूप अपार।
नमन! नमन! करुणाकरन! तेरा यह शृंगार।।

जगदीश्वर के नाम

|| 109 ||

जन्म हुआ क्या पास था, क्या कुछ है अब पास?
सब कुछ है जगदीश का, करता जग उपहास।।

|| 110 ||

दुनिया है अति बावरी, पैसा-भेंट चढ़ाय।
मन छोड़ा परदेश में, ठाकुर रही लखाय।।

|| 111 ||

धन से तो होता रहे, केवल तन अभिराम।
साँईं सेवा से मिले, मन को पूर्ण विराम।।

|| 112 ||

प्रीतम! तेरे प्राण के, प्राण रहे हैं ऊब।
देकर हाथ उबार लो!, प्राण गये हैं डूब।।

|| 113 ||

अपनी-अपनी रीति से, करते पूजा-दान।
सच्ची श्रद्धा के बिना, कहाँ मिलें भगवान।।

|| 114 ||

हृदय के अनुबंध को, तोड़ दिया क्यों नाथ?
जाने किस प्रतिबंध से, छोड़ गये हो साथ।।

|| 115 ||

जग में जितने कर्म हैं, बंधन कसें नवीन।
केवल प्रभु की भक्ति में, डूबे रहें प्रवीन।।

|| 116 ||

दर्द नहीं तू जानता, अरे! भले इन्सान।
दर्द मिलाता राम से, भाव बसें भगवान।।

|| 117 ||

कितनी ही उन्नति करे, जग में कोई देश।
सदा घमण्डी का किया, प्रभु ने नीचा वेश।।

|| 118 ||

कैसी करी कुरीति यह, छीन लिया सब चैन।
तुम सुखदाता प्रीति के, करो बहुत बेचैन।।

|| 119 ||

हृदय-मन्दिर में रखा, प्रणय-दीप जलाय।
प्राण! छोड़ जाऊँ कहाँ, बाहर बुरी बलाय।।

|| 120 ||

अब तो कुछ चिन्ता नहीं, मिले मुझे मन-मीत।
सारा जग मनहर लगे, अमर हो गयी प्रीत।।

|| 121 ||

फूलों बसी सुगंध है, फूलों बीच पराग।
तैसे ही उर में पगा, साँईं का अनुराग।।

|| 122 ||

मात-पिता-परिवार-जन, करते घोर विलाप।
उस ठाकुर के मर्म को, कौन सका है माप!!

|| 123 ||

तन-मन में जगदीश हैं, कर्म सत्य की छाँह।
उसका कुछ बिगड़े नहीं, जिस पर उसकी बाँह।।

|| 124 ||

उसका कोई रिपु नहीं, वह सबका है मीत।
उसे न भाता तोड़ना, जोड़े सबसे प्रीत।।

|| 125 ||

जगत-नियन्ता से बड़ी, नहीं विश्व में शक्ति।
वह सब सुनता-देखता, करले उसकी भक्ति।।

|| 126 ||

पग-पग पर ठोकर लगें, मुरझाते अरमान।
हृदय की आवाज को, तब सुनता भगवान।।

|| 127 ||

आम आदमी खोजता, दीन-बंधु को आज।
दीन-बंधु मिलते नहीं, हुये धनिक-सरताज।।

|| 128 ||

जितना बढ़ता स्वार्थ है, उतना बढ़ता भोग।
कर प्रभु की आराधना, शान्त होय सब रोग।।

|| 129 ||

कैसे-कैसे रच दिये, जगदीश्वर ने खेल।
बेटा पढ़कर फारसी, बेच रहा है तेल।।

|| 130 ||

चलते-चलते थक गये, दूर सजन का गाँव।
मंजिल कितनी दूर है, जहाँ पिया का ठाँव।।

|| 131 ||

घोर निराशा में पड़ा, सिसक रहा इन्सान।
कब तक अपने भक्त का, प्रभु! लोगे इम्तिहान।।

|| 132 ||

जीवन-पथ हीरा मिला, समझो! उसका मोल।
परमेश्वर ने जो दिया, बड़े बोल मत बोल।।

|| 133 ||

पता नहीं किस भूल की, सजा मिली भगवान।
पल-भर पहले थी कुशल, पल में निकले प्रान।।

|| 134 ||

प्रीतम तो हृदय बसा, तन से कोसों दूर।
नलिनी प्रीत न छोड़ती, भले कलानिधि दूर।।

|| 135 ||

पूजा- अर्चन- वंदना, जप- तप- व्रत- उपवास।
बिना समर्पण साधना, बन जाती उपहास।।

|| 136 ||

अमित पुण्य फलते तभी, मिलती है सौगात।
बलिहारी उस ईश की, दिया मनोहर गात।।

|| 137 ||

मानव-तन उपहार में, मिला तुझे इन्सान।
परहित को मत भूलना, परहित में भगवान।।

|| 138 ||

कितने सस्ते हो गये, कलियुग में भगवान।
होटल की मीनार पर, खड़े तने दरबान।।

|| 139 ||

इस बिगड़े परिवेश में, जब-जब पाया प्यार।
ईश्वर के अहसास से, खुशियाँ मिलीं अपार।।

|| 140 ||

हर कण-कण में छुप रहा, उसका तेज महान।
सेवा कर इन्सान की, मिल जायें भगवान।।

|| 141 ||

सकल विश्व में जा रहा, क्षण-क्षण विशद प्रकाश।
पल-पल देता जिन्दगी, ईश्वर का आभास।।

|| 142 ||

पूजा-जप-उपवास हैं, सतत साधना-कर्म।
भाव-भावना में पले, पल-पल प्रभु का मर्म।।

|| 143 ||

प्रियतम को पहचानते, कभी न बढ़ती बात।
हृदय को तो चाहिये, हृदय की सौगात।।

|| 144 ||

ओ धरती के देवता! किसने देखा तोय?
बीत गये युग खोजते, कहाँ गये तुम सोय।।

गंगा मैया के नाम

|| 145 ||

शुभे! सलौना रूप है, श्रीगंगा का नीर।
नित प्रति सेवन कीजिये, निर्मल बने शरीर।।

|| 146 ||

सुरसरि माँ का क्षीर है, पावन अमृत पान।
युग-युग से करती रही, जग को जीवन दान।।

|| 147 ||

कल-कल, छल-छल बह रहा, गंगा माँ का तोय।
माँ! चरणामृत चाहिये, उज्ज्वल जीवन होय।।

|| 148 ||

गंगा! तेरा नीर है, अमित अमिय की खान।
अन्तकाल मुख में पड़े, सहज निकलते प्रान।।

|| 149 ||

पतित पावनी गंग माँ!, तेरा निर्मल नीर।
अमित पुण्य प्राणी करें, तब पाता यह क्षीर।।

|| 150 ||

माता! तुमको देखकर, मन होता अभिराम।
अनुपम मिलती शान्ति है, तन पाता विश्राम।।

|| 151 ||

जहाँ-जहाँ सुरसरि गयी, हरियाली हर छोर।
शस्य श्यामला है धरा, खुशहाली चहुँ ओर।।
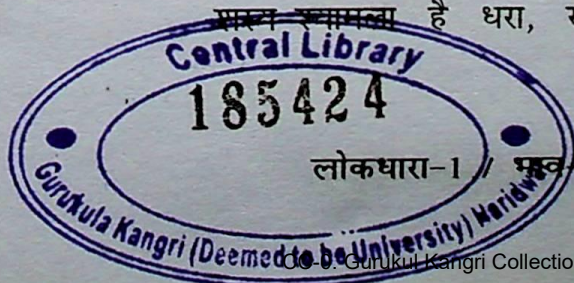
|| 152 ||

गंगा पावन धाम हैं, ज्यों धरती पर स्वर्ग।
माता! तेरी गोद में, स्वर्ग और अपवर्ग।।

|| 153 ||

नर-नारी याचक बने, आते तेरे पास।
तू सबकी पूरण करे, मनोकामना खास।।

|| 154 ||

ऐसा कोई है नहीं, पापी औ' धर्मार्थ।
चरणों में पाया नहीं, माँ! जिसने पुरुषार्थ।।

|| 155 ||

शान्ति कहीं मिलती नहीं, मिथ्या हैं सब द्वार।
आते हैं माँ! पास में, सभी त्याग हरिद्वार।।

|| 156 ||

प्रतिपल रहता गंग-तट, अमित अनूठा दृश्य।
नहीं विश्व में आज तक, गंगा-सा सादृश्य।।

|| 157 ||

अखिल लोक में गंग माँ! अनुपम है पहचान।
तुम युग-युग से कर रही, जन-जन का कल्यान।।

|| 158 ||

माता! सारे लोक से, करना दूर अकाल।
मुझे नहीं कुछ चाहिये, जगहित करूँ सवाल।।

|| 159 ||

हे माँ! तेरा पूत हूँ, चरण-कमल का दास।
दूर मुझे मत कीजियो, रखियो अपने पास।।

|| 160 ||

धर्म-कर्म औ' पाप को, धारण करे समोद।
माँ! तेरे सब बाल हैं, सबको देती गोद।।

|| 161 ||

तेरे दर्शन से मिले, मन को अतिशय चैन।
सुरसरि! चरण पखारना, मन चाहे दिन-रैन।।

|| 162 ||

युग-युग से करती रही, सुरसरि! जग-उद्धार।
माँ! पूरण कर कामना, आय रहूँ हरि-द्वार।।

|| 163 ||

देवनदी - हरशेखरा - सुरसरि, गंग! प्रणाम।
भगीरथी-मंदाकिनी! जग पावन सब नाम।।

|| 164 ||

अमल, सुधा-सम गंग-जल, सुरसरि! तेरे धाम।
सहज भाव से कर रही, माँ! सेवा-निष्काम।।

|| 165 ||

क्रोध-ज्वाल नित बढ़ रही, अमित दर्प, अभिमान।
जन पीड़ित माँ! हो रहा, करो जगत कल्यान।।

|| 166 ||

सुरसरि! मैं विनती करूँ, तनज करो उपकार।
माँ! चरणों की धूलि में, बुला लेउ हरिद्वार।।

|| 167 ||

छोड़ तुझे जाऊँ नहीं, मात! किसी के द्वार।
तुम-सी माता त्यागकर, कहाँ मिलेगा प्यार।।

|| 168 ||

नर-किन्नर-मुनि-देव ने, युग-युग किया बखान।
सुरसरि! महिमा-रूप का, अकथनीय गुणगान।।

सदाचार

|| 169 ||

जग में रही उदारता, मंगलमय-वरदान।
आज हुई अभिशाप है, बदल गये प्रतिमान।।

|| 170 ||

प्रेम-दया-करुणा-क्षमा, मानवता के फूल।
स्वत्वहीन नर के लिये, रहे न इनका मूल।।

|| 171 ||

जो भी आया पास में, हमसे कुछ भी लेन।
हमने उसको दे दिया, ज्यों विधना की देन।।

|| 172 ||

मेरे क्या था पास जो, दिया उसी का कर्ज।
तुम कुछ भी समझो इसे, कर्ज कहो या फर्ज।।

|| 173 ||

हमने तो सीखा यही, धरती बड़ी महान।
धरती पर सबसे बड़ा, मानव का कल्यान।।

|| 174 ||

सहनशीलता मिट गयी, अब धरती से हाय।
मानव-धन अनमोल है, तिनका-सा उड़ जाय।।

|| 175 ||

मात-पिता जग में बड़े, दोनों देव महान।
इनकी पूजा जो करे, जाने उसे जहाँन।।

|| 176 ||

दीखे कहीं न दूर तक, सत्य-अहिंसा-प्यार।
इसीलिए मुश्किल हुआ, जीवन का व्यापार।।

|| 177 ||

दुनिया में दुःख हैं बहुत, लोग रहें बेचैन।
त्याग-प्रेम-सेवा-खुशी, इनसे मिलता चैन।।

|| 178 ||

हो जीवन में सादगी, पावन रहें विचार।
रखे धर्म में आस्था, उसका बेड़ा पार।।

|| 179 ||

भूख- प्यास- संतोष-गम, शरद- तपन- बरसात।
जितना सहता नर इन्हें, होता आत्म-विकास।।

|| 180 ||

त्याग-शील-गुण-धर्म-तप, करुणा-विद्या-दान।
हृदय में जिसके भरे, बन जाता भगवान।।

|| 181 ||

अब कैसे सबसे कहें, अपने मन की बात।
परदुःखकातरता कहीं, दीखे जगत न तात।।

|| 182 ||

सत्य कन्दरा में हुआ, बेतालों की बंद।
इसीलिए तो आदमी, आज हुआ स्वच्छंद।।

|| 183 ||

जग में मंत्र महान यह, भरो जगत में क्षेम।
अपनी चाहो जो कुशल, करो कुशल से प्रेम।।

|| 184 ||

आज आचरण हो गया, गणिकालय में बंद।
सजी जहाँ है गंदगी, ऊपर उड़े सुगन्ध।।

|| 185 ||

बोल प्यार के बोलिये, होवे खत्म विरोध।
कुशल-क्षेम ही पूछिये, मिट जाये गतिरोध।।

|| 186 ||

प्रेम-त्याग-करुणा-क्षमा-दया, धर्म के मूल।
सत्य-अहिंसा-दान को, बंदे! तू मत भूल।।

|| 187 ||

जग-जीवन निष्फल हुआ, रहे नहीं आचार।
प्रेम-दया-करुणा-क्षमा, हुये समर्पण भार।।

|| 188 ||

सुमन-सोम पर चढ़ गयी, स्वार्थ-कालिमा-कींच।
युद्ध इसलिये हो रहा, नर-निष्ठा के बीच।।

|| 189 ||

भूले-भटके, अंध को, पथ दिखलाता कौन?
यह नगरी शैतान की, अनचाहें सब मौन।।

|| 190 ||

अन्तिम यात्रा में कहें- "राम-नाम है सत्य"।
क्षण-भर तो डरते सभी, फिर सब करते नृत्य।।

|| 191 ||

प्रेम-दया-करुणा-क्षमा, जिस हृदय में नाय।
वे सूखे सर के सदृश, देख विहग उड़ जाय।।

|| 192 ||

यों तो मरते हैं सभी, करते-करते काम।
परमारथ पर जो टिका, रहता उसका नाम।।

|| 193 ||

बंदे! जब पैदा हुआ, क्या लाया तू साथ?
आया तो मुट्ठी भरी, जाये खाली हाथ।।

|| 194 ||

यश-वैभव रहता नहीं, याद रहें शुभ-कर्म।
प्राण निकलते देह से, साथ चलें निज धर्म।।

|| 195 ||

सब रह जाता है यहीं, धन-वैभव औ' बोल।
केवल जाता साथ में, धर्म-कर्म का मोल।।

|| 196 ||

जल से धोकर गंदगी, उज्जवल होता गात।
धर्म-कर्म के नीर से, मन-निर्मल हो तात!।

|| 197 ||

मैंने श्रम-संघर्ष से, प्राप्त किया है लक्ष्य।
जग में कुछ दुलर्भ नहीं, श्रम से मिले अलक्ष्य।।

|| 198 ||

श्रम-बिन कुछ मिलता नहीं, श्रम जीवन की शान।
श्रम के आगे हो गये, फेल सभी अनुमान।।

|| 199 ||

लोग बुराई में गड़े, करते ओछी बात।
मानवता रोती खड़ी, देख-देखकर घात।।

|| 200 ||

जीवन-घट में भर अरे!, सदाचार धनवीर।
'अधजल गगरी' से सखे! 'छलकत जावत' नीर।।

|| 201 ||

जग में अतिशय हो गये, धर्म-कर्म औ' भोग।
अपने-अपने छाछ को, मीठा कहते लोग।।

|| 202 ||

अपनी-अपनी हाँकते, करें परस्पर राड़।
घर-घर में भोगी हुये, घर-घर झुकता भाड़।।

|| 203 ||

जैसी जिसकी भावना, वैसा बने महान।
जैसे को तैसा मिले, जाने सकल जहाँन।।

|| 204 ||

आप भला तो जग भला, जन-जन कहता जाय।
बोया पेड़ बबूल का, आम कहाँ से खाय।।

|| 205 ||

हे नर! धन-मन-देह पर, करता क्यों अभिमान।
यह विनाश का मूल है, करे नहीं कल्यान।।

|| 206 ||

पर-पीड़ा समझी नहीं, खोज रहा मन-मीत।
सीखले! अश्रू पूँछना, उर उपजेगी प्रीत।।

|| 207 ||

बंदे! सुख को खोजते, बीत गया संसार।
पर-पीड़ा जानी नहीं, बढ़ता गया विकार।।

|| 208 ||

वृक्ष धरा के काटते, तुम्हें न आती लाज।
ये मानव के हैं सखा, करें जगत के काज।।

|| 209 ||

अगणित वृक्षों को किया, काट-काट कर खण्ड।
मीत! यही लेकर चलें, अंतकाल भुजदंड।।

|| 210 ||

दर्द मनुज के बाँटले, मत देखे सुख-धाम।
मिल जायेंगे एक दिन! तेरे मन के राम।।

|| 211 ||

तब तक ईश्वर है नहीं, जब तक़ सुख का राज।
पीड़ा से परिचय हुआ, सफल हुये मन-काज।।

|| 212 ||

जेठ-दुपहरी-सा लगे, इस जीवन का भार?
बिना धर्म-पतवार के, नाव खड़ी मँझधार।।

|| 213 ||

एक ओर अर्थी सजी, दुलहिन दूजी ओर।
अर्थी-डोली उठ रही, जीवन बड़ा कठोर।।

|| 214 ||

छोटे मुँह से कर रहे, बड़ी-बड़ी सब बात।
चार दिवस की चाँदनी, फिर अंधियारी रात।।

|| 215 ||

यंत्र-मंत्र-जनतंत्र से, जो चाहो कल्यान।
वसुधा पर सबका करो, निश्छल मन सम्मान।।

|| 216 ||

माला खूँटी पर टँगी, निगल गयी चुपचाप।
रक्षक जब भक्षक बने, क्या कर लेंगे आप।

|| 217 ||

अब शासन से मिल गयी, सबको भारी छूट।
वोट-नाम पर लूट है, लूट सके तो लूट।।

|| 218 ||

काव्य-कला-इतिहास का, केवल यही विचार।
अंतकाल शैतान भी, गया सत्य से हार।।

|| 219 ||

मिथ्या बड़बोला हुआ, सत्य हो गया मौन।
सदाचरण को पूछता, आज जगत में कौन।।

|| 220 ||

लोग सत्य तीखा कहें, लगता बड़ा कठोर।
सत्य कहें यदि प्यार से, करता भाव-विभोर।।

|| 221 ||

बिना व्यंग्य करते नहीं, इधर लोग कुछ बात।
व्यंग्य बिना पचती नहीं, कुछ की रोटी तात!।

|| 222 ||

व्यंग्य-बाण करता रहा, सदा अचूक प्रहार।
बरजाये बरजे नहीं, गये व्यंग्य से हार।।

|| 223 ||

वाणी औ' व्यवहार में, जब तक मेल न मीत!
तब तक पद-गरिमा नहीं, जग से मिले न प्रीत।।

|| 224 ||

बार-बार कर क्रूरता, फिर भी माँगे प्यार।
हृदय कितना क्रूर है? फिर भी चाहे प्यार।।

|| 225 ||

मुखिया बिन चलता नहीं, जैसे जग-परिवार।
तैसे बिन कर्तव्य के, असफल हैं अधिकार।।

|| 226 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, उर में सच्ची प्रीत।
धीर नहीं जो छोड़ते, मिलती उनको जीत।।

|| 227 ||

अब सज्जन की बात भी, सुनता कोई नाय।
जो सिर चढ़कर बोलता, काम सहज हो जाय।।

|| 228 ||

सच कहना अपराध अब, बदल गये हालात।
काँणे को काँणा कहो, करता है आघात।।

|| 229 ||

कड़ुवा-मिथ्या बोलना, चुगली-निंदा-काज।
दुष्टों के ढिंग बैठना, रहता धर्म न लाज।।

|| 230 ||

बड़े जनों की बात में, नहीं बोलना बीच।
कोई बाहर जा रहा, नहीं टोकना ठीक।।

|| 231 ||

संकटग्रस्त है आत्मा, करती कर्म फिजूल।
जितनी बढ़ती लालासा, उतने मिलते शूल।।

|| 232 ||

लोज-लाज अब है नहीं, सन्तानों के बीच।
बेशर्मी की चढ़ गयी, सम्बन्धों पर कींच।।

|| 233 ||

हमने जो संचय किया, जग-हित दिया लुटाय।
हमें नहीं कुछ चाहिये, चाहें जगत भुलाय।।

|| 234 ||

मर्म बचन मत बोलिये, उनमें छुपा विनाश।
कल्याणी के बचन ने, किया कुलों का नाश।।

|| 235 ||

विधना ने तुमको दिया, अमित शक्ति का दान।
जितना जैसे बन सके, कर प्राणी-कल्यान।।

|| 236 ||

जाति-जाति के नाम पर, खड़ी करी दीवार।
मत बाँटो इंसान को, छूटे चैन-करार।।

|| 237 ||

युग-युग से करता रहा, मानव बड़े फसाद।
कथनी-करनी में पला, अहंकार-प्रमाद।।

|| 238 ||

भाईचारा-प्रेम के, बीत गये हैं दौर।
मानव ने बदले सभी, ठीक-ठिकाने तौर।।

|| 239 ||

आया खाली हाथ था, जाये खाली हाथ।
पल दो पल की जिन्दगी, क्यों न बिताये साथ।।

|| 240 ||

पल-पल जीवन जा रहा, रखलो निज ईमान।
याद सदा जग में रहे, करलो कुछ श्रीमान।।

|| 241 ||

नहीं समर्पण-भावना, करे कर्म की बात।
इसीलिये असहाय-से, घूम रहे हैं तात।।

|| 242 ||

कर्म-भावना में बड़ा, है अटूट सम्बन्ध।
किन्तु कर्म के सामने, झुका भाव-अनुबन्ध।।

|| 243 ||

पल-पल दूरी घट रही, भले-बुरे के बीच।
जल स्तर इतना घटा, चढ़ी कमल पर कींच।।

|| 244 ||

जगत अजूबों से भरा, कितना माया-मोह।
लिप्त हुआ नर स्वार्थ में, जीवन बनता खोह।।

|| 245 ||

रहा आत्मबल जब नहीं, गयी निडरता छूट।
अत्याचारी कर रहा, मन मानी अब लूट।।

|| 246 ||

मन-दर्पण मैला हुआ, धुंध भरा परिवेश।
अब दर्पण बोले नहीं, बदल गया दरवेश।।

|| 247 ||

सदा अनीतिक भोगता, आया निज दुष्कर्म।
चला नीति के पंथ जो, अमर हुआ सद्धर्म।।

|| 248 ||

सत्य-पंथ पर जो चलें, पड़ें भोगने कष्ट।
लेकिन, यह भी जान लो, अंत बुरा हो भ्रष्ट।।

|| 249 ||

बिना स्वार्थ सुनता नहीं, कोई मन की पीर।
जोर-शोर सब बाँटते, अपनी-अपनी खीर।।

|| 250 ||

अपनेपन से फेरिये, मीत! प्यार का हाथ।
हो जाता है फूल-सा, कितना निष्ठुर माथ।।

|| 251 ||

बिन श्रम औ' बिन धीर के, मिले सफलता नाय।
मन में दृढ़ विश्वास हो, लक्ष्य सहज मिल जाय।।

|| 252 ||

परिवर्तन के दौर ने, हरण किया विश्वास।
प्रीत-नीम पर चढ़ गयी, ऊपर अम्बर घ़ास।।

|| 253 ||

कामी-कपटी-क्रूर को, मिले अन्ततः हार।
अमित हर्ष रहता सदा, सतवादी के द्वार।।

|| 254 ||

भाव पले कुछ और हैं, कर्म करे कुछ और।
मन दुविधा से ग्रस्त है, मिले कहाँ से ठौर।।

|| 255 ||

जब तक मन विश्वास है, नहीं छूटती प्रीति।
बरजोरी के सामने, नहीं टूटती नीति।।

|| 256 ||

फल लगते जिस वृक्ष पर, करते हैं उपकार।
परमारथ पर जो चला, उसका सब संसार।।

|| 257 ||

दौड़-धूप कितनी करो, सब कुछ मिलता नाय।
छोड़ दिया सन्तोष तो, डूब सभी कुछ जाय।।

|| 258 ||

छोड़ अकेले जा रहे, जीवन-धन को लोग।
वैभव-सुख-सन्तोष का, पल-पल करते लोभ।।

|| 259 ||

मानव बना बहेलिया, तक-तक मारे बान।
सत्य-अहिंसा-प्रेम-खग, हरे सभी के प्रान।।

|| 260 ||

सदाचार अब है कहाँ, मिटे सभी आचार।
लोग पूजते क्रूरता, नगर-डगर-बाजार।।

|| 261 ||

लोभ-मोह में है छुपा, अवनति और विनाश।
दोनों के कारण हुआ, कौरव-कुल का नाश।।

|| 262 ||

बिना मोह उगता नहीं, कभी मनुज में लोभ।
असफलता के बाद ही, मन में उगता क्षोम।।

|| 263 ||

बिना धीरता के क्षमा, पैदा करे विकार।
स्वाभिमान के ज्यों बिना, हार-जीत बेकार।।

|| 264 ||

दुःख में जगता ज्ञान है, सुख देता अज्ञान।
भेद यही जो जानता, मानव वही महान।।

|| 265 ||

फल आने पर वृक्ष ज्यों, झुकते वसुधा ओर।
ज्ञानी त्यों झुकता सदा, देख-देखकर भोर।।

|| 266 ||

बंदे! करता कर्म चल, सोचे मत परिणाम।
देख रहा जो विश्व को, भजले उसका नाम।।

|| 267 ||

निर्भय होकर कर्म कर, मन में रख विश्वास।
बाधायें सब दूर हों, होवे आत्म-विकास।।

|| 268 ||

फूला-फूला क्यों फिरे? करता क्यों अभिमान?
मन विकसित कर फूल-सा, सबका हो कल्यान।।

|| 269 ||

जिस मन पले न लालसा, उसको नहीं विशेष।
अकिंचन को कुछ नहीं, लगता कहीं अशेष।।

|| 270 ||

रही नम्रता विश्व में, अमर तत्व का मूल।
अहंकार में ठोकरें, मन पर जमती धूल।।

|| 271 ||

हुई कभी यदि भूल तो, करले भूल सुधार।
भूल-भूल रहती नहीं, हरती मनो विकार।।

|| 272 ||

मानव-तन बंदे! मिला, करता कर्म अशिष्ट।
अंतकाल सब छूटते, जाते कर्म विशिष्ट।।

|| 273 ||

अखिल सृष्टि कल्याणमय, क्या तेरा उपयोग?
बंदे! ऐसे कर्म कर, सुख भोगें सब लोग।।

|| 274 ||

दया धर्म का मूल है, पाप-मूल अभिमान।
सत्य-अहिंसा-मूल में, सकल जगत कल्यान।।

|| 275 ||

दिया दुष्ट को दान जो, मिले धूल में देय।
नंगा चला बाजार को, चोर वलैया लेय।।

|| 276 ||

मानव-सेवा से बड़ा, नहीं जगत में कर्म।
पीड़ा जन की बाँटना, मानवता का धर्म।।

|| 277 ||

याचक आया द्वार पर, दीन-दुःखी-असहाय।
आस लिये मन में बड़ी, दे जो सहज बसाय।।

|| 278 ||

अपने दुःख को दुःख कहें, ऐसे यहाँ अनेक।
पर-पीड़ा जो मानते, सौ में विरला एक।।

|| 279 ||

वैर-द्वेष-हिंसा सदा, रहता नहीं विरोध।
समय-समय की बात है, मिट जाता गतिरोध।।

|| 280 ||

'परहित' में 'निजहित' छुपा, 'अनहित' है अपकार।
इक्का से दुक्का भला, तिक्का करे बिगार।।

|| 281 ||

जितनी पीड़ा हर सको, हरो न भूलो प्रेम।
पर-पीड़ा उपकार में, छुपी भावना-क्षेम।।

|| 282 ||

स्वार्थ-लोभ हृदय रहे, प्यार बने उपहास।
मोह-आवरण जब उठे, प्यार बने मधुमास।।

|| 283 ||

मानवता-आदर्श की, बातें निष्फल आज।
लगते गूलर फूल हैं, पर-पीड़ा के काज।।

|| 284 ||

सत्य-अहिंसा-कर्ममय-शील-शान्ति औ' प्रेम।
रक्षा करते राष्ट्र की, मानवता-कुल-क्षेम।।

|| 285 ||

याचकता अनुनय भरी, हृदय उठे पसीज।
उनको क्योंकर कोसना, जिनको नहीं तमीज़।।

|| 286 ||

देता है केवल वही, जिसका भाव विशाल।
हमने देखे सैकड़ों, धन रहते कंगाल।।

|| 287 ||

प्रीत-दया- ममता- क्षमा- सत्य- अहिंसा-पेड़।
माली अपने कुँज से, खुद ही रहा उखेड़।।

|| 288 ||

नहीं बुराई का हुआ, कभी क्रोध से अन्त।
'सोच-समझ औ' प्रेम से, मिटती' कहते सन्त।।

|| 289 ||

'सत्यं-शिवं औ' सुन्दरम्', मानवता के प्राण।
बन्दे! इनके मूल में, छुपा जगत-कल्याण।।

|| 290 ||

जग को तूने क्या दिया? करले सखे! विचार।
द्वेष-भाव की पोटरी, सिर से तनिक उतार।।

|| 291 ||

जाय न कुछ भी साथ में, छूट जाय घर बार।
रह जाता है याद में, पल-पल का व्यवहार।।

|| 292 ||

नहीं यार! कुछ चाहते, केवल हँसकर बोल।
जग में मीठे बोल का, बहुत बड़ा है मोल।।

|| 293 ||

टूट रही है आस्था, छूट रहा है प्रेम।
घोर निराशा बीच में, दबी जगत की क्षेम।।

|| 294 ||

साथ भावना का रहा, तब तक थे तुम साथ।
आया वैभव पास तो, छोड़ गये तुम हाथ।।

|| 295 ||

उड़न पखेरू हो गये, सच के सपने आज।
खड़ी बिलखती आत्मा, नंगों के सिर ताज।।

|| 296 ||

वाणी औ' व्यवहार से, मतकर ऐसी खोट।
बदन-घाव पल में भरे, भरे न उर की चोट।।

|| 297 ||

अगर कहीं खुशियाँ मिलें, मिलें अमित भंडार।
सच, कहता हूँ बाँट दूँ, जा-जाकर हर-द्वार।।

|| 298 ||

प्यार-प्यार, बस प्यार ही, यही कुशलता मंत्र।
ममता-श्रद्धा बाँटिये, मिटें विरोधी तंत्र।।

|| 299 ||

रहा नहीं सौहार्द में, श्रद्धा औ' विश्वास।
हुआ आस्थाहीन है, मानव का इतिहास।।

-श्रद्धा-

|| 300 ||

श्रद्धा मन की शक्ति है, सकल गुणों की खान।
सच्ची श्रद्धा से मिलें, मानव को भगवान।।

|| 301 ||

मन में श्रद्धा है नहीं, करें भजन-जप-दान।
रहें अधूरे ही सदा, बिन श्रद्धा गुण-गान।।

|| 302 ||

तन-मन-धन से जन करे, अपनी निष्ठा दान।
रहे समर्पित प्रीत भी, सच्ची श्रद्धा जान।।

|| 303 ||

श्रद्धा बिन विश्वास के, रहती निश्चित-व्यर्थ।
जैसे प्राणों के बिना, क्या काया का अर्थ।।

|| 304 ||

सच्ची श्रद्धा है नहीं, करते हैं गुणगान।
निश्छल मन श्रद्धा नहीं, कहाँ मिलें भगवान।।

|| 305 ||

सेवा-पूजन-साधना, बिन श्रद्धा सब जाय।
जब तक मन मैला रहे, श्रद्धा जुड़ती नाय।।

|| 306 ||

इधर-उधर श्रद्धा फिरे, जीवन निष्फल होय।
पर्वत पर खोदे कुँआ, कैसे निकले तोय।।

|| 307 ||

पैसा ने पागल किया, आज बहुत इन्सान।
कुर्सी बैठा आदमी, खड़ा हुआ भगवान।।

|| 308 ||

उर के दरवाजे हुये, आज बड़े ही तंग।
खड़ा हुआ मन-बावरा, उजड़ा-उजड़ा रंग।।

|| 309 ||

काल-कोठरी में हुई, आज़ चेतना कैद।
मानव की संवेदना, उर से हुई नपैद।।

-धर्म-

|| 310 ||

अखिल सृष्टि कल्याणमय, करती पावन कर्म।
अतिशय व्यापक सर्वहित, रहा धर्म का मर्म।।

|| 311 ||

सत्य धर्म का द्वार है, यह मानव का त्राण।
इसको जिसने वर लिया, हुआ आत्म-कल्याण।।

|| 312 ||

धर्म दूधिया चाँदनी, तन-मन का उजियार।
जहाँ-जहाँ तक फैलता, दूर करे अँधियार।।

|| 313 ||

धर्म पवन औ' नीर-सा, सूरज-सृष्टि समान।
द्वेष-गरल बसता नहीं, करे विश्व-कल्यान।।

|| 314 ||

नेता ने दूषित किया, धर्म-कमल का फूल।
रम्य-मनोहर पुष्प से, उनको चुभते शूल।।

|| 315 ||

राजनीति के विश्व से, जब-तक धर्म निरस्त।
आतंकी-उत्पात से, तब-तक वसुधा त्रस्त।।

|| 316 ||

धर्म जहाँ कुंठित पड़ा, मानव-मन से दूर।
आत्मतोष होगा नहीं, वैभव हो भरपूर।।

|| 317 ||

जहाँ धर्म है साथ में, नहीं शान्ति अवरूद्ध।
धर्म गया यदि दूर तो, हुआ वहाँ ही युद्ध।।

|| 318 ||

जग 'तेरा' 'मेरा' नहीं, अपना है वर्चस्व।
गही धर्म की दृष्टि तो, सबका है सर्वस्व।।

|| 319 ||

धर्मी धर्म न छोड़ता, जाय भले ही जान।
सत्य-ध्वजा छूटे नहीं, जब तक तन में प्रान।।

|| 320 ||

पथिक! जहाँ पथ भूलता, मन में करे विचार।
धर्म वहाँ क्या बोलता, चले उसी अनुसार।।

|| 321 ||

जग में पावन धर्म है, वसुधा का उपहार।
जड़-चेतन से कर अरे! निश्छल मन से प्यार।।

|| 322 ||

धर्म-पथिक से दूर ही, रहे पाप की आँच।
अन्दर होवे साँच तो, कोठी चढ़ के नाच।।

राष्ट्र के नाम

|| 323 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम का, समता का सन्देश।
देता आया विश्व को, केवल भारत-देश।।

|| 324 ||

खग-पशु-तरु-नद देव हैं, पृथ्वी-जल-पवमान।
नभ-पावक-पाथर पुजें, मेरा देश महान।।

|| 325 ||

हमने दुनिया को दिया, समरस औ' सद्भाव।
निखिल सृष्टि जगदीश की, रखना आदर-भाव।

|| 326 ||

राम-कृष्ण-गौतम हुए, महावीर बलवान।
गाँधी ज़ैसे संत की, धरती-देव महान।।

|| 327 ||

भारत के कण-कण पगा, राम-रमा-संगीत।
नर-नारी सब बाँटते, जग को सच्ची प्रीत।।

|| 328 ||

युग-युग से देता रहा, भारत यह सन्देश।
'जग-प्राणी-परिवार है, सारा विश्व निवेश'।।

|| 329 ||

भारत ने छीना नहीं, कभी किसी का मान।
इसने युग-युग सै कहा, 'करो अखिल कल्यान'।।

|| 330 ||

भारत में अगणित हुये, बड़े-बड़े व्यक्तित्व।
जिनका जीवन-कर्म था, मानव-सह-अस्तित्व।।

|| 331 ||

प्रभु का तंत्र अजीब है, सुन अमरीका-धीश।
भारत से भिड़ना नहीं, राम-कृष्ण-वागीश।।

|| 332 ||

प्रभु से बढ़कर कौन है? जग का सृजनहार।
अमरीका! तू देखले, रूस का बंटाधार।।

|| 333 ||

गर्व नहीं मैं पालता, इतना दूँ बतलाय।
बतलाता इतिहास है, भारत-विश्व-निकाय।।

|| 334 ||

माँ का पावन शीष है, केसरिया कश्मीर।
पाक! भूल जाना नहीं, भारत की शमशीर।।

|| 335 ||

बड़े-बड़े आये यहाँ, शूरवीर-बलवान।
भारत माँ के सामने, झुके सभी शैतान।।

|| 336 ||

कैसी भी साजिश रचें, देश-देश के लोग।
भारत-दर्शन 'मोक्ष' है, भोग सके तो भोग।।

|| 337 ||

आज देश आजाद है, लेकिन कहीं न चैन।
क्योंकि देश की आत्मा, गिरवीं है बेचैन।।

|| 338 ||

वीरों ने निज प्राण दे, किया देश आजाद।
धिक! उनका ही खून अब, करे इसे बर्बाद।।

|| 339 ||

आजादी ने देश का, भौतिक किया विकास।
भौतिकता ने कर दिया, नैतिकता का नाश।।

|| 340 ||

आज देश को बेचते, खुलकर कुछ तो लोग।
जो चुप होकर देखते, वे भी करते योग।।

|| 341 ||

कहाँ गयी वह वीरता? कहाँ गया वह राग?
आज शेर के सामने, चूहा खेले फाग।।

|| 342 ||

कानन के पशु जानते, शेर जगत-सरताज।
बुरे दिनों के सामने, करे भेड़िया राज।।

|| 343 ||

अब कानन में हो गये, नये-नये प्रतिबंध।
जो खग उड़ना चाहते, बाज करे अनुबंध।।

|| 344 ||

जात-पात औ' धर्म के, खाने दिये बनाय।
जो लालच खाया नहीं, उसको दिया मिटाय।।

|| 345 ||

अलग-अलग पद दे दिये, अजब बाज की चाल।
खग ने बदली आँख तो, बाज हो गया लाल।।

|| 346 ||

कायरता को कह रहे, हम हैं बड़े उदार।
शनैः शनैः सब जा रहे, घर से पिछले द्वार।।

|| 347 ||

युगों-युगों से चल रहा, यहाँ बाज का राज।
जल-थल-नभ का हो गया, आज बाज सरताज।।

|| 348 ||

कुंभकरण की नींद में, सोया सारा देश।
जूते सिर पर पड़ रहे, बिगड़ा कैसा वेश।।

|| 349 ||

अस्मत पूरे देश की, नित होती नीलाम।
उग्रवाद ने कर दिया, सबका काम-तमाम।।

|| 350 ||

राष्ट्र-विरोधी-ताकतें, पातीं अब सम्मान।
वीर मिटे जो देश पर, उनका हो अपमान।।

|| 351 ||

संविधान को तोड़ते, दिया तिरंगा फूँक।
शासन उनसे कर रहा, भैया! देव-सलूक।।

|| 352 ||

देश-पड़ोसी कर रहे, नित-नित उलटी बात।
भोले की औलाद को, भाते घूँसा-लात।।

|| 353 ||

मन्दिर-मस्जिद में छुपे, भाव भरे नापाक।
उलट पहाड़ा पढ़ रहे, सोलह दूनी आठ।

|| 354 ||

आज देश के सामने, प्रश्नों का अम्बार।
हल कोई होता नहीं, बढ़ते बेशुम्मार।।

|| 355 ||

माला मेरे देश की, टूट गयी अध बीच।
सब मोती बिखरे पड़े, जाय गिरे कुछ कींच।।

|| 356 ||

भारत माँ के शीष पर, दुश्मन करता बार।
धिक! ऐसी सन्तान को, देख रही लाचार।।

|| 357 ||

हाथ देश के बँट गये, पड़े पेट पर लात।
शीष थपेड़े लग रहे, पैर रहे हैं, काट।।

|| 358 ||

टूट रहा है देश का, हाय! सब्र का बाँध।
समय पूर्व ही आ गयी, अब जीवन में साँझ।।

|| 359 ||

हाय! दुर्दशा हो रही, देखे कोई नाय।
किस्मत मेरे देश की, पड़ी कूप में जाय।।

|| 360 ||

जटिल समस्या हो गया, भारत का कश्मीर।
पाक-दु:शासन खींचता, भारत-माँ का चीर।।

|| 361 ||

नैन मूँद बैठे सभी, बड़े-बड़े रणधीर।
हा! जाने क्यों डर रहे? पास धरी शमशीर।।

|| 362 ||

पानी सिर से बह रहा, प्राण हुये अवरूद्ध।
पराकाष्ठा हो गयी, करो पाक से युद्ध।।

|| 363 ||

गीदड़ की औकात क्या? देना उसे बताय।
चला गाँव की ओर को, लायी मौत बुलाय।।

|| 364 ||

बाण मारकर बंद की, कुत्ते की आवाज।
बेमतलब जो भौंकता, अर्जुन यही इलाज।।

|| 365 ||

मधुसूदन ने थे किये, मिलकर सभी उपाय।
महाभारत न टल सका, होनी बुरी बलाय।।

|| 366 ||

कंस और शिशुपाल का, कृष्ण किया उपचार।
दुष्टजनों की है दवा, चक्र सुदर्शन यार।।

|| 377 ||

कछुआ जैसी अब हुई, देश-देश की सोच।
नौ दिन तक चलता रहा, चला अढ़ाई कोस।।

|| 378 ||

गिरगिट जैसा रंग नित, बदल रहा है पाक।
विश्वमंच पर गिर रही, नित भारत की साख।।

|| 379 ||

हालत बदतर हो गयी, देश रहा है डूब।
खड़ा जहाँ जो आदमी, लूट रहा है खूब।।

|| 380 ||

स्वाभिमान का लेश भी, इनमें बचा न शेष।
भू-लुंठित प्रासाद के, जीर्ण-शीर्ण अवशेष।।

|| 381 ||

जिसने अपने देश-हित, किये प्राण उत्सर्ग।
हुआ सफल जीवन सभी, मिला उसे अपवर्ग।।

|| 382 ||

आज देश की अस्मिता, होती है नीलाम।
खड़े- खड़े सब देखते, नाटक-सा परिणाम।।

|| 383 ||

सत्ता-मद में चूर हैं, आज देश के लोग।
किस्मत डूबी देश की, मन पर छाया भोग।।

|| 384 ||

सीमा पर शासन करें, बेईमान-मक्कार।
क्या होगा उस देश का, जहाँ लोग गद्दार।।

|| 385 ||

माँग-माँग ऋण कर रहे, पर देशों को दान।
धन्य! धन्य! ये भारती, रखते सबका मान।।

|| 386 ||

सोना जो गिरवीं रखा, लिया महाजन तोल।
अटक पड़ी तो ले रहा, कनक देश का मोल।।

|| 387 ||

बेटा घर को छोड़कर, जाय बसा परदेश।
मात-पिता गर्वित कहें, "बिटुआ गया विदेश"।।

|| 388 ||

ज्ञान-पलायन हो रहा, आज देश का हाय!
सोया सारा देश है, रोके कोई नाय।।

|| 389 ||

उलटी माला फेरते, आज देश के लोग।
नेताओं ने कर दिये, पैदा कैसे रोग।।

|| 390 ||

रो-रोकर ऋण ले रहे, हाय! देश के नाम।
नेता-मंत्री कर रहे, रोज देश नीलाम।।

|| 391 ||

सकल विश्व में व्याप्त है, ज्यों बिन देह अनंग।
त्यों बिन डोरी उड़ रही, भारत-देश पतंग।।

|| 392 ||

मन विप्लव करता बड़ा, देख-देखकर हाल।
क्या अपना यह देश है? जो जग रहा मिशाल।।

|| 393 ||

आम आदमी जी रहा, घुटन भरे परिवेश।
लगता अपना देश है, मानो कहीं विदेश।।

|| 394 ||

ऐसे ही चलता रहा, देश-देश का राज।
चूर-चूर होगा सभी, सारा देश-समाज।।

|| 395 ||

मितवा! अपने देश को, समझो प्राण-समान।
कभी विराने देश में, नहीं मिले सम्मान।।

|| 396 ||

बदल गया है देश का, खान-पान औ' मान।
आज दिखावा हो गयी, मिथ्या मन की शान।।

|| 397 ||

बैसाखी पर है टिका, देश-देश का तंत्र।
पंडित भूखा मर रहा, धूर्त बेचता मंत्र।।

|| 398 ||

जब-तक अपने देश में, नहीं ज्ञान-सम्मान।
तब-तक सारे विश्व में, मिले सदा अपमान।।

|| 399 ||

आज देश में मच रहा, क्रंदन चारों ओर।
घोर तबाही छा गयी, दूर-दूर तक शोर।।

|| 400 ||

अजब सुनहरे लग रहे, सबके मुखड़े गात।
बिन पतझड़ पीले हुये, ज्यों तरुओं के पात।।

|| 401 ||

सब देशों में गूँजती, अमरीकन आवाज।
नाहर जब बूढ़ा हुआ, करे भेड़िया राज।।

|| 402 ||

आज देश की आत्मा, फँसी विदेशी चाल।
तड़प मीन-सी मर रही, मछुआरे के जाल।।

|| 403 ||

धरती तानाशाह की, यहाँ न उर का राज।
अरे मीत! चुप बैठ जा, अभी न कर आवाज।।

|| 404 ||

धरती पर कोई नहीं, माता का उपमान।
कामधेनु है सृष्टि पर, करती जग-कल्यान।।

|| 405 ||

अपनी धरती छोड़ कर, जाय बसे परदेश।
आदर अब कैसे मिले, हुआ उलट परिवेश।।

|| 406 ||

अपने घर ही चैन है, जो चाहें सो खाय।
मितवा के घर प्रेम है, रहन-सहन सुख नाय।।

|| 407 ||

नहीं चाहिये देश वह, जहाँ बड़े अनुबंध।
तन-मन-धन औ' बचन पर, बहुत कड़े प्रतिबंध।।

|| 408 ||

कहाँ-कहाँ से आ गये, देश-द्रोह के मेघ।
करते हैं बरजोरियाँ, चला रहे हैं तेग।।

|| 409 ||

यह धन अपना है नहीं, है चोरों की चाल।
इसमें बदबू आ रही, अरे! विदेशी माल।।

|| 410 ||

हाय! अपावन हो रही, गंगा-माँ की धार।
खड़े-खड़े सब देखते, आज देश की हार।।

|| 411 ||

टूट मनोबल भी गया, रहा न तन-मन जोश।
राष्ट्र-भावना गुम गयी, भूल गये सब होश।।

|| 412 ||

नेता कायर हो गये, कुर्सी के प्रति मोह।
इसीलिए तो देश में, भड़क रहा है द्रोह।।

|| 413 ||

कुछ भी तुम कहते रहो, पड़े न कोई फ़र्क।
इस कारण ही देश का, होता बेड़ा ग़र्क।।

|| 414 ||

दीप-पतिंगा का रहा, जैसे पावन खेल।
तैसे मेरे प्राण भी, करें देश से मेल।।

|| 415 ||

दुश्मन मेरे देश में, धर न सके निज पाँव।
भगवन कृपा कीजिये, चाहूँ चरणन छाँव।।

|| 416 ||

आज देश पर हो रहे, बहुत विदेशी बार।
वशीभूत सब हो गये, समझें जीत न हार।।

|| 417 ||

अरे पाक! सहते तुझे, सोच अनुज की लात।
वरना तो इतिहास ही, नहीं रहेगा भ्रात!!

|| 418 ||

क़दम ग़लत बढ़ते रहें, होगा बहुत बिगार।
पाक अरे! यह जान ले, बहुत पड़ेगी मार।।

|| 419 ||

अवसरवादी सैकड़ों, मीत तुझे मिल जाय।
जब होगा कुरूक्षेत्र तो, पाक! बचेगा नाय।।

|| 420 ||

पाक! हरण करना नहीं, भारत-माँ का चीर।
नारी के अभिशाप की, सबने भोगी पीर।।

|| 421 ||

महाभारती-युद्ध में, खेत रही शमशीर।
झूँठ सभी असफल हुये, द्रोण-कर्ण-से वीर।।

|| 422 ||

भ्रात-भ्रात ने जब हरे, कभी भ्रात-अधिकार।
दुर्बह जीवन हो गया, युद्ध हुआ लाचार।।

|| 423 ||

आज देश में पल रहे, व्यर्थ बड़े व्यवसाय।
नौनिहाल इस देश के, भूखों मरते हाय।।

|| 424 ||

देख व्यवस्था देश की, हृदय होता क्रोध।
आज युवा-मन त्रस्त हैं, कुंठा-घुटन-विरोध।।

|| 425 ||

अलग-अलग इस देश में, सबके रीति-रिबाज।
उलटे-पुलटे हो गये, मानव-मनो-मिज़ाज़।।

|| 426 ||

मृत्यु जीवन-सत्य है, लेकिन यह भी तथ्य।
प्राण चढ़ा जो देश पर, वही वीर है सत्य।।

|| 427 ||

विधना की इस सृष्टि में, मानव-श्रेष्ठ महान।
जन्म सफल वह मानिये, जाय देश हित प्रान।।

|| 428 ||

पहले तन-मन से रहे, बहुत साल परतंत्र।
आजादी अब मिल गयी, पर मन नहीं स्वतंत्र।।

|| 429 ||

जितने भी आये यहाँ, राजा और नबाव।
गये लूटकर देश की, अस्मत और शबाब।।

|| 430 ||

धिक है! शासन देश का, धिक, है! धर्म-निकाय।
सब डूबे हैं स्वार्थ में, देश न कहीं दिखाय।।

|| 431 ||

भोग रहा है देश अब, सुनियोजित षड्यन्त्र।
बाल-मनों को कर रहा, टी॰वी॰ ही परतंत्र।।

|| 432 ||

गौ-माता अब देश की, है अमरीकन-गाय।
बदली सारी सभ्यता, बदला धर्म-निकाय।।

|| 433 ||

पग-पग पर होती यहाँ, संस्कृति अब नीलाम।
खड़ी सभ्यता रो रही, पल-पल बनी गुलाम।।

|| 434 ||

वीरों के इस देश का, बैठ गया है साज।
बाजा बजता देश का, अमरीकन आवाज।।

|| 435 ||

गली-गली में घूमते, शेर-भेड़िये साथ।
भरत नहीं अब दीखता, जो मुख डाले हाथ।।

|| 436 ||

इसी देश के बाल ने, दिया शेर-मुख चीर।
माता को दिखला दिया, पिया तुम्हारा क्षीर।।

|| 437 ||

पता नहीं क्या हो गया, बदल गयी सन्तान।
अथवा माँ के दूध में, रही न वैसी जान।।

|| 438 ||

माता की अस्मत लुटे, बिके देश का मान।
खड़े-खड़े सब देखते, धिक्! ऐसी सन्तान।।

|| 439 ||

नैतिक बल भी है नहीं, अब प्राणों में हाय!
हुई नपुंसक वीरता, देश भाड़ में जाय।।

|| 440 ||

दुश्मन मुँह पर मारता, चुन-चुन खोटी बात।
यह कीड़ों-सी जिन्दगी, सहती जूता-लात।।

|| 441 ||

रक्त तनिक खौले नहीं, आये लेश न लाज।
जूता गंजे-सिर पड़े, कहता मिटती खाज।।

|| 442 ||

नेता की क्या पूछिये, जीभ नियन्त्रण नाय।
बात अटपटी नित करे, देशभक्त कहलाय।।

|| 443 ||

अमरीका का हो गया, कुंठित सारा ज्ञान।
गाय मारकर कर रहा, अपना जूता दान।।

|| 444 ||

जातिवाद की आग ने, दिया चमन को फूँक।
शनैः शनैः सब कर रहे, सुमन-कुँज से कूँच।।

|| 445 ||

आज देश के सामने, विकट समस्या तीन।
भोजन-वसन-मकान को, जूझ रहे हैं दीन।।

|| 446 ||

शनैः शनैः फिर चढ़ रहे, चन्दन गोरे-नाग।
विष-फुंकारें देखकर, उरग रहे हैं भाग।।

|| 447 ||

अब तो केवल नाम का, रहा भरत का धाम।
वैभव-गुण-गौरव यहाँ, बिकते आठोंयाम।।

|| 448 ||

लूट लिया है देश का, युग-युग का सम्मान।
राम-कृष्ण के देश का, पग-पग पर अपमान।।

|| 449 ||

राष्ट्र-भावना गुम गयी, खड़ा हुआ है स्वार्थ।
कहाँ चरित इस देश का, 'काम' हुआ परमार्थ।।

|| 450 ||

संसद है जिस देश की, बलिदानों का ताज।
पड़ते घूँसा-लात हैं, सम्मानों पर आज।।

|| 451 ||

महाशक्तियाँ कर रहीं, शब्द-अर्थ के खेल।
'शब्द' बराबर धन नहीं, 'अर्थ' बराबर मेल।।

|| 452 ||

अब गाँधी के देश में, जीना हुआ हराम।
हुआ तनिक-सा द्वेष तो, करते काम-तमाम।।

|| 453 ||

हाय! शिखंडी हो गये, बड़े-बड़े रणधीर।
खड़ी द्रौपदी लुट रही, देख रहे रणवीर।।

|| 454 ||

आज हिमालय रो रहा, देख देश में फूट।
उसके बेटों ने लिया, हाय! चमन को लूट।।

|| 455 ||

लकवा से आहत हुआ, आज देश का गात।
वैद न कोई जानता, आहत मन की बात।।

|| 456 ||

दीन-दुःखी असहाय-सा, आज हिमालय-पूत।
राजनीति की चौकड़ी, न्याय करे अवधूत।।

|| 457 ||

हा! अपने ही देश में, हुये प्रवासी आज।
जाति-धर्म के नाम पर, चलता गुंडा-राज।।

|| 458 ||

जितना बढ़ता द्वेष है, उतना बँटता देश।
गले की हड्डी बन गया, उत्तर का प्रदेश।।

|| 459 ||

द्वेष-गरल जितना बढ़े, जनता होती त्रस्त।
यश-वैभव उस देश का, होता जाता अस्त।।

|| 460 ||

डूब जाय जिस देश में, जनता की आवाज।
अपराधी पाने लगें, सम्मानों का ताज।।

|| 461 ||

जिस कारण से था हुआ, देश कभी परतंत्र।
आज वही हैं शक्तियाँ, करती काम स्वतंत्र।।

|| 462 ||

कुछ अपने ही लोग हैं, कुछ बाहर के बाघ।
जिनके कारण लग रही, आज देश में आग।।

|| 463 ||

रखवाले यदि बाग के, करते नित प्रतिवाद।
भैया! निश्चित जान लो, हुआ चमन बर्बाद।।

|| 464 ||

आज देश के वीर का, कहाँ गया प्रताप?
खून ज़रा खौले नहीं, सूँघ गया ज्यों साँप।।

|| 465 ||

खुले आम अब भेड़िये, रहे चमन में घूम।
छुपे-छुपे सब देखते, वीर-बहादुर-सूम।।

|| 466 ||

पहले तो बस एक से, हुआ देश बर्बाद।
आज सैकड़ों घूमते, कहाँ रहें आजाद।।

|| 467 ||

कौन देश से आ गये, ओछे-चोर-लबार।
जो कुछ पड़ता हाथ है, लूट चलें घर-द्वार।।

|| 468 ||

अपने जीवन का तनिक, करे न मोह जवान।
सब कुछं अपने राष्ट्र-हित, करता है बलिदान।।

|| 469 ||

क्या अपना? क्या राष्ट्र का? क्या जीवन का भार?
राष्ट्र-पुजारी के लिये, जीवन-रक्षा-सार।।

|| 470 ||

यम-सी रहती यातना, सुख जीवन से दूर।
लेकिन, अपने राष्ट्र पर, सैनिक करे गुरूर।।

|| 471 ||

परम्परागत साक्ष्य हैं, पाया राष्ट्र-विकास।
बलिदानों की सेज पर, गौरवमय इतिहास।।

|| 472 ||

सारे सपने तोड़कर, किया राष्ट्र-उत्थान।
हमने समझा विश्व को, मानवता की शान।।

|| 473 ||

त्राहि-त्राहि सब ओर है, क्रंदन-आर्त्त-पुकार।
बलिहारी इस देश की, किस्मत को दरकार।।

|| 474 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त की, होती पग-पग हार।
मानवता अब जल रही, सरे आम बाजार।।

कल्पना-सुन्दरी

|| 475 ||

जबसे देखा है शुभे! तबसे जिया निहाल।
प्राण! अनूठा रूप है, मनु पूजा का थाल।।

|| 476 ||

मन-मोहक तिल गाल पर, दृष्टि-पथिक का ठाँव।
प्राण! मुझे बस! चाहिये, प्रिय-पलकों की छाँव।।

|| 477 ||

अरूण-कमल से गाल हैं, नव किसलय-सम ओठ।
कजरारे नैना करें, उर पर मादक चोट।।

|| 478 ||

रूप तुम्हारा मोहिनी, अलकें-केश-कराल।
मन फिसला हे कल्पने! हृदय अरे! संभाल।।

|| 479 ||

तेरे अधरों में सजी, पूनम-सी मुस्कान।
मेरे हृदय-सिन्धु में, आता देख उफान।।

|| 480 ||

नव किसलय-से ओंठ ये, पूनम-जैसा भाल।
मन करता है चूम लूँ, ओंठ गुलाबी गाल।।

|| 481 ||

नैना कैसे मद-भरे, हिरणी-जैसी चाल।
कनक वदन में सोहते, बिजली-से दो लाल।।

|| 482 ||

गाल गुलाबी बावरे, ओंठ बड़े बेचैन।
नैन शराबी कह रहे,-'प्राण! अरे! दो चैन'।।

|| 483 ||

विषधर के मुख-चन्द्रमा, फँसा चम्पई गात।
देख शिवा को सामने, विषियर बलि-बलि जात।।

|| 484 ||

महाकाव्य में ज्यों सजी, नायक-कथा-प्रकीर्ण।
प्राण-सुमन-सी त्यों पगी, रूप-सुगंध-विकीर्ण।।

|| 485 ||

मुख ज्यों फबता चन्द्रमा, फूलों जैसा गात।
अजब सुनयने! चाल लख, हृदय खो-खो जात।।

|| 486 ||

कंचन-तन पर अरुण-पट, कैसा है लहराय।
शरदकाल की घाम में, गुलदावरि इठलाय।।

|| 487 ||

गोरी! तुमको देखकर, हृदय भरे उमंग!
ज्यों पूनम का चाँद लख, सागर उठे तरंग।।

|| 488 ||

तन-कंचन, मन-सा, नैना मधुरस घोल।
सुमन झरें मुस्कान के, सुर ज्यों वीणा बोल।।

|| 489 ||

लाल चुनरिया ओढ़कर, घर से निकली बाम।
लगता पर्वत फोड़कर, आती ऊषा-घाम।।

|| 490 ||

मन-बिरवा पर चढ़ गयी, रूप-बसन्ती-बेल।
कैसा जादू हो गया, अजब रूप का खेल।।

|| 491 ||

हिरणी-सी तुम दौड़कर, उर से लगतीं आन।
प्राण! कहे-'तू भूल जा', वह मधुरिम मुस्कान।।

|| 492 ||

धक-धक-धक जियरा करे, जब तुम आतीं पास।
जादूगर के सामने, ज्यों रूक जाती साँस।।

|| 493 ||

तेरा अनुपम रूँठना, औ' मनहर मुस्कान।
चुम्बन-परिरम्भण प्रिये! दूर खींचते ध्यान।।

|| 494 ||

ज्यों दिनकर को देखकर, सूरजमुखि मुस्काय।
त्यों प्रियतम के सामने, अनुरक्ता हरषाय।।

|| 495 ||

हृदय-दर्पण को शुभे! रखना सदा सँवार।
इसमें मेरा बिंब है, देखो! प्राण! निहार।।

|| 496 ||

साथ-साथ ले झूलना, भरकर पैंग अपार।
लगता जैसे स्वर्ग था, वह बागों का प्यार।।

|| 497 ||

बागों में झूला पड़े, तीजों का त्यौहार।
चुम्बन-परिरम्भण सखे! देते शूल अपार।।

|| 498 ||

निबुआ में रस देखकर, ज्यों महुआ गदराय।
गोरी! तेरा गात लख, त्यों यौवन लहराय।।

|| 499 ||

छुप-छुप कर आते सखे! आँखें देते मींच।
उस सुख को कैसे कहूँ? बाहों लेते भींच।।

|| 500 ||

वह आँचल-तर लेटना, औ' बालों में हाथ।
झुक माथे को चूमना, अलकों की बरसात।।

|| 501 ||

बहुत याद आता मुझे, प्यार तुम्हारा आज।
कसक रहा हृदय बड़ा, रहा मूलधन ब्याज।।

|| 502 ||

रूप सुवासित, मोहिनी, खिले गात कचनार।
रोम-रोम आतुर बड़ा, पाने को मनुहार।।

|| 503 ||

कौन सुने? किससे कहूँ? अपने मन की बात।
तुम बिन चारों ओर अब, पावस-रात लखात।।

|| 504 ||

भूल गयी अब सुन्दरी! पास बहुत ही दूर।
सपनों में पल-पल मिलें, मिलन बहुत मजबूर।।

|| 505 ||

रजनी गंधा ने किया, मौसम को मधुमास।
पल-दो-पल के साथ ने, रचा नवल इतिहास।।

|| 506 ||

कनक-लता-सी देह पर, खिले कमल के फूल।
मन-भ्रमर गुन-गुन करें, होय सुमन के शूल।।

|| 507 ||

मितवा! पीड़ा-सहचरी, बनी गले का हार।
सुख के मोती चाहिये, गहो किसी का द्वार।।

|| 508 ||

मन करता है चूम लूँ, गोरी! तेरा गात।
नहीं वासना प्रीत यह, निश्छल मन की बात।।

|| 509 ||

ज्यों दिनकर को देखकर, खिलें कमल के फूल।
प्राण तुम्हें त्यों देखकर, हृदय उठता फूल।।

|| 510 ||

सिवा प्यार के कुछ नहीं, जो तुमको दूँ भेंट।
लेना हो तो लेउ लो, उठी जात है पैंठ।।

|| 511 ||

खिलते पीत-गुलाब-से, गोरी! तेरे अंग।
नाच उठा मन-बावरा, ज्यों पीली हो भंग।।

|| 512 ||

पीत-वसन तन में लसे, आह! चम्पई गात।
नैना मधुरस में पगे, करें प्रीत-बरसात।।

|| 513 ||

नव किसलय सम ओठ हैं, नैना सुभग चकोर।
वृन्दावन-सा तन-वदन, नाच उठा मन-मोर।।

|| 514 ||

वह नर बड़भागी बड़ा, जिसे मिले सौगात।
साक्षात, पर-ब्रह्म का, है प्रतिबिम्ब लखात।।

|| 515 ||

बहुत लोग कहते-सुने, कहीं धरा है स्वर्ग।
हमने देखा कल्पने! स्वर्ग और अपवर्ग।।

|| 516 ||

करके आयी चाँदनी, विविध रूप-श्रंगार।
अथवा आयी उर्वशी, छोड़ इन्द्र का द्वार।।

|| 517 ||

ज्यों बरखा में बादरा, पल-पल बदले रंग।
प्राण! प्रीत की चाँदनी, बदल रहीं तुम ढंग।।

प्रीत और मीत

|| 518 ||

प्रीत अनूठी शक्ति है, इसका कहीं न मोल।
हृदय अर्पण जो करे, मन चाहें सो तौल।।

|| 519 ||

प्रेम समर्पण चाहता, प्रेम त्याग का नाम।
प्रेम पुनीता भक्ति है, कर्ता हो निष्काम।।

|| 520 ||

यह पथ निर्मल प्रेम का, भावों का अनुबंध।
रहे समर्पण जब तलक, नहीं टूटता फंद।।

|| 521 ||

प्रेम-नगर यदि जाइये, रखना दृढ़ विश्वास।
उगने पर सन्देह के, होगा सभी विनाश।।

|| 522 ||

प्रीत-डगर अति साँकरी, जामें दो न समाय।
बलिहारी उस प्रीत की, यामें लोक रमाय।।

|| 523 ||

प्रेम-प्रेम चिल्लाय जग, प्रेम न हाट बिकाय।
यह तो दुर्लभ कल्पतरु, सुकृत आप मिलाय।।

|| 524 ||

हृदय प्रीतम-कोठरी, दो ही रहें, न तीन।
प्राण-प्रीत की चाँदनी, नित-नित खिले नवीन।।

|| 525 ||

मैंने प्रेम-पुनीत पर, सब कुछ दिया चढ़ाय।
ज़ग वालों ने कर दिये, अर्थ-नये पर्याय।।

|| 526 ||

जाकी जैसी भावना, ताको तैसो गेह।
कृत्रिमता के सामने, छुपे न असली नेह।।

|| 527 ||

प्राण! प्रीत-चन्दन-हवा, मँहकाती तन-बेल।
बहुत कठिन संसार में, अरे! प्रीत का खेल।।

|| 528 ||

परिमल जैसी प्रीत को, राखो कितना गोय।
हृदय में छुपती नहीं, महक सहज ही होय।।

|| 529 ||

प्राण-प्राण में रम गये, प्राण हुये बेचैन।
रीति अनूठी प्रीत की, मिलकर मिले न चैन।।

|| 530 ||

नाजुक डोरी प्रीत की, सोच-समझकर तोल।
मितवा! तू तो बावरा, अरे! न कड़ुवा बोल।।

|| 531 ||

मितवा-हृदय-विटप पर, पका प्रीत का आम।
प्राण! किसी से मत कहो, निज प्रणय निष्काम।।

|| 532 ||

चाँद-चकोरी कब कहें, किसको किससे प्रेम?
जग में ओछे लोग ही, बतलाते-हैं-नेम।।

|| 533 ||

जो होना था हो गया, बहुत हुये बदनाम।
हृदय के अन्दर रमें, अब प्रीतम गुमनाम।।

|| 534 ||

दूर-दूर तक कर रहा, सागर निज विस्तार।
हँस-हँस लहरें ले रहीं, प्रीतम से उपहार।।

|| 535 ||

मन-मधुकर मरता नहीं, गहे कमल-उर कोश।
प्राण-प्राण में रम गये, प्राण न चाहें होश।।

|| 536 ||

हृदय-सागर में सखे! पल-पल उठे हिलोर।
प्रीत- शिखी करता रहे, मन को भाव विभोर।।

|| 537 ||

प्रीत-सोम को देखकर, मन-नलिनी खिल जाय।
अजब प्रीत की चाँदनी, उर-कोकी मुस्काय।।

|| 538 ||

प्रीत भयानक रोग है, कहीं नहीं उपचार।
तन-मन में जिसके लगा, भूल जाय घर-बार।।

|| 539 ||

प्रेम न जिस हृदय बसे, करो नहीं विश्वास।
वरना पछताना पड़े, होता जग उपहास।।

|| 540 ||

बड़े-बड़े असफल हुये, प्रीत-पंथ पर शूर।
प्रीति-रीति समझें कहाँ, कपटी-कामी क्रूर।।

|| 541 ||

प्रीत यकायक जुड़ गयी, शुभ-कर्मों का योग।
जीवन-सागर में हुआ, पथिक-नाव-संयोग।।

|| 542 ||

तन-मन जब अर्पित किया, जुड़ी सहज चित प्रीत।
रोम-रोम में रम रहा, मेरा सच्चा मीत।।

|| 543 ||

तेरे जैसा ही रहा, मेरे उर का नेह।
एक झलक में जुड़ गये, एक प्राण दो देह।।

|| 544 ||

जीवन-पथ में जब हुआ, तेरा-मेरा साथ।
प्राण-पपीहा को मिली, मन चाही बरसात।।

|| 545 ||

मीत! क्षणिक मुसकान से, अतुल प्रीत जुड़ जाय।
पलभर के ही मिलन से, नव जीवन मिल जाय।।

|| 546 ||

ऐसा हृदय कब मिला, निर्मल करता प्रीत।
चाहे लेता प्रण भी, निश्छल बनता मीत।।

|| 547 ||

मान दिया तुमने बहुत, दिया अपरिमित प्यार।
साथ मिला छूटे नहीं, जीत होय या हार।।

|| 548 ||

जन्म-जन्म के पुण्य सब, जब फलते हैं आय।
मिलता सच्चा मीत तब, जन्म सफल हो जाय।।

|| 549 ||

मीत कहीं मिलता नहीं, प्रीत सहज जुड़ जाय।
प्रतिबंधित उर-कोठरी, अनायास घुस जाय।।

|| 550 ||

जन्म-जन्म में तुम रहे, मेरे सच्चे मीत।
वरना, गुण है कौन-सा, करते इतनी प्रीत।।

|| 551 ||

मुझे नहीं कुछ चाहिये, ओ प्रीतम! गुमनाम।
दो पल का जीवन मिला, करो नहीं बदनाम!!

|| 552 ||

अमित सुफल हैं जो खिला, तेरा पावन प्यार।
जीवन-चकवा को मिला, प्रीत-चाँद उपहार।।

|| 553 ||

बाँधा सुरसरि को मगर, रूका न अब तक नीर।
प्रीत कभी मिटती नहीं, मारो कितने तीर।।

|| 554 ||

जैसे आता याद नित, मिलन-दिवस-मधुमास।
तैसे हृदय में बसी, मितवा! मिलन-सुआस।।

|| 555 ||

जैसे रविकर को निरख, खिलता कमल-वितान।
तैसे प्रीत-सुगन्ध से, महके उर-उद्यान।।

|| 556 ||

पहले तो मिलते रहे, निर्भय होकर मीत।
बदल गया परिवेश तो, बदल गयी अब प्रीत।।

|| 557 ||

पल-पल आता याद है, मीत-मिलन भरपूर।
रीति अनूठी प्रीति की, पास रहें या दूर।।

|| 558 ||

'मुझे न भाते मीत! तुम, बदल गयी है प्रीति'।
यह कहना कितना सरल, अजब प्रीति की रीति।।

|| 559 ||

तेरे मन जो चल रहा, मैं जानूँ सब यार!
तेरा यह आक्रोश ही, करता अमित दुलार।।

|| 560 ||

मीत गये ससुराल को, नया-नया था चाव।
देख सामने सास को, भूल गये सब ताव।।

|| 561 ||

भला-बुरा कुछ भी कहो, सब है तेरा हेत।
जैसा पहले बो दिया, वही उगेगा खेत।।

|| 562 ||

साथ अजी! तुम छोड़ते, हाय! न आती लाज!
हवा जगत की लग गयी, ओ! मेरे सरताज।।

|| 563 ||

जाते मुखड़ा मोड़कर, मितवा! रखना याद!
इस दुनिया के लोग ही, कर देंगे बर्बाद।।

|| 564 ||

भला-बुरा सखि! मत कहो, नहीं दिखाओ रोष।
प्रीत रही मन-पावनी, नहीं लगाओ दोष।।

|| 565 ||

कितनी मुश्किल तन मिला, किये पुण्य तो प्रीत!
युग-युग संचित पुण्य से, मिलता मन का मीत।।

|| 566 ||

अरे मीत! त्यों जा रहे, देकर गहरे घाव।
केवट ज्यों मंझधार में, छोड़ भगे रे! नाव।।

|| 567 ||

मीत! अमित खुशियाँ मिलीं, नहीं सताये याद!
सच! मैं अपने दर्द की, नहीं करूँ फरियाद।।

|| 568 ||

मीत! मुबारक हो सदा, जन्म दिवस हर साल!
जीवन की बगिया खिले, फूल फलें हर डाल।।

|| 569 ||

भावुक मनवा ठग गया, किसका कहें क़सूर?
प्यार हुआ, धोखा मिला, जग का यह दस्तूर।।

|| 570 ||

बीत गया युग साथ में, तुमसे असली नेह।
नहीं साँच को आँच कुछ, फिर कैसा सन्देह।।

|| 571 ||

मीत! प्रीत-उपहार को, पहले दिया नकार।
अब तुम इसको चाहते, रहा कहाँ वह प्यार।।

|| 572 ||

अहो भाग्य! तुमको मिला, अरे! प्रीत का दान।
मीत! इसे तू खो रहा, कर-कर मिथ्या मान।।

|| 573 ||

बहुत दूर मितवा गया, मन में रहा मलाल।
शुभे! प्रीत के हंस को, तीवर करे हलाल।।

|| 574 ||

मीत! कहीं मन जुड़ गया, या बदला चितचोर।
वरना, कारण कौन-सा? प्रीत हुई कमजोर।।

|| 575 ||

कितनी बातों ने किये, उर में अगणित शूल।
मितवा! तुम कहते रहे- 'हाय! हो गयी भूल'।।

|| 576 ||

मीत! प्रीत-उपहार का, कभी न करना त्याग।
वरना, लगती प्रीत को, पानी में भी आग।।

|| 577 ||

मीत! तनिक धीरज धरो, अधिक नहीं है देर।
विधना के घर फेर है, किन्तु नहीं अन्धेर।।

|| 578 ||

पाया हीरा प्रेम का, फिर क्यों करता भूल।
मितवा ने माटी दई, लाख टका है मूल।।

|| 579 ||

रोम-रोम में रम गया, मीत! अनूठा प्यार।
बहुत कठिन है भूलना, मीत! प्रीत-मनुहार।।

|| 580 ||

जिनको चाहो प्राण से, करते वे आघात।
सखे! दुधारु की, सहनी पड़तीं लात।।

|| 581 ||

प्रीत-सिन्धु सूखा पड़ा, जीव-जन्तु घबराय।
बगुला बैठा तीर पर, बाज रहे घहराय।।

|| 582 ||

चुभते उर में तीर-से, मितवा! तीखे बैन।
प्रोषितपतिका ज्यों सहे, चौमासे की रैन।।

|| 583 ||

कसक रहे हैं गात में, मिले निरन्तर घाव।
सच! घृणा-सी हो गयी, यही प्रीत का गाँव।।

|| 584 ||

जितनी पीड़ा दे सको, दे लो मेरे मीत!
सोच, चैन मिलता बड़ा करता कोई प्रीत।।

|| 585 ||

बड़भागी वह मीत है, बतलाता औकात।
दुनिया में मिलती कहाँ? दर्द भरी सौगात।।

|| 586 ||

क्षण बीता आता नहीं, रह जाती है बात।
मन को मन से तोलिये, तभी कहो कुछ तात!!

|| 587 ||

बहुधा पछताते सभी, करके ओछी घात।
सोच-समझकर कीजिए, मितवा! मुख से बात।।

|| 588 ||

'प्रीत' उसे कहते नहीं, जहाँ निहित हो स्वार्थ!
मैं' केवल 'मै' ही रहूँ, यह कैसा परमार्थ।।

|| 589 ||

तुमने धूमिल कर दिया, 'प्रीत', 'प्रीत का नाम'।
इसीलिये तो भोगते, मितवा! दुष्परिणाम।।

|| 590 ||

उठा ज़नाजा प्रीत का, मिटे सभी अरमान।
जिसको अपना दिल दिया, करे वही बदनाम।।

|| 591 ||

हमने नौका-प्रीत की, सचमुच दई चलाय।
निकली कागज-नाव सी, जल में गई समाय।।

|| 592 ||

काँच-महल ज्यों प्रीत का, रखो कोप से दूर।
हिंसक गतिविधियाँ करें, इसको चकनाचूर।।

|| 593 ||

केवल मन तुमको दिया, फिर भी इतना क्षोभ।
कैसा है यह सिलसिला, बढ़ता जाता लोभ।।

|| 594 ||

ओठों की मुस्कान को, वापस लाओ मीत!
सूरत कैसी हो गयी? देखो! दर्पण बीच।।

|| 595 ||

यादें मन को दे रहीं, अब केवल बहलाव।
टूटे रिश्ते प्यार के, आया है बदलाव।।

|| 596 ||

पल-पल करते थे बड़ी, प्रीतम रसमय बात!
अब तो केवल रह गयीं, झिलमिल यादें साथ।।

|| 597 ||

बहुत दूर छूटे सभी, वे रसभीने बोल।
जीवन-वीणास्वर रहित, शेष रहा ज्यों खोल।।

|| 598 ||

समझाऊँ मन को कहो, कैसे हो विश्वास।
पल-पल जिसको है रहा, मीत! मिलन मधुमास।।

|| 599 ||

अगणित छवि मन-पटल पर, चित्रलिखित-सी आज।
नैना जिनको देखकर, दे उठते आवाज।।

|| 600 ||

कौन भूल हमसे हुई, छोड़ गये जो साथ।
तनिक याद आती नहीं, गहा हाथ में हाथ।।

|| 601 ||

डूब जाय मँझधार में, ज्यों नाविक-आवास।
जीवन-नद में त्यों हुआ, उलटा प्रीत-निवास।।

|| 602 ||

मीत! भले तुम भूलना, सदा रहेगी याद।
मधुर मिलन की याद ही, हाय! करे बर्बाद।।

|| 603 ||

मितवा! अपना जन्म-दिन, रखना जरा संभाल।
चुम्बन ही उपहार में, भेज रहा कंगाल।।

|| 604 ||

विष-अमृत दोनों भये, मितवा! तेरे बोल।
जाकी जैसी भावना, समझे इनका मोल।।

|| 605 ||

अमित प्यार तुमको करूँ, और किया है मीत!
जीवन-भर करता रहूँ, तोल न पाओ प्रीत।।

|| 606 ||

पल-पल मिलन-बिछोह का, नाटक रचते आप।
कसक प्राण-तन-मन रहे, कैसा यह अभिशाप।।

|| 607 ||

जीवन में क्या शेष है? दिया न तुमको मीत!
पल-दो-पल की प्रीत पर, बार दई सब जीत।।

|| 608 ||

आभारी हूँ मीत! अति, बहुत दिया है मान।
प्रीत उसे कहते नहीं, जहाँ न जीवन-दान।।

|| 609 ||

प्रीत कमल का फूल है, मीत-'दिवाकर' जान।
जब प्रीतम को देखता, मुखरित हो मुस्कान।।

|| 610 ||

जहाँ प्रीत! समझे नहीं, जब प्रीतम की बात।
मितवा! चुप हो बैठजा, मत कर तब दुर्घात।।

|| 611 ||

प्रीत कभी करती नहीं, प्रीतम का अपमान।
नलिनी भरती कोश में, चन्दा की मुस्कान।।

|| 612 ||

सहज रूप प्रीतम मिले, अनायास घर आय।
स्वागत कर मुस्कान से, शिकवा सब मिट जाय।।

|| 613 ||

बसे बुराई प्यार में, प्यार रहे फिर नाय।
जब तक दृढ़ विश्वास है, प्यार न मिटने पाय।।

|| 614 ||

प्यार समर्पण चाहता, चाहे दृढ़ विश्वास।
भला सदा मितवा करे, मत कर मन उपहास।।

|| 615 ||

जरा-जरा-सी बात पर, मन को लेते फेर।
उर में शंका पालते, होगा घर का ढ़ेर।।

|| 616 ||

जो कुछ अपने पास था, किया सभी कुछ भेंट।
देर बहुत आये सखा! उठी जाय अब पैंठ।।

|| 617 ||

सोच-समझकर कीजिये, मानव-मन से प्रीत।
वरना पछताना पड़े, दग़ा करे जब मीत।।

|| 618 ||

डरकर या धन के लिये, छोड़ दिया ईमान।
भैया! इस परिवेश में, टूट गया इन्सान।।

|| 619 ||

सब दिन सम होते नहीं, यह प्राकृतिक न्याय।
मितवा! मिलन-बिछोह का, खत्म होय अध्याय।।

|| 620 ||

हृदय पर अधिकार था, प्रबल किया विरोध।
मितवा! तुम आजाद हो, बनूँ नहीं अवरोध।।

|| 621 ||

मन चाहें विचरण करो, करो प्रीत के भाव।
देर बहुत मितवा! हुई, दूर गयी वह नाव।।

|| 622 ||

कसक रही मन में बड़ी, रहा अधूरा नाम।
विधना! पूरण कीजिये, मितवा के सब काम।।

|| 623 ||

कल तक तो सब ठीक था, आज हुये लाचार।
दर्द-घुटन औ' प्रीत का, है कैसा आचार।।

|| 624 ||

शीतलता तन को मिली, मन में रही न खोट।
नव किसलय- से ओंठ पर, धरे ओंठ ने ओंठ।।

|| 625 ||

हार वरण स्वयं करी, जीत तुम्हारे नाम।
हार - जीत के खेल से, प्रीत रहे निष्काम।।

|| 626 ||

भैया! इस संसार में, मुँह-देखे के मीत।
हृदय! तू तो बावरा, मरुथल खोजे प्रीत।।

|| 627 ||

हार गये जग के सभी, शूरवीर-बलवान।
प्रीत-रोग का है नहीं, जग में कहीं निदान।।

|| 628 ||

मिथ्या मीठी बात कर, दिखलाता जो प्रीत।
ऐसे नर की बात में, कभी न फँसना मीत।।

|| 629 ||

गरल कभी संदेह का, प्राण! न मन में पाल।
दिया नियति ने प्यार जो, उसको रखो संभाल।।

|| 630 ||

मीत लगे जब मानने, खुद को चतुर-सुजान।
टूट जाय विश्वास तब, रहता नहीं रुझान।।

|| 631 ||

जहाँ लोंभवश प्रीत है, अपनापन सब व्यर्थ।
सहज समर्पण जब नहीं, कहो! प्रीति क्या अर्थ।।

|| 632 ||

प्रीतम मेरे! वे दिवस, दो मुझको लौटाय।
जिस उपवन में बैठकर, मन-चातक हरषाय।।

|| 633 ||

अरे! नहीं यश चाहिये, औ' धन-धान्य अपार।
शुभे! मुझे बस चाहिये, तेरा पावन प्यार।।

|| 634 ||

रहा प्यार का जल नहीं, उर-सरिता में आज।
दूर-दूर तक रेत है, मरुथल उड़ते बाज।।

|| 635 ||

प्यार यहाँ मिलता नहीं, मिलता है अपमान।
साहब तो शैतान का, करता है सम्मान।।

|| 636 ||

की काँटों से दोस्ती, बहुत बड़ी की भूल।
काँटों को मधुमास है, पल-पल रोते फूल।।

|| 637 ||

प्रीत नहीं जिस प्राण में, है वह अंधा कूप।
तपै दुपहरी जेठ की, अन्दर-बाहर धूप।।

|| 638 ||

भली-भाँति तुम जानते, तुम-बिन जीवन नाय।
फिर क्यों मुखड़ा मोड़ते, प्राण पलक में जाय।।

|| 639 ||

भले आदमी प्रीत की, खूब करी पहचान।
साथ छोड़कर जा रहे, मनो पथिक अनजान।।

|| 640 ||

उर की निश्छल वृत्तियाँ, जुड़ें परस्पर आय।
भाव-भावना का मिलन, जग में प्यार कहाय।।

|| 641 ||

बात-बात में रुँठना, यह कैसा मनुहार।
क्रोध नाश का बीज है, रखे न संचित प्यार।।

|| 642 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, तब मिलती है जीत।
छोटी-छोटी बात से, करो न धूमिल प्रीत।।

|| 643 ||

दुर्लभ हीरा प्रेम का, सबको मिलता नाय।
अमित पुण्य कोई करे, सहज उसे मिल जाय।।

|| 644 ||

निहित वासना प्रीत में, यह कहता अज्ञान।
सहज रूप तन-मन मिलें, इक-दूजे में आन।।

|| 645 ||

जब तक मन निश्छल रहे, बसे स्वार्थ से दूर।
रहे समर्पण प्रीत में, प्रीत मिले भरपूर।।

|| 646 ||

युग-युग में लगते रहे, बहुत कड़े प्रतिबंध।
मिटा सके क्या प्रीत को, तानाशाही-फंद।।

|| 647 ||

जितनी बढ़ती चौकसी, लगें कड़े प्रतिबंध।
उतनी बढ़ती प्रीत है, अजब प्रीत अनुबंध।।

|| 648 ||

अगणित हमराही मिले, तुम-सा मिला न कोय।
सहज भाव से पूछता, 'मीत! दुःखी क्यों होय'??

|| 649 ||

देख अनूठे प्यार को, तन-मन उठता झूम।
प्रीत-तरंगित अधर तब, लें अधरों को चूम।।

|| 650 ||

उठता हृदय-सिंधु में, चन्द्रमुखी लख ज्वार।
तोड़ अधर प्रतिबंध को, चुम्बन बनता प्यार।।

|| 651 ||

साथ छोडकर जा रहे, भला निभाया साथ।
साथ निभाना था नहीं, फिर क्यों पकड़ा हाथ।।

|| 652 ||

नाँदा से की दोस्ती, पाया घुटन-विरोध।
मौन-प्रीत-सौगात को, समझे है प्रतिशोध।।

|| 653 ||

बालसखा गोकुल बसे, मिली बहुत-सी प्रीत।
राधा जी के दर्द को, पढ़ न सके मन-मीत।।

|| 654 ||

जीवन-पथ में जो मिला, दिया उसी को मान।
जिसको चाहा प्राण-सम, लिये उसी ने 'प्रान।।

|| 655 ||

दर्द-भरे मन की व्यथा, समझ न पाया कोय।
पीड़ा देकर सब गये, छोड़ अकेला मोय।।

|| 656 ||

रहा न अब तो प्यार में, सहज समर्पण-प्यास।
अब के प्रेमी देखते, वैभव-विला-विलास।।

|| 657 ||

साथ तुम्हारा छोड़कर, अब जाऊँ किस ठौर?
दुनिया में कोई नहीं, तुम-बिन मितवा और।।

|| 658 ||

चला जा रहा था कहीं, पकड़ लिया क्यों हाथ?
साथ-साथ चलने लगा, फिर क्यों छोड़ा साथ??

|| 659 ||

रहा वासना से नहीं, कभी प्रेम-सम्बंध।
डूबा जो भी प्रेम में, मिटें सकल प्रतिबंध।।

|| 660 ||

गुम-सुम-से बैठे रहें, औ' मुखड़े पर क्रोध।
हाय! प्रीत के गाँव में, यों लेते प्रतिशोध।।

|| 661 ||

जाते हो क्यों छोड़कर, बहुत दिनों का साथ?
हाथ दिया जब हाथ में, कठिन छुड़ाना हाथ।।

|| 662 ||

बिन सोचे समझे दिया, मितवा! तुमने शाप।
ईश्वर की सौगंध का, भोग रहे अभिशाप।।

|| 663 ||

रहीं अतल गहराइयाँ, प्रीत-सिंधु के बीच।
लैला-मजनूं डूबते, लेते उपवन-सींच।।

|| 664 ||

मन मोहक लगता बड़ा, प्रीत-प्रीत का गाँव।
दर्द-कसक-पीड़ा लगें, ज्यों मरुथल में छाँव।।

|| 665 ||

बातों में मधुरस नहीं, तीखे चुभते बान।
कहने को तो प्राण हैं, बातें लेती जान।।

|| 666 ||

आज समर्पणहीन है, हृदय का सम्बंध।
मन-वाणी पर लग रहे, आज कड़े प्रतिबंध।।

|| 667 ||

सूखा दरिया प्रीत का, पवन उड़ाती धूर।
दूर-दूर तक जल नहीं, सिकता है भरपूर।।

|| 668 ||

जिस जीवन में रस नहीं, वहाँ प्यार है व्यर्थ।
शंकाओं के दायरे, बढ़ते जाते अर्थ।।

|| 669 ||

बिना दूसरे हाथ के, बजे न ताली मीत!
तैसे बिन विश्वास के, जुड़े न असली प्रीत।।

|| 670 ||

जिसे समर्पण कर दिया, तन-मन, जीवन-धाम।
उस हृदय के देव को, समझो नहीं गुलाम।।

|| 671 ||

यार! कहाँ कुछ बँट रहा, कहाँ धरा है मोल?
पगले! मीठे बोल को, नहीं तुला में तोल।।

|| 672 ||

कौन नहीं यह जानता, सदा दिया है साथ।
क्या इतना अब गिर गया, दूँ कीचड़ में हाथ।।

|| 673 ||

धीरज धर, विश्वास कर, मन में रख दृढ़ क्षेम।
सत्यप्रीत के सामने, टिके न मिथ्या प्रेम।।

|| 674 ||

जाने कैसे हो गये, कहते नहीं विशेष।
सपनों में नित-नित मिलें, प्रीतम बसे विदेश।।

|| 675 ||

निज गति को कैसे कहें, जानें नैन-सुजान।
प्राण बिना ज्यों तन रहे, मुखड़ा बिन मुस्कान।।

|| 676 ||

जाने कैसे हो गये, इस जग के दस्तूर।
चाहो जितना प्राण से, होते उतना दूर।।

|| 677 ||

प्रीति-नीति-निष्ठा सभी, हुई आस्था चूर।
भैया! इस कारण हुये, तुमसे इतना दूर।।

|| 678 ||

तन से, मन से, प्राण से, सींचा हृदय-कुँज।
बाण लगा हिरणी गिरी, हुई प्रीत सब लुँज।।

|| 679 ||

स्वच्छ-सलौना रूप लख, मिला नवल विश्वास।
खिली प्रीत की चाँदनी, फूल रहा मधुमास।।

|| 680 ||

सोच-समझकर कीजिये, वैर-प्रीति औ' मेल।
मन जिसमें रमता नहीं, असफल हो वह खेल।।

|| 681 ||

खोज-खोज, तन-मन थका, मिला न मन को धीर।
प्रीत! अरे मन-पावनी, कहाँ छुपी तुम हीर।।

|| 682 ||

मन में चुभता तीर-सा, सुधियों का अहसास।
कैसे भूलें अब सखे! पल भर का विश्वास।।

|| 683 ||

प्रतिशोधों के सामने, झुकें न मन के मीत।
अवरोधों को तोड़कर, सच की होती जीत।।

|| 684 ||

अन्त बुरा होता वहाँ, जहाँ नियम न रीत।
मक्कारी के दौर में, मन! चाहे तू प्रीत।।

|| 685 ||

पथिक! आज क्यों खोजते? कहाँ गये वे मीत?
पल-पल जिनको देखकर, जुड़ती कितनी प्रीत।।

|| 686 ||

जिस दिन भी होवे तुम्हें, भूलों का अहसास।
मेरे आँगन में सखे! लाना फिर मधुमास।।

|| 687 ||

उर-वीणा में स्वर नहीं, शिथिल हुये सब तार।
मुक्ता धागे में पुरे, कहते मुक्ताहार।।

|| 688 ||

हम-तुम कुछ ऐसे हुये, नदिया के दो छोर।
एक पथिक इस ओर है, दूजा है उस ओर।।

|| 689 ||

प्रीत कहूँ? दुर्भावना? या बिछोह परिताप।
मन को सुख मिलता नहीं, भला दिया अभिशाप।।

|| 690 ||

दुनिया में मिटते सभी, राजा-रंक-फकीर।
केवल निश्छल प्रेम से, अमर हो गयी हीर।।

|| 691 ||

धन-वैभव औ' रूप की, जग में क्षण-औकात।
अमित पुण्य फलते तभी, मिले प्रीत-सौगात।।

|| 692 ||

असफलता-अपमान जग, पल-पल मिलते मीत!
भाव-कर्म-मन में नहीं, रहे न अनुपम प्रीत।।

|| 693 ||

अब तक सुधि लीनी नहीं, कौन बसे हो देश?
पाती भी दीनी नहीं, अखरे मौन विशेष।।

|| 694 ||

जगत-सिनेमा प्रीत का, सुख-दुःखमय व्यापार।
जड़-चेतन मिलकर करें, अभिनय विविध प्रकार।।

|| 695 ||

हुआ शिथिल विश्वास तो, प्रीत निरंकुश होय।
बिन अंकुश-विश्वास के, बाँध सका न कोय।।

|| 696 ||

कहाँ गयी वह भूमिका, कहाँ गया वह नेह?
अँखियाँ जिनको खोजतीं, पग-पग-आवत गेह।।

|| 697 ||

तन-मन-धन सब कुछ दिया, निश्छलता के संग।
हाय! प्रीत भी रंग गयी, अब दुष्टों के रंग।।

नारी

|| 698 ||

नारी! तुम मातेश्वरी, नारी! तुम प्राणेश।
नारी! तुम परमेश्वरी, नारी! तुम नागेश।।

|| 699 ||

दुर्गा-चण्डी-इंदिरा, देवी-रूप अपार।
तेरी करते वंदना, सकल जगत आचार।।

|| 700 ||

राम-कृष्ण-बलराम की, तू ही सृजनहार।
नारी! तूने ही किया, युग-युग में उद्धार।।

|| 701 ||

नारी का वर्गीकरण, अति दुरुह है काम।
मेरे तो बस मन रुचा, माता-रूप-ललाम।।

|| 702 ||

रामायण-गीता बहुत, पढ़े धर्म-विज्ञान।
सबका ही प्रतिपाद्य है,-'नारी बड़ी महान'।।

|| 703 ||

सीता के बिन राम की, रामायण-बेकार।
गीता के भी मूल में, नारी है आधार।।

|| 704 ||

नारी के ही त्याग से, गौतम बने महान।
नारी की ही प्रेरणा, युग पुरूष वर्द्धमान।।

|| 705 ||

दुनिया में अब तक हुये, जितने रचनाकार।
सबको नारी से मिली, प्रेरक-शक्ति अपार।।

|| 706 ||

आदिकवे: तो लिख गये, 'नारी बड़ी महान'।
आज सभी मिल कर रहे, नारी का उत्थान।।

|| 707 ||

माता-भगिनी-सहचरी, तीनों रूप अपार।
नारी जग में पूज्य तो, क्यों होता व्यभिचार।।

|| 708 ||

नारी है संप्रेरणा, काव्य-जगत के बीच।
रखना इसे सहेजकर, प्राण-नीर से सींच।।

|| 709 ||

नारी के हर रूप में, छुपे कृष्ण औ' राम।
नारी! तुम स्मरणीया, कोटिश नमन-प्रणाम्।।

|| 710 ||

नारी से बढ़कर नहीं, जग में कोई मीत।
हुई क्रोध की ज्वाल तो, खाक करे सब प्रीत।।

|| 711 ||

नारी-हठ प्रबल रही, सुने न कोई तर्क।
पल भर में करती सभी, मान-प्रीत-यश गर्क।।

|| 712 ||

अपनी रक्षा का उसे, लेना हैं अधिकार।
वरना, तो पिटती रहे, बिना बात हर द्वार।।

|| 713 ||

य़ों तो विद्या-ज्ञान के, विविध आज आयाम।
युद्ध कला सीखे बिना, टूटें-गिरें धड़ाम।।

|| 714 ||

नारी को अनिवार्य हो, युद्ध कला का ज्ञान।
जीवन-यापन के लिए, पढ़े समाज विज्ञान।।

|| 715 ||

पुरूष विधाता सृष्टि का, निश्चित है दिनमान।
लेकिन, नारी के बिना, बना कहाँ उपमान?।

|| 716 ||

नर-नारी को सृष्टि में, यों तो सम अधिकार।
चालाकी से पुरूष ने, बदला निज संसार।।

|| 717 ||

बिना बात के आक्रमण, पशुओं जैसी सोच।
मानवता को कर दिया, हाय! मनुज ने पोच।।

|| 718 ||

परहित, पर-उपकार में, जीवन आये काम।
रोम-रोम में 'राम' का, सदा रहे माँ! नाम।।

❁ ❁ ❁

पथ की अनुभूतियाँ

अपनी बात

बचपन में सर्वप्रथम भारत के मानचित्र में, फिर विश्व के मानचित्र में सागर को देखा। उस समय गाँव में प्राथमिक–शिक्षा – पाठशाला में पढ़ता था। अभी तक बोध है उस एटलस का, जिसमें सागर का चित्र देखा था। शनैः शनैः बढ़ी आयु के साथ सागर को देखने की ललक बढ़ती गयी। मन कल्पनाओं में डूबता चला गया। कैसा होगा सागर.......? आजतक नहीं देखा है सागर...............!

कल्पनाओं के सागर में तो अनेक बार स्नान किया है। मन की आँखें कल्पना के रथ पर आरूढ़ होकर जब चाहें, सौन्दर्य के आगार ....सागर को निहार लेती हैं। लेकिन, जब आँखें खुलती हैं, तो कमरे की चाहरदीवारी के अलावा कहीं कुछ दृष्टिगोचर नहीं होता, और उसी के बीच पड़ी चारपाई पर स्वयं को पड़ा पाता हूँ।

हाईस्कूल उर्त्तीर्ण किया तो बिना किसी योजना के प्रथमवार चलचित्र देखा, और चलते–थिरकते–उफनते सागर के दर्शन कर फूला नहीं समाया मेरा मन...........! मैं जानता हूँ, जितनी–जितनी सागर को देखने की लालसा बढ़ती गयी है, उतनी दूर मुझसे सागर होता गया है। जीवन की कुछ विवशताएँ हैं, अन्यथा, आज के इस वैज्ञानिक–युग में पलक झपकते ही सब कुछ तो सम्भव है। मैं सागर को देखना चाहता हूँ – सहज और अनायास रूप में जीवन के लिए।

मैं जानता हूँ वह किसी दिन अवश्य मिलेगा। जिस दिन वह मिलेगा, वे क्षण भला कैसे होंगे? कितने रोमांचक होंगे? कौन होगा उन क्षणों में मेरे साथ? कुछ नहीं ज्ञात! लेकिन, जब वह मिलेगा तो कहूँगा

– 'यार! तुमने बहुत प्रतीक्षा करायी है। तुम कितने गम्भीर हो! कितना उदार है तुम्हारा यह विस्तार! तुम हम मानवों को अपनी शैली क्यों नहीं बाँटते?' मैं लड़ूँगा, जैसे कि कोई प्रेयसी अपने प्रेमी से नोंक–झोंक करती है। गुस्सा नाक पर चढ़ता है, रूठती है, खिझाती है, और फिर अपनी तिरछी मनोरम मुस्कान से अपने प्रेमी के हृदय को ताज़गी से भर देती है। खैर, जब तुम मिलोगे, पता नहीं क्या–क्या करूँगा? और, क्या–क्या कहूँगा?

फिलहाल, अपने उसी सागर को देखने की तलाश ने मुझे गाँव से निकालकर यहाँ तक ला दिया है। जीवन की डगर पर चल रहा हूँ.........हाँ, हाँ, यार् तेरी तरफ ही तो बढ़ रहा हूँ।

जीवन की डगर भी बड़ी मनहर है। कभी एक–सी नहीं रही यह! इस डगर के अनुभव भी बड़े खट्टे–मीठे–तीखे स्वादों वाले हैं। इस डगर पर चलते हुये मैं कभी हँसा हूँ, तो कभी रोया! कहीं प्रकृति की सुरम्य रचना ने मेरे मन को अपनी ओर आकृष्ट किया है, तो कहीं, कोमल मन लुभाया भी है। कहीं–कहीं घंटों खड़े होकर प्रकृति के अनिंद्यः सौन्दर्य का पान किया है तो कभी वीभत्स–स्थितियों ने मेरे संवेदनशील मन को अन्दर तक झकझोरा है। सर्वहारा वर्ग की दयनीय स्थिति ने कहीं मेरे नेत्रों को सज़ल किया है, तो सर्वसम्पन्न–सुविधा भोगी शोषक–वर्ग ने मन में आक्रोश उत्पन्न किया है। डगर पर चलते हुए अनायास मन को छूने वाले किन्हीं सहृदयों ने अपनी सहज आत्मीयता और निश्छल प्यार देकर मेरे रोम–रोम को गुदगुदाया है तो किन्हीं स्वजनों ने ही अकारण आदर्शों की होली फूँक दी है।

गाँव की धरती पर जन्मा, छप्परों के नीचे पला–बढ़ा और उन्मुक्त आकाश के नीचे संवरा यह बचपन, जिसकी रग–रग को कंडों से निकले सुवासित धुँए ने तपाया है, जिसे नीम की सघन छाया और अमराइयों ने शीतलता दी है, जिसे ऋतुओं के सामयिक प्रताप ने गढ़ा है, जिसे गाँव की गली, घर, आँगन की सौंधी–सौंधी धूल और

दही–सी पुष्ट–तरल गलियारों ने परिपुष्ट किया है, जिसने मेरे मन में प्यार, संघर्ष और स्वाभिमान के पवित्र भाव पैदा किये हैं कि इन्सानों के बीच कैसे रहा जाय? तूफानों से कैसे लड़ा जाय? बाढ़ में किस तरह रहा जाय? अकाल में कैसे बचा जाय? और इन सबसे अलग नियति से संघर्ष करते हुए कैसे आत्मसम्मान और अस्मिता को ज़िन्दा रखा जाय?

स्थितियाँ कितनी ही विकट और विषम क्यों न रहीं हों, डगर पर चलते हुए। कितने ही तीक्ष्ण शूलों ने पैरों को रक्त रंजित किया है। और, कभी–कभी तो विफलताओं ने मिलकर साजिश की है, पर पता नहीं क्यों? वह मन कभी हिम्मत नहीं हारा! अनेक बार मोहभंग भी हुआ है। परिजनों ने हृदय–विदारक यातनाएँ दी हैं। सोचा, चलो लौट चलें, फिर वापस कहीं किसी गहन अंधकार में बहुत दूर....... जहाँ कोई न हो, सिर्फ मैं और मेरा पलायन हो! विचारों के इन आरोह–अवरोह में, तत्क्षण, कोई कहता है – 'अरे! बड़े घटिया आदमी हो! तनिक–सी विफलता क्या मिली कि हिम्मत ही हार गये! बड़ा दम भरते थे–सागर से मिलने का। लोग क्या कहेंगे–चले थे सागर से मिलने। अरे भाई! आगे बढ़ों!...........आगे..........! कोई तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।'

एक बिजली–सी कौंध उठती है। आँखें, कुछ क्षण के लिए बन्द हो जाती हैं। मैं ठिठक जाता हूँ! कुछ राही पूछते हैं – 'क्या बात हैं?' 'कुछ नहीं – तुम्हारा इन्तजार है'। कहते हुए मैं चल पड़ता हूँ – जीवन की डगर पर आगे और आगे............! अनेक पगडण्डियाँ मिलती है, पंथ दिखाई देते हैं, कुछ मन को आकर्षित करते हैं, कुछ प्रभावित करते हैं, उनकी सुनता हूँ, मन में गुनता हूँ, और फिर, आगे चल पड़ता हूँ। अनेक जंगलों और मंगलों को पार करता हुआ, कभी स्वयं को किसी सरोवर के किनारे खड़ा पाता हूँ, तो कभी गाँव का झीलनुमा तालाब ही मन को पवित्रता से भर देता है। कभी जल–रहित रेत से

डबडबाती नदी को पार करता हूँ, तो कभी गंगा–सरीखी नदी के निर्मल जल में गोता लगाता हुआ स्वयं को प्रफुल्लित पाता हूँ। कभी कन्दराओं से गुजरा हूँ, कभी ढलानों से उतरा हूँ, कभी चोटियों पर चढ़ा हूँ, लेकिन, घाटियों की गहराई, पहाड़ियों की ऊँचाई, मेरे मन की उड़ान को कभी धीमी नहीं कर पाती! हाँ, मुझे जिस सागर के किनारे की तलाश है, वह मुझे मिलना तो दूर, अभी देख भी नहीं पाया हूँ।

वस्तुतः गाँव से शुरू हुई यह यात्रा निरन्तर जारी है, और समुद्र की प्राप्ति तक चलती रहेगी। जीवन की डगर पर चलते हुए, इस यात्रा की विविध स्मृतियों और अनुभवों की रसमयी गाथाएँ – 'पथ की अनुभूतियाँ'।

'पथ की अनुभूतियाँ' में जीवन की यात्रा का भोगा हुआ यथार्थ कहीं पर आपको अपना–सा लगे, तो उसी क्षण मेरी यात्रा का यह श्रम सार्थक हो जायेगा। आपकी महज एक मुस्कान से मेरी थकान ताज़गी में ढल जायेगी, क्योंकि, मेरी तो यही कामना रही है –

ऐसा कुछ कर चलें, सखे! हम,
काल–चक्र के आते–आते!
धरती मँहके, अम्बर मँहके,
मँहक उठे जग जाते–जाते।।

25 फरवरी, 1997

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

पैसा

|| 1 ||

पैसा-पैसा सब तरफ, पैसा ओर न छोर।
पैसा के कारण बना, मानव कैसा चोर।।

|| 2 ||

पैसा में तुलने लगा, अब प्रेमी का प्यार।
पैसा में संचित हुआ, सकल जगत व्यवहार।।

|| 3 ||

पैसा में सब बिक गये, आज मीत औ' प्रीत।
पैसा ने धूमिल किये, गीत और संगीत।।

|| 4 ||

पैसा ने बदले सभी, नेह-नियम-उपहार।
पैसा ही करने लगा, अजब प्रेयसी-प्यार।।

|| 5 ||

पैसा ने बदलीं सभी, आज जगत की नीति।
मिथ्या रिश्ते हो गये, उलट गयीं सब रीति।।

|| 6 ||

'कर्फ्यू' जैसे हो गया, प्रतिबंधों का शूल।
पैसा तैसे बन गया, सम्बन्धों का मूल।।

|| 7 ||

'जिसने पैसा के लिये, बेच दिया है नेह।
उसके जाने जग मिटे, मिटे नेह या गेह।।

|| 8 ||

पैसा से ही देख लो, घर-बैठै सब रंग।
पैसा बिन कटती रही, अब तक प्रीत-पतंग।।

|| 9 ||

पैसा से मिलता यहाँ, मान और अपमान।
पैसा जिनके पास है, उनका हो सम्मान।।

|| 10 ||

पैसा हावी हो गया, मंदिर-मस्जिद-धाम।
पैसा में कौतुक बड़ा, बदल देय परिणाम।।

|| 11 ||

पैसा आये पास में, बदल जाय इंसान।
पैसा से पहले मिलें, मन्दिर में भगवान।।

|| 12 ||

पैसा में साहस बड़ा, पैसा नरसिंहराव।
पैसा रहा न पास तो, आता कभी न ताव।।

|| 13 ||

पैसा की ताकत बड़ी, पैसा महा-महान।
पैसा में बिकता रहा, सदा-सदा इन्सान।।

|| 14 ||

पैसा जग-विख्यात है, लेकिन यह भी तथ्य।
साथ न जाता अन्त में, रह जाता है सत्य।।

|| 15 ||

श्रम से जो पैसा मिले, उसका करना भोग।
सीमित कर निज लालसा, वरना लगजा रोग।।

|| 16 ||

बहुत अधिक पैसा मिला, जनहित कर उपयोग।
मन मैला होवे नहीं, उतना कर उपभोग।।

|| 17 ||

पैसा की धारा बहे, राग और अनुराग।
पैसा में बिकने लगे, सखियाँ और सुहाग।।

|| 18 ||

रीति-नीति सिद्धान्त का, लगा नहीं बाजार।
राजनीति के खेल में, पैसा है आधार।।

|| 19 ||

जब तक पैसा जेब में, अभिनंदन-सम्मान।
पैसा बिन माँ-बाप भी, लगते असुर समान।।

|| 20 ||

युग बदला, बदले सभी, मानव के आदर्श।
पैसा आया सामने, बदल गये निष्कर्ष।।

|| 21 ||

सतयुग-द्वरपर-युग नहीं, यह कलियुग का द्वार।
पैसा लेकर तुम चलो, कहलाओ अवतार।।

|| 22 ||

पैसा से होते यहाँ, नये-नये सत्संग।
पैसा बिन, मजबूरियाँ, बेच रही हैं अंग।।

|| 23 ||

पैसा से देखो! बना, अमरीका सरताज।
बाप ने मारी लोमड़ी, बेटा - तीरंदाज।।

|| 24 ||

अब तो साधू-संत भी, देते उसको ज्ञान।
पैसा जिनके पास है, कहते उन्हें महान।।

|| 25 ||

पैसा के आगे हुआ, रिश्ता-बेईमान।
अमरीका के सामने, झुकता सकल जहाँन।।

|| 26 ||

नहीं चाहिये योग्यता, नहीं ज्ञान-विज्ञान।
पैसा है यदि पास में, व्यर्थ सभी प्रमान।।

|| 27 ||

निर्धन से सब पूछते, धर्म-जाति-कुल-गोत।
भला कहीं धनवान से, यहाँ पूछता स्रोत।।

|| 28 ||

धनवानों के हो गये, जग में नाना रूप।
नगर-मुहल्ला-गाँव के, अलग-अलग हैं, भूप।।

|| 29 ||

पैसा-पैसा हो गया, जीवन का अभिशाप।
बिन बेटी-बेटा बना, सबका भाई-बाप।।

|| 30 ||

धन के लिये मशीन में, बदल गये हैं लोग।
कुनबा बूढ़ा हो गया, चुका नहीं है रोग।।

|| 31 ||

कैसा बिगड़ा काम हो, पर पैसा हो पास।
थोड़ी झलक दिखाइये, अफसर बनता दास।।

|| 32 ||

जब तक पैसा गाँठ में, रहती ऊँची बात।
ज्यों चन्दा के साथ में, बनती निर्मल रात।।

|| 33 ||

बड़े-बड़े पागल यहाँ, करें प्यार का मोल।
पैसा से मिलता सभी, मिलें न प्यारे बोल।।

|| 34 ||

धनवानों को चाहिये, पग-पग पर आभार।
निर्धन चलता ही रहे, सुमिर प्राण-आधार।।

|| 35 ||

दीन-दशा ज्यों देखकर, हृदय होय विदीर्ण।
धन-वैभव ने त्यों किया, मानव को संकीर्ण।।

|| 36 ||

पैसा ही सब कुछ नहीं, इस जग में हे मीत!
पैसा से किसको मिली, अरे! जगत में प्रीत।।

|| 37 ||

पैसा जिसके पास में, लोग कहें भगवान।
दीन-दुःखी, असहाय ज्यों, पैसा-बिन इन्सान।।

|| 38 ||

हाथ-पैर चलते रहें, पूजे सारा गाँव।
जब तक पैसा पास में, दुनिया करती छाँव।।

|| 39 ||

धनवानों के देश में, रिश्ते चकनाचूर।
आते जितना पास में, जाते उतना दूर।।

|| 40 ||

यश-वैभव-धन सम्पदा, जीवनगत अवरोध।
ये मानव के मार्ग में, खड़े करें प्रतिरोध।।

|| 41 ||

धन-वैभव था पास में, रहता जीव उदास।
छोड़ दिया प्रासाद तो, पाया आत्म-विकास।।

|| 42 ||

धन-वैभव जब तक रहे, पग-पग मिलते भोग।
कंगाली के दौर में, पग-पग ठगते लोग।।

|| 43 ||

कुछ भी तू लाया नहीं, जब आया था यार!
फिर किस कारण से करे? तू पैसा से प्यार।।

|| 44 ||

करलो कितने यत्न तुम, मिले न धन से मान।
जितना विधना ने रचा, मिले समय पर आन।।

|| 45 ||

यों तो हर नगरी पड़े, बड़े-बड़े धनशाह।
लेकिन, हमें न दीखता, कोई भामाशाह।।

|| 46 ||

हमने देखे जगत में, बड़े-बड़े धनवीर।
आया दिन अवसान का, चला नहीं धन-तीर।।

|| 47 ||

बड़े-बड़ों को देखलो, सबको धन का रोग।
कैसे-कैसे हो गये, आज देश के लोग।।

|| 48 ||

अतिशय धन-संचय करे, यह विपदा का मूल।
धन-संचय जिसने किया, पड़े भोगने शूल।।

|| 49 ||

धन-संचय करता रहा, मानव-मन-अविराम।
सात पीड़ियाँ भोगतीं, बहुत दुःखद-परिणाम।।

|| 50 ||

धन-संचय इतना करें, बढ़े नहीं अभिमान।
याचक आये माँगने, बना रहे सम्मान।।

|| 51 ||

रहा भावना का नहीं, आज जगत में अर्थ।
अब पैसा के सामने, प्यार हुआ है व्यर्थ।।

|| 52 ||

जब तक पैसा पास में, करे प्रेयसी प्यार।
धनवानों को विश्व में, मिलें सकल उपहार।।

|| 53 ||

पैसा जिसके पास में, मिलता उसको प्यार।
पैसा रहा न पास तो, पग-पग मिलती हार।।

|| 54 ||

आखिर धन लेकर कहाँ, जायेगा इन्सान?
अन्त समय कुछ साथ में, जाय नहीं नादान।।

|| 55 ||

पता नहीं, किस लक्ष्य हित, दौलत जोड़े यार!
जिस दिन पकड़ा जाय रे!, बहुत पड़ेगी मार।

भेड़िया

|| 56 ||

चला भेड़िया घूमने, ले भेड़ों को साथ।
गुमसुम भेड़ें जा रहीं, साथ झुकाये माथ।।

|| 57 ||

निडर भेड़िया ले रहा, कानन का आनंद।
पशु-पक्षी हैरान हैं, सिंह सोय सानंद।।

|| 58 ||

भेष बदलकर भेड़िये, घुसे नगर औ' गाँव।
गली-गांव सूनी पड़ी, सब तरुओं की छाँव।।

|| 59 ||

युग बदला, बदले सभी, पिछले राज-समाज।
नगर-गाँव औ' शहर में, करें भेड़िये राज।।

|| 60 ||

फौज भेड़ियों की खड़ी, अजगर जैसे साँप।
पड़ी सामने भेड़ जो, निगल गये चुपचाप।।

|| 61 ||

जिनपर हमको नाज था, बने भेड़िये आज।
पल-पल तन को खो रहे, आती तनिक न लाज।।

|| 62 ||

अब भेड़ों की अस्मिता, बोलो कौन बचाय।
खुले आम अब भेड़िया, भेड़ें रहा चबाय।।

आग

|| 63 ||

नगर-गाँव सब जल रहे, दूर-दूर तक शोर।
खड़े-खड़े सब देखते, आग लगी चहुँ ओर।

|| 64 ||

यह कैसी होली जली, चहुँ दिशि फैली आग।
गाँव-खेत-खलियान भी, खेल रहे हैं फाग।।

|| 65 ||

महानगर सब जल रहे, आग फैलती जाय।
गाँव-नगर-कस्बा जलें, धुँआ दीखता नाय।।

भाग्य-चक्र

|| 66 ||

जैसा जिसका भाग्य है, उसे वही मिल जाय।
ज्यों महिला के गर्भ में, बाल-बालिका आय।।

|| 67 ||

मानव-जीवन चक्र को, विधना रहा चलाय।
दुःख-सुख-हर्ष-विषाद का, पहिया चलता जाय।।

|| 68 ||

कितने ही कर लीजिये, खोटे-खरे उपाय।
नर-नारी के जोड़ सब, विधि ने रचे बनाय।।

|| 69 ||

कैसा जीवन-चक्र है? कहाँ गया उत्कर्ष?
विश्वगुरु का हो रहा, घर में ही अपकर्ष।।

|| 70 ||

दक्ष हाथ बेकार हैं, मिली न चाही जेल।
मारे-मारे फिर रहे, हाय! नियति का खेल।।

|| 71 ||

यह कैसा दुर्भाग्य है? कर्ता करे मज़ाक।
अब जीवन लगने लगा, ज्यों मरुथल में ढाक।।

|| 72 ||

पढ़-लिख पारंगत हुये, किस्मत से लाचार।
रोजी-रोटी के लिये, छोड़ दिया आचार।।

|| 73 ||

सहज भाव मिलता यहाँ, मान और अपमान।
रहे नियति का साथ तो, मिले बहुत सम्मान।।

|| 74 ||

दशों दिशायें देखतीं, प्रलय और उत्कर्ष।
बैर-प्रीति, बिछुड़न,-मिलन, प्राकृतिक-निष्कर्ष।।

|| 75 ||

सारा श्रम निष्फल हुआ, हाय! नियति का दौर।
मेरे मन कुछ और है, कर्ता के मन और।।

|| 76 ||

बूँद-बूँद ज्यों घट भरे, तैसे जुड़ता मान।
नियति-चक्र के सामने, उलट जाय सम्मान।।

|| 77 ||

कुछ अपनी लाचारियाँ, और नियति का खेल।
देखो! पढ़कर फारसी, बेच रहे हैं तेल।।

|| 78 ||

अथक परिश्रम के किये, छूट सफलता जाय।
मितवा! रूँठा भाग्य है, करो निराशा नाय।।

|| 79 ||

समय-समय की बात है, कौन दिखाता लीक।
अनपढ़ तो घोड़े चढ़ें, पढ़े माँगते भीख।।

|| 80 ||

व्यर्थ परिश्रम ही गया, हुये न मन के काज़।
बड़े भाग्य से ही मिलें, मीत, प्रीत औ' राज।।

|| 81 ||

होनहार होकर रहे, चूर होय सब ज्ञान।
मनुज बली होता नहीं, समय बड़ा बलवान।।

|| 82 ||

बुरे दिनों के फेर से, उलटे होते काज।
समय-समय की बात है, बगुला झपटे बाज।।

|| 83 ||

दर्द-कसक-पीड़ा-घुटन, मिले नियति उपहार।
मन के जीते जीत है, मन के हारे हार।।

|| 84 ||

पढ़ते-पढ़ते बन गया, युवक गाँव का राज।
होना था इन्जीनियर, बजा रहा है साज।।

|| 85 ||

जैसा जिसके भाग्य में, देता है करतार।
गयी माँगने पूत को, खो आयी भरतार।।

|| 86 ||

हाथ लिये थाली खड़े,जन-जन रहे निहार।
हाय! भाग्य की दीनता, आँखें करें पुकार।।

|| 87 ||

फूल खिला मुरझा गया, शेष रह गया रंग।
भोग रहे विधि का लिखा, जड़-चेतन सब संग।

नेता और राजनीति

|| 88 ||

राजनीति के खेल में, जब तक दूषित लोग।
तब तक केतन देश का, रहे मनाता शोग।।

|| 89 ||

ज्यों बाजीगर बन्दरा, हर-पल रखे नचाय।
त्यों नेताजी देश को, पल-पल रहे चलाय।।

|| 90 ||

कथनी-करनी में कभी, जिनको हुई न प्रीति।
नेता भाषण मारते, बतलाते युग-नीति।।

|| 91 ||

सच्चा नेता आज वह, जिसको रुचे न धर्म।
तन-गंगा में डूबकर, उज्जवल करता कर्म।।

|| 92 ||

सारे नेता भर रहे, अपनी-अपनी जेब।
अंधा बाँटे रेबड़ी, फिरि-फिरि परिजन देव।।

|| 93 ||

आज सफल नेता वही, करे घुमाकर बात।
बहु से कह-'चोरी करो', सास कहा-'जग रात'।।

|| 94 ||

उच्च पदों आसीन हैं, दुष्चरित्र और क्रूर।
हाथों में जिनके बिके, तंत्र-मंत्र औ' शूर।।

|| 95 ||

पक्ष-विपक्ष औ' नीति की, कौन सुने फरियाद?
राजनीति कौरव बनी, आया अवसरवाद।।

|| 96 ||

नेता मेरे देश का, व्यस्त बहुत दरसाय।
सुमन घोषणा के बहुत, जनता पर बरसाय।।

|| 97 ||

बड़ी-बड़ी बातें करे, जनता को भरमाय।
कंचन-कामिन देखकर, नेता मन हरषाय।।

|| 98 ||

नेता अपने देश का, करे नहीं सम्मान।
भरता अपने पेट को, रखे उसी का ध्यान।।

|| 99 ||

नेता से इस देश की, मिटी सकल पहचान।
हिन्दी में वह सोचता, दे इंग्लिश में ब्यान।।

|| 100 ||

नेता भाषण में करे, निर्धन का सत्कार।
आता निर्धन पास तो, देता है दुत्कार।।

|| 101 ||

बागडोर अब देश की, है ऐसों के हाथ।
जीवन-भर जिनका रहा, अपराधों का साथ।।

|| 102 ||

राजनीति अब हो गयी, चन्दन वन की शेर।
सर्प वृक्ष पर झूलते, विचरण करती भेड़।।

|| 103 ||

राजनीति के क्षेत्र में, अपराधों की खान।
दृष्टि तनिक चूकी नहीं, बाहर आते प्रान।।

|| 104 ||

राजनीति की षोडशी, यौवन-भरी उड़ान।
जिसने भी देखा इसे, बदला सकल जहाँन।।

|| 105 ||

राजनीति के कुँज में, अलबेले हैं फूल।
जिसकी वाणी रस नहीं, बनते उनको शूल।।

|| 106 ||

राजनीति की तुला में, वोट रखे इस ओर।
राज-नीति औ' प्रीति सब, रखे दूसरी छोर।।

|| 107 ||

बड़ी अनूठी चीज है, राजनीति का ताज।
जूते खा चलते बनो, हाथ जोड़ लो राज।।

|| 108 ||

अपने-अपने धर्म का, लोग करें उत्थान।
नेताजी तो कर रहे, खूब जाति-कल्यान।।

|| 109 ||

नैतिक बल अब है कहाँ? नहीं बदन में जान।
धिक्! नेताजी बन गये, भारत की पहचान।।

|| 110 ||

नेता ने इस देश की, डुबा दई शमशीर।
या फिर मेरे देश की, बुढ़ा गई तकदीर।।

|| 111 ||

मानवता जिसने करी, अतिशय लहूलुहान।
नेता भाषण में कहे, 'जनता बड़ी महान'।।

|| 112 ||

नेता को सुध-बध नहीं, अब जनता की हाय!
भरता अपने पेट को, लक्ष्य रहा है नाय।।

|| 113 ||

जाति-धर्म के नाम पर, करें देश नीलाम।
थैली भर-भर दे रहे, मंत्री-पद का दाम।।

|| 114 ||

नेता तो मदिरा पिये, देश उगाये घास।
सौ बीघा का जोतना, धेला रहे न पास।।

|| 115 ||

नेता की ढपली बजे, मंत्री-पद का साज।
नक्कारों में गुम गयी, तूती की आवाज।।

|| 116 ||

जाँति-पाँति औ' धर्म में, बँटा देश-परदेश।
राजनीति दूषित किया, भाषाई-परिवेश।।

|| 117 ||

राजनीति गंदी हुई, रहा न अब तो मेल।
चलता पक्ष- विपक्ष में, साँप-छछूँदर-खेल।।

|| 118 ||

भाषाई प्रतिद्वन्द्विता, अलग-अलग हैं रूप।
जाति-धर्म औ' क्षेत्र से, राजनीति के भूप।।

|| 119 ||

राजनीति के क्षितिज पर, सूर-चंद सब अस्त।
पुच्छलतारे फिर रहे, आसमान में मस्त।।

|| 120 ||

अगणित घर-मानस किये, जिसने बारहवाट।
राजनीति-प्रासाद में, वही उड़ाते ठाट।।

|| 121 ||

जातिवाद की आग ने, जला दिया सब राग।
नेता ईंधन डालकर, बुझा रहा है आग।।

|| 122 ||

राजनीति से आ रही, अपराधी-दुर्गन्ध।
गधे मिठाई खा रहे, पाते सुअर सुगन्ध।।

|| 123 ||

जोड़-तोड़ की नीति में, फँसा देश का तंत्र।
बदली किस्मत देश की, मंत्री पढ़ता मंत्र।।

|| 124 ||

गूँगी-बहरी देश की, अंधों की सरकार।
बिना दण्ड सुनती नहीं, करूणा-भरी पुकार।।

|| 125 ||

राजनीति औ' जाति के, दो पाटों के बीच।
पिसती मानवता रही, खड़े देखते नीच।।

|| 126 ||

ऊपर से भोले लगें, करते हँसकर बात।
राजनीति के कुँज में, भीतर-बाहर घात।।

|| 127 ||

सब दल दल-दल में फँसे, मुखिया नरसिंह राव।
देख-दैखकर गन्दगी, तनिक न आता ताव।।

|| 128 ||

राजनीति की नर्तकी, किये नृत्य- शृंगार।
कौरव-मन-मोहित हुये पांडु गये मन-हार।।

|| 129 ||

एटमबम की पीठिका, बैठे हैं सम्राट।
जलें द्वेष की आग में, दुनिया भर के हाट।।

|| 130 ||

क्रूर-क्रूरता का यहाँ, चलता गुंडाराज।
अपराधी-से हो गये, सभी मनोहर ताज।।

|| 131 ||

आपाधापी मच रही, सत्ता के घर-बार।
जातिवाद के नर्क में, डूब गया संसार।।

|| 132 ||

दूर हुआ सामंत का, जंगल का कानून।
भव्य भवन में पल रहे, अब तो अफलातून।।

दलित

|| 133 ||

युग-युग से करता रहा, मानव जिनपर नाज।
आज जगत के सामने, भ्रमित दलित समाज।।

|| 134 ||

दलित-दलित ही कर रहे, दलितों का सम्मान।
दलित-राज की नीति ने, किया दलित अपमान।।

|| 135 ||

लोक-बुराई बन गया, दलित-दलित का नाम।
नेताओं ने कर दिया, आज दलित बदनाम।।

|| 136 ||

राजनीति तो कर रही, दलितों का विध्वंस।
राम नीति ही दे सके, उनको उनका अंश।।

|| 137 ||

दलितों को जिसने दिया, अब तक पूरा मान।
आज दलित ही कर रहे, उनका ही अपमान।।

|| 138 ||

राजनीति जब तक चले, ले दलितों का नाम।
अपमानित होता रहे, दलित यहाँ हर धाम।।

|| 139 ||

शोषित तिनके-से लगें, तुमको नीच-कमीन।
उठे पड़े जो आँख में, जाओ भूल ज़मीन।।

|| 140 ||

ऊँच-नीच कोई नहीं, प्राणी सभी समान।
हमने निज सुख के लिए, भेद किये इन्सान।।

तानाशाही

|| 141 ||

तानाशाही विश्व में, सबसे घातक अस्त्र।
होते इसके सामने, सभी निरर्थक शस्त्र।।

|| 142 ||

बैल चरस पर खींचता, मुई खाल की मोट।
तानाशाही यों करे, हृदय पर गुम चोट।।

|| 143 ||

तानाशाही ने किया, फिर से बज्राघात।
कोमल हृदय झेलता, चुप-चुप सब आघात।।

|| 144 ||

तानाशाही ले रही, सज्जनता से मोल।
व्यर्थ आचरण हो गये, बड़े ढोल की पोल।।

|| 145 ||

तानाशाही ने किये, कितने बढ़िया काम।
श्रद्धालु-नर पा रहे, अब मनचाहे दाम।।

|| 146 ||

लोहा से लोहा कटे, नीच-नीच को खाय।
हिंसा औ' आतंक क्या, सज्जनता से जाय।।

|| 147 ||

तानाशाही से कभी, झुका नहीं है मीत!
होगा नतमस्तक सदा, मिले जरा-सी प्रीत।।

कलह-ईर्ष्या-क्रोध

|| 148 ||

कलह-ईर्ष्या-क्रोध का, जन-मानस आवास।
रहते जिसके साथ में, करते उसका नाश।।

|| 149 ||

प्रीतिपूर्ण व्यवहार ही, सब उन्नति का मूल।
कलह-क्रोध औ' ईर्ष्या, करते उर में शूल।।

|| 150 ||

नगर-गाँव-परिवार हो, अथवा राष्ट्र-समाज।
कलह वहाँ होती जहाँ, हो मनमाना राज।।

|| 151 ||

कलह-प्रीति में शत्रुता, अन्तः जगत विरोध।
यह मानव के मार्ग में, खड़े करें अवरोध।।

|| 152 ||

जिस मन में ईर्ष्या बसे, उसका नहीं सुधार।
जायेगा जिस ओर भी, खड़ी मिलेगी हार।।

|| 153 ||

मानव-मन के मूल में, ईर्ष्या ही अज्ञान।
कारण है यह क्लेश की, समझे चतुर सुजान।।

|| 154 ||

घर-घर में होती कलह, कहाँ गया वह प्यार?
दिल के बँटवारे हुये, टूट रहा परिवार।।

|| 155 ||

पानी-पानी हो गये, जितने बने उसूल।
कैसे बतलायें उन्हें, लोभ कलह का मूल।।

|| 156 ||

क्रोधी से नाता जुड़े, राजा बनता रंक।
क्रोध, पाप का मूल है, रावण बना कलंक।।

|| 157 ||

हृदय क्रोध न कीजिये, यह तो बुरी बलाय।
क्रोध अनुज शैतान का, जीवन-सुमन जलाय।।

|| 158 ||

उर में उपजा क्रोध तो, पैदा होय विकार।
क्रोधी को भाता नहीं, नवचिन्तन का द्वार।।

|| 159 ||

स्वामी से सेवक करे, क्रोध हरे सब ज्ञान।
मानव का सबसे बड़ा, दुश्मन सकल जहाँन।।

|| 160 ||

बहुत बड़ा धनवान हो, अति उन्नत हो साख।
लेकिन, ज्वाला-क्रोध की, सबको करती राख।।

|| 161 ||

यश-वैभव-घर-ज्ञान था, अतुलित रावण पास।
आया उसको क्रोध तो, हुआ सभी कुल-नाश।।

|| 162 ||

कितने ही अब तक हुये, विश्व विदित बलवान।
हाय! क्रोध के तीर ने, हने सभी के प्रान।।

|| 163 ||

जिस क्षण आता क्रोध है, रहता तनिक न ज्ञान।
सत्य बात कड़ुवी लगे, मन को गरल समान।।

|| 164 ||

मन में कुछ रहता नहीं, ऊँच-नीच का बोध।
रिश्ते सारे तोड़ता, आता बाहर क्रोध।।

|| 165 ||

हवन करे सपने सभी, लगे चमन में आग।
सावधान! मन! क्रोध से, यह ज़हरीला नाग।।

|| 166 ||

मन में क्रोध न कीजिये, सभी बिगाड़े काम।
मीठी-मीठी बात से, बनते बिगड़े काम।।

|| 167 ||

अहंकार के मूल में, रहे क्रोध का वास।
उर में उपजा क्रोध तो, होगा कुल का नाश।।

|| 168 ||

जातिवाद की आग में, जलता मानव-लोक।
द्वेष-ईर्ष्या-स्वार्थ से, लोग मनाते शोक।।

|| 169 ||

छोड़ ईर्ष्या-द्वेष को, रहो भलों के साथ।
स्वाभिमान गिरता नहीं, ऊँचा रहता माथ।।

महापुरूष

|| 170 ||

महापुरूष की भावना, ज्यों घट भीतर तोय।
तृप्त करे अतृप्त को, छोटा-बड़ा न कोय।।

|| 171 ||

अतुलित जल सागर भरा, मिलती कभी न थाह।
महापुरूष का लक्ष्य भी, व्यापक और अथाह।।

|| 172 ||

सागर-सी गहराइयाँ, महापुरूष की वान।
दुःख-सुख में छोड़े नहीं, कभी विश्व-कल्यान।।

|| 173 ||

महापुरूष का जग करे, आज घोर अपमान।
राष्ट्रपिता अब बावरे, राक्षस की सन्तान।।

अभिमान

|| 174 ||

नर! इतना अभिमान क्यों? हृदय रखा संजोय।
पलक झपकते देखना! पड़ा भूमि पर होय।।

|| 175 ||

बड़े-बड़े आये यहाँ, महावीर-बलवान।
माटी में उनका मिला, मिथ्या मन-अभिमान।।

|| 176 ||

जितना नदिया जल बढ़े, उतनी बढ़ती बाढ़।
अहंकार ज्यों-ज्यों पले, त्यों-त्यों पलती राड़।।

|| 177 ||

हे नर! इतना क्रूर क्यों? पाल रखा अभिमान।
कंस औ' रावण न रहे, बचे न तेरी जान।।

|| 178 ||

अहंकार होता वहाँ, जहाँ न भाव विशाल।
रहे तृप्त-अतृप्त नित, अभिमानी-कंगाल।।

|| 179 ||

अहंकार पलता जहाँ, होता नहीं विकास।
शनैः शनैः सब डूबता, होता सत्यानाश।।

|| 180 ||

अहंकार मन में पले, बंदा जाने नाय।
वाणी औ' व्यवहार से, जग ज़ाहिर हो जाय।।

स्वाभिमान

|| 181 ||

स्वाभिमान का एक पल, मन को रखे संभाल।
चला गया सम्मान तो, धनपति है कंगाल।।

|| 182 ||

स्वत्व गया मिलता नहीं, मिलता मुक्ताहार।
स्वत्वहीन नर यों लगे, ज्यों सिकता-दीवार।।

|| 183 ||

स्वत्वहीन नर के लिये, नहीं जीत औ' हार।
प्रतिद्वन्द्वी के हाथ में, उसका नहीं बिगार।।

|| 184 ||

स्वाभिमान रखते नहीं, कायर-चोर-लबार।
क्या ओछे की दोस्ती? मिट्टी होती ख्बार।।

|| 185 ||

स्वाभिमान चलता बना, सारा जीवन व्यर्थ।
सौन्दर्य के ज्यों बिना, बाला का क्या अर्थ।।

|| 186 ||

बंदे! कितना ही सता, नहीं झुकेगा माथ।
उसके झुकता सामने, जिसकी यह सौगात।।

|| 187 ||

स्वाभिमान को बेचकर, हमसे होय न बात।
जीवन वह जीवन नहीं, आदर जहाँ न तात।।

|| 188 ||

सारे चक्कर छोड़कर, करले अपना ध्यान।
वरना सब पागल कहें, रहे नहीं ईमान।।

|| 189 ||

स्वाभिमान नर में नहीं, गयी अस्मिता डूब।
चुगली-निंदा-ईर्ष्या, दिन-दिन फलते खूब।।

|| 190 ||

स्वाभिमान जाता नहीं, जितना करो ह्रास।
कितना भूखा सिंह हो, कभी न खाये घास।।

|| 191 ||

स्वाभिमान होता अगर, सीधी लगती बात।
क्या अंधों की दोस्ती? दिन को समझें रात।।

|| 192 ||

स्वाभिमान-स्वतन्त्रता, मान और संसर्ग।
संचित रहते हैं वहाँ, जहाँ निहित उत्सर्ग।।

चाटुकार

|| 193 ||

कोई अपना भी नहीं, और न कोई ग़ैर।
चाटुकार सबकी, सदा रहा मनाता खैर।।

|| 194 ||

कितना टेढा काम हो, साहब हो नाराज।
चाटुकार कहता जिसे, करता सारे काज।।

|| 195 ||

चाटुकारिता ने किया, बड़े-बड़ों को अस्त।
स्वाभिमान के हो गये, सभी हौंसले पस्त।।

|| 196 ||

कर्मठता औ' दक्षता, आज हुईं बेकार।
चाटुकार के सामने, सबने मानी हार।।

|| 197 ||

ऊँच-नीच कुछ भी नहीं, चाटुकार के साथ।
बनता जिससे काम हो, उसे झुकाये माथ।।

|| 198 ||

चुगली-निंदा-ईर्ष्या, चाटुकार के काम।
साहब को रखता खुशी, मारे मोटे दाम।।

|| 199 ||

मौसम की बरसात हो, या विधि की सौगात।
चाटुकार करते सदा, सुखद-सलोनी बात।।

|| 200 ||

बाप कहे, बेटा बने, भ्रात-सखा बन जाय।
चाटुकार तत्काल ही, लेता काम बनाय।।

|| 201 ||

चाटुकार रुँठे नहीं, करे न टेढ़ी बात।
केवल चाँदी का इसे, जूता मारो तात।।

|| 202 ||

चाटुकार बहुरुपिया, कौतुक रचे अनेक।
इसके चंगुल में फँसा, रहता नहीं विवेक।।

|| 203 ||

भैया! इस संसार में, बदल गये आचार।
चाटुकार अब हो गये, असली साहूकार।।

यौवन

|| 204 ||

यौवन वसुधा में रहा, सबसे पावन रूप।
इसके गुण-ग्राहक बनें, पग-पग नाना-भूप।।

|| 205 ||

यौवन-मणि दुर्लभ बड़ी, कस्तूरी-सम जान।
कहीं भूल से गुम गयी, होय न फिर पहचान।।

|| 206 ||

यौवन- धन को राखिये, मितवा! तनिक संभाल।
य़ौवन के बिन आदमी, लगता है कंगाल।।

|| 207 ||

यौवन-फल है आम-सा, है मधुरस से पूर।
जितना चूँसे आदमी, रस देता भरपूर।।

|| 208 ||

युवा-शक्ति अब हो गयी, दिशाहीन सब ओर।
राजनीति भी काटती, उसके कोमल छोर।।

परिवर्तन

|| 209 ||

हमने देखे जगत में, बड़े-बड़े ही क्रूर।
परिवर्तन के सामने, हो जाते मजबूर।।

|| 210 ||

सदा शीत रहता नहीं, सावन औ' मधुमास।
परिवर्तन के दौर में, होता पर्दाफास।।

|| 211 ||

जिस पथ पर चलते हुये, मानवता हरषाय।
टूट गये आदर्श वे, रहे मूल भी नाय।।

|| 212 ||

परिवर्तन की गोद में, सोयीं सभी लकीर।
चौराहे की भीड़ में, गुम हो गया फकीर।।

पगड़ी

|| 213 ||

भारत की पगड़ी रही, अति आदर की मूल।
सदा रखी निज शीश पर, गाँधी-पगड़ी-फूल।।

|| 214 ||

वीर अनेकों हो गये, पगड़ी हित कुर्बान।
झुकी न पगड़ी देश की, चली गयी निज जान।।

|| 215 ||

कायर-कुत्सित कर रहे, पग- पग पर अपमान।
पगड़ी में दीखे नहीं, उनको निज सम्मान।।

|| 216 ||

पगड़ी के सम्मान-हित, राणा खेले फाग।
रानी-झाँसी मिट गयी, जलीं देवियाँ आग।

|| 217 ||

आज बड़ा दुर्भाग्य है, पगड़ीं हुईं अनेक।
सबकी अपनी हो गयी, अलग-अलग ही टेक।।

रक्षा-बंधन

|| 218 ||

याद करो उस काल को, राखी का त्यौहार।
बँध जाता था सूत्र में, जीवन का व्यापार।।

|| 219 ||

आज भ्रात के सामने, बहिन खड़ी लाचार।
रहा न बंधन प्यार का, बदल गये आचार।।

|| 220 ||

भैया पर हावी हुआ, धन का चकमक रूप।
बहिन खड़ी राखी लिये, वाट जोहती धूप।।

|| 221 ||

रेशम का धागा हुआ, प्यार-समर्पणहीन।
टूटे रिश्ते खून के, पैदा हुये नवीन।।

दहेज

|| 222 ||

कली-सदृश ही नव-वधू, सूख रही कुमलाय।
झोंका बहा दहेज का, देह-चमन उड़ जाय।।

|| 223 ||

बेटी रोय गरीब की, हाय! झार-बेझार।
पिया बधिक-सा कर रहा, मन पर अत्याचार।।

|| 224 ||

रो-रोकर पाती लिखी,- "बाबुल! रोना नाय।
छुटकी को तब सौंपना, जब काबिल हो जाय"।।

|| 225 ||

बाबुल! घर मत बेचना, इधर न देना ध्यान।
मेरी दुर्गति हो गयी, होय न घर वीरान।।

|| 226 ||

बेच दिया-घर-बार सब, किया सभी कुछ दान।
मुँह फैला शैतान-सा, कहते पति भगवान।।

|| 227 ||

नारी-संग होता रहे, निर्मम अत्याचार।
जब तक असुर-दहेज का, करता है व्यभिचार।।

|| 228 ||

कैसी किस्मत लिख दई, बेटी की भगवान।
तड़प-तड़पकर मर रही, मार रहा इन्सान।।

|| 229 ||

कितने घर ऊजड़ हुये, गये काल के गाल।
सबका किया दहेज ने, जीवित मुर्दाहाल।।

|| 230 ||

गाँव-नगर-बाजार में, अलग-अलग हैं बोल।
बिटिया-भगिनी-सहचरी, बिकें टके की मोल।।

|| 231 ||

नैनों से आँसू झरें, छुये बहन के पैर।
सजल नैन कहते विदा, "रखियो सबकी खैर"।।

|| 232 ||

आँसू झरते भ्रात के, शीष बहिन का हाथ।
भैया! कभी न भूलना, सदा निभाना साथ।।

|| 233 ||

झरते आँसू कह रहे,- "बहुत रहे हम साथ।
अब के बिछुड़े कब मिलें? क्रूर काल का हाथ"।।

|| 234 ||

कन्या कुल की शान है, यह ललाट का ताज।
इसके आँचल में सजा, निखिल सृष्टि का साज।

|| 235 ||

साठ साल के वृद्ध से, तरुणी रचो विवाह।
कहाँ ऊँट? बकरी कहाँ? कैसे हो निर्वाह।।

शंका

|| 236 ||

शंका से जग में बड़ा कोई नहीं विकार।
जब तक मन में व्याप्त है, पल-पल करे बिगार।।

|| 237 ||

जिसके हृदय में पला, शंका-गरल-विकार।
यश-जीवन-मति-सम्पदा, हरता सभी प्रकार।।

|| 238 ||

शंका-पीड़ा-मृत्यु में, अति अटूट सम्बन्ध।
पीड़ा, शंकादायिनी, शंका, मृत्यु-प्रबन्ध।।

|| 239 ||

दीमक का घेरा हुये, आज सभी सम्बन्ध।
शंका की बौछार में, फैस गये अनुबन्ध।।

|| 240 ||

जग में शंका का कहीं, नहीं रखा उपचार।
जब तक चेतन प्राण हैं, पलता रहे विकार।।

|| 241 ||

मन संदेह न पालना, इसका कहीं न अंत।
यह मृत्यु का देव है, छूटें प्रियतम-कंत।।

|| 242 ||

आशंका-संदेह हो, करो सोचकर बात।
वरना, पछताना पड़े, निर्णय लेकर तात।।

|| 243 ||

जिस मन में शंका पले, रहे विवेक न ज्ञान।
घुन-सी तन-मन को घुने, हरे मनुज के प्रान।।

बाज

|| 244 ||

चुन-चुनकर खग-कुल हने, बाज! शिकारी आप!
अरे! तनिक मत भूलना, तेरा भी है बाप।।

|| 245 ||

बिन कारण तू ले रहा, खग-कुल से प्रतिशोध।
निर्बल को क्यों मारता? अरे बाज! दुर्बोध।।

|| 246 ||

अगणित खग-कुल का किया, तूने बाज! विनाश।
तेरा भी होगा अरे!, निश्चित सत्यानाश।।

|| 247 ||

व्यर्थ शक्ति सब जा रही, ओ निर्मोही बाज!
रहें नहीं खग-वृंद जब, कहाँ करेगा राज।।

|| 248 ||

बहुत देर अब हो चुकी, करले बाज! सुधार।
भभक उठी चिंगारियाँ, बचे नहीं संसार।।

|| 249 ||

लिये असंख्य प्राण हैं, नभ-थल में हे बाज!
अपने ही कुल-गोत को, हनते आय न लाज।।

|| 250 ||

दुनिया तुझसे सीखती, करना बाज! शिकार।
हे खग! धरती पर हुआ, तू हिंसा-अवतार।।

|| 251 ||

नेह-निमंत्रण दे रहे, कानन के खग आज।
पकड़-पकड़ खग मारता, बाज-बधिक सरताज।।

साधु-संत

|| 252 ||

नगर-नगर औ' गाँव में, रमता साधु-समाज।
अलग-अलग सब कर रहे, मन-मन्दिर पर राज।।

|| 253 ||

साधु भये घर-घर फिरें, रहें माँगते भीख।
कहाँ गयी वह साधुता? संत छोड़ते लीक।।

|| 254 ||

राम-नाम सुमिरन करें, रहें शिवा के धाम।
साधु-संत अब दे रहे, ले पैसा हरि-नाम।।

|| 255 ||

साधु-संत थे बाँटते, यहाँ देश को शान्ति।
आज स्वयं अतृप्त हैं, पैदा करें अशान्ति।।

|| 256 ||

साधु-संत को देखकर, सहज झुके था माथ।
साधु नहीं भगवान वे, लगता उनका साथ।।

|| 257 ||

अब मन्दिर भगवान के, राजनीति के वास।
संत सुरक्षा में लगे, होते भोग-विलास।।

|| 258 ||

आज साधु के रूप में, मिलें अधिकतर क्रूर।
जग को धोखा दे रहे, अपराधी भरपूर।।

|| 259 ||

साधु-संत जब तक रहे, निश्छल औ' निष्काम।
तक तक भारत देश का, रहा विश्व में नाम।।

रिश्वत और बाबू

|| 260 ||

बाबू कलियर नाग है, काटा नहीं इलाज।
तड़प-तड़प मर जाय नर, बदले नहीं मिज़ाज।।

|| 261 ||

'ऑफिस' में आता कभी, छुये 'बॉस' के पैर।
साहब की 'गुडबुक्स' में, बाबू करता सैर।।

|| 262 ||

रिश्वत लेता डाटकर, खूब कमाता दाम।
ऐसा बाबू 'बॉस' से, सभी कराता काम।।

|| 263 ||

यथा समय आता नहीं, आय मचाये शोर।
'ऑफिस' का परधान है, सबै नचाये जोर।।

|| 264 ||

गलत-सही कुछ है नहीं, पैसे में सब काम।
सभी ओर से मारता, बाबू मोटे दाम।।

|| 265 ||

बाबू का मुख ऊँट-सा, पल-पल पान चबाय।
पेट नहीं फिर भी भरे, जमकर पैसा खाय।।

|| 266 ||

बार-बार हर काम के, अलग-अलग हैं दाम।
नैन तनिक तुम फेर लो, करता काम-तमाम।।

|| 267 ||

सीधे को उलटा करे, करे देर में देर।
बिना लिये टरता नहीं, माला देता फेर।।

|| 268 ||

बाबू कलियर देव है, बादशाह बेताज।
यह हिटलर का बाप है, आती इसे न लाज।।

|| 269 ||

घूस लिपिक की प्रेयसी, देख फूलता आप।
पकड़ा जाता जब कभी, गधा बनाता बाप।।

|| 270 ||

जूता लेकर हाथ में, कर बाबू से बात।
सबसे पहले काम हो, उसकी यह औकात।।

|| 271 ||

बिरला ही बाबू करे, हरिश्चंद-सम काम।
रिश्वत जो लेता नहीं, उसको नमन-प्रणाम।

|| 272 ||

रिश्वत ने जग को किया, सदा बहुत संत्रस्त।
रूप बदल करती रही, यह मानव को त्रस्त।।

|| 273 ||

रिश्वत रानी! धन्य तुम! धन्य! मनोहर रूप।
लोहा तेरा मानते, सभी जगत के भूप।।

|| 274 ||

तेरे अगणित नाम हैं, कितने रूप अपार!
तू कलियुग की शेरनी, तेरा घर संसार।।

|| 275 ||

कोई 'हक़्' कहता तुझे, कोई कहता 'भेंट'।
कोई 'नज़राना' कहे, कोई कहता 'पैंठ'।।

|| 276 ||

सीधा-सादा आदमी, कहता है 'उपहार'
व्यापारी 'डाली' कहें, 'कनक'-' कामिनी'-' प्यार'।।

|| 277 ||

सेवक-बाबू हों सभी, तुझको देख निहाल।
अधिकारी नित डालते, शुभे! गले जयमाल।।

|| 278 ||

सबको मनमोहित करे, करती बहुत कमाल।
रिश्वत! तेरी शक्ति की, जग में नहीं मिशाल।।

चुगलखोर

|| 279 ||

बड़ा भयानक अस्त्र है, चुगली इस संसार।
चलता हुआ न दीखता, करता कड़ा प्रहार।।

|| 280 ||

भोजन से भरता नहीं, चुगलखोर का पेट।
रोटी भी पचती नहीं, बिन चुगली के ठेट।।

|| 281 ||

सुबह-शाम, पल-पल रखे, गणिका घर को व्यस्त।
चुगलखोर यों ही करे, चुगली से संत्रस्त।।

|| 282 ||

चुगली करना बन गया, लोगों का दस्तूर।
ऊपर से भोले लगें, बार करें भरपूर।।

|| 283 ||

चुगली-निंदा-ईर्ष्या, करते असफल लोग।
मिली सफलता जब नहीं, करते यही प्रयोग।।

|| 284 ||

निदंक मानस-पूत हैं, या उल्लू की जात।
इनसे अच्छे श्वान हैं, समझें सीधी बात।।

|| 285 ||

चुगली-निंदा-ईर्ष्या, करते हैं मदहोश।
धन्यवाद के पात्र हैं, बहुत बढ़ाते जोश।।

|| 286 ||

जाकी जैसी सोच है, बाकी वैसी बात।
चुगलखोर को रात-दिन, चुगली सदा सुहात।।

कुत्ता

|| 287 ||

बड़ा मनोहर जीव है, इस धरती पर श्वान।
जिसको करता प्यार यह, उस पर बारे जान।।

|| 288 ||

अपने स्वामी से रखे, कुत्ता निश्छल मेल।
बड़ा अनूठा मीत है, जाय जान पर खेल।।

|| 289 ||

बुरे दिनों के फेर में, सभी खींचते हाथ।
कुत्ता सच्चा है सखा, सदा निभाता साथ।।

|| 290 ||

धिक्! मानव समझा नहीं, अब भी इसका मोल।
'कुत्ते की औलाद हो', बोले कड़ुवे बोल।।

|| 291 ||

गाली में करते सभी, 'कुत्ता' शब्द प्रयोग।
वफादार इस जीव का, कैसा है दुर्योग।।

|| 292 ||

'कुत्ता' जैसे जीव का, कैसा नाम अनर्थ।
हाय! वफा की यह सजा, कलयुग में सब व्यर्थ।।

हिन्दी भाषा

|| 293 ||

हिन्दी-प्रेमी कर रहे, हिन्दी का अपमान।
हिन्दी को कहते फिरें, 'कठिन पठनीय ज्ञान'।।

|| 294 ||

कितना ही पा जाइये, देश-देश में मान।
जब तक निज भाषा नहीं, व्यर्थ सभी सम्मान।।

|| 295 ||

हिन्दी- भाषी ने किया, हिन्दी को बदनाम।
भाषा की अवमानना, करें लोग गुमनाम।।

|| 296 ||

हे मानव! तुमको दिया, जिस भाषा ने ज्ञान।
उस भाषा का कर अरे! मन से तो सम्मान।।

|| 297 ||

माता ने देकर जनम, किया बहुत उपकार।
लेकिन भाषा से मिला, मनुज! तुझे सत्कार।।

|| 298 ||

जब आया भूलोक में, तुझे नहीं था ज्ञान।
तब भाषा ने नाम दे, जग में दी पहचान।।

|| 299 ||

भाषा यदि होती नहीं, कैसे चलता काम?
बिन वाणी के यार तू, मर जाता गुमनाम।।

|| 300 ||

भाषा जननी काव्य की, भाषा है आचार।
भाषा से ही चल रहे, सकल जगत-व्यवहार।।

|| 301 ||

भाषा जननी काव्य की, सकल गुणों की धाम।
सत्य-शिवम् औ' सुन्दरं, मंगलमय अभिराम।।

|| 302 ||

भाषा, ब्रह्मा-विष्णु है, भाषा, शेष-महेश।
भाषा ने पैदा किये, लोक-रत्न-रत्नेश।।

|| 303 ||

भाषा उन्नत है जहाँ, हैं वे देश महान।
भाषा ने अर्जित किया, विश्वविदित-विज्ञान।।

|| 304 ||

डूब गये वे देश सब, नष्ट हुआ वह राज।
समझ न पाये अन्त तक, भाषा-देश-समाज।।

|| 305 ||

कितना विस्तृत देश हो, ऊँचा गौरव-ज्ञान।
जिसकी निज भाषा नहीं, मिले नहीं सम्मान।।

|| 306 ||

जग में भारत देश को, कहते विश्व-निकाय।
हतभागी इस देश की, भाषा नहीं दिखाय।।

|| 307 ||

भाषा से बढ़कर नहीं, कोई गौरव-ज्ञान।
सक्षम भाषा राष्ट्र की, करती है कल्यान।।

|| 308 ||

अब तक अति बिगड़ा नहीं, करलो निश्चित नीति।
हिन्दी को अपनाइये, छोड़ विदेशी प्रीति।।

|| 309 ||

अंग्रेजी दिखला रही, अपने सारे घात।
चार दिवस की चाँदनी, फिर अंधियारी रात।।

|| 310 ||

कॉनवैण्ट स्कूल में, शिक्षा मिले महान।
मात-पिता बदले नहीं, बदल गयी सन्तान।।

|| 311 ||

कॉनवैण्ट स्कूल में, नित हिन्दी-अपमान।
अंधे-बहरे कह रहे, 'भारत देश महान'।।

|| 312 ||

नगर-डगर में खुल रहीं, शिक्षा- राज- दुकान।
ऊँची सजी दुकान है, पर फींका पकवान।।

कलम-कला-कवि-कविता

|| 313 ||

युग-युग से देता रहा, कलम व्यक्ति का साथ।
इसके निरुपम त्याग पर, झुकता मेरा माथ।।

|| 314 ||

कलम अगर होती नहीं, होता नहीं विकास।
काव्य-कला-इन्सान का, मिट जाता इतिहास।।

|| 315 ||

प्रोषित-पतिका-नायिका, रखे कलम पर आस।
पाती कैसे भेजती, बिना कलम पति पास।।

|| 316 ||

ऊँचा कुल औ' सम्पदा, सदा न आते काम।
कलम रही जिस हाथ में, रहता उसका नाम।।

|| 317 ||

कलम सदा संसार में, रही श्रेष्ठतम शक्ति।
मीरा-तुलसी-सूर को, दी पावनतम भक्ति।।

|| 318 ||

युग बदले, बदले सभी, जगत-क्रूरतम दौर।
किन्तु, कलम इतिहास में, रही सदा सिरमौर।।

|| 319 ||

आज-अतीत-भविष्य का, कलम रचे इतिहास।
अजर-अमर यह शस्त्र है, इसका नहीं विनाश।।

|| 320 ||

कलम और तलवार में, कौन श्रेष्ठ हथियार?
कलम शांति की वाहिका, हिंसा की तलवार।।

|| 321 ||

कलम क्रान्ति की पुँज है, शान्ति-प्रेम संग्राम।
असफल हो तलवार जब, देती कलम मुकाम।।

|| 322 ||

कलम दबाने का हुआ, जब-जब भी प्रयास।
आग देश में लग गयी, उलट गया इतिहास।।

|| 323 ||

जब-जब सोया राष्ट्र का, मानव औ' परिवार।
किया कलम ने नाद तो, जाग उठा संसार।।

|| 324 ||

कलम शक्ति की दायिनी, कलम ज्ञान की पुँज।
फलित हुई जिसको कलम, हरित हुआ भव-कुँज।।

|| 325 ||

पग-पग पर धोखा मिला, असन्तोष-अभिशाप।
लिख-लिखकर धूमिल करूँ, सारे पश्चाताप।।

|| 326 ||

अपनी-अपनी आज सब, ढपली रहे बजाय।
जितने कवि उतनी विधा, रोज नई बन जाय।।

|| 327 ||

आसमान में उड़ रहे, बड़े-बड़े खग-वृंद।
देख-देख मन झूमता, भाव हुये स्वच्छंद।।

|| 328 ||

पति-पत्नी का जोड़ तो, जग में है विख्यात।
देखो! नव कवि जा रहे, लिये कवियित्री साथ।।

|| 329 ||

कविता के बाजार में, जो चाहें सो तोल।
गुण-ग्राहकता की नहीं, मनचाहा तू बोल।।

|| 330 ||

नहीं रही जब साधना, काव्य-कला-जग बीच।
जुड़ी कर्म की लालसा, कवि-कविता के बीच।।

|| 331 ||

जाने कितने पूछते, क्यों करते कवि कर्म?
सहज भाव कहते, सखे! 'निभा रहे निज धर्म'।।

|| 332 ||

सप्रयास रचता नहीं, मैं कविता को तात!
अनायास मिलती रही, हृदय की सौगात।।

|| 333 ||

कविता हृदय-साधना, पूर्व जन्म शुभ-कर्म।
तन-मन-धन अर्पित करे, तभी निभे यह धर्म।।

|| 334 ||

कविता सद्गुण वृत्ति है, उर-केतन में बंद।
अन्तर - दृष्टि पसार ले, बाहर निकलें छंद।।

|| 335 ||

सूझ कला-आधार है, इच्छा-शक्ति महान।
माध्यम कवि के पंख हैं, औ' अभ्यास उड़ान।।

|| 336 ||

कला चिरंतन सत्य है, रहती सदाबहार।
स्वाध्याय-श्रम ही करे, सफल कला आचार।।

|| 337 ||

काव्य-कला के क्षेत्र में, व्यर्थ 'वाद' की बात।
ज्यों सुरसरि कचरा गिरे, निर्मलता घट जात।।

|| 338 ||

समय-स्वरूप-सुगन्धि की, त्रिवेणी-सी धार।
चिंतक लेकर जब चले, जग का हो उद्धार।।

|| 339 ||

लोक-काल-इतिहास से, चिंतक का सम्बंध।
फल-प्रतीक औ' प्रेरणा, का इनसे अनुबंध।।

|| 340 ||

प्रखरता हो दृष्टि में, कोमलता उर - प्रीत।
करे भाव का आकलन, कलाकार की रीत।।

|| 341 ||

शोधक ज्यों शोधन करे, नये-नये नित तंत्र।
त्यों ही रचनाकार है, रचता नव-नव मंत्र।।

|| 342 ||

पग-पग ऐसे लोग हैं, इस दुनिया में यार!
जिनके लिए साहित्य है, केवल धन-व्यापार।।

|| 343 ||

रोज नयी पुस्तक रचें, भव्य-भवन-आवास।
बेचें ऊँचे दाम में, अबके तुलसीदास।।

|| 344 ||

वाणी दो वरदायिनी, माँगूँ सदा सहाय।
'राम', 'कृष्ण', 'सीता' रचें, और कोश भर जाय।।

|| 345 ||

रचता रचनाकार है, रचना बेचे कोय।
मालिक मंडी में नहीं, नीलामी नित होय।।

|| 346 ||

लोक-भावना गुम गयी, रहा समर्पण नाय।
काव्य-विपिन में खोजते, सूर-कबीरा हाय!!

|| 347 ||

यह कैसी बरसात है, या मौसम सौगात!
कुकुरमुत्ता-सम कवि उगे, गली-गली बारात।।

|| 348 ||

ऊँचे आसन बैठकर, इन्हें न आती लाज!
चुप हो, कवि! घर बैठ जा, मत खो निज आवाज।।

|| 349 ||

युग बीता छोड़ी नहीं, कविकुल अपनी रीति।
जैसे नलिनी सोम की, नहीं छूटती प्रीति।।

|| 350 ||

भाव-भावना से हुआ, पीड़ा का अनुबंध।
नव सुमनों-से भर रहे, हृदय-कुँज स्वच्छंद।।

|| 351 ||

कवि-कविता के नाम पर, नित होते सत्संग।
मदिरा पी कवि झूमता, चढ़े कवियित्री रंग।।

|| 352 ||

गली-गली में घूमते, तुलसी-सूर-कबीर।
मीरा होली गा रही, कविगण मलें अबीर।।

|| 353 ||

पलक झपकते रच रहे, गीत सभी फरज़न्द।
धृतराष्ट्र हर्षित बड़े, बेटा रचें प्रबन्ध।।

बच्चों के नाम

|| 354 ||

तरह-तरह के फूल-से, अबोध-बाल- अज्ञान।
इनका तन कोमल बड़ा, मन नन्हीं-सी जान।।

|| 355 ||

बालक का मन जीतिये, करो प्यार से बात।
तन-मन सब अर्पित करें, फूले नहीं समात।।

|| 356 ||

ऊँचे बोल न बोलिये, बच्चे हैं भगवान।
भर देती उर ताज़गी, इनकी मृदु मुस्कान।।

|| 357 ||

छुई-मुई के पेड़-सी, है बालक की जात।
देखो इनको दूर से, करो प्यार से बात।।

|| 358 ||

बच्चों का अपराध क्या? मानव है हैवान।
बाल-रतन को देख लो! फैंक गया शैतान।।

|| 359 ||

बालक भिक्षा माँगते, हैं कितने मजबूर।
हुआ देश आजाद क्यों, बंदे! इतना क्रूर।।

|| 360 ||

बच्चों को भोजन नहीं, औ' सोने को खाट।
खुले गगन में लेटकर, जोह रहे हैं बाट।।

|| 361 ||

हुआ कुपोषण चल बसे, फूल गये मुरझाय।
धिक! है ऐसे देश को, नींद अनूठी आय।।

|| 362 ||

मंत्री कुत्ते पालते, और महाजन साँप।
बालक मरते देखकर, मरा न इनका बाप।।

|| 363 ||

कुत्ता-बिल्ली कार में, करें यान से सैर।
लंगड़े-लूले बाल को!, कौन बाँटता पैर।।

|| 364 ||

बिना क़फन मरते जहाँ, बाल सैकड़ों रोग।
बानर की शवयात्रा, यहाँ करें हैं लोग।।

|| 365 ||

धिक् है! ऐसे देश को, धिक है! बड़ा जुनून।
जेल बाल-अपराध में, भेज दिया कानून।।

|| 366 ||

हा! बच्चों को जेल भी, भेज न आयी लाज।
धिक है! न्यायपालिका, धिक! न्यायी सरताज।।

|| 367 ||

मानवता अब खोखली, मिथ्या सब आचार।
लावारिस हैं शिशु जहाँ, शासन को धिक्कार।।

|| 368 ||

फूलों का बचपन कहाँ? सोया तू भगवान!
तेरे बंदे बोलते, 'भारत - देश - महान'।।

|| 369 ||

पशुओं से बदतर हुई, हा! मानस की जात।
कुत्ते दौने चाटते, बालक जूठन खात।।

|| 370 ||

बाल-सुरक्षा के सभी, यत्न हो गये फेल।
शिशु-संरक्षा के लिये, खोल रखी हैं जेल।।

|| 371 ||

दर्द किसे होता यहाँ, जेलों में क्या होय?
कैद बाल-अपराध में, किस्मत उनकी रोय।।

|| 372 ||

बिना खिले मुरझा गये, यहाँ-सैंकड़ों-बाल।
मंत्री सुखमय देश का, नित्य बजाता गाल।।

|| 373 ||

रोग-चिकित्सा बढ़ रही, सुरसा-सी प्रतिकूल।
डॉक्टर भी हनुमान-सम, बढ़ती धन-लांगूल।।

|| 374 ||

सोचनीय इस देश का, अभी बाल-उपचार।।
इसीलिये मरते यहाँ, बच्चे नित्य हजार।।

|| 375 ||

बड़े घरों ने प्यार को, दिया सड़क पर डाल।
कुत्ते तन को खींचते, बधिक हने ज्यों खाल।।

|| 376 ||

भिक्षा - चोरी - तस्करी, बच्चों से करवाय।
कुनबा-बारहबाट हो, दुष्ट नरक में जाय।।

|| 377 ||

जब तक हैं बालक दुःखी, लावारिस-सन्तान।
तब तक मानवता कहाँ? राष्ट्र कहाँ विज्ञान।।

|| 378 ||

पालन-पोषण हो सहज, करो प्रेम-व्यवहार।
लावारिस सन्तान की, हो शिक्षा-उपचार।।

|| 379 ||

बिस्तर पर बालक पड़ा, माता है मजबूर।
आँखों में आँसू भरे, देख रही है दूर।।

|| 380 ||

कातर-नैना देखती, अपना वह नवजात।
दृष्टि लगी तस्वीर पर, बार-बार बलिजात।।

|| 381 ||

दीन-दशा को देखकर, माँ का उर बेचैन।
लेश चैन आता नहीं, रोती वासर-रैन।।

|| 382 ||

पलक झपकते ही गयी, निकल देह से साँस।
ममता रोती है खड़ी, चलते साँस-उसाँस।।

|| 383 ||

माता ममता टोहती, टूट गया कुल-हार।
अलग-अलग लड़ियाँ पड़ीं, कोउ न सृजनहार।।

|| 384 ||

बालक मरा गरीब का, सबने छोड़ा साथ।
तन पर पहने जो वसन, जकड़ रहे हैं हाथ।।

|| 385 ||

बालक अब करते नहीं, जरा बड़ों का काम।
पश्चिम की आँधी चली, टूट गये सब आम।।

|| 386 ||

घोर शीत कुहरा गगन, पवन बहे ठिठुरात।
साँस-चले, पथ में पड़ा, ईश! बाल-नवजात।।

|| 387 ||

दावत की जूठन पड़ी, कूड़े का है ढेर।
बालक उससे बीनते, रसगुल्ले ज्यों बेर।।

|| 388 ||

सुमनलता पर हैं खिले, बाल-सुमन दो साथ।
हाय! समर्पित हो गये, क्रूर काल के हाथ।।

|| 389 ||

दौना हलुआ से भरा, लिया सड़क ने लील।
बालक हँस-हँस खा रहे, उठा-उठा ज्यों खील।।

विश्वास

|| 390 ||

दर्पण-सा विश्वास है, रखो द्वेष से दूर।
कटु-बचनों की कील से, होगा चकनाचूर।।

|| 391 ||

टूट जाय विश्वास तो, होय बड़ा अपराध।
भाव रहे निष्काम तो, जीवन चले अबाध।।

|| 392 ||

केवल अपनों ने किया, यहाँ बहुत उपहास।
कहाँ-कहाँ धूमिल हुआ, बिन कारण विश्वास।।

|| 393 ||

साथ किसी का छोड़कर, मुख भी लीजे मोड़।
किन्तु, सखे! देना नहीं, दिये बचन को तोड़।।

|| 394 ||

निर्मल मोती-काँच से, गुँथे साँच की डोर।
बँधे प्रीत की गाँठ से, विश्वासों के छोर।।

|| 395 ||

सावधान रहना सखे! रखना बहुत संभाल।
अतिकोमल होती अरे! विश्वासों की माल।।

|| 396 ||

टूट गया विश्वास यदि, वापस मिलता नाय।
खण्ड-खण्ड दर्पण हुआ, जैसे जुड़ता नाय।।

|| 397 ||

निश्छल मन करते रहो, यहाँ मिले जो काम।
मत तोड़ो विश्वास को, इसमें बसते राम।।

|| 398 ||

आशा औ' विश्वास में, है पुनीत सम्बन्ध।
सच्ची जब हो आस्था, तभी निभे अनुबंध।।

|| 399 ||

विश्वासों की पीठिका, बैठा भारतवर्ष।
पग-पग पर विश्वास है, अमित चैन-उत्कर्ष।।

|| 400 ||

धूमिल जब होने लगे, दिया हुआ विश्वास।
दोष किसे मढ़ना सखे! नियति करे उपहास।।

|| 401 ||

तोड़ अमित विश्वास को, तू खोजे सुख-चैन।
श्याम मेघ के बीच में, दूर-दूर तक रैन।।

|| 402 ||

करत-करत विश्वास के, छला गया विश्वास।
पग-पग पर धोखा मिला, खूब हुआ उपहास।।

|| 403 ||

टूटे खग-विश्वास के, श्रद्धा-संयम-पैर।
दूर खड़ी ऊँचाइयाँ, कहाँ करें अब सैर।।

|| 404 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, हृदय-निष्ठा-प्रीत।
अपने बनते गैर भी, यह जीवन की रीत।।

सम्बन्ध

|| 405 ||

सिसक रहीं अनुभूतियाँ, अनुबंधों में आज।
कहाँ गये सम्बंध वे, जिन पर कल था नाज।।

|| 406 ||

टूट रहे परिवार सब, रोते रिश्तेदार।
अब आँखों के सामने, होते हैं व्यभिचार।।

|| 407 ||

लोक-लाज सब मिट गयी, नर-नारी में हाय!
गिरगिट-जैसे रंग सब, बदल रहे समुदाय।।

|| 408 ||

जगत खिलौना बन गया, अपराधों का आज।
बेटी माँ से कह रही,-'तू है धोखेबाज'।।

|| 409 ||

नर-नारी के मेल में, रहा प्यार का खेल।
छोड़-छोड़ सब जा रहे, छूट रही ज्यों जेल।।

|| 410 ||

रहा नहीं इन्सान में, पहले जैसा प्यार।
बात-बात में क्रोध है, घृणा का व्यापार।।

|| 411 ||

टुकड़े-टुकड़े को हुये, आज लोग हैरान।
गली-गली में फिर रहे, लिये हथेली प्रान।।

|| 412 ||

खूंनी होली खेलता, मानव हुआ क़मीन।
भ्रात-भ्रात को मारता, जोरू हुई ज़मीन।।

|| 413 ||

मात-पिता निज पूत को, करें अपरिमित प्यार।
तनिक प्रीत जग को करें, स्वर्ग बने संसार।।

|| 414 ||

नर-नारी के बीच में, रहा न वैसा मेल।
घुटन-भरी-सी जिन्दगी, रहे परस्पर झेल।।

|| 415 ||

अपने-अपने स्वार्थ में, जकड़ गये हैं लोग।
इसीलिये पीड़ा अधिक, लोग रहे हैं भोग।।

|| 416 ||

हाय राम! कैसी करी, मनुज हुआ लाचार।
भ्रात-भ्रात के बीच में, रहा न शिष्टाचार।।

|| 417 ||

खड़ी यामिनी कह रही,-'हाय! मनुज की बात'।
लिये चन्द्रमा साथ में, भूल गयी सब रात।।

|| 418 ||

अलग-अलग सब खेलते, अपने-अपने खेल।
मनचाही गति दौड़ती, अब जीवन की रेल।।

|| 419 ||

अब जीवन में रस नहीं, बदल गया आधार।
अथवा प्राशी का हुआ, अनचाहा आचार।।

|| 420 ||

अब तक जिनका दिया था, तन-मन-धन से साथ।
आज वही करने लगे, हमसे-दो-दो हाथ।।

|| 421 ||

आज दिखावा बन गया, सम्बन्धों का मूल।
हृदय-उपवन में उगे, प्रतिबन्धों के शूल।।

|| 422 ||

बड़ी अरूचि-सी हो गयी, जीवन-धन से आज।
अपना काम निकारि के, लोग रहे हैं भाज।।

|| 423 ||

दूर-दूर तक बढ़ गया, जग स्वारथ का राज।
रिश्ते लावारिस हुये, रही न अब तो लाज।।

|| 424 ||

मात-पिता-संतान में, रहा न मधुमय प्यार।
मिथ्या रिश्ते हो गये, कंचन की बलिहार।।

|| 425 ||

नाजुक रिश्ते रुँठकर, छोड़ चले हैं गाँव।
लगता तरु को छोड़कर, भाग रही है छाँव।।

|| 426 ||

ठीक-ठिकाना अब नहीं, बहुत हमारे नाम।
पशुओं की क्या जिन्दगी, मरते रहे अनाम।।

|| 427 ||

जाँत-पाँत औ' रक्त का, जिनसे था सम्बन्ध।
खड़े-खड़े हम देखते, तोड़ गये अनुबंध।।

|| 428 ||

तन-मन-धन अर्पित किया, छोड़ गये आचार।
कहने को कुछ भी कहो, तोड़ गये परिवार।।

|| 429 ||

सोच-समझ के दायरे, आज हुये हैं तंग।
विस्मय होता देखकर, नव पीढ़ी के रंग।।

|| 430 ||

जिस माँ ने जीवन दिया, पाला गोद खिलाय।
आज वही भूखी मरे, दर-दर ठोकर खाय।।

|| 431 ||

धिक्! ऐसी सन्तान को, मात हुयी लाचार।
सुख खोजे कैसे मिले, दुःख में पालनहार।।

|| 432 ||

आज प्यार की बात भी, करना है बेकार।
सिमट गये धन में सभी, रिश्ते-नातेदार।।

|| 433 ||

आज व्यथित मन की व्यथा, नहीं पूछता कोय।
सब अपने में मस्त हैं, कष्ट अकेला रोय।।

|| 434 ||

नैन-बैन सब चुक गये, शिथिल हुये सब गात।
भेज दिया माँ-बाप को, पाने को सौगात।।

|| 435 ||

रोम-रोम जर्जर हुये, भोग रहे अभिशाप।
आवारा ज्यों श्वान हों, भटक रहे माँ-बाप।।

|| 436 ||

सम्बोधन भी चुक गये, अजब समय की रीति।
हुये पराये अब सभी, निश्छल जिनसे प्रीति।।

|| 437 ||

घर-मन्दिर पति-देवता, पत्नी-दीप-सुगंध।
प्रीत-बाल बिन आस्था, पूजा है स्वच्छंद।।

|| 438 ||

घर-गृहस्थी में पल रहा, अमित क्रोध-अपमान।
घर-जीवन की कल्पना, बन जाते शमसान।।

|| 439 ||

मर्यादा परिवार की, प्रीति-नीति-कुल-व्यर्थ।
गरिमा शब्दों में ढली, हुये निरर्थक अर्थ।।

|| 440 ||

कौन सुने? किससे कहें? अपने मन की बात।
निर्णय पहले से किये, घर में बैठे तात।।

|| 441 ||

अब तक तुम कहते रहे, 'भले आदमी आप'।
आज बुरे हम हो गये, किसका मारा बाप??

|| 442 ||

साथ-साथ रहते रहे, सदियों से नर-नार।
नींव हुई कमजोर तो, ध्वस्त हुये परिवार।।

|| 443 ||

खटमल जैसे-चूँसती, वदन-रक्त औलाद।
मात-पिता असहाय-से, बन जाते फौलाद।।

|| 444 ||

सम्बन्धों के सूत्र में, बँधा सकल संसार।
धागे-धागे में पुरा, जन-मानस का प्यार।।

|| 445 ||

अपनों ने अब तक दिये, कैसे-कैसे घाव।
हृदय छलनी हो गया, डूबी कुल की नाव।।

|| 446 ||

कौन यहाँ किसका सगा, मृग-तृष्णा-सा खेल।
इंजनगाड़ी खींचता, कहलाती है रेल।।

|| 447 ||

बेटा भी सुनता नहीं, आज बाप की बात।
'हाँ' में 'हाँ' भरते नहीं, 'तभी' खड़ी की खाट।।

|| 448 ||

इंजन सीटी मारता, करता हमें सचेत।
डूब रहे इन्सान को, नहीं दीखता हेत।।

|| 449 ||

आम आदमी आज है, जीवन से बेचैन।
कैसी है यह जिन्दगी, बासर कटे न रैन।।

|| 450 ||

आज बहुत संसार में, ऐसे जन हैं तात!
हँसी-खुशी मिलते रहें, करें समय पर घात।।

|| 451 ||

बहुत फासले बढ़ गये, आज दिलों के बीच।
कमल-नाल जल में रहे, लेकिन जड़ में कींच।।

|| 452 ||

आज अनुज करते नहीं, अग्रज का सम्मान।
अग्रज भी करते रहे, पग-पग पर अपमान।।

|| 453 ||

प्यार कहानी बन गया, लोग सुनें अनजान।
दिल की बस्ती में कहीं, मिली नहीं मुस्कान।।

|| 454 ||

धन-दौलत अब हो गये, मानव के कर्तार।
पत्नी, पति से माँगती, केवल मुक्ताहार।।

|| 455 ||

दरवाजे ताला पड़ा, बदल गया है ठौर।
द्वारे पर बैठा लगे, वृद्ध और का और।।

|| 456 ||

मँहगाई की मार ने, बदले सब आचार।
खड़े-खड़े सब देखते, रिश्ते-नातेदार।।

|| 457 ||

पानी-पानी हो गया, अब रिश्तों का खून।
जितना बढ़ता आदमी, उतना बढ़े जुनून।।

|| 458 ||

जिनको मानो प्राण-तन, वे ही करते क्रोध।
नन्हीं-सी इस जान से, है कितना प्रतिशोध।।

|| 459 ||

कभी नहीं चुभने दिया, जिनको तिलभर शूल।
आज वही बतला रहे, मुझको मेरी भूल।।

|| 460 ||

पति-पत्नी के बीच में, रहा न सामंजस्य।
बदल गयी चिर-भावना, बदल गया परिदृश्य।।

|| 461 ||

मन रहता बेचैन है, अब जाऊँ किस ठौर?
परिजन पर-जन हो गये, बने और से और।।

|| 462 ||

जीवन-तरु ऐसे खड़ा, मरुथल बीच बबूल।
फूल हवा ने चुन लिये, शेष रहे गये शूल।।

|| 463 ||

रिश्तों की मजबूरियाँ, कर न सकीं आघात।
वरना, तो मचता सखे! बहुत बड़ा उत्पात।।

|| 464 ||

नर-नारी सब नाचते, खुले आम संभोग।
कौन लोक से आ गये, यहाँ निशाचर लोग।।

|| 465 ||

जीवन-रथ कैसे चले, जुड़े बैल बेजोड़।
अलग-अलग यों खींचते, नर-नारी कर होड़।।

|| 466 ||

नेह-नियम सब टूटते, मनुज हुआ मजबूर।
बात-बात में कर रहा, रिश्ते चकनाचूर।।

|| 467 ||

माता पिता के बीच में, रहा नहीं संवाद।
इसीलिये सन्तान भी, करती है प्रतिवाद।।

|| 468 ||

मात-पिता-परिवार-जन, बने अज़नबी आज।
दौड़ रहे धन-दौड़ में, उलट-पुलट सब काज।।

|| 469 ||

ज्यों नदिया में जल नहीं, चलता नहीं बहाव।
त्यों रिश्तों में गुम गया, कब का आज लगाव।।

|| 470 ||

रिश्तों से गायब हुआ, सहज- समर्पण- प्यार।
धन की चाह अकूत की, अंधी चली बयार।।

शिक्षा और शिक्षक

|| 471 ||

बिना पुताई के भवन, रहता ज्यों बेकार।
बिन शिक्षा त्यों मनुज का, जीवन है निस्सार।।

|| 472 ||

कितना ही कर लीजिये, मानव का उत्थान।
लेकिन, शिक्षा-दीप बिन, मिटे न तम-अज्ञान।।

|| 473 ||

शिक्षा इस संसार में, ज्यों सागर में नाव।
बिन केवट पतवार के, नहीं मिलेगा ठाँव।।

|| 474 ||

शिक्षा ने बदले सभी, पिछले दस्तावेज।
अधिगम ने अधिगम किया, गुरु का ही निस्तेज।।

|| 475 ||

युग-युग में होता रहा, गुरुओं का सम्मान।
हाय! हवा कैसी चली, पग-पग पर अपमान।।

|| 476 ||

आज ज्ञान के क्षेत्र में, राजनीति का खेल।
चेला झंडी दे रहा, गुरू चलाता रेल।।

|| 477 ||

गुरुओं ने छोड़े सभी, जब अपने आचार।
चेले भी माने नहीं, अब गुरु का आभार।।

|| 478 ||

अब गुरुजन में है नहीं, वैसा हृदय-द्राव।
तो चेले भी हो गये, गुड़-शक्कर से राव।।

|| 479 ||

छूट गयीं पगडंडियाँ, टूट गयीं सब लीक।
उलटी गंगा बह रही, आज देश के बीच।।

|| 480 ||

अब अर्जुन सुनता नहीं, अपने गुरु की सीख।
भव्य-भवन निर्माण को, द्रोण माँगते भीख।।

|| 481 ||

अर्जुन अब लाचार है, नया-नया व्यापार।
महाभारत न चाहिये, जीत मिले या हार।।

|| 482 ||

राजनीति ने कर दिये, गुरु शिष्यों से दूर।
मँहगाई ने भी किये, सपने चकनाचूर।।

|| 483 ||

भौतिकता जग को रही, नंगा नाच नचाय।
कैसे गुरु जग से बचें, तुम ही देउ बताय।।

|| 484 ||

शोषण पोषण कर रहा, गुरुओं को मजबूर।
रोजी-रोटी ने किया, गुरु-शिष्यों को दूर।।

|| 485 ||

अब गुरुओं के सामने, केवल एक है लक्ष्य।
लक्ष्मी जी कृपा करें, भरे तिजौरी लक्ख।।

|| 486 ||

राजनीति अब कर रही, शिक्षा का उपहास।
गुरुओं ने भी देश का, उलट दिया इतिहास।।

|| 487 ||

जब तक नेता देश के, करें ज्ञान-अपमान।
तब तक होता रहेगा, पशुता का सम्मान।।

|| 488 ||

जब तक गुरुजन को मिले, राजनीति-विषपान।
तब तक भारत देश में, शिक्षा का अवसान।।

|| 489 ||

बिन गुरु के शिक्षा नहीं, बिन शिक्षा सब व्यर्थ।
प्राण बिना ज्यों देह का, क्या जीवन में अर्थ।।

|| 490 ||

शिक्षा से जिनका जुड़ा, राजनीति-सम्बन्ध।
ऐसे शिक्षक पा रहे, शासन से अनुबन्ध।।

|| 491 ||

धर्म-जाति जब बन गयी, शिक्षा की पहचान।
नेता करता देश में, शिक्षक का अपमान।।

|| 492 ||

शिक्षक शिक्षा से विमुख, हुये आज अज्ञान।
राजनीति कर पा रहे, शासन से सम्मान।।

|| 493 ||

भाई मंत्री बम गया, जिस शिक्षक का आज।
उसकी किस्मत देख लो! बदल जाय सब साज।।

|| 494 ||

राजनीति करते बना, शिक्षक 'मन्त्री' आप।
सात पीढ़ियाँ देखतीं, शिक्षा-मंत्री बाप।।

|| 495 ||

धर्म-जाति को देखकर, बँटते हैं सम्मान।
गधे मिठाई खा रहे, हंसों का अपमान।।

हिंसा और आतंक

|| 496 ||

शीष काट, तन गोदकर, टुकड़े किये हजार
हाड़-माँस-आँतें पड़ीं, बहता रुधिर अपार।।

|| 497 ||

अस्थि-रुधिरमय खींचते, श्वान और श्रृगाल।
भारत माँ के लाल को, कितना करें हलाल।।

|| 498 ||

शीष कटा, तन से जुदा, पड़ा है किंचिद दूर।
नैन फटे ज्यों कह रहें,- 'मानव कितना क्रूर'।।

|| 499 ||

भूखा नाहर गाय पर, देख पड़े ज्यों टूट।
हिंसक पशु-इन्सान ने, लिया चमन को लूट।।

|| 500 ||

ताकत से पागल हुआ, बना स्वयं भगवान।
पलक झपकते लूटता, कत्ल करे इन्सान।।

|| 501 ||

वसुधा पर तब तक रहे, हिंसक नर-पशु राज।
चेतन जब तक है नहीं, जग में मनुज-समाज।।

|| 502 ||

बालाओं को लूटकर, खींच भगे ताटंक।
बना भेड़िया आदमी, हिंसा का आतंक।।

|| 503 ||

बेटी-भगिनी-मात का, नहीं रहा सम्मान।
देख अकेली लूटता, अस्मत-वैभव-जान।।

|| 504 ||

आगजनी औ' लूट के, ले हिंसक-अधिकार।
क्रूर आदमी कर रहा, हत्या का व्यापार।।

|| 505 ||

क्रंदन चारों ओर है, दुनिया भय से त्रस्त।
मानवता बन्दी बनी, प्राणी संकट-ग्रस्त।।

|| 506 ||

यह हिंसा का पुँज है, राक्षस यह इन्सान।
इसकी रग-रग में भरा, पशुता का अभिमान।।

|| 507 ||

तुम कहते हो 'आदमी', मैं कहता 'हैवान'।
इन्सानों की भीड़ में, घुस आया 'शैतान'।।

महानगर

|| 508 ||

धूल-धुँआ औ' शोर का, दूर-दूर तक राज।
पल-पल करते आँचमन, महानगर सब आज।।

|| 509 ||

दूर प्रकृति से हो गये, महानगर के लोग।।
रहन-सहन में लग गया, कृत्रिमता का रोग।।

|| 510 ||

कैसा जीवन हो गया, महानगर का यार!
नाजुक रिश्तों में नहीं, अब बिल्कुल भी प्यार।।

|| 511 ||

अर्थहीन सब हो गये, केवल धन का अर्थ।
महानगर में पहुँचकर, सारे रिश्ते व्यर्थ।।

|| 512 ||

धन-संग्रह ही लक्ष्य है, महानगर में आज।
कितना घृणित कर्म हो, किये न आती लाज।।

|| 513 ||

महानगर में देख लो! धनवानों का मान।
जैसे भी हो धन मिले, महानगर की शान।।

|| 514 ||

लुप्त हुयी जन-भावना, रहा दिखावा तात!
अनजाने सब ढो रहे, महानगर में गात।।

|| 515 ||

मंद-मंद बहती हवा, मलय सुवासित भोर।
मंदिर की घंटी बजी, मधुर-मनोहर शोर।।

|| 516 ||

प्रातकाल ले आ गया, बिखरे-बिखरे केश।।
पीले- पीले- से बदन, रंग-बिरंगे-वेश।

|| 517 ||

महानगर की भीड़ में, खोया मेरा गाँव।
अता-पता मिलता नहीं, कहाँ गया वह ठाँव।।

|| 518 ||

महानगर के बीच में, गुम हो गया किसान।
पूछ-पूछ हारे सभी, फेल हुआ विज्ञान।।

|| 519 ||

महानगर लेकर गया, रिश्तों की सौगात!
बूढ़ा मेरे गाँव का, समझ गया औकात।।

प्रकृति

|| 520 ||

घोर अंधेरी है निशा, प्रेमी-मन-अनुकूल।
अम्बर के आँचल खिला, सखे! चाँद का फूल।।

|| 521 ||

खिली दूधिया चाँदनी, जीव-जन्तु चहुँ ओर।
फूले-फूले फिर रहे, बिन पावस वन-मोर।।

|| 522 ||

धरती औ' आकाश का, बदल गया परिदृश्य।
दूर क्षितिज तक देखता, खिला मनोहर दृश्य।।

|| 523 ||

मन-मादक भौंरे हुये, तितली करें किलोल।
उपवन मॅहकी चाँदनी, सरवर भरें हिलोल।।

|| 524 ||

देख मनोरम दृश्य को, प्रेमी हुये विमुग्ध।
लोक-लाज सब भूलकर, करें प्रेम का युद्ध।।

|| 525 ||

मन-मादक भौंरा हुआ, बड़ा नशे में चूर।
फूलों-सा तन देखता, प्यार करे भरपूर।।

|| 526 ||

धूप-छाँह दीखे नहीं, पड़े न मग दिखलाय।
कहिये! ऐसे में सजन, कौन पथिक हरषाय।।

|| 527 ||

धरती-अम्बर दूर तक, धुँआ-धुँआ विकराल।
पथिक कहीं दीखे नहीं, क्या दीखेगा काल।।

|| 528 ||

छाया को छाया नहीं, जड़-चेतन लाचार।
दूर-दूर तक हो रहा, कैसा अत्याचार।।

|| 529 ||

विटप सभी गुमसुम खड़े, पशु-पंछी सब मौन।
निचुड़-निचुड़ कर झर रहा, बूँद-बूँद-सा कौन।।

|| 530 ||

धूप नहीं, छाया नहीं, कुमला रही कनेर।
धुआ- धुँआ-सा उड़ रहा, उड़ती नहीं बटेर।।

|| 531 ||

हिरणी-मन व्याकुल बड़ी, देख-देखकर हाल।
उचक-उचककर देखती, शंकित-नैना बाल।।

|| 532 ||

मानसरोवर जल भरा, हंसा करें, किलोल।
देख-देख मन फूलता, क्या प्राकृतिक मोल।।

|| 533 ||

सुमन-वाटिका हेरकर, हृदय उठी हिलोर।
रोम-रोम थिरकन लगा, नाच उठा मन-मोर।।

|| 534 ||

सुमन-वाटिका में सजे, तितली चूमे गात।
नभ में जब तक मेघ हैं, बिजली करती बात।।

|| 535 ||

सूखे पेड़ गुलाब के, फूले फिरें पटेर।
मौसम की बरजोरियाँ, झूम रहे हैं बेर।।

|| 536 ||

अब नदिया में जल नहीं, गये किनारे सूख।
केवट नौका देखता, नियति गयी है रूँठ।।

|| 537 ||

खिलते फूल पलाश के, सहते पतझड़-घाम।
सुमन सदा हँसते रहें, नियति भले हो बाम।।

|| 538 ||

खड़ा मीन की ताक में, बगुला सरवर-तीर।
देख मृत्यु को सामने, मीन बहावे नीर।।

|| 539 ||

खोयी-खोयी सी डगर, उजड़ा-उजड़ा क्यार।
बुझी-बुझी-सी-चाँदनी, सूखी - सूखी ब्यार।।

|| 540 ||

अमराई की गोद में, सोया बाल-विहान।
दूर-दूर तक छा गया, तम-सा धुंध-वितान।।

|| 541 ||

दिवस-रैन ज्यों घट रहे, त्यों सुख-दुःख संसार।
पल-पल करती सृष्टि है, जीवन का श्रृंगार।।

|| 542 ||

शीतल-मंद-सुगन्धमय, शीत गुलाबी प्रात।
नाच उठी मन-चातकी, फूला फूला गात।।

|| 543 ||

रंग-बिरंगी तितलियाँ, उड़तीं चारों ओर।
अलकें नर्तन-सी करें, नैना बने चकोर।।

|| 544 ||

सुबह-शाम-दोपहर के, अलग-अलग हैं रूप।
मधुर-शान्त-तीखी बड़ी, अजब-गजब की धूप।।

गाँव

|| 545 ||

सीधे-सादे लोग है, सीधी-सादी बात।
भेदभाव की जिन्दगी, मेरे गाँव न तात!!

|| 546 ||

पहुँच गया अब गाँव में, वैज्ञानिक आलोक।
बदल गया है गाँव का, भाव- सम्पदा-लोक।।

|| 547 ||

हाय राम! कैसी करी, रहे नहीं वे गाँव।
गाँव-खेत-परिवार तज, लोग खोजते ठाँव।।

|| 548 ||

याद रहीं अमराइयाँ, औ' पिलखन की छाँव।
बचपन का संग खेलना, चौपालों का गाँव।।

|| 549 ||

बालसखा बिछुड़े सभी,. दूर हुये आजाद।
कसक रही मन भावनी, उस बचपन की याद।।

|| 550 ||

बहुत याद आते मुझे, चना-मटर के खेत।
सुबह-शाम का घूमना, उपजाता था हेत।।

|| 551 ||

गेहूँ- सरसों-मटर के, खेत रहे लहराय।
हँसता अरहर देखकर, सुबह रही शरमाय।।

|| 552 ||

रामपाल का खेत सब, लिया महाजन नाप।
स्वामी से सेवक हुआ, रामपाल का बाप।।

|| 553 ||

कहाँ गया रहमान का, सियाराम का घेर?
किस्मत मेरे गाँव की, बदल गये सब ठेर।।

|| 554 ||

रोज शाम को बैठते, चौपालों पर आय।
भोलू कहते थे 'कथा', हाय! दीखते नाय।।

|| 555 ||

चकबंदी तो कर गयी, दलबंदी के काम।
झगड़ा मेंड़ों पर हुआ, गाँव हुआ नीलाम।।

|| 556 ||

घर-घर में नेता हुये, मुखिया कोई नाय।
नाक न नीची हो भले! गर्दन ही कट जाय।।

|| 557 ||

मात-पिता गमहीन हैं, टूट गया परिवार।
तीनों बेटे कर रहे, अलग-अलग त्यौहार।।

|| 558 ||

दूर-दूर तक मोहती, हरियाली तरु-छाँव।
अब तो भट्टों ने लिया, लूट खेत अरु गाँव।।

|| 559 ||

शीतकाल आता इधर, जलते उधर अलाव।
चौपालों की बैठकें, भर देतीं सब घाव।।

|| 560 ||

लगती थी मनहर बड़ी, खेतों में बरसीम।
लोट खुले आकाश में, मिलता चैन असीम।।

|| 561 ||

देख धान के खेत को, होता भाव विभोर।
पावस की बौछार पा, नाच उठे मन मोर।।

|| 562 ||

बाग-बाग झूले पड़े, झूल रही हैं नार।
है 'हरियाली-तीज' का, सावन का त्यौहार।।

|| 563 ||

बदल गये सब आदमी, बदल गया है वेश।
पछुआ का झोंका चला, बदल गया परिवेश।।

|| 564 ||

अब वाणी में रस नहीं, हृदय बीच न प्यार।
बदल गया माहौल सब, लगता गाँव कछार।।

|| 565 ||

जब जाता था गाँव में, खुश होते थे लोग।
अब तो मुखडों से लगे, मना रहे सब शोग।।

|| 566 ||

समय पूर्व ज्यों नव-वधू, खो देती है आब।
तैसे मेरे गाँव के, सूख गये तालाब।।

|| 567 ||

भट्टों ने धरती करी, सारी बंटाधार।
सोना उपजे था जहाँ, हुये वहाँ पर खार।।

|| 568 ||

बूढ़े-बुढ़िया गाँव के, कटे-फटे-से वस्त्र।
मानो पलटन छोड़कर, गयी पुराने शस्त्र।।

|| 569 ||

चाचा-चाची-ताउ के, रिश्तों-भरा-कमाल।
लगता पूरा गाँव था, मानो रचा धमाल।।

|| 570 ||

रहा नहीं अब गाँव में, वैसा आदर-भाव।
गिरधारी को देखकर, गोकुल खाता ताव।।

|| 571 ||

खेत-खेत मजदूर हैं, फसल रहे हैं काट।
कोई बोये, काटता, कोई उड़ाय ठाट।।

|| 572 ||

बहुत याद आते मुझे, बचपन के वे मीत!
साँझ- सुबह नित खेलना, हाय! अनूठी प्रीत।।

|| 573 ||

धूल-भरी गलियाँ नहीं, विविधा सजीं दुकान।
चकाचौंध बिजली करे, यौवन भरे उफान।।

|| 574 ||

गलियारे सारे बने, हाय! सड़क अनजान।
बचपन खोया था जहाँ, मिटी सभी पहचान।।

|| 575 ||

युग बदले, बदले सभी, नियम-रीति-व्यवहार।
लेकिन, मेरे गाँव के, क्या बदले आचार।।

|| 576 ||

घोर अंधेरा सब तरफ, डूब गया सब गाँव।
हाथ न दीखे हाथ को, छुपी छाँव में छाँव।।

|| 577 ||

आज न कोई जोड़ता, उजड़ रहे परिवार।
जिसने चाहा जोड़ना, चले गये हरिद्वार।।

गर्मी

|| 578 ||

ताल-तलैया सूखते, छाया घोर अकाल।
गर्मी के मारे हुये, जड़-चेतन बेहाल।।

|| 579 ||

नदियों में जल है नहीं, सूख रहे हैं बाँध।
हलिया हल को देखता, सुबह हुई है साँझ।।

|| 580 ||

थलचर-नभचर व्यथित हैं, जलचर नहीं दिखाय।
बालक-बूढ़े सब जलें, युवा रहे घबराय।।

|| 581 ||

सारी फसलें सूखतीं, सूखे कूप-तड़ाग।
उमड़-घुमड़ बदरा उठें, बरस रही है आग।।

|| 582 ||

दिनकर-आतप ने सभी, फूँक दिये घर-बार।
पशु-पंछी हैरान हैं, जीव हुये लाचार।।

|| 583 ||

दिवस-निशा नित ज़ा रहे, बादल आये नाय।
बागों पड़ा न झूलना, सावन सूखा जाय।।

|| 584 ||

कहाँ पपीहा छुप गया, मन-मयूर चिल्लाय।
प्राण-कोकिला ने लिया, द्वार-कपाट लगाय।।

|| 585 ||

नगर-नगर औ' गाँव में, निज-निज देव मनाय।
बुढ़िया सब मिल रात में, खेत जोतने जाय।।

|| 586 ||

मारे-मारे सब फिरें, दुनिया अति हैरान।
अपने-अपने कर्मफल, भोग रहे शैतान।।

|| 587 ||

छोड़ गये तालाब को, पंछी-कछुआ-मीन।
देख-देख पशु भागते, मानो हुये यतीम।।

|| 588 ||

दादी-दादा कह रहे, विधि ने किया कमाल।
सौ सालों से देखते, ऐसा नहीं अकाल।।

वर्षा

|| 589 ||

भीषण गर्मी पड़ रही, बहे हवा तक नाय।
चैन न घर-बाहर मिले, गाय-भैंस रम्भाय।।

|| 590 ||

मन्द-मन्द बहने लगी, पेड़ों पर पुरवाय।
शनैः शनैः आने लगे, नभ में मेघ-निकाय।।

|| 591 ||

बागों को भरने लगी, कोयल की गुंजार।
पपिहा 'पी-पी' बोलता, रहे मयूर पुकार।।

|| 592 ||

आसमान में दौड़ते, काले-काले-मेघ।
श्याम-घटा के बीच में, दमके विद्युत तेग।।

|| 593 ||

मेघ-घटाओं का हुआ, सारा अम्बर-धाम।
कारे-कारे बादरा, सूरज-शीत न घाम।।

|| 594 ||

पुरवैया के साथ में, पड़ने लगीं फुहार।
सबके मुखड़े दीखतीं, खुशियाँ अगम-अपार।।

|| 595 ||

साँय-साँय पछुआ चली, पुरवा हुयी किनार।
गरज-गरज मेघा गिरें, वृष्टि मूसलाधार।।

|| 596 ||

गाँव-गाँव औ' खेत में, पानी भरा अपार।
ताल-नदी-नाले बहे, अपने छोड़ करार।।

|| 597 ||

मुरझाये मुखड़े खिले, कानन सब हरिराय।
हरो चोलना पहनकर, प्रकृति-वधू हरषाय।।

|| 598 ||

दादुर-झींगुर-मोर का, भरा भुवन में शोर।
झूम उठी वसुधा-वधू, नाच उठे वन-मोर।।

|| 599 ||

अपनी-अपनी सेन ले, भिड़ें परस्पर मेघ।
आसमान में घूमती, बिजली बनकर तेग।।

शरद

|| 600 ||

शरद-सुन्दरी आ रही, मौसम हुआ रंगीन।
शीत-गुलाबी-ओढ़ना, लगती बड़ी हँसीन।।

|| 601 ||

सैर-सपाटे जा रहे, प्रातकाल नर-नार।
कौन किसी से पूछता, जीत-खुशी-दुःख-हार।।

|| 602 ||

शरद-सुन्दरी ने ढके, गोरी के सब गात।
चन्द्रमुखी का चन्द्रमा, बदली-बीच लखात।।

|| 603 ||

शरद-ऋतु भई बावरी, तन-मन दियो जलाय।
तुम बिन अब हे सुन्दरी! हृदय अति अकुलाय।।

|| 604 ||

कुहरा फैला दूर तक, कुछ भी नहीं दिखाय।
मैं तो जानूँ वह सखी! हृदय रही जलाय।।

|| 605 ||

दूर-दूर तक बह रही, शीतल-मंद-समीर।
चुभती बिछुआ डंक-सी, कम्पित होत शरीर।।

|| 606 ||

अति शीतल ही जल भयो, छुअत बदन-बेचैन।
सर्दी-रानी ने कियो, हिम-शीतल दिन-रैन।।

|| 607 ||

सर्दी-रानी कर रही, निर्मम अत्याचार।
ठिठुर-ठिठुर कर मर गया, देखो! पहरेदार।।

बसंत

|| 608 ||

नयी-नयी कलियाँ खिलीं, विकसे सुमन अपार।
नवल वधूटीं कर चलीं, नवल-नवल श्रृंगार।।

|| 609 ||

नयी नवोढ़ा देखकर, सुमन उठे मुस्काय।
हुयी दिशायें बावरीं, आगत पा शरमाय।।

|| 610 ||

उपवन-उपवन पात पर, बहती मलय-बसंत।
कली-कली रस-चूमते, रसिया-मधुकर-कंत।।

|| 611 ||

पपिहा बोला बाग में, 'पी-पी' रहा सुनाय।
लगता जैसे हीर को, राँझा रहा बुलाय।।

|| 612 ||

बौर आम पर आ गया, सुमन करें मृदुहास।
भौंरे गुन-गुन गा रहे, सखि! आया मधुमास।।

|| 613 ||

मलय पवन बहने लगी, कलीं उठीं मुस्काय।
हँसी दूधिया चाँदनी, रही बसंत मनाय।।

|| 614 ||

शुभे! किया मधुमास ने, घायल सारा देश।
कोयल 'कू-कू' कर रही, तन-मन बदला वेश।।

|| 615 ||

कोई तन-मन में भरे, मीठा-मीठा राग।
जी करता है प्रेयसी! खेलूँ डटकर फाग।।

|| 616 ||

सारी वसुधा में भरी, मनसिज नई उमंग।
पिया-मिलन को बावरी! मन में उठे तरंग।।

|| 617 ||

कोयल-मधुकर गा रहे, गली-कुँज सब ठाँव।
नया-नया-सा लग रहा, पिया-पिया का गाँव।।

|| 618 ||

अजब हूक-सी भर दई, रग-रग देह अनंग।
मन करता है चूम लूँ, गोरी! तेरे अंग।।

|| 619 ||

चारों ओर बसंत ने, कैसा किया कमाल।
युवक-युवतियाँ कर रहे, उपवन बीच धमाल।।

होली

।। 620 ।।

प्यारी! होली आ गयी, तन-मन खेले फाग।
मनमथ हृदय भर रहा, अजब रंगीले राग।।

।। 621 ।।

भाँति-भाँति के हो रहे, सबके भूषण अंग।
ढोल बजाता आ रहा, होली का हुड़दंग।।

।। 622 ।।

होली ने होली किये, मानव के सब खेद।
गले परस्पर मिल रहे, छोड़ सभी मतभेद।।

।। 623 ।।

सबके मुखड़ों पर सजे, तरह-तरह के रंग।
उछल-कूदकर गा रहे, चढ़ी दूधिया भंग।।

।। 624 ।।

ढोल-नगाड़े बज रहे, बाज रही मृदंग।
गात-गात पर फब रहे, लाल-गुलाबी रंग।।

।। 625 ।।

पिचकारी रंग की लगी, हुई चोलिका लाल।
तन को पगली कस रही, मन को करे हलाल।।

।। 626 ।।

यौवन-मद से चूर हैं, नैना बने रसाल।
मन को मोहित कर रहे, गोरी-गाल-गुलाल।।

।। 627 ।।

लाल-गुलाबी लग रहे, बालक-बूढ़े-नार।
मौसम की सौगात है, या मनमथ की मार।।

|| 628 ||

रंग-अबीर-गुलाल का, होली का त्यौहार।
द्वेषभाव को छोड़कर, मिलो गले हरबार।।

|| 629 ||

जाति-पांत के भेद को, दी होली ने आग।
बनकर रंग गुलाल का, बिखर गया है राग।।

|| 630 ||

होली जैसा विश्व में, कहीं नहीं त्यौहार।
यह भारत की आत्मा, प्रेम-एकता-द्वार।।

प्रवास के बीच

|| 631 ||

है तो घृणा-प्यार में, अद्भुत ही सम्बन्ध।
दोनों मन की वृत्तियाँ, बदबू और सुगन्ध।।

|| 632 ||

कितने ही कर लीजिये, छोटे-बड़े उपाय।
पर, कुत्ते की पूँछ का, टेढ़ापन कब जाय।।

|| 633 ||

वंश-जाति-परिवार का, जाता नहीं दुराव।
बातचीत-व्यवहार से, होता प्रकट छुपाव।।

|| 634 ||

फूला-फूला तू फिरे, लिये घमंडी लाश।
नर! तुझसे क्या माँगना, क्या है तेरे पास।।

|| 635 ||

वाणी औ' व्यवहार में, शोषण पलता खूब।
बनी वेश्या जिन्दगी, गया आदमी डूब।।

|| 636 ||

कुत्तों जैसी जिन्दगी, बिता रहे हैं लोग।
खूनी हड्डी देखकर, छोड़ें भगें मधु भोग।।

|| 637 ||

पग-पग पर मिलता रहा, गाली औ' अपमान।
ऐसे नर खुद को कहें, असली बुद्धिमान।।

|| 638 ||

नारी की निन्दा करी, कबिरा बीच बजार।
नारी ने जन्मे कवे; हुआ नहीं अवतार।।

|| 639 ||

मानव-जीवन को किया, तूं नदे! निहाल।
लेकिन, मानव ने दिया, तुझको बाँध विशाल।।

|| 640 ||

नदी सूखती जा रही, जीव रहे घबराय।
जग, जिसको जीवन दिया, देख-देख इठलाय।।

|| 641 ||

तुमने यदि कुपात्र को, बहुत दे दिया मान।
उसका निश्चित जान लो, होगा काम-तमाम।।

|| 642 ||

बन्दर-बालक-बावरा, इनकी गति है एक।
जितना इन्हें चिढ़ाइये, दरसाते अविवेक।।

|| 643 ||

आसमान में थूकता, मुँह पर गिरता आय।
विषघर को जो पालता, चूक पड़े डँस जाय।।

|| 644 ||

सोच-समझकर कीजिये, भले-बुरे सब काम।
जैसा तुमने किया है, रह जायेगा नाम।।

|| 645 ||

दुनिया के बाजार में, भाँति-भाँति के लोग।
भाँति-भाँति की कामना, भाँति-भाँति के भोग।।

|| 646 ||

सोचो! समझो! तब करो, जीवन को नीलाम।
वरना, सारी जिन्दगी, रहना पड़े गुलाम।।

|| 647 ||

ओछा-नाँदा-वेश्या, इनसे मिले न प्रीत।
ये जीवन में कैंसर, नहीं बनाना मीत।।

|| 648 ||

भैया! इस संसार में, निज औकात न भूल।
वरना, सारा जगत ही, हो जाये प्रतिकूल।।

|| 649 ||

निर्बल-दीन-अनाथ की, कीजे खूब सहाय।
मत करना पर दोस्ती, समय पड़े नटि जाय।।

|| 650 ||

दुष्ट कभी छोड़े नहीं, जीवन के छल-छंद।
जैसे रस्सी के जले, नहीं छूटते फंद।।

|| 651 ||

घर की छत जैसे खड़ी, लिये चार दीवार।
कर्महीन को चाहिये, कोई नया सवार।।

|| 652 ||

अन्यायी के सामने, झुका प्राण इक बार।
तो निश्चित तू जानले, सदा हुआ बेकार।।

|| 653 ||

देशकाल-परिवार की, नहीं टूटती रीत।
जैसे पहले-पहल की, नहीं छूटती प्रीत।।

|| 654 ||

विषधर को छेड़ा अगर, और गया वह भाग।
जब भी अवसर मिल गया, भरे बदन में आग।।

|| 655 ||

दुश्मन विषधर की तरह, छिड़ा न छोड़े प्रान।
भले-भाँति फन कूट दे, तभी बचेगी जान।।

|| 656 ||

अरि अजगर से कम नहीं, करले पहले बार।
वरना, मुँह फैलायकर, निगल जाय हड़बार।।

|| 657 ||

अब त्रेता का युग नहीं, है कलियुग का राज।
जूता जिसके हाथ में, सफल वही है आज।।

|| 658 ||

ऊपर चढ़ती धूल जब, देते उसको झाड़।
नीच अगर सिर पर चढ़े, दीजे थप्पड़ मार।।

|| 659 ||

जितना अनुभव-खग उड़े, उतना बढ़ता बोध।
जितनी बढ़ती साधना, उतना खिलता शोध।।

|| 660 ||

कपटी-कायर-नीच से, कभी न कीजे प्रीत।
वरना, घर-परिवार की, बदलेगी कुल रीत।।

|| 661 ||

कितना ही कर लीजिये, इस जग में उपकार।
जिनको चाहो प्राण से, वही करें प्रतिकार।।

|| 662 ||

आयी विपदा राम पर, सिया हरी वनवास।
बुरे दिनों के सामने, निष्फल सभी प्रयास।।

|| 663 ||

हमने अपनी हर खुशी, जग में दई लुटाय।
जिसको जितनी चाहिये, खुशी-खुशी ले जाय।।

|| 664 ||

मुझको तो पथ में मिले, तीखे काँटे-शूल।
मैंने गढ़ - गढ़ प्रेम से, सभी बनाये फूल।।

|| 665 ||

सुने बिना, देखे बिना, कान करें विश्वास।
ऐसे ही होता रहा, जग में घोर विनाश।।

|| 666 ||

तरह-तरह के लोग हैं, इसी सृष्टि के बीच।
विषय-भोग में रात-दिन, डूबे रहते नीच।।

|| 667 ||

आओ! सब मिलकर करें, जगती का कल्यान।
सबके ही सहयोग से, दुनिया बने महान।।

|| 668 ||

हिन्दू, मुस्लिम भी नहीं, न कोउ सिक्ख इसाय।
दुनिया कैसी बावरी, दीने पंथ चलाय।।

|| 669 ||

जब-तक समग्रह होत न, चित में जुरै न प्रीत।
कभी विरोधी ग्रहों से, चले नहीं शुभ नीत।।

|| 670 ||

करते कुसुमित कुँज को, सौरभ और पराग।
ऐसे ही सन्तान है, देख खिले उर-बाग।।

|| 671 ||

धुक-धुक-धुक इंजन करे, गह भवनों की ओट।
जैसे कुलटा नायिका, छुप-छुप करती चोट।।

|| 672 ||

हीरा नाली में पड़ा, कर से लिया उठाय।
साफ-सोंधकर जब रखा, जग ने लिया उड़ाय।।

|| 673 ||

जिसके हृदय में भरे, कटु बचनों के तीर।
भैया! उसके साथ में, पग-पग मिलती पीर।।

|| 674 ||

अरे मीत! किस आश में, उससे करे गुहार।
उससे तो शैतान भी, गया कभी का हार।।

|| 675 ||

प्रथम भेंट में ही ठगे, कर-कर मृदुल बात।
सावधान! उस भाट से, पल-पल रहना तात!!

|| 676 ||

यार! नहीं यह आदमी, है जालिम-मक्कार।
यदि होता यह आदमी, करता सबको प्यार।।

|| 677 ||

मितवा! कब तक सहोगे? अरि के भीषण तंत्र।
समय भागता जा रहा, पढ़लो! मारक-मंत्र।।

|| 678 ||

अपने-अपने नाम की, सभी करें परवाह।
कोई नहीं गरीब की, पूरी करता चाह।।

|| 679 ||

देख भिखारी मर गया, पड़ा सड़क के बीच।
बिन माँगे अब दे रहे, आते-जाते भीख।।

|| 680 ||

नहीं किसी का भी किया, जीवन में अपकार।
फिर, किस कारण कर रहा, जग मुझसे प्रतिकार।।

|| 681 ||

शोध हुये जग में बहुत, हुआ न पैदा लाल।
जो जग को बतला सके, क्यों जीवन औ' काल।।

|| 682 ||

आधा जीवन कर दिया, हाय! ज्ञान के नाम।
बाकी आधा जो बचा, सड़क करे नीलाम।।

|| 683 ||

चौराहे पर है खड़ा, पथिक गया पथ भूल।
आते-जाते दे रहे, व्यंग्य-बाण के शूल।।

|| 684 ||

सुख से मन की हार है, सुख के भवन ससीम।
दुःख में जीवन-चेतना, दुःख का जगत असीम।।

|| 685 ||

हवा-सरीखी चल रही, जातिवाद की रेल।
सारे अवरोधक हुये, परंपरागत फेल।।

|| 686 ||

अपराधी के सामने, लोग भये निरुपाय।
ज्यों चीता को देखकर, गाय खड़ी रम्भाय।।

|| 687 ||

भ्रष्ट-दुष्ट-मक्कार की, करते लोग सहाय।
सच्चाई पर जो चले, उसको कौन बचाय।।

|| 688 ||

पल-दो-पल की जिन्दगी, रहा नहीं सुख-जून।
बस, जीने को चाहिये, दो मुट्ठी भर-चून।।

|| 689 ||

स्वारथ से जग चल रहा, स्वारथ पड़े पड़ाव।
स्वारथ का बाजार है, स्वारथ चढ़ते भाव।।

|| 690 ||

नील-गगन में छा गयी, दूर-दूर तक धूल।
करी नीच से आशिकी, बहुत बड़ी की भूल।।

|| 691 ||

लोग-लुगाई सब कहें, बहुत हुआ अन्याय।
अन्यायी है सामने, कुछ भी नहीं बसाय।।

|| 692 ||

बचपन बड़ा अबोध है, बड़े मनोहर खेल।
ज्यों-ज्यों बढता शिशु-तरु, त्यों-त्यों घटता मेल।।

|| 693 ||

भ्रष्ट व्यवस्था देखकर, आती तनिक न लाज।
खुले आम अब हो रहा, चीर हरण है आज।।

|| 694 ||

ऊँची अपनी नाक है, आलीशान मकान।
अन्दर कोउ न देखता, बाहर रहो जवान।।

|| 695 ||

सुनो बुराई बाँट लो, भरो रुई से कान।
नीच न छोड़े नीचता, जाने सकल जहाँन।।

|| 696 ||

कैसे-कैसे लोग हैं, कैसी-कैसी चाल!
गिरगिट जैसे रंग में, बदलें वे तत्काल।।

|| 697 ||

बुरे दिनों के सामने, नहीं सूझता ज्ञान।
सीधे पथ पर भी चलो, बहुत मिले अपमान।।

|| 698 ||

जब तक संकट से डरो, तब तक संकट छाय।
कर संकट का सामना, संकट रुकता नाय।।

|| 699 ||

पौरुष पावन शक्ति है, कायरता से दूर।
रहे क्रूरता पास तो, पौरुष चकनाचूर।।

|| 700 ||

संघर्षों में छुप रहा, जीवन का उत्थान।
सुविधा भोगी नर हुआ, जीवित मृतक समान।।

|| 701 ||

प्रेमी-हृदय ही करे, मनुज-चरित-निर्माण।
ग्रंथों-पंथों में नहीं, इसका मिले प्रमाण।।

|| 702 ||

ओछे जन के साथ में, कभी न कर सहवास।
डूबे कुल का मान भी, जग होवे उपहास।।

|| 703 ||

अब कीड़ों-सी जिन्दगी, भोग रहे हैं लोग।
पर-पीड़ा सुख है नहीं, कष्ट रहे हैं भोग।।

|| 704 ||

निखिल सृष्टि संगीतमय, राग भरा भरपूर।
रागी! खुद ही देखले, मंजिल कितनी दूर।।

|| 705 ||

बड़े-बडों की चाल में, फँसते रहे हुजुर।
इसीलिए बढ़ता गया, हृदय-बीच गुरूर।।

|| 706 ||

नियम बनाते आप हैं, नियम तोड़ते आप।
हमतो केवल देखकर, चलते हैं चुपचाप।।

|| 707 ||

अपने-अपने काज की, सबको है पहचान।
इनके जाने जग मिटे, मिट जाये अरमान।।

|| 708 ||

दुनिया में देखे-सुने, बड़े-बड़े धनवान।
बुरे दिनों के सामने, बचे नहीं बलवान।।

|| 709 ||

रावण-कंसों-से हुये, जग में बारहवाट।
हे शोषण के पुँज! सुन, रहे न तेरे ठाट।।

|| 710 ||

खरे-खरे बदले सभी, धर्म-कर्म भगवान।
तुम खोटों से पूछते, क्यों बदला ईमान।।

|| 711 ||

भेड़ सड़क पर कट रही, करता बधिक हलाल।
आते-जाते कह रहे,- "क्या बढ़िया है माल"।।

|| 712 ||

नारी का करने लगा, नर पग-पग अपमान।
मुखिया बनकर विश्व में, लूट रहा सम्मान।।

|| 713 ||

नर ने तो अपने लिये, खुले रखे सब द्वार।
पर, नारी की सोच पर, लगा दिया अधिभार।।

|| 714 ||

पराकाष्ठा हो गयी, नारी शोषण खूब।
भगिनी-पत्नी-प्रेमिका, मात गयीं सब ऊब।।

|| 715 ||

लड़की-लड़का में किये, पैदा जन्म विभेद।
लड़का मानो 'हर्ष' है, लड़की माने 'खेद'।।

❁ ❁ ❁

विविधा

अपनी बात

'विविधा' आपके सामने है। इसमें जनवरी 1997 से लेकर मई 1999 तक की मेरी काव्य–यात्रा की विविध अनुभूतियाँ हैं। इस कालावधि में हमने खोया अधिक है, और पाया 'नही' के बराबर है। यह आकलन चाहें राष्ट्रीय स्तर पर हो या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर, सामाजिक स्तर पर हो या वैयक्तिक स्तर पर, हम अवनति को प्राप्त हुए हैं।

इस काल खण्ड में मैंने वैयक्तिक स्तर पर कई आत्मीयजनों को सदा के लिए तिरोहित कर दिया। अब केवल उनकी स्मृतियाँ ही शेष प्रायः हैं। उनके बिछुड़ने से हार्दिकता प्रभावित हुई, संवेदनाएं व्यथित हुई, तो कविता क्यों नहीं प्रभावित होगी?

सामाजिक स्तर पर विघटन की प्रक्रिया निरन्तर प्रवहमान है। स्वार्थ के वशीभूत इन्सान को धन की चकमक ने पागल बना दिया है। धन के अकूत संग्रह के लिए धन के पीछे बेतहाशा दौड़ ने उसे पारिवारिक एवं सामाजिक स्तर पर पृथक कर दिया है। सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता, क्षमा, दया, त्याग, करूणा, सहानुभूति आदि मानवीय मूल्यों का उसने गला घोंटकर रख दिया है। फलतः सामाजिक–पारिवारिक स्तर पर उसे अशान्ति, घुटन, कुण्ठा, वेदना, पीड़ा, निराशा, अकेलापन आदि विसंगतियों ने घेर लिया है। वह अजनबी–सा बन कर रह गया है और तट पर पड़ी मीन–सा वह छटपटा रहा है।

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी विश्व–मानवता के लिए हमारी क्या उपलब्धि है? यह जन–सामान्य भी जानता है। सम्पूर्ण

राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश युद्ध व अशान्ति के ख़तरों से जूझ रहा है। भ्रष्टाचार, आतंक, अत्याचार और हिंसा में प्रतिस्पर्धा छिड़ी है। झूँठ, अन्याय व भ्रष्टाचार की विषैली गैसों से मानवता का कुँज मुरझाने लगा है। समाचार पत्रों के पृष्ठ आद्योपान्त हिंसा, लूट, हत्याओं व आगजनी की कांलिमाओं से पुते हैं। किसान, मजदूर, श्रमिक और निरीह प्राणियों का शोषण एवं अत्याचार की घटनाएँ निरन्तर बढ़ रही हैं। सम्पूर्ण विश्व मानवता तनावग्रस्त एवं अशान्त है। हिंसा, आतक और अराजकता का दौर जारी है।

कहीं भी चले चाइए! पिलखन की छाँव आँसू बहा रही है। अमराइयाँ सूनी पड़ी हैं। बरगद की छाँव में विषैले सांप लोट रहे हैं। चौपालें लुट चुकी हैं। अलाव लापता है। गाँव के गलियारों से लेकर महानग़र की गलियों तक अशान्ति, हत्या, लूट, आतंक और चहुँ दिशि अघोषित युद्ध का घोर साम्राज्य हैं, खेतों से लेकर पर्वतों की घाटियों–चोटियों; तालाबों से लेकर नदियों–सागरों तक में मानवीय मूल्यों की हत्याओं का दर्दनाक क्रंदन सुनायी पड़ रहा है।

मौसमी हवाओं ने अपने अन्दाज बदल दिए हैं। मौसमी हवाओं में अब वह ताजगी कहाँ? पुरवैया की मनोहारी मुस्कान पछुवा के चक्रवातों ने छीन ली है। कौन–सी जगह है जहाँ शान्ति है? एक पल का भी तो चैन नहीं।

मेरे ही देश में, जो विश्वशान्ति का सिरमौर रहा, अब कश्मीर की मनोरम वादियों से लेकर कन्याकुमारी की आध्यात्मिक पवित्रता तक, कच्छ की आत्मीयता से लेकर गोहाटी की गम्भीरता तक, सारा भारतीय परिवेश आज अशान्त है! आतंकित है! किसी अनहोनी से पल–पल आशंकित है! यही नहीं, सम्पूर्ण विश्व–मानवता की यही दयनीय दशा है। वर्गवाद, जातिवाद, भाई–भतीजावाद, क्षेत्रीयतावाद, अवसरवाद के कालियानाग ने अपनी भयानक विषैली फुंकारों से मानवता की यमुना का अमृतमय जल प्रदूषित कर दिया है। यह

कहना अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं होगा कि आज सम्पूर्ण विश्व परिवेश 'कैन्सर ग्रस्त' हो गया है।

मुझे लगता है कि इस सम्पूर्ण अराजक स्थिति के लिए स्वार्थ प्रेरित राजनीति मुख्यतः उत्तरदायी है। इसने मूल्यहीनता को जन्म दिया है। आज राजनेता मस्त हैं, अन्याय व भ्रष्टाचार के अभ्यस्त हैं। फलतः आम आदमी किंकर्तव्यविमूढ़ है। उसके सामने रोजी, रोटी और आवास की समस्याएँ अजगर–सा मुँह फैलाए खड़ी हैं। लेकिन इन सब विषमताओं और विसंगतियों के बीच अभी वह आश्वस्त–सा है कि कुहासा के बादल एक न एक दिन अवश्य छंट जायेंगे, और आत्मनिर्भरता के सूर्य के दर्शन होंगे। जिस दिन उसका यह आत्मविश्वास खण्डित हो जायेगा, वह दिन क्रांति के सूत्रपात का प्रथम दिन होगा। यह अलग विचार है कि वह दिन कब आयेगा?

दुःख है कि इस भयावह और विकटतम स्थिति में रचनाकार ने अपने परम्परागत दायित्व को विस्मृत कर दिया है। वह खेमाबद्ध होकर राजनेताओं का रीतिबद्ध दास बन गया है। उसके संकेतों पर कठपुटली–सा नृत्य कर रहा है। झूँठे सम्मान व पुरस्कारों को प्राप्त करने में गौरवान्वित है। वह क्रांति के जागरण गीत नहीं लिख रहा, अथवा उसकी भाषा–बोली को क्रांति का अग्रदूत–जन–सामान्य नहीं समझ पा रहा है। जब तक जन–सामान्य की चेतना अंगड़ाई नहीं लेगी, तब तक परिवर्तन.........क्रांति..........जन–जागरण, एक स्वप्न ही रहेगा। रचनाकार को सोचना होगा........आत्मलोचन करना होगा, अपने दायित्व को सुनिश्चित करना होगा!

वस्तुतः मैंने अपनी जीवन–यात्रा में पड़ने वाली इन्हीं विविध अनुभूतियों को **'विविधा'** में संजोया है। सहजता, सरलता, सहृदयता के साथ जीवन–यात्रा करते हुए जो भी पथ में आया है, उससे उसकी भाषा–बोली में बात कहने का प्रयास किया है।

यत्र–तत्र जीवन–पथ में देखी–भोगी विविधताओं, विषमताओं और विसंगतियों के विविध अनुभव–चित्र जो शब्दों की रेखाओं से अभिमण्डित हैं, **'विविधा'** में सहजतः स्थान पा गये हैं। यही कहीं, आपकों ये शब्द चित्र अपने होने का अहसास कराने लगें, तो समझिए कि यह श्रम सार्थक हो गया।

इसी आशा एवं विश्वास के साथ आपके कर कमलों में **'विविधा'** सौंप रहा हूँ क्योंकि

धर्म–कर्म–ईमान सब, हुआ कलंकित आज!
हंस न कोई दीखता, है कौओं का राज।।

देख–देख अन्याय को, रहें कहाँ तक मौन?
अपरोधों के दौर में, लाज बचाये कौन!!

सद्भावाओं सहित।

8 जून, 1999

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

प्रकृति

|| 1 ||

कल-कल, छल-छल बह रहा, पर्वत-पर्वत नीर।
कोमल तन पर झेलता, जल! तू कितनी पीर।।

|| 2 ||

सारे बंधन तोड़कर, जैसे रमे फकीर।
पर्वत-पर्वत छोड़कर, वैसे बहता नीर।।

|| 3 ||

तरह-तरह की आपदा, सहता तन पर नीर।
बन जाता है एक दिन, जीवनदाता - क्षीर।।

|| 4 ||

पल-पल जीवन ढल रहा, घिरती आती शाम।
समय-चक्र का पालना, झूल रहे निष्काम।।

|| 5 ||

वह देखो! पर्वत खड़ा, लिए अटल विश्वास।
बहता झरना प्रेम का, बाँट रहा मृदुहास।।

|| 6 ||

सजा बिटौरा हार में, गोबर थोपें नार।
पुरवैया मन-वाबरी, करती है मनुहार।।

|| 7 ||

फसल झूमती खेत में, नभ में गरजें मेघ।
कृषक मन होता दुःखी, चलती उर पर तेग।।

|| 8 ||

हरी घास, तरू-पत्तियाँ, रहतीं कैसी मौन।
फिर भी इनसे पूछलो, इनका मालिक कौन?।

|| 9 ||

सुमन सुवासित फूलते, सहज पगा अनुराग।
जगती को हँस बाँटते, सौरभ और पराग।।

|| 10 ||

दूर-दूर तक दीखती, धरती पर हरिताभ।
बाँट रहे वैभव मधुर, जल-थल-नभ अमिताभ।।

|| 11 ||

पल-पल मुस्काते रहें, कुँज कमल के फूल।
बाँट रहे मुस्कान को, भले चुभें उर शूल।।

|| 12 ||

खड़ी हरित वृक्षावली, करती निर्मल छाँह।
श्रम सीकर को पोंछती, पकड़ पथिक की बाँह।।

|| 13 ||

भाँति-भाँति के पुष्प-फल, करते जग-कल्यान।
अपना-अपना दे रहे, जग को मधुमय दान।।

|| 14 ||

मलय सुवासित बह रही, शीतल-सुखद समीर।
धन्य! भरत की भूमि यह, करती मस्त शरीर।।

|| 15 ||

भाँति-भाँति के फूल-फल, शोभित बाग-तड़ाग।
सुमन-सुमन पर तितलियाँ, बाँटे मधुर पराग।।

|| 16 ||

बौर सजी अमराइयाँ, सुरभित गाँव-कछार।
ऋतुओं के रसराज की, स्वागत करें बहार।।

|| 17 ||

नयी नवेली सज रही, धरा वधू चहुँ ओर।
दूल्हा है मधुमास तो, खुशियाँ ओर न छोर।।

|| 18 ||

कोयल कुँजों में रहे, बोले मीठे बोल।
वाणी औ' व्यवहार से, देती मधु रस घोल।।

|| 19 ||

सुमनों के मधुकुँज में, रहते भौंरे संग।
अपने मधुरिम गान से, भरें जगत में रंग।।

|| 20 ||

तितली उड़ती-बैठती, फूल-फूल मँडराय।
देख-देख मन फूलता, छूने को ललचाय।।

|| 21 ||

श्याम मेघ नभ में उड़ें, पुरवैया की भोर।
'पीउ पीउ' पपिहा करे, नाच उठे बन मोर।।

|| 22 ||

चन्द्र-चाँदनी देखकर, नैन हो गये चार।
उमड़ा हृदय - सिंधु में, संवेगों का ज्वार।।

|| 23 ||

ज्यों धन-वैभव देखकर, फूल उठे कंगाल।
त्यों पूनम का चन्द्र लख, हृदय हुआ निहाल।।

|| 24 ||

नैनों ने नैना गहे, मिली कोर से कोर।
उड़ी काव्य-आकाश में, कवि की भाव-चकोर।।

|| 25 ||

नैन-बैन- मुख देखते, शोभा-सिंधु-अपार।
फबता चन्द्र ललाट है, महक रही मनुहार।।

|| 26 ||

तृषित पथिक मरूभूमि में, जीवन दे मधु-घोल।
काव्य-पगे द्वय कर्ण त्यों, झूम उठें सुन बोल।।

|| 27 ||

चन्द्र कला की चाँदनी, भीना-भीना प्यार।
मन औचक ही बँध गया, देख मधुर व्यवहार।।

|| 28 ||

ओ पूनम की चाँदनी! काव्य-कला की रूप।
खिली गुलाबी शीत-सी, मधुर यौवनी धूप।।

|| 29 ||

पावन रूप-स्वरूप-सी, मलय सुवासित देह।
भीनीं-भीनीं आ रही, मन-मन्दिर, तन-गेह।।

|| 30 ||

भाव, नैन की दृष्टि से, करें रूप-रस पान।
ज्यों पूनम की चाँदनी, औ गंगा-स्नान।।

|| 31 ||

पूनम बन नभहंसिनी, शोभित अमल-अनूप।
मन-मन्दिर में आ गयी, धरकर वाणी-रूप।।

|| 32 ||

चाँद संदेशा भेजता, अब अतीत के नाम।
शायद कल पूनम खिले, मन-मन्दिर के धाम।।

|| 33 ||

पल-पल कर दिन घट रहे, निशा गयी औ' मास।
लो! देखो! चुपचाप ही, चला गया मधुमास।।

|| 34 ||

उत्सुक है मन बावरा, नैन बड़े बेचैन।
न जाने कब आयेगी, पूनम शोभित रैन।।

|| 35 ||

चन्द्र-चन्द्रिका खिल रही, ज्यों मधुमासी धूप।
काव्य-कला बेचैन है, देख मनोहर रूप।।

|| 36 ||

वृक्ष तपस्वी-से खड़े, करें साधना मौन।
पल-पल देते जिन्दगी, इनको जाने कौन।।

|| 37 ||

अमराई सूनी पड़ी, मरूथल में मधुमास।
बैठी हुई बबूल पर, कोयल बहुत उदास।।

|| 38 ||

अम्बर में कुहरा भरा, दूर-दूर तक धूल।
सूरज शावक छुप गया, बन्द कमल के फूल।।

|| 39 ||

भाँति-भाँति के फूल-फल, विधि ने किए प्रदान।
जैसा जिसके मन रूचे, मिले उसी का दान।।

|| 40 ||

खुले हाथ से बाँटती, प्रकृति हमें उपहार।
क्षिति, जल-पावक-नभ-पवन, देते विविध प्रकार।।

|| 41 ||

विकट शीत, पाला अमित, अँधियारा सब ओर।
नैन न देखें नैन को, गये पिया किस छोर।।

|| 42 ||

बड़ी विकट गर्मी पड़ी, सूखे नदिया-ताल।
बाग, बगीचा, बाबड़ी, बुरा सभी का हाल।।

|| 43 ||

धरती से आकाश तक, उठें बबंडर धूल।
गाँव-खेत-खलिहान में, गिरें आग के फूल।।

|| 44 ||

चैन कहीं मिलता नहीं, घर-बाहर औ' बाग।
अमराई सूनी पड़ी, बरस रही है आग।।

|| 45 ||

हरी घास सूखी खड़ी, उमस गयी नभ बेल।
बरगद, पाखड़, नीम ने, छोड़ दिए सब खेल।।

|| 46 ||

दूर-दूर तक शांत है, जीवनगत व्यापार।
सूरज अम्बर बीच में, देख पवन लाचार।।

|| 47 ||

जल-थल-नभ में रात-दिन, गर्मी का है राज।
राजा सूरजदेव का, आतप के सिर ताज।।

|| 48 ||

अगणित जन पागल हुए, गये काल के गाल।
कुँजों में सूखे सुमन, बिछुड़े माँ से लाल।।

|| 49 ||

विलग हुआ तन से बसन, रोम-रोम बेचैन।
स्वेद वदन से झर रहा, कटती निशा न रैन।।

भक्ति

|| 50 ||

दृष्टि-पथिक के सामने, राधा-माधव-रूप।
देख-देख छवि युगल की, नाच उठा मन-भूप।।

|| 51 ||

राधा-मोहन रूप है, अमिय-सिंधु की खान।
भर-भर डुबकी प्रेम की, लगा रहा दिनमान।।

|| 52 ||

मनमोहन उर-नभ बसें, ज्यों पूनम का इंदु।
जीवन-नौका खे रहा, तन-नाविक, जग-सिंधु।।

|| 53 ||

माधव सुन्दर तन दिया, मन-मन्दिर अभिराम।
पल-पल मन लेता रहे, नाम सदा अविराम।।

|| 54 ||

राधा-माधव एक हैं, जाने सबकी बात।
फिर भी, मुझसे पूछते, मेरे मन की तात।।

|| 55 ||

राधा-माधव सत गुरू, देते सच्चा ज्ञान।
पथ भूले यदि आत्मा, देते पथ पहचान।।

|| 56 ||

राधा-माधव जब करें, तब हो मन अभिराम।
जीवन-तरू फूले तभी, जब चाहें घनश्याम।।

|| 57 ||

शिव को सब कुछ सौंपकर, चलते हैं हम तात!
अपना कुछ भी है नहीं, सब माधव की बात।।

|| 58 ||

कौन सुने? किससे कहूँ? अपने मन की बात।
अरे! बता, किस भूल की, सजा दे रहे तात!!

|| 59 ||

बिना बात के मिल रहा, निर्मम कष्ट अपार।
खड़े-खड़े हम सोचते, यह कैसा है प्यार।।

|| 60 ||

तुम बिन मेरा कौन है, जिसे करूँ फरियाद।
सुनले! वरना देखले! हो जाऊँ बर्बाद।।

|| 61 ||

बिगड़ गयी यदि बात तो, बने न फिर से बात।
पछताना पीछे पड़े, मल-मल दोनों हाथ।।

|| 62 ||

मैं जानूँ, तुम जानते, मेरे मन की बात।
तुम भी कैसे यार हो? खड़े देखते घात।।

|| 63 ||

मन भावुक, अतिशय सरल, नहीं जानता और।
माधव! तुमको मानता, बस अपना सिरमौर।।

|| 64 ||

बहुत हो चुका, देख लो! झुका न अब तक शीष।
झुकता तेरे सामने, तेरा ही आशीष।।

|| 65 ||

जैसी इच्छा राम की, पीड़ा दें या प्यार।
अपना तो कुछ भी नहीं, जीत मिले या हार।।

|| 66 ||

मेरे क्या कुछ पास था, मान और सम्मान।
जो कुछ है तेरा घटे, सोच-समझ ले प्रान।।

|| 67 ||

भला-बुरा दुनिया कहे, हो अनहोनी बात।
अपने नाते कह दिया, भले करो जो तात!!

|| 68 ||

ठाकुर! तू सबसे बड़ा, दीन-दयालु-उदार।
मेरा तो तेरे सिवा, धरा न थानेदार।।

|| 69 ||

पग-पग पर माधव करें, पल-पल हमें सचेत।
दूषित मन की वृत्तियाँ, रहतीं सदा अचेत।।

|| 70 ||

पूजा-जप-तप-साधना, नहीं जानता मीत!
मैं तो इतना मानता, तुमसे सच्ची प्रीत।।

|| 71 ||

नित प्रति, पल-पल वह करूँ, तुम जो कहते यार!
भला-बुरा जाने कहाँ, निश्छल मन का प्यार।।

|| 72 ||

तुम जानो, मैं जानता, फिर भी रहते मौन।
तुम ही मुझको दो बता, तुम-सा मेरा कौन।।

|| 73 ||

अमित शान्ति मन को मिले, गंगा! तेरे तीर।
अमिय-नीर का आँचमन, निर्मल करे शरीर।।

|| 74 ||

जीवन में अब तक मिले, अपयश-निंदा-हार।
ले जीवन की लालसा, आया गंगे! द्वार।।

|| 75 ||

पहुँच किनारे गंग के, बदलें मन के भाव।
ज्यों-ज्यों गोता मारते, भरते तन के घाव।।

|| 76 ||

हे मन! यदि संसार में, जो चाहे कल्यान।
हर-हर गंगे मंत्र का, जपो सहज धर ध्यान।।

|| 77 ||

माता-सी ममता भरी, गंगा बड़ी उदार।
जो भी जाता गोद में, सबको लेत उबार।।

|| 78 ||

समदरसी-समरस बड़ी, करे सभी से हेत।
युगों-युगों से सींचती, जीवन-कुँज-निकेत।।

गुरू

|| 79 ||

गुरू सृजन का नाम है, कर्म-ज्ञान निष्काम।
अहंकार का नाशकर, दिखलाता सुरधाम।।

|| 80 ||

सतगुरू को बस चाहिए, केवल सच्चा प्यार।
शिष्य भावना में बसें, करें सदा मनुहार।।

|| 81 ||

धन-वैभव को दूर रख, दे गुरू को सम्मान।
सहज समर्पण से मिलें, बंदे को भगवान।।

|| 82 ||

गुरू अमृत के सिंधु हैं, अमित ज्ञान के धाम।
डूब अरे! गुरू-सिंधु में, तू पायेगा राम।।

|| 83 ||

बिन गुरु पथ मिलता नहीं, कैसे हो उद्धार।
चलते-फिरते गुरु मिले, ज्यों नदिया में धार।।

|| 84 ||

गुरू दिव्य, दिव्यात्मा, गुरू ज्ञान के धाम।
गुरु-कृपा से ही मिलें, मन के भावन राम।।

|| 85 ||

सच्चे सुख की भावना, और शांति निष्काम।
सुलभ नहीं गुरु के बिना, खोजे आठों याम।।

|| 86 ||

बिना समर्पण, त्याग के, बिन श्रद्धा विश्वास।
गुरु मिलना तो दूर है, चैन न फटके पास।।

|| 85 ||

जब तक गुरु-कृपा नहीं, मिले न मन को चैन।
हिरणी-सा भटका फिरे, पल-पल मन दिन-रैन।।

हे मन

|| 86 ||

मन जैसी संगत करे, वैसा ही फल होय।
रखे इत्र को हाथ में, बदन सुगन्धित होय।।

|| 87 ||

नहीं किसी को दे सका, करुणा के दो बोल।
हे मन! आतुर खोजता, अब अपना भूगोल।।

|| 88 ||

शोषण - घृणा - ईर्ष्या, उत्पीड़न - विद्वेष।
हे मन! अब तो दे बता, क्या कुछ दिया विशेष।।

|| 89 ||

अनुबंधित जीवन किया, फिर भी रचे विवाह।
मन! कितना अतृप्त तू, खंडित करे निकाह।।

|| 90 ||

पथ बदला संसार ने, अथवा मन का त्रास।
जो भी मिलता राह में, करता कितना ह्रास।।

|| 91 ||

शंकित मन की कैद में, हृदय के अनुबंध।
आया कैसा दौर है, बिखर रहे सम्बंध।।

|| 92 ||

कुत्सित मन की भावना, ठग-विद्या में लीन।
उच्च्व पदों को खोजती, ज्यों कंचन को दीन।।

|| 93 ||

यत्र-तत्र भ्रमण करे, जैसे पागल श्वान।
मन की गति ऐसी लगे, ज्यों खंजर बिन म्यान।।

|| 94 ||

हे मन! अब कैसे सहें, बिगड़ी अपनी बात।
चार दिवस की चाँदनी, अब अँधियारी रात।।

|| 95 ||

हृदय की ऊँचाइयाँ, देख न पाया यार!
हे मन! तू क्या खोजता, समझ न पाया प्यार।।

|| 96 ||

तृप्त हुआ अतृप्त मन! भोग लिए सब भोग।
करले तू ईश्वर-भजन, छोड़ सभी अब योग।।

|| 97 ||

सकल कामना पूर्ण हो, जो मन! करे विचार।
पाये जीवन-लक्ष्य को, मिले अपरिमित प्यार।।

|| 98 ||

जब कोई मरता यहाँ, या होता बर्बाद।
ग़म, खुशियों को पालता, मन होता आबाद।।

|| 99 ||

नित नव-नव गढ़ता रहा, हे मन! तू षडयंत्र।
गुमनामी के गर्त में, डूब हुआ परतंत्र।।

|| 100 ||

अहंकार की कालिमा, करती है अपकर्ष।
निश्छल मन की सादगी, भरती है उत्कर्ष।।

|| 101 ||

पापों की गठरी धरे, पार करे जलधार।
अभिमानी मन फूलता, डूब गया मँझधार।।

|| 102 ||

जब तक मन की वृत्तियाँ, नहीं रहें, अनुकूल।
संत मिलन होता नहीं, दिन रहते प्रतिकूल।।

|| 103 ||

तरह-तरह की लालसा, तरह-तरह के मान।
मिलता मन को एक है, भोग याकि भगवान।।

|| 104 ||

मन! चाहे कल्याण तू, जप ले हरि का नाम।
झूँठा है संसार यह, धोखा सभी मुकाम।।

|| 105 ||

मन! इतना आसक्त क्यों, देखे सलौनी देह।
तन-मन की आसक्ति से, कहाँ बदलता गेह।।

|| 106 ||

मान मिला सब खाक में, व्यर्थ हुआ संसार।
तू जाने मन जानता, क्योंकर? किसकी हार।।

|| 107 ||

देता सुख की जिन्दगी, मन को विनयी भाव।
उलट-पुलट करता सभी, जब आता है ताव।।

|| 108 ||

मन के कल्मष को हरें, मुख से निकले बोल।
ज्यों मिसरी की बानगी, दे मुख में रस घोल।।

|| 109 ||

कौन सुने? किससे कहें? मौसम का आघात।
मन! छोटी-सी बात पर, बतलाता औकात।।

|| 110 ||

अपने जैसे सैकड़ों, रोज देखता दीन।
हे मन! तू इकला नहीं, यहाँ अनोखा हीन।।

|| 111 ||

मन में यदि विश्वास हो, रहे आस्था साथ।
कितना बिगड़ा दौर हो, तुम्हें झुकाए माथ।।

|| 112 ||

सहज भाव जो बन गया, किया प्यार से भेंट।
मेरा कुछ भी है नहीं, मनवा तू मत ऐंठ।।

|| 113 ||

थोड़ा-सा वैभव मिला, लगा मारने डींग।
खुशी-खुशी! मन खा लिया, अब क्यों हगता हींग।।

|| 114 ||

हे मन! रख सन्तोष तू, कुछ भी ऊँच न नीच।
नहीं किनारे तोड़ती, नौका नदिया बीच।।

धन-वैभव

|| 115 ||

अतुलित धन संचित किया, क्यों तूने इन्सान!
घर वालों के बीच में, बन बैठा अन्जान।

|| 116 ||

लूट-लूट कर भर लिया, जीवन का भण्डार।
पग-पग पर पीड़ा मिली, जीव नर्क का द्वार।।

|| 117 ||

जीवन विपदामय बना, हुआ न मन को तोष।
बचा सका क्या मान को, इतना संचित कोष।।

|| 118 ||

बंदे! अब भी मान ले, छोड़ अर्थ से मोह।
वरना, पग-पग पर मिले, अपयश-विपदा-खोह।।

|| 119 ||

सुघड़-सलौना, चाँद-मुख, वदन रूप का धाम।
धन पाने को जिन्दगी, क्यों करता नीलाम।।

|| 120 ||

अब बरगद में है नहीं, भैया! वैसी छाँह।
चलता जाय कुबेर-रथ, नीचे रूकता नाय।।

|| 121 ||

सोच-समझ करते रहे, धन से सदा निषेध।
भामाशाह न दीखते, गये मर्म को बेध।।

|| 122 ||

बिन लक्ष्मी के सरस्वती, आज हुई अनमेल।
ढाई कौड़ी माँगते, धन बिन होय न खेल।।

|| 123 ||

लक्ष्मी के घर सरस्वती, हाय! माँगती भीख।
हाल न कोई पूछता, कैसी जग की सीख।।

|| 124 ||

धन-जीवन, धन-आत्मा, धन-विद्या, धन-मान।
धन को माने मूर्ख ही, गीता और कुरान।।

|| 125 ||

यह माना धन के बिना, निष्फल है संघर्ष।
लेकिन, क्या धन से हुआ, कभी आत्म उत्कर्ष।।

|| 126 ||

बदल गयी संचेतना, बैन बने अनमोल।
धन की चकमक में सखे!, खोजे मीठे बोल।।

|| 127 ||

चंद टकों में बिक रहा, आज यहाँ ईमान।
सुमन गन्दगी में पले, देख रहा धीमान।।

|| 128 ||

पैसा ने कुंठित करी, पढ़े-लिखों की सोच।
जितना गिरता आदमी, उतना बनता पोच।।

|| 129 ||

बदला धन के लोभ ने, लोगों का आचार।
दो कौड़ी में बिक गया, निश्छल मन का प्यार।।

|| 130 ||

ज्यों-ज्यों धन बढ़ता गया, त्यों-त्यों बढ़ा विकार।
फूट गया जल कुम्भ-सा, बिखर गया संसार।।

|| 131 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम-तप-न्याय-ज्ञान के फूल।
दुर्लभ जीवन-रत्न थे, लक्ष्मी किए कबूल।।

|| 132 ||

राजमार्ग-फुटपाथ पर, धनवानों का राज।
भाँति-भाँति से लूटते, दे-देकर आवाज।।

|| 133 ||

धन से मन को तोलता, ओ मानव कंगाल!
मन-मंदिर में राम हैं, कुछ तो करले ख्याल।।

|| 134 ||

लालच के वश हो रहा, पशुओं पर प्रहार।
पैसा भरकर जेब में, करें बधिक संहार।।

|| 135 ||

पाप देखता न्याय है, धन को न्यायाधीश।
गोकुल में गैया कटें, बिकते हैं जगदीश।।

|| 136 ||

ऊँची बोली बोलते, न्याय बिके बाजार।
जो चाहें सो लीजिए, सब धन का व्यापार।।

|| 137 ||

धन-वैभव, पद से बड़ा, होता कभी न कोय।
रहता सदा विनीत जो, बड़ा कहावे सोय।।

|| 138 ||

समझ हुई है वाबरी, देख अर्थ का जाल।
मनुज देख चलता बने, करके ऊँचा भाल।।

|| 139 ||

जब तक धन-वैभव रहे, दुनिया रखती मेल।
कभी न सूखे वृक्ष पर, चढ़ती अम्बर बेल।।

|| 140 ||

परिवर्तित परिवेश है, तरह-तरह के खेल।
अजगर बनकर लीलती, आज अर्थ की बेल।।

|| 141 ||

धन की चकमक ने किया, कुछ ऐसा व्यवहार।
टुकड़े-टुकड़े कर दिया, मनुज-मनुज का प्यार।।

सत्संगति

|| 142 ||

बिन साधन-वाहन बिना, दूरी होय न पार।
पर, मानव सत्संग से, होता बेड़ा पार।।

|| 143 ||

देह भले बदले नहीं, बदल जाय पर ध्येय।
महिमा है सत्संग की, मानव बने अजेय।।

|| 144 ||

भौतिक सुख-साधन करें, जीवन को बदहाल।
आता है सत्संग से, परिवर्तन तत्काल।।

|| 145 ||

जब दिन आवें ठीक से, तब मिलता सत्संग।
मन की होली फूँकते, खिलता मानस रंग।।

|| 146 ||

मिलता है सत्संग से, जीवन अमल प्रकाश।
तन-मन का सत्संग ही, करता नवल विकास।।

|| 147 ||

भक्ति और सत्संग से, ऊँचा उठता भाल।
महिमा है सत्संग की, डरे भक्त से काल।।

|| 148 ||

नित प्रति के सत्संग से, पैदा हो विश्वास।
जीवन रहे अभेद तो, होता हरि का वास।।

|| 149 ||

भौतिक-बंधन में कसा, मन रहता आसक्त।
जब मिलता सत्संग तो, मन हो जाय विरक्त।।

संत

|| 150 ||

संत नहीं है 'आदमी', यह 'प्रवृत्ति' अनूप।
सात्त्विक जीवन-पुँज है, संत सृष्टि का रूप।।

|| 151 ||

संत शान्ति का सिंधु है, दुर्गुण हरे विकार।
दर्पणरूपी संत में, झलके बिम्ब अपार।।

|| 152 ||

संत मिला तो जानिए, मिला राम का द्वार।
संत कृपा से जीव का, होता जग-उद्धार।।

|| 153 ||

जब तक मन की वृत्तियाँ, नहीं रहें अनुकूल।
संत मिलन होता नहीं, दिन रहते प्रतिकूल।।

|| 154 ||

श्रद्धा संग विश्वास हो, घर आ मिलते संत।
मन श्रद्धा में डूबता, तब खिलते हैं कंत।।

|| 155 ||

संत और भगवंत का, छोड़ दिया यदि साथ।
बंदे! फिर छोड़े नहीं, कभी बुराई हाथ।।

|| 156 ||

संत-कृपा से ही मिले, जीवन को नवरंग।
भजन-भाव-हरि-कीर्तन, देता है सत्संग।।

|| 157 ||

सत्संगति के सामने, दुर्गण टिके न एक।
बन जाता है एक दिन, बुरा मनुज भी नेक।।

|| 158 ||

ज्यों रस में दौला पड़े, देता मैल उतार।
त्यों महिमा सत्संग की, मन में करे निखार।।

सदाचार

|| 159 ||

पाप-पुण्य मन-वृत्तियाँ, ज्यों पीड़ा-मुस्कान।
पुण्य छुपाने से फले, पाप चढ़े परबान।।

|| 160 ||

जब-जब सत्ता से हुआ, दूर कहीं विश्वास।
तब-तब ही अन्याय ने, किया बड़ा उपहास।।

|| 161 ||

कहाँ साधना धर्म है, कहाँ राज का कर्म?
सत्ता के संघर्ष में, मिटें साधना मर्म।।

|| 162 ||

है छत्तिस का आँकड़ा, पाप-पुण्य के बीच।
राम-नाम के नीर से, तू दोनों को सींच।।

|| 163 ||

सत्य नहीं है आवरण, यह मन का व्यवहार।
बंदे! ऐसे कर्म कर, छलके जिनसे प्यार।।

|| 164 ||

तरह-तरह की लालसा, तरह-तरह के मान।
मिलता मन को एक है, भोग याकि भगवान।।

|| 165 ||

एक-एक के जोड़ से, अगणित लिए बनाय।
एक अंक परब्रह्म का, रख लो जोड़ सजाय।।

|| 166 ||

जैसे जोड़ी सम्पदा, खूब कमाया नाम।
तैसे जोड़ो 'राम' को, तुम पाओ हरि धाम।।

|| 167 ||

धन-संचय करता रहा, समझ सुखों का मूल।
दान-भाव भगवान का, जीव! गया क्यों भूल??

|| 168 ||

अलग-अलग मत-पंथ से, गुरू बनाए रोज।
टिका नहीं विश्वास तो, उठे न मन का बोझ।।

|| 169 ||

जब तक गुरू पर है नहीं, श्रद्धा औ' विश्वास।
तब तक गुरू-कृपा नहीं, होय न ईश निवास।।

|| 170 ||

तन-मन को धूमिल करे, जब जगता है 'काम'।
मर्यादा रहती नहीं, नजर न आते राम।।

|| 171 ||

अन्तर में यदि शांति है, जग चाहें प्रतिकूल।
कितना कड़ा विरोध हो, रहें सभी अनुकूल।।

|| 172 ||

भोगों से होकर विमुख, जो भजता हरिनाम।
जगत-नियन्ता का उसे, मिलता पावन धाम।।

|| 173 ||

शिक्षा से मस्तिष्क का, होता विविध विकास।
मिले न जब तक दीक्षा, हृदय रहे उदास।।

|| 174 ||

शिक्षा रूपी शस्त्र को, करते गुरू प्रदान।
मिले दीक्षा-अस्त्र का, सद्गुरू से ही दान।।

|| 175 ||

करता शिक्षा-चन्द्रमा, मनुज-निशा उजियार।
जब खिलती रवि-दीक्षा, मिटे जगत-अँधियार।।

|| 176 ||

पले चतुरता- क्रूरता, किंतु घटे परमार्थ।
भौतिक शिक्षा से बढ़े, खूब पाप औ' 'स्वार्थ।।

|| 177 ||

शिक्षा से मिलता हमें, बाह्य जगत का ज्ञान।
उर की कोमल वृत्तियाँ, दीक्षा से पहचान।।

|| 178 ||

शिक्षा-साधन-सम्पदा, वैभव से भरपूर।
तन खिलता, मन फूलता, जीव लक्ष्य से दूर।।

|| 179 ||

बाह्य जगत को देखते, सुख-दुख नैन विशाल।
ईश्वर जो अवलोकते, उनकी नहीं मिशाल।।

|| 180 ||

ज्ञान और वैराग्य दो, अन्तस के हैं नैन।
इनसे ईश्वर दीखता, चाहें दिन हो रैन।।

|| 181 ||

कहाँ सूर के पास थे? सुघड़-सलौने नैन!
अन्तर नैन निहारते, बालरूप दिन-रैन।।

|| 182 ||

नैनों के पट खोलकर, देखो! तनिक निहार।
राधा-माधव उर बसें, इन पर भाव निसार।।

|| 183 ||

राम खड़े हैं सामने, नैनों के पट खोल।
श्रद्धा औ' विश्वास से, राम-राम तू बोल।।

|| 184 ||

बार-बार रस चूसते, मधु रस देता आम।
'राम-राम' कह राम ही, सब रस देते राम।।

|| 185 ||

भाषा-लिपि जानें नहीं, भाव सुनें भगवान।
ज्यों प्रेमी औ' प्रेमिका, मौन करें पहचान।।

|| 186 ||

भाषा का बंधन कठिन, बँध जाता इन्सान।
निश्छल बंधन-भाव में, सहज बँधें भगवान।।

|| 187 ||

अहंकार मन में पला, बुद्धि दिखाए नाच।
उर में व्याकुलता बढ़ी, कहाँ रहेगा साँच।।

|| 188 ||

जब तक मन पलता नहीं, श्रद्धा औ' विश्वास।
तब तक कोई साधना, पाती नहीं विकास।।

|| 189 ||

ब्रह्म बिना रहता दुःखी, जीव अनेक प्रकार।
प्रकट होता ब्रह्म जब, रहता नहीं विकार।।

|| 190 ||

सत्य-साधना-कर्म से, पाता जीव विकास।
संगम होता ब्रह्म से, मिलता नया प्रकाश।।

|| 191 ||

निर्मल मन की साधना, कभी न जाए व्यर्थ।
जप-तप-सेवा-भाव से, देती नव-नव अर्थ।।

|| 192 ||

बुद्धि-पक्ष हावी रहे, नवता कभी न शीष।
हृदय की संवेदना, देती है आशीष।।

|| 193 ||

भावहीन माने नहीं, ईश्वर का प्रभुत्व।
जगत-नियन्ता मानता, स्वयं का अस्तित्व।।

|| 194 ||

बुद्धि और भगवान में, हुआ कभी क्या मेल?
बुद्धि रही है कोसती, परमेश्वर के खेल।।

|| 195 ||

मानव मात्र निमित्त है, मालिक है भगवान।
असली कर्त्ता कौन है? बुद्धि कहे-'इन्सान'।।

|| 196 ||

कठपुतली-से नाचते, पल-पल सब इन्सान।
रूप-सूत्र क्या दीखता, कर्त्ता है भगवान।।

|| 197 ||

अनुभव ही अहसास है, मानो तो भगवान।
कहे बुद्धि पाखण्ड ही, मालिक है इन्सान।।

|| 198 ||

कोई पद लेते नहीं, संत और भगवंत।
इसीलिए होता नहीं, जग से उनका अंत।।

|| 199 ||

जब तक मन में पल रहा, किंचिद् अहंकार।
तब तक तो मिलता नहीं, जगपालक ओंकार।।

|| 200 ||

शब्द-शिष्ट, परब्रह्म है, सोच-समझ कर बोल।
शब्द-शब्द की भावना, सज्जनता से तोल।।

|| 201 ||

शब्द सच्चिदानंद हैं, रहते सदा विशिष्ट।
शब्दों के प्रयोग से, बनते शिष्ट अशिष्ट।।

|| 202 ||

प्यार पगे, सम्मान से, अरे! बोलिए बोल।
बंद पड़े जो रास्ते, देंगे उनको खोल।।

|| 203 ||

अंधकार है दूर तक, नहीं दीखता ठांव।
जीवन दल-दल में फँसे, द्वेष-वैर के पांव।।

|| 204 ||

भजन-कीर्तन-नाम से, पैदा होता नेह।
भक्ति और वैराग्य का, साधक पाता गेह।।

|| 205 ||

बिन श्रद्धा के कुछ नहीं, भजन-कीर्तन-नाम।
श्रद्धा बिन विश्वास के, उगे न हृदय-धाम।।

|| 206 ||

हृदय में चाहे अगर, परमेश्वर का वास।
भक्ति और वैराग्य का, बंदे! कर आवास।।

|| 207 ||

बिना भक्ति-वैराग्य के, राम रीझते नाय।
सच्चे मन की आस्था, कभी न निष्फल जाय।।

|| 208 ||

निश्छल मन से जो करे, भाव-भक्ति का दान।
सहज भाव से राम जी, करते हैं कल्यान।।

|| 209 ||

जीवन-पथ में प्यार को, कौन सका है मेंट?
हुई सैकड़ों बार है, माधव! तुमसे भेंट।।

|| 210 ||

अनायास मिलते सदा, धर-धर रूप अनूप।
नैन मूँदकर देखता, राम! अलौकिक रूप।।

|| 211 ||

जप-तप-पूजा-अर्चना, किए नहीं भरपूर।
मन पल भर भी जानकर, रहा न तुमसे दूर।।

|| 212 ||

जैसे तुमने जब कहा, किए वही सब काम।
भला-बुरा तुम जानते, मेरे दाता राम।।

|| 213 ||

धन-वैभव-यश-सम्पदा, औ' चाहे कल्यान।
मन-मन्दिर के धाम से, कब माँगा भगवान।।

|| 214 ||

छोड़ लालसा भोग की, जो चाहे तू राम।
मन! जुड़ले उस कर्म से, जिसमें उसका नाम।।

|| 215 ||

मुझे नहीं कुछ चाहिए, फल-प्रतिफल भगवान!
यदि तू दाता है बड़ा, कर सबका कल्यान।।

|| 216 ||

मन में उपजी वासना, धरे पाप की मोट।
करती है भगवान में, पैदा सौ-सौ खोट।।

|| 217 ||

जीव कभी पाता नहीं, मुक्ति बिना भगवन्त।
जब तक मन में वासना, मिलें न मन के सन्त।।

|| 218 ||

साथ-साथ फिरती रहे, ज्यों मानव की छाँह।
त्यों चलती है वासना, पकड़ जीव की बाँह।।

|| 219 ||

नागिन-सी है वासना, मन का मधुमय पाप।
डँसती रहती रात-दिन, जीव रहे चुपचाप।।

|| 220 ||

भक्ति-रूपिणी बीन का, जब होता है नाद।
फिर नागिन-सी वासना, करती नहीं प्रमाद।।

|| 221 ||

पड़े भक्ति की दृष्टि तो, कल्मष होता दूर।
काँच-महल-सी वासना, होती चकनाचूर।।

|| 222 ||

शर-संयम औ' नियम के, रखो सदा संधान।
हिंसक पशु-सी वासना, करे नहीं व्यवधान।।

|| 223 ||

लक्ष्मण-सा वैराग्य हो, हनुमत जैसी भक्ति।
सीता जैसी आस्था, मिले राम-सी शक्ति।।

|| 224 ||

मर्यादा के अस्त्र को, करो न मन से मुक्त।
कोटि-कोटि अपराध से, जीवन होगा युक्त।।

|| 225 ||

शील-सरीखे पुष्प में, मर्यादा की गंध।
ज्यों-ज्यों खिलता-पुष्प है, त्यों-त्यों खिले सुगंध।।

|| 226 ||

अहंकार की रात-दिन, जो पीता हो भाँग।
बंदे से क्या माँगना? भगवन से तू माँग।।

|| 227 ||

दाता वह सबसे बड़ा, जग में बड़ा कुबेर।
मन से उससे माँगिए, मिलते लगे न देर।।

|| 228 ||

यह जग भूखों से भरा, तृप्ति कहा से होय?
केवल माँ की गोद में, मिले तृप्ति का तोय।।

|| 229 ||

भजन करे हरिनाम का, होगा जग-कल्यान।
इसी रास्ते एक दिन, मिल जायें भगवान।।

|| 230 ||

भोग-वासना जीव को, कसते विविध प्रकार।
भजन-भाव से छूटते, मन से सभी विकार।।

|| 231 ||

पैरों को क्या पूजना, पूजो संयम-ध्येय।
सदाचरण की साधना, सच्ची है पाथेय।।

|| 232 ||

शान्ति-सुमन जब फूलता, टिके नहीं दुर्गंध।
दूर-दूर तक फैलती, शीतल मंद सुगंध।।

|| 233 ||

तन जब करता पाप है, मन भोगे अपमान।
मन जब करता हरि-भजन, मिलते हैं भगवान।।

|| 234 ||

विषय-वासना जीव का, करते हैं अपकर्ष।
ज्ञान और वैराग्य से, जीव पाय उत्कर्ष।।

|| 235 ||

विषय-वासना डूबकर, सोया रहता जीव।
सन्त आगमन साथ में, लेकर आता पीव।।

|| 236 ||

मन को देती वासना, मधुरस जैसा स्वाद।
धीरे-धीरे आदमी, हो जाता बर्बाद।।

|| 237 ||

शुरू-शुरू में साधना, कडुवा-फल-सी होय।
पहुँच शिखर पर ज्ञान के, मधुरस लगता तोय।।

|| 238 ||

तन दे दो संसार को, मन सोंपो भगवान।
बंदे! निश्चित जान ले, हो जाए कल्यान।।

|| 239 ||

सुख-दुख मन के आवरण, रही भावना डोल।
सहज भाव कर आचरण, नहीं रोष में बोल।।

|| 240 ||

बिगड़ गयी अब भावना, देख उच्च आवास।
परिवर्तन के दौर ने, नीचा किया निवास।।

देश प्रेम

|| 241 ||

धूप-छाँव के बीच में, गुजर रहा हर साल।
कसता जाता देश पर, आतंकों का जाल।।

|| 242 ||

ईंट-ईंट बिखरी पड़ी, भवन हुआ वीरान।
आपस के मतभेद से, राष्ट्र बना ईरान।।

|| 243 ||

रक्षा करना राष्ट्र की, गौरव था सम्मान।
अब इसमें लगने लगा, बहुत बड़ा अपमान।।

|| 244 ||

कैसा परिवर्तन हुआ, बदल गये सब लोग।
देश-प्रेम मन में नहीं, चाहें मधुमय भोग।।

|| 245 ||

राष्ट्र-प्रेम की भावना, कैसी हुई विलुप्त?
देश हुआ असहाय-सा, आम आदमी सुप्त।।

|| 246 ||

कहाँ गयी इस देश की, आन-बान औ' शान।
तस्कर-डाकू को मिले, यहाँ रोज सम्मान।।

|| 247 ||

चप्पा-चप्पा कैद है, खुशियों का संसार।
चोर-लुटेरे कर रहे, माता का शृंगार।।

|| 248 ||

सत्य-वीरता-दान के, उगें धरा में फूल।
गांधी-राणा-कर्ण को, देश रहा है भूल।।

|| 249 ||

जिनके ऊपर देश को, सदा रहा है नाज़।
आज टकों में बेचते, वही देश का ताज़।।

|| 250 ||

डँसता जाता देश को, दुराचार का ब्याल।
असमंजस का दौर है, करे न कोई ख्याल।।

|| 251 ||

तन बेचा, मन बेचते, बेच रहे हैं देश।
घर की इज्जत बेच दी, और बचा क्या शेष??

|| 252 ||

अरे कायरों! देश को, मत बाँटों अब और।
जाग गया इतिहास तो, काँप उठेगा दौर।।

|| 253 ||

संसद के इतिहास का, तनिक करो सम्मान।
अरे पामरों! देश का, नहीं करो अपमान।।

|| 254 ||

वीरवरों के सामने, ठहर सका क्या काल?
मारूत-सुत ने सूर्य को, पकड़ रखा था गाल।।

|| 255 ||

आता है तूफान जब, उठता सिन्धु कराह।
युवा-शक्ति जब जागती, बहता क्रांति प्रवाह।।

|| 256 ||

नेता-कुर्सी के लिये, करें देश से घात।
बैठ सदन के बीच में, खूब करें उत्पात।।

|| 257 ||

हाय! स्वार्थ के सामने, हार गया आदर्श।
राष्ट्र भावना लुट गयी, चढ़ा स्वार्थ उत्कर्ष।।

|| 258 ||

कर्जा ले-ले खा रहे, देश करें मजबूत।
रखवाले भी देश के, जैसे हों यमदूत।।

|| 259 ||

यह कैसी हित-साधना, गये बुरे दिन आय।
आजादी भी देश की, ठेका दई उठाय।।

राजनीति

|| 260 ||

राजनीति के कुँज में, चलता जंगल-राज।
नियम-नीति सिद्धांत की, कौन सुने आवाज।।

|| 261 ||

लोकसभा में गूँजती, डाकू की आवाज।
नेताजी की साधना, आया समताराज।।

|| 262 ||

सत्य-न्याय-निष्ठा हुए, लोकसभा में मौन।
भारतमाता रो रही, हाय! चुपाए कौन।।

|| 263 ||

नियम-नीति-सिद्धांत की, राजनीति अब नाय।
झूठ-प्रपंच व धूर्तता, हार-जीत बन जाय।।

|| 264 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम का, नाटक है सब ठौर।
'खादी', 'गांधी' बन गये, भ्रष्टों के सिरमौर।।

|| 265 ||

गांधी रूपी नाव में, 'खादी' की पतवार।
मनचाहा तू घूमले, देश-विदेशी द्वार।।

|| 266 ||

न्याय-नीति-निष्ठा पड़े, राजनीति की जेल।
भ्रष्ट-दुष्ट, मक्कार की, चक्रव्यूह का खेल।।

|| 267 ||

राजनीति जब छोड़ती, सच्चाई का संग।
अनहोनी होती तभी, देश झेलता जंग।।

|| 268 ||

राजनीति देने लगी, अब झूँठों का साथ।
खड़ा विरोधी ने किया, काट दिया वह हाथ।।

|| 269 ||

मन्दिर-मन्दिर खोजते, मिले न हमको राम।
बिन खोजे ही मिल गये, गली-गली सुखराम।।

|| 270 ||

नेताओं की वृत्ति है, बिल्कुल बगुला छाप।
मीन सदृश जो भी उठा, गटक लिया चुपचाप।।

|| 271 ||

दूषित मन की वृत्तियाँ, करतीं नित बकवास।
उच्च पदों पर बैठकर, बनती हैं उपहास।।

|| 272 ||

लोकतंत्र शतरंज-सा, राजनीति की ओट।
चकमा दे-दे खेलते, नेता अपनी गोट।।

|| 273 ||

दुर्योधन-शकुनी हुआ, आज देश का तंत्र।
पासे हैं षडयंत्र के, धर्मराज-परतंत्र।।

|| 274 ||

थोड़े दिन बस और हैं, करले भ्रष्ट उपाय।
नहीं बचे तू पातकी, लेगा काल चबाय।।

|| 275 ||

बदल गया अब आचरण, तौर-तरीका-काज।
दुराचरण के शीष पर, राजनीति का ताज।।

|| 276 ||

मात-पिता-परिवार की, शपथ धरे नित शीष।
नेता की मत पूछिए, उल्टे दे आशीष।।

|| 277 ||

परम्परा औ' मूल्य का, करता खूब बखान।
गला घोंट आदर्श का, देता रोज बयान।।

|| 278 ||

यह कहता कुछ और है, करता है कुछ और।
नेताओं की बात का, नहीं ठिकाना-ठौर।।

परिवेश

|| 279 ||

इस बिगड़े परिवेश में, करो समझकर बात।
सावधान, रहना सखे! अन्दर-बाहर घात।।

|| 280 ||

रहिये जिस परिवेश में, कहिये वैसी बात।
दादुर बसे तलाब में, करे उछल-उत्पात।।

|| 281 ||

सिंह बदल करता नहीं, निज आदत-परिवेश।
बने विषमता काल भी, छोड़े नहीं निवेश।।

|| 282 ||

दूषित मन की वृत्तियाँ, लँगड़े हुए उसूल।
अब मधुवन में उग रहे, काँटे-झाड़-बबूल।।

|| 283 ||

खोज-खोज हारा सुआ, रहती कोयल मौन।
हाय! किया मधुमास ने, बिना बताए गौन।।

|| 284 ||

बदले-बदले-से लगें, उमसे-उमसे नैन।
खोयी-खोयी-सी हँसी, बिखरा-बिखरा चैन।।

|| 285 ||

दूर-दूर परिवेश में, बहती मलय समीर।
काव्य-कला कुसुमित हुए, निर्मल करें शरीर।।

|| 286 ||

नव संवत्सर आ गया, ले नव-नव सन्देश।
धरा-धाम-नभ में खिला, प्राकृतिक परिवेश।।

|| 287 ||

सीता के चारित्र्य की, कौन करे पहचान।
मन-धोबी शंकित बड़ा, नहीं समझता आन।।

|| 288 ||

आज हवा कैसी चली, सिहर उठा सब गाँव।
बिन कलरब खगकुल चले, तज बरगद की छाँव।।

|| 289 ||

सबके मुखड़े अनमने, लुप्त हुई मुस्कान।
पता नहीं क्या सोचते? ये भोले-इन्सान।।

|| 290 ||

झूम-झूम कर नाचते, बिन पावस के मोर।
आज बाग सूना पड़ा, कहीं न कलरब शोर।।

|| 291 ||

देख विषम परिवेश को, मन ने बदला रंग।
बिन अंकुश के चल रहा, ज्यों कुंजर मति भंग।।

|| 292 ||

सीधे-सादे लोग जब, करते टेढ़ी बात।
बदल रहे परिवेश की, इंगित करते घात।।

हिसा और आतंक

|| 293 ||

दनुज-मनुज के बीच में, बँटा सकल समुदाय।
हिंसा औ' आतंक के, दोनों हैं पर्याय।।

|| 294 ||

ईश्वर! तेरी सृष्टि में, मानव है सिरमौर।
आखिर, कब तक चलेगा? हिंसाओं का दौर।।

|| 295 ||

कैसी है यह सभ्यता? कैसा तेरा राज?
स्वाद-स्वाद में खा गया, मानव जीव-समाज।।

|| 296 ||

मौन हुआ तू देखता, मानो हिस्सेदार।
हिंसाओं के राज का, ज्यों हो ठेकेदार।।

|| 297 ||

मनुज-दनुज संसार में, आते बिना बुलाय।
जैसे सुख-दुःख चक्र हैं, चलते बिना चलाय।।

|| 298 ||

जितनी नदिया जल भरे, उतनी चढ़ती बाढ़।
जितना क्रोध उबालिए, उतनी बढ़ती राड़।।

|| 299 ||

अपराधी-अभ्यस्त मन, देखे ऊँच न नीच।
ज्यों अंधे को जेठ भी, लगती सावन-कींच।।

|| 300 ||

क्रंदन चारों ओर है, बड़ा अराजक दौर।
पता नहीं कब लूट ले, कहीं अचानक ठौर।।

हड़ताल

|| 301 ||

पद-वेतन-आराम को, करते हैं हड़ताल।
मंदिर के पट बन्द हैं, बजा रहे खड़ताल।।

|| 302 ||

भूल गये कर्तव्य को, 'कहते मुर्दाबाद'।
अधिकारों की होड़ ने, देश किया बर्बाद।।

|| 303 ||

चीख-चीख कर बोलते, सुनें न फिर भी कान।
घास-फूँस की झौंपड़ी, गुनते नहीं मकान।।

|| 304 ||

नारों की आवाज से, बन्द हुआ बाजार।
हाय! भिखारी मर गया, माँग-माँग आहार।।

|| 305 ||

लोकतंत्र का अर्थ है, अनशन औ' हड़ताल।
बिन माँगे मिलता नहीं, चोर करें पड़ताल।।

अख़बार

|| 306 ||

अख़बारों का काम है, खबरें देना रोज।
गाँव-नगर-परिवार की, सबकी रखते खोज।।

|| 307 ||

मन को मन से जोड़ते, रचते नव संसार।
विमुख हुए इस धर्म से, दुनिया के अख़बार।।

|| 308 ||

युग बदला, बदले सभी, मानव के आचार।
धन-वैभव ने देश के, बदल दिए अख़बार।।

साहित्यकार बाबूसिंह चौहान के निधन पर

|| 309 ||

देख-देख सब जा रहे, पथिक लिए निज गात।
वृक्ष धराशायी हुआ, बिखर गए सब पात।।

|| 310 ||

बड़े-बड़ों के सामने, झुका न जिनका शीष।
आज पड़ा है देख लो! धरती पर आशीष।।

|| 311 ||

परम्पराओं से रहा, जिनका घोर विरोध।
अन्तकाल वे कर रहीं, उनका ही प्रतिरोध।।

|| 312 ||

कटा, बँटा और न झुका, किया सदा संघर्ष।
दृढ़ता, निष्ठा, कर्म ने, बदल दिए निष्कर्ष।।

|| 313 ||

जीवन भर बदले नहीं, अपने नियम उसूल।
पंक कभी क्या चढ़ सकी, खिले कमल का फूल।।

|| 314 ||

भले अभावों में ढली, जीवन की मुस्कान।
हुए नहीं नीलाम खुद, बेचा नहीं इमान।।

|| 315 ||

जीवन भर संघर्ष में, रहा कलम का साथ।
कभी कलम छोड़ी नहीं, रही अन्त तक हाथ।।

|| 316 ||

काल-चक्र चलता रहे, करे नहीं विश्राम।
अंकित अपना कर गये, काल-चक्र पर नाम।।

|| 317 ||

पत्रकारिता को दिये, नये-नये आयाम।
साथ-साथ साहित्य भी, शाश्वत दिया तमाम।।

|| 318 ||

आँखों में आँसू भरे, करते नमन-प्रणाम।
युगों-युगों तक रहेगा, काव्य-शिला पर नाम।।

किसान

|| 319 ||

ऋतुओं का परिताप तो, झेले सदा किसान।
छाया जिनकी सहचरी, बन बैठे भगवान।।

|| 320 ||

ज्यों साधक की साधना, त्यों कृषक का कर्म।
तृप्त करे अतृप्त मन, बाँट साधमा-मर्म।।

|| 321 ||

भव्य भवन में लेटते, मखमल पर भगवान।
खुली सृष्टि की गोद में, लेटे सदा किसान।।

|| 322 ||

श्रम तन-मन की साधना, श्रम जीवन-मुस्कान।
श्रम के फल को बाँटता, कृषक निशा-विहान।।

|| 323 ||

जिएँ दूसरे आसरे, इस दुनिया के लोग।
केवल, कृषक बाँटता, सबको मधुमय भोग।।

|| 324 ||

दुनिया को बाँटे खुशी, करता जीवन-दान।
श्रम-साधक कृषक बना, आज मनोविज्ञान।।

|| 325 ||

रात-रात भर जागता, सीचे खेत किसान।
भरे सृष्टि को गोद में, कृषक-मन अज्ञान।।

आलोचक

|| 326 ||

बड़ा कठिन संसार में, आलोचक का कर्म।
समरस हो, निष्पक्ष हो, तभी निभे यह धर्म।।

|| 327 ||

अब के आलोचक बहुत, हृदयहीन व्यक्तित्व।
काव्य नहीं जिसने गुना, क्या वाँचें कृतित्व।।

|| 328 ||

बिना दर्द कवि को दिए, प्रकट करें मन्तव्य।
आलोचक का धर्म है, बतलाँए गन्तव्य।।

|| 329 ||

आलोचक मढ़ता नहीं, कभी किसी पर दोष।
कवि-कविता की भावना, सहज कहे बिन रोष।।

|| 330 ||

कंचन मिला सुगंध में, करता भव्य सुनार।
रचना की आलोचना, पैदा करे निखार।।

|| 331 ||

ऐसे आलोचक बहुत, करते व्यर्थ फ़िसाद।
कवि-कविता में सैकड़ों, पैदा करें विवाद।।

|| 332 ||

नयी दृष्टि कवि को मिले, भूल करे अहसास।
इंगित हो कवि की कला, बने नहीं उपहास।।

|| 333 ||

कवि-कविता-आलोचना, हृदय के संबंध।
लोक-भावना के बिना, निष्फल ये अनुबंध।।

रचना और रचनाकार

|| 334 ||

शब्द-शब्द परब्रह्म हैं, शब्द सच्चिदानन्द।
शब्द-शब्द में व्याप्त है, जीवन का आनंद।।

|| 335 ||

कवि के सृजन से अगर, यौवन हो बेपर्द।
इससे चुप रहना भला, रख मौसम को सर्द।।

|| 336 ||

लेखन का उद्देश्य है, बढ़े मनुज की सोच।
ऐसा लेखन क्या भला, बने आदमी पोच।।

|| 337 ||

पाठक श्रोता को करे, रचना आत्मविभोर।
ऐसा सृजन चाहिए, बढ़े हर्ष चहुँ ओर।।

|| 338 ||

पथ-दर्शक समुदाय का, होता रचनाकार।
निर्मल रचना-कर्म ही, है जग को उपहार।।

|| 339 ||

सृजन करता विश्व में, नयी शक्ति संचार।
मिथ्या-अशिव-भदेस का, करता है संहार।।

|| 340 ||

सबको बाँधे सूत्र में, जीवन हो सानंद।
लेखक का दायित्व है, देना नित आनंद।।

|| 341 ||

'शब्द' मान-अपमान के, करते हैं विनियोग।
सोच-समझकर कीजिए, शब्दों के प्रयोग।।

|| 342 ||

चकाचौंध के सामने, नैन भूलते कर्म।
भौतिकता के सामने, त्यों भूले कवि धर्म।।

|| 343 ||

खेल मदारीं खेलता, गया जमूरा हार।
नेता की मुस्कान पर, मोहित रचनाकार।।

|| 344 ||

करलें याद अतीत को, कवि अपने कुल-कर्म।
तजें आसुरी वृत्तियाँ, सही निभाएँ धर्म।।

|| 345 ||

लिखो कहानी आग से, चमक उठे तलवार।
लहर उठेगी विश्व में, सत्य-अहिंसा-प्यार।।

|| 346 ||

रचो न ऐसे गीत अब, जिनकी टेढ़ी चाल।
जागे जन-मन चेतना, रचो कवे: हर काल।।

|| 347 ||

नेता तस्कर देश का, हत्या का व्यापार।
कलम लिए कर देखता, अबका रचनाकार।।

|| 348 ||

भौतिकता के सिंधु में, डूबा रचनाकार।
इसीलिए तो मच रहा, चहुँ दिशि हा-हाकार।।

|| 349 ||

बदल गया है आदमी, अथवा बदला दौर।
कलम कहीं बेचैन तू, लगती मानो और।।

|| 350 ||

आदि काल से आज तक, सहा नहीं अन्याय।
कलम! वहाँ तूही चली, जहाँ मनुज निरूपाय।।

|| 351 ||

युग बदला, बदले सभी, मनुज-मनुज के राग।
इसीलिए तो बुझ रही, कलम तुम्हारी आग।।

|| 352 ||

युग-युग के इतिहास को, दिया कलम ने मोड़।
आज कलम शीतल हुई, करें अराजक होड़।।

|| 353 ||

घोर घाम, गर्मी बड़ी, बहती नहीं समीर।
चौराहे की भीड़ में, घुट-घुट मरा कबीर।।

|| 354 ||

सृजन पावन कर्म है, करता रचनाकार।
सत्य-शिवं और सुन्दरं, का सृजन अवतार।।

|| 355 ||

मचा हुआ चारों तरफ, क्रंदन हा-हाकार।
देख रहा अन्याय को, कैसा रचनाकार।।

|| 356 ||

मनुज यहाँ सबकी सुने, क्रूर-कषैली बात।
सत्य कलम सहती नहीं, दुर्बल पर आघात।।

|| 357 ||

पता नहीं क्या दौर है? कलम हुई चुपचाप।
कविगण कायर हो गये, शीश पड़ें पदचाप।।

|| 358 ||

नित प्रति कितने पिट रहें, मरें श्वान की मौत।
फिर भी कलम न चेतती, देख रही ज्यों सौत।।

|| 359 ||

अरे हठीली! छोड़ दे, यह निर्मम व्यवहार।
बता! कवे-सम कौन है? तेरा दावेदार।।

|| 360 ||

भक्ति-प्रेम औ' शौर्य के, तूने गाये गीत।
नागिन-सी फुंकारती, कोई सके न जीत।।

|| 361 ||

पकड़ कवे के हाथ को, बन जा कलम मशाल।
काट-काट कर फूंक दे, षड्यन्त्रों के जाल।।

कौआ

|| 362 ||

सृष्टि बीच में पल रहे, यों तो पक्षी अपार।
कौओं के उपकार को, भूल रहा संसार।।

|| 363 ||

प्रायः सब पंछी करें, सुन्दरता का पान।
कौआ ही संसार में, जिसका विष्ठा खान।।

|| 364 ||

ज्यों शिव ने विष-पान कर, किया विश्व उपकार।
त्यों कागा मल-भक्ष्य कर, रचे नया संसार।।

|| 365 ||

सब करते सुन्दर वरण, सबकी शुभ में टेक।
ख़त्म करे मल गंदगी, खग में कौआ एक।।

|| 366 ||

दूर प्रदूषण को करे, जीवन करता दान।
सब पंछिन के विश्व में, कौआ बड़ा महान।।

|| 367 ||

छत की बैठ मुंडेर पर, कौआ करता काँव।
चल, उड़ कागा जाइयो, प्रियतम आता गाँव।।

|| 368 ||

दुनिया में खग कौन-सा, जो देता आग़ाज?
देती शुभ संकेत है, कौआ की आवाज।।

|| 369 ||

पा कौआ की योनि को, मिला मुक्ति का दान।
कागभुसुंडी ने किया, राम-रूप-रस पान।।

|| 370 ||

तरह-तरह से पालते, पक्षी निज सन्तान।
कौआ केवल विश्व में, पाले पर-सन्तान।।

|| 371 ||

काँव-काँव कौआ करे, घर-घर ऊषा काल।
दुनिया कैसी बावरी, कहती है वाचाल।।

|| 372 ||

कौआ-सा पंछी नहीं, जीव-जगत के बीच।
बाह्य आवरण देखकर, मनुज बताता नीच।।

|| 373 ||

जग में यों तो खग बहुत, अनुपम-भव्य विशाल।
लेकिन, कौआ-सी नहीं, खग में अन्य मिशाल।।

|| 374 ||

पर-सेवा उपकार में, कौआ जिए सहर्ष।
कितनी सहता भर्त्सना, करता नहीं अमर्ष।।

|| 375 ||

धन्द! धन्य! संसार में, कागा का उत्सर्ग।
करता जग-कल्याण है, लोग कहें उपसर्ग।।

जिन्दगी और मौत

|| 376 ||

कौन जानता है सखे! जीवन का व्यापार?
पल में आयी मौत हा! खोया जग-परिवार।।

|| 377 ||

क्रूर काल के हाथ में, फँसी जिन्दगी आज।
सिसक रहीं अनुभूतियाँ, गिरी वदन पर गाज।।

|| 378 ||

इन्सानों की जिन्दगी, क्रूर काल का नाच।
लगती है बारूद-सी, फटती है ज्यों कांच।।

|| 379 ||

अँखियाँ देखत ही रहीं, मृत्यु का व्यापार।
कैसे लुटती जिन्दगी, कैसे मरता प्यार।।

|| 380 ||

कौन सुने? किससे कहें? जीवन-धन की लूट।
तड़प रही है जिन्दगी, गयी लड़ी भी टूट।।

|| 381 ||

हाय! मनुज के दर्द को, मनुज सका क्या जान?
पर-सेवा उपकार में, घटे मनुज की शान।।

|| 382 ||

केवल आँसू ही बचे, देने को कुछ पास।
थकित हुई संवेदना, छूटी जीवन-आस।।

|| 383 ||

धन्य! तुम्हारा त्याग यह, धन्य! तुम्हारा साज।
मानवता के शीष पर, शोभित तुमसे ताज।।

|| 384 ||

पल-पल पीड़ा भोगता, इस जग में इन्सान।
कितना निर्बल जीव है, खोज रहा भगवान।।

|| 385 ||

हुए काल के हाथ में, सपने चकनाचूर।
कातर नैना देखते, कितने हैं मजबूर।।

|| 386 ||

खूब दनादन छूटते, काँप उठें परकोट।
बारूदी- चिंगारियाँ, करते बम-विस्फोट।।

|| 387 ||

मन ने अति पीड़ा सही, तन ने कष्ट अपार।
दर्द सैकड़ों झेलते, घायल घाब हजार।।

|| 388 ||

पुत्र, पिता को डाँटता, बकता बहुत फिजूल।
कैसा परिवर्तन हुआ, बदले सभी उसूल।।

|| 389 ||

कैसी है यह जिन्दगी, बात-बात में क्रोध।
हँसी-खुशी दिन काटिये, काहे का प्रतिशोध।।

|| 390 ||

हुए मांस के लोथड़े, बिखर गए ज्यों कांच।
बेसुध तन भू पर पड़ा, परिजन करते जांच।।

|| 391 ||

क्रूर काल ने ठग लिए, हाय! किए मजबूर।
गात पडा है भीड़ में, घर से कितनी दूर।।

|| 392 ||

क्रंदन चारों ओर है, मचा चतुर्दिक शोर।
जग मेला में गुम गयी, हा! बचपन की भोर।।

|| 393 ||

कहाँ भावना मर गयी? कहाँ हुई गुम सोच?
हाय! समय क्या आ गया, हुआ आदमी पोच।।

|| 394 ||

पल-पल करके दिन कटे, माह कटें औ' वर्ष।
पल-पल करके युग गए, शेष कर्म-संघर्ष।।

|| 395 ||

वैभव बढ़ता जा रहा, टूट रहा इंसान।
घटती जाती जिन्दगी, फैल रहा शमशान।।

|| 396 ||

पल-पल करके घट रहा, दिन-जीवन भण्डार।
कब अन्तिम सांसें रूकें, काल करे संहार।।

|| 397 ||

वैभव पा पागल हुआ, चलता टेढ़ी चाल।
सीधा होकर चल अरे! खड़ा सामने काल।।

|| 398 ||

अपनी होली-ईद पर, लिए असंख्य प्रान।
दानव-मानव रूप में, दुनिया के इन्सान।।

|| 399 ||

कुक्कुट पिंजरे में पड़े, कातर-नैना मौन।
मौत खड़ी है सामने, हाय! बचाए कौन??

|| 400 ||

कौन खेलता प्राण पर, कौन करे उत्सर्ग।
खुशी मनाता आदमी, मौत बनी है स्वर्ग।।

|| 401 ||

सिसक रही है जिन्दगी, गयी आत्मा हार।
पता नहीं किस पल गिरे, काल-छुरी का बार।।

|| 402 ||

बैठा है यमराज-सा, बधिक लिए हथियार।
पास खड़े यमदूत-से, हँस-हँस लें उपहार।।

|| 403 ||

सत्य कभी क्या मिट सका, रचे झूँठ ने जाल।
खुद मकड़ी-सा फँस गया, मौत मिली बदहाल।।

|| 404 ||

आज नहीं तो कल कभी, माह बीच या साल।
अहंकार ले डूबता, पल में बनता काल।।

|| 405 ||

विविध भाँति के बज रहे, ढोल नगाड़े बीन।
कांप रही है जिन्दगी, देख-देख संगीन।।

|| 406 ||

दौड़े सरपट जा रहे, यात्रा-पथ पर लोग।
घोड़ों जैसी जिन्दगी, कुत्तों जैसा भोग।।

|| 407 ||

पल-पल दिया उलाहना, तनिक न आयी शर्म।
बेशर्मी के राज में, कौन देखता कर्म।।

भ्रष्टाचार

|| 408 ||

कसे शिकंजा मौत का, भ्रष्टाचार दलाल।
नंगे होकर नाचते, भारत माँ के लाल।।

|| 409 ||

नैतिकता गुम हो गयी, देश हुआ कंगाल।
भ्रष्ट आचरण बन गया, अब जी का जंजाल।।

|| 410 ||

कौन सुने? किससे कहें? सूझे नहीं उपाय।
लूट मची सब ओर है, बोलो! कौन बचाय?

|| 411 ||

निशा काल में लूटते, कर लेते प्रतिकार।
आजकाल के शाह तो, कहकर लूटें हार।।

|| 412 ||

आया कैसा दौर है? चोर करें व्यापार।
तस्कर निर्धारित करें, नियम-नीति-आचार।।

|| 413 ||

न्याय बिका, निष्ठा बिकी, बिकी है सत्य-सुगंध।
पूजा -थल, चौपाल में, सजी हुई दुर्गन्ध।।

|| 414 ||

जनता-रूपी गाय को, रहा कसाई काट।
नेता जेबें भर रहा, खूब उड़ाए ठाट।।

|| 415 ||

नौकर से सरकार तक, मची हुई है लूट।
भोली जनता लुट रही, भरी आपसी फूट।।

|| 416 ||

मूक खड़ी असहाय है, जनता-रूपी-भेड़।
नेता रूपी भेड़िया, पल-पल रहा उधेड़।।

|| 417 ||

अन्दर क्या कुछ घट रहा, कौन जानता हाय?
रक्षक अपराधी हुआ, कुशल दीखती नाय।।

|| 418 ||

मूल्यहीनता क्या बढ़ी, बदल गये आचार।
जलती होली सत्य की, नाचे भ्रष्टाचार।।

|| 419 ||

आज आचरणहीनता, करती नंगा नाच।
सच्चाई के दौर की, झूँठा करता जांच।।

|| 420 ||

अघ जैसी नित बढ़ रही, सिर पर कर की मोट।
पापी पल-पल फूलता, ले पापों की ओट।।

|| 421 ||

घर-उपवन में घूमते शेर-भेड़िए-बाघ।
करते हैं अठखेलियाँ, बहुत बड़े हैं घाघ।।

|| 422 ||

सब कानन सूना पड़ा, कहीं न क्रंदन काज।
भव्य भवन-प्रासाद में, करें भेड़िए राज।।

|| 423 ||

दौड़-दौड़ कर लोमड़ी, रही मिठाई बाँट।
संकेतों से भेड़िया, करता सबकी छाँट।।

|| 424 ||

कुतिया के संकेत पर, चूहा खेले फाग।
ऊँची दुम कर नाचता, अकड़ अलापे राग।।

|| 425 ||

दूर-दूर तक दीखते, कौआ-बगुला-बाज।
कोयल कहीं न कूकती, लुप्त हुई आवाज।।

|| 426 ||

काँव-काँव कौआ करें, बैठे उड़े मुंडेर।
उल्लू चुप-चुप घूरता, भवन करेगा ढेर।।

|| 427 ||

उड़ते अम्बर बीच में, बाज-काज औ' गिद्ध।
कौआ करते चौकसी, माला फेरें सिद्ध।।

|| 428 ||

फेरे से फिरते नहीं, आती इन्हें न लाज।
जाने क्या करके रहें? कौओं की आवाज।।

|| 429 ||

सीधे-सादे आदमी, नहीं जानते घात।
बुनते नहीं पहेलियाँ, करते सीधी बात।।

|| 430 ||

टेड़ा-मेड़ा आदमी, जाने क्या आचार।
बात-बात में रात-दिन,करता भ्रष्टाचार।।

|| 431 ||

कहाँ कुशलता देश की, टूट गये आचार।
लोकतंत्र की मूल को, चाटे भ्रष्टाचार।।

|| 432 ||

घोटाले नित हो रहे, सिंहासन है मौन।
बर्बादी अब देश की, हाय बचाये कौन??

|| 433 ||

आज जहाँ जो भी खड़ा, लूट रहा है देश।
घूम रहे हैं भेड़िये, बदल-बदल कर वेश।।

पिताश्री के निधन पर

|| 434 ||

विधि के रचे विधान को, कौन सका है टाल?
जल-थल-नभ में बिछ रहा, उसका अनुपम जाल।।

|| 435 ||

कितने ही उपक्रम किए, बहुत किए उपचार।
पल-पल करती जिन्दगी, गयी अन्ततः हार।।

|| 436 ||

परिजन के उपचार में, हुए सभी बेहाल।
जीवन लेकर ही रहा, हाय! अनूठा काल।।

|| 437 ||

जन्म-मरण, सुख-दुःख-जरा, रोदन-हर्ष-अमर्ष।
सहज भाव सब घट रहा, हानि-लाभ-उत्कर्ष।।

|| 438 ||

आर्य पुत्र! साधक बड़े, तन-मन से बलवीर।
जीवन-भर हरते रहे, निर्बल जन की पीर।।

|| 439 ||

हुई दिवंगत आत्मा, माटी हुआ शरीर।
अब नैनों में घूमती, जीवन की तस्वीर।।

|| 440 ||

दूर हुई परछाइयाँ, तन-मन है आजाद।
चलें सिनेमा-रील-सी, विगत दिनों की याद।।

|| 441 ||

आज कहीं फिर आत्मा, विदलित है बेचैन।
गया घोंसला छोड़कर, पंछी अन्तिम रैन।।

|| 442 ||

जाने वाले सुन अरे!, मेरी कुछ फरियाद।
बहुत नेह तुमने दिया, सदा रहेगी याद।।

|| 443 ||

विगत दिनों जब हम मिले, हुआ हास-परिहास।
चले गये मुख मोड़कर, किया नहीं अहसास।।

|| 444 ||

देव कहूँ, मानव कहूँ, या ईश्वर का अंश।
सदाचार के पुँज थे, धरती के अवतंस।।

|| 445 ||

तुमको जीवन-भर रही, जीवन की पहचान।
जो भी आया पास में, बिखर गयी मुस्कान।।

|| 446 ||

नित्य लोग मरते यहाँ, सृष्टि करे उपहास।
अरे! दिवंगत आत्मा! रचा नया इतिहास।।

|| 447 ||

जीते-जी मरते यहाँ, रोज सैकड़ों लोग।
अमर हुए मिटकर तुम्हीं, याद रहेगा योग।।

|| 448 ||

युग-युग तक रोशन रहे, इस दुनिया में नाम।
धन्य! दिवंगत आत्मा! मिला उच्च सुरधाम।।

|| 449 ||

हे तेजस्वी आत्मा! याद रहे संसार।
भावों की श्रद्धांजलि, करो तात! स्वीकार।।

अग्रजवत् सतीश चन्द्र अग्रवाल के निधन पर

|| 450 ||

टूट अचानक ही गयी, उड़ती डोर-पतंग।
छोर हाथ में रह गया, हुआ रंग में भंग।।

|| 451 ||

क्रूर काल के चक्र को, कौन सका पहचान?
असमय ही सब घट गया, लुप्त हुई मुस्कान।।

|| 452 ||

खड़े-खड़े सब देखते, सखा-मित्र-परिवार।
हाय! काल के सामने, मानी सबने हार।।

|| 453 ||

कहीं अचानक छुप गये, अरे! प्रेरणा-स्रोत।
घर-आँगन के कुँज में, चित्र देख दुःख होत।।

|| 454 ||

जीवन-पथ पर जब मिले, गहा हाथ में हाथ।
दस वर्षों के दौर का, रहा अनूठा साथ।।

|| 455 ||

गये अचानक छोड़कर, किया स्वर्ग में वास।
पल-पल आता याद अब, सुखद-सलौना हास।।

|| 456 ||

दस वर्षों के साथ का, रचा नया इतिहास।
मानवता के कुँज में, रहा सदा मधुमास।।

|| 457 ||

कितनी निर्मम थी घड़ी, प्रात न संध्या-काल।
क्रूर काल के हाथ ने, छीना माँ का लाल।।

|| 458 ||

हाय! देखते रह गये, ये विस्फारित नैन।
पल झपकते लुट गया, जीवन-पथ का चैन।।

|| 459 ||

घर-उपवन में दूर तक, सिसक रही है चाह।
नैनों से बौछार बन, टपक रही अब आह।।

|| 460 ||

पहले पतझर-सा हुआ, फिर आया मधुमास।
यह कैसा पतझर हुआ, फिरा नहीं मधुमास।।

|| 461 ||

पीड़ा ने आकुल किए, मन के सारे तार।
पलभर में सब घट गया, समझ न आयी हार।।

|| 462 ||

अपलक नैना खोजते, उचक-उचक कर राह।
मरूथल ने किसकी भला, की है पूरी चाह??

|| 463 ||

पथ में आता देखकर, खिलता वदन-गुलाब।
आज नहीं तुम पास में, रही न वैसी आब।।

|| 464 ||

मन प्रमुदित रहता सदा, पाकर पावन साथ।
खड़े-खड़े हम देखते, गये झटक कर हाथ।।

|| 465 ||

तुमने जीवन में भरा, एक नया उल्लास।
आज नहीं तो लग रहा, ज्यों अवरूद्ध विकास।।

|| 466 ||

पता नहीं किस दौर से, गुजर रहा संसार।
नित प्रति लुटता जा रहा, पथ का संचित प्यार!।

|| 467 ||

अरे! दिवंगत आत्मा! दिव्य भावना-पुँज।
बन वासंती ब्यार तुम! मँहकाना नित कुँज।।

|| 468 ||

नैनों में आँसू भरे, हुआ दयनीय हाल।
मौन समर्पण कर रहे, भाव-सुमन की माल।।

|| 469 ||

यह जीवन-व्यापार है, भाव-भरा अनुबंध।
अब यादों में पल रहे, वे नाजुक सम्बंध।।

|| 470 ||

बिना कहे, अन्तिम विदा! गये छोड़कर हाथ।
अग्रज! तुम बिन जी रहे, अब यादों के साथ।।

|| 471 ||

दर्द, वेदना में मिले, पीड़ा के उच्छ्वास।
देते बहुत सुकून हैं, यादों के विश्वास।।

|| 472 ||

अब सांसों में रम गये, यादों के संगीत।
दर्द-वेदना ढ़ल रहे, शब्द-शब्द बन गीत।।

|| 473 ||

बन प्रस्तर युग-काल-सा, खड़े रहे चुपचाप।
अंकित अपनी कर गये, काल-शिला पर थाप।।

|| 474 ||

धर्म-कला-साहित्य हित, याद रहेगा त्याग!
अग्रज! हम भूलें नहीं, वह अद्भुत अनुराग।।

|| 475 ||

हिन्दी-हिन्दुस्तान को, करते थे तुम प्यार।
वह प्रेरक की भूमिका, याद रहेगी यार!!

प्रेम

|| 476 ||

'प्रेम' सृष्टि आधार है, 'प्रेम' प्रकृति का मूल।
उर में पलता प्रेम तो, मिट जाते हैं शूल।।

|| 477 ||

द्वेष-कलह-अन्याय का, घर-घर चढ़ा बुखार।
देकर धूनी प्रेम की, सबको लेउ उबार।।

|| 478 ||

वह घर बनता स्वर्ग-सा, रहता सुख का वास।
जिस घर में पलता रहे, प्रेम और विश्वास।।

|| 479 ||

जगत असंभव कुछ नहीं, खिलते हैं दिन रात।
तानाशाही भी झुके, करो प्रेम से बात।।

|| 480 ||

दर्द-कसक- पीड़ा-चुभन, त्रास-घुटन- मजबूर।
रहे प्रेम का साथ तो, सुख देते भरपूर।।

|| 481 ||

कुछ भी कम होगा नहीं, करो प्रेम से बात।
जीवन-पथ पर शूल भी, नहीं मिलेंगे तात!!

|| 482 ||

यह कहना सच है सखे! जीवन-पथ है दूर।
लेकिन, यह भी सत्य है, पथिक नहीं मजबूर।।

|| 483 ||

धन-गुण-रूप न वाँचता, नहीं स्वार्थ का नाम।
तन से, मन से, कर्म से, प्रेम-भाव-निष्काम।।

|| 484 ||

तुमने जिद छोड़ी कहाँ, क्या बदला व्यवहार?
हार-जीत के खेल-सा, समझा अपना प्यार।।

|| 485 ||

तुमसे मिलने को हुए, बार-बार बहु यत्न।
पथ अवरोधक हो गये, निष्फल हुए प्रयत्न।।

|| 486 ||

बिन देखे पलभर कभी, नहीं पड़े था चैन।
आज देखलो! घूमते, बिन देखे दिन-रैन।।

|| 487 ||

सहसा उनको देखकर, खड़ा बीच बाजार।
मन ने समझा आज क्यों? कुंठित इतना प्यार।।

|| 488 ||

कैसी गति मन की हुई? क्या समझाएँ यार?
चले गये तुम छोड़कर, जैसे हों लाचार।।

|| 489 ||

क्या अंधों को रोशनी, क्या भूखे को हार?
ज्यों जीवन निष्फल हुआ, बिन तेरे सब यार!!

|| 490 ||

हम तो खुश रहते बड़े, करते सबसे प्यार।
पीड़ा उर में सज रही, दर्द बना शृंगार।।

|| 491 ||

कौन किसे है पूछता, मतलब का व्यापार?
दवा न कोई बाँटता, दर्द बाँटता प्यार।।

|| 492 ||

साथ-साथ बीते दिवस, बहुत रहे हम साथ।
देख, आज वे जा रहे, गहा न हो ज्यों हाथ।।

|| 493 ||

मिले नहीं, रहते यहीं, क्यों छोड़ा सहवास?
बतलाया कुछ भी नहीं, यह कैसा उपहास??

|| 494 ||

रहते परिजन साथ हैं, करते कितना तंग?
परदेशी से दोस्ती, मानो कटी पतंग।।

|| 495 ||

बसे बहुत ही दूर हैं, इस कारण मजबूर।
वरना, आकर चूमतीं, आँखें हाथ जरूर।।

|| 496 ||

जो बातें मन को कभी, देतीं अतुलित चैन।
आज वही बातें करें, मन को अति बेचैन।।

|| 497 ||

जिन पर हम करते रहे, अब तक अति विश्वास।
आज वही करते फिरें, पग-पग पर उपहास।।

|| 498 ||

कैसे-कैसे लोग हैं, इस धरती पर यार!
जिनको अपनी बात का, रहा नहीं इतवार।।

|| 499 ||

पल दो पल करके समय, बीत रहे दिन-रैन।
यार! समय की शिला पर, टेक रहे मधु बैन।।

|| 500 ||

जो भी आये राह में, करो प्रेम से बात।
बोलो, मीठे बोल तो, क्या घट जाये तात।।

|| 501 ||

बदल गया है प्रीत का, आज पुराना गाँव।
ठोकर खाते थे जहाँ, वहाँ फिसलते पाँव।।

|| 502 ||

भोला-भाला-सा लगे, बचपन का वह प्यार।
इन आँखों के सामने, बदल गया संसार।।

|| 503 ||

दबी-दबी उर में रही, सभी प्यार की बात।
चुपके-चुपके कर गया, कोई भीतर घात।।

|| 504 ||

सहज भाव पूछें पथिक, क्यों इतने बेचैन?
आँसू की सौगात को, छुपा न पाये नैन।।

|| 505 ||

उमड़ नैन तक आ गया, यादों का फैलाव।
आँखों से बहने लगा, हृदय का सैलाब।।

|| 506 ||

प्यार भरे दो बोल हों, अधरों पर मुस्कान।
अपना बनता गैर भी, कैसा हो इन्सान।।

|| 507 ||

निश्छल मन से दीजिए, प्यार भरा उपहार।
प्रतिफल में निश्चित मिले, एक नया संसार।।

|| 508 ||

भाव तनिक बदला नहीं, बदला नहीं मिज़ाज।
पीड़ा बढ़ती ही गयी, जितना किया इलाज़।।

|| 509 ||

अनचाहे वर-सा मिला, यह सुखिया-संसार।
टिके न कोई दोस्ती, मिटे न कोई प्यार।।

|| 510 ||

हृदय के नभ में उड़ें, प्रियतम-प्राण-चकोर।
देख चन्द्र-मुख बावरे, मन में उठें हिलोर।।

|| 511 ||

हृदय-सागर में उठा, प्रेम-भाव का ज्वार।
तन के तट पर जम गयी, तृष्णाओं की ग्वार।।

|| 512 ||

आज प्रेम की बात भी, करना है अपराध।
ख़त्म हुई वह भावना, मिटी प्रीत की साध।।

|| 513 ||

चन्द्र-बदन पर खिल रही, गोरी के मृदुहास।
माना पूनम की विभा, बिखर गयी आकाश।।

|| 514 ||

गोरे मुखड़े की गमक, पीत वसन तन माँह।
ओढ़ चुनरिया जा रहीं, ज्यों बासन्ती छाँह।।

|| 515 ||

सहज मिलें संसार में, नित्य नए नर-नार।
अमिट रहे छवि दृग-पटल, मिलें विरल संसार।।

|| 516 ||

मन में यदि विश्वास हो, और भरा हो प्यार।
देता मन को ताजगी, श्रद्धा का उपहार।।

|| 517 ||

जो भी आये द्वार पर, मिलिए हृदय खोल।
हाथ जोड़ कीजे विदा, देकर मीठे बोल।।

|| 518 ||

दर्द-विरह - पीड़ा-कसक, मिले बहुत बदनाम।
जाते-जाते कर गयी, प्रीत हमारे नाम।।

|| 519 ||

पल-पल बढ़ता ही रहे, प्रेम-पुनीता-कोष।
जितना बाँटें आदमी, उतना मिलता तोष।।

|| 520 ||

कितना ही जग बाँटिए, सुन्दर-मन-व्यवहार।
कम होता फिर भी नहीं, अपनेपन का प्यार।।

|| 521 ||

बिना बुलाए सैकड़ों, मिलते विविध प्रकार।
सहज भाव बिन स्वार्थ के, मिलन बने उपकार।।

|| 522 ||

बहुत खुशी होती अगर, जो मिल जाते तात!
अमित शान्ति मन को मिले, हो जाती यदि बात।।

|| 523 ||

पीड़ा बढ़ती ही गयी, हो न सका निर्वाह।
तोड़ किनारों को बहा, धारा-प्रेम प्रवाह।।

|| 524 ||

पहली पाती जब मिली; सुधियाँ लिए अपार।
शब्द-शब्द में था भरा, वहीं अपरिमित प्यार।।

|| 525 ||

मन भावों में खो गया, आया याद अतीत।
रोम-रोम में बज रहा, दर्द भरा संगीत।।

|| 526 ||

इधर दर्द, पीड़ा उधर, हुआ हाल-बेहाल।
पिछली पाती देखलो! बीते कितने साल।।

|| 527 ||

विकट दर्द की आग ने, राख किया सब हर्ष।
सूख गयी है लेखनी, अद्भुत प्रीत-विमर्श।।

|| 528 ||

दायें कर में लेखनी, बायें कोरा पत्र।
आँखों में आँसू भरे, बीता पूरा सत्र।।

|| 529 ||

जीवन-पथ में एक दिन, कहीं मिलोगे यार!
लेकिन, यह भी जानता, मिले न वैसा प्यार।।

|| 530 ||

चलों चलें रख भावना, लिए आस-विश्वास।
अरे! कहीं ये जिन्दगी, बने नहीं उपहास।।

|| 531 ||

कितना मोटा हो बसन, क्षीर निकलता पार।
सुन्दरता के स्रामने, मन भी जाता हार।।

|| 532 ||

भाव नहीं, साधन नहीं, कैसे साधूँ प्रीत।
बिना विरह के भावना, गाय मिलन के गीत।।

|| 533 ||

नयी कली-सी खिल रही, अधरों पर मुस्कान।
बरखा ऋतु में खनकती, ज्यों बिजली की तान।।

|| 534 ||

नहीं प्रेमिका बन सके, पत्नी चतुर सुजान।
कभी न पत्नी पा सके, प्रेयसि-सा सम्मान।।

प्रकीर्ण

|| 535 ||

सहज प्रक्रिया में ढला, जीवन का व्यवहार।
दु:ख-सुख, विरह-संयोग भी, रहते हैं दिन चार।।

|| 536 ||

हाय! मनुज के दर्द से, हुआ मनुज अन्जान।
कैसी है यह जिन्दगी? कैसा है इन्सान।।

|| 537 ||

क्या सोचा? क्या हो गया? बदल गये प्रतिमान।
आग लगाती चाँदनी, अस्त हुआ दिनमान।।

|| 538 ||

दर्पण पत्थर पर गिरा, टूक-टूक हो जाय।
यह कहना कितना सरल, कुछ भी बिगड़ा नाय।।

|| 539 ||

जैसे अम्बर में उड़े, डोरी बँधी पतंग।
तैसे जीवन-सूत्र से, सधता जीव-अनंग।।

|| 540 ||

साथ छोड़ चलते बने, तोड़ भाव-अनुबंध।
मानो जीवन-देश पर, कड़ा लगा प्रतिबंध।।

|| 541 ||

वर्तमान की लोग सब, करते हैं परवाह।
मिलती सदा अतीत से, मन को प्रेरक राह।।

|| 542 ||

थिरक-थिरक नभ नाचती, मन में भरे उमंग।
मृत्यु खड़ी है सामने, फिर भी उड़े पतंग।।

|| 543 ||

बारूदों के ढेर पर, बैठी है मुस्कान।
हँसी-खुशी की जिन्दगी, बाँट अरे इन्सान!!

|| 544 ||

सोच-समझ के दायरे, जब होवें अनुकूल।
जीवन की सच्चाइयाँ, कभी न जाना भूल।।

|| 545 ||

बजती हैं शहनाइयाँ, रचते रोज निकाह।
दुःख-सुख मन के आवरण, जैसे मृत्यु-विवाह।।

|| 546 ||

कितने घर ऊजड़ किए, वाणी-विष ने मीत!
कितने घर-मन फूलते, पाकर अमृत-प्रीत।।

|| 547 ||

हरी-भरी-सी जिन्दगी, सुघड़-मुलायम दूब।
वाणी की चिंगारियाँ, पल-पल जलतीं खूब।।

|| 548 ||

मानव निज मन की व्यथा, किसे सुनाए रोज?
सभी दौड़ते जा रहे, लिए हथेली ओज।।

|| 549 ||

खिलते फूल गुलाब के, हँसते काटों बीच।
ऐसे ही संसार में, रहें भले औ' नीच।।

|| 550 ||

पद-वैभव क्या बन सका, जीवन का प्रतिमान?
यह जीवन तेरा नहीं, पाल रखा अभिमान।।

|| 551 ||

प्रतिशोधों की अग्नि में, जलता है संसार।
मानवता भी जल रही, होता नर-संहार।।

|| 552 ||

अतुल शक्ति का पुँज है, देखो! कैसा शेर।
काल-चक्र के सामने, हुआ धरा पर ढेर।।

|| 553 ||

आज दिवस कुछ और हैं, कल तक थे कुछ और।
जब तक सिर पर ताज था, सबके थे सिरमौर।।

|| 554 ||

क्या वह मधुमय स्वप्न था, या अनुपम अनुराग।
या मन की अठखेलियाँ, खेला कोई फाग।।

|| 555 ||

प्रातकाल का घूमना, पग-पग मिलता ज्ञान।
सूरज की नवरश्मियाँ, देतीं जीवन दान।।

|| 556 ||

युग बदला, बदले सभी, जीवनगत-आचार।
नारी के प्रति पुरुष के, बदले कहाँ- विचार??

|| 557 ||

हुआ निरंकुश आदमी,मनमाना व्यभिचार।
चौराहे पर लुट रही, नित कुलशीला नार।।

|| 558 ||

'त्रिपथगा' में डूबकर, तन-मन हुए पवित्र।
फूले-फूले जा रहे, लगा पुण्य का इत्र।।

|| 559 ||

उनकी उनपर छोडिए, जिनकी जैसी भूल।
नहीं किसी को कोसिए, सब ईश्वर के फूल।।

|| 560 ||

'स्व' को 'पर' के हाथ में, तुमने किया गुलाम।
बंदे! अब क्यों खोजता? अपना जीवन धाम।।

|| 561 ||

नर-मकड़ा बुनता रहा, इच्छाओं का जाल।
बना सहज में जाल ही, उसका अपना काल।।

|| 562 ||

जन्म मिला किस हेतु था? रहा प्रयोजन और।
कर्मों के अभिलेख पर,किया कभी क्या गौर।।

|| 563 ||

ज्यों-ज्यों उठती नाक है, त्यों-त्यों गिरती साख।
जैसे बढ़ती आग से, नीचे गिरती राख।।

|| 564 ||

लोग हमें जब पूछते, वे दिन थे कुछ और।
युग बदला, बदले सभी, आदर्शो के दौर।।

|| 565 ||

अच्छे लोगों की कमी, नहीं जगत में आज।
अजब वृत्ति है स्वार्थ की, कब देखे पर-काज।।

|| 566 ||

कवि-कंचन की एक गति, तपते दोनों आग।
जितनी तपन बटोरते, खिलते उतने राग।।

|| 567 ||

लोग यहाँ कहते रहे, घोड़ा बिकता थान।
आज गधों की देखलो, सजी हुई दूकान।।

|| 568 ||

खरे-खरे सम्बंध भी, लगते यहाँ उदास।
महानगर की जिन्दगी, हमें न आती रास।।

|| 569 ||

पीड़ाओं को बाँट लें, दर्द सहें सब साथ।
फिर तुम देखोगे सखे! खुशियाँ चूमे माथ।।

|| 570 ||

तू वासी जिस देश का, क्या है उसमें खास?
सिवा बुराई के बता, क्या है तेरे पास।।

|| 571 ||

देख हरा उद्यान को, गधा भरा उल्लास।
लिए गधी को साथ में, चरे मजे से घास।।

|| 572 ||

आँधी बनकर छा गया, भ्रष्ट व्यवस्था-दौर।
छान उड़े आदर्श के, गिर दूसरे ठौर।।

|| 573 ||

जैसे नदिया में चलें, नौका बिन पतवार।
तैसे बिन आदर्श के, चले आज संसार।।

|| 574 ||

कसमें खायीं देश की, लिया स्वच्छता-मंत्र।
पलक झपकते बेचते, देश-धर्म औ' तंत्र।।

|| 575 ||

उच्च पदों पर गंदगी, सजी हुई है आज।
ज्यों चन्दन के वृक्ष पर, करता विषधर राज।।

|| 576 ||

हिंसा औ आतंक से, करे बुराई बात।
चुपके-चुपके खोजती, बाहर-भीतर घात।।

|| 577 ||

तनक-मनक सी बात पर, पग-पग बढ़ें विभेद।
महानगर में देखलो! बिना बात विच्छेद।।

|| 578 ||

सोच गिरी तो आदमी, बने लोमड़ी-स्यार।
सोच उठी तो आदमी, बन जाता है प्यार।।

|| 579 ||

तन की, मन की सम्पदा, जीवन के आदर्श।
जितना इन्हें संवारिए, उतना बढ़ता हर्ष।।

|| 580 ||

अपने सुख को छोड़कर, जो करते उपकार।
उनका कुछ बिगड़े नहीं, करले जो संसार।।

|| 581 ||

अपने सुख की चाह में, छोड़ दिया आचार।
पल-पल बढ़ता ही गया, तिल-तिल अत्याचार।।

|| 582 ||

अपने-कुल-परिवार का, जो चाहो कल्यान।
मन से भी मत कीजिए, हिंसा का प्रतिदान।।

|| 583 ||

नहीं किया उपकार कुछ, नित्य रचे षडयंत्र।
आज फँसा तो पूछता, मुक्तिदायिनी-मंत्र।।

|| 584 ||

दीन-दुखी-मजबूर की, करिए सहज सहाय।
जीवन के उत्थान का, यह है महज उपाय।।

|| 585 ||

बैठ सरासर कोसते, हम सबको दिन-रात।
अपने अन्दर झाँककर, पूछी है क्या बात।।

|| 586 ||

सब दरवाजे बंद हैं, अन्दर-बाहर घात।
महानगर में खो गये, भोलू आधी रात।।

|| 587 ||

चुग़लखोर के मन पले, मिथ्या-मन अभिमान।
चुगली-निन्दा-ईर्ष्या, उसके हैं प्रतिमान।।

|| 588 ||

मुख-मण्डल ग़मगीन है, बालाओं का आज।
हरदी जैसा हो गया, सुख-सपनों का ताज।।

|| 589 ||

कहाँ गयी वह भव्यता, सहज मनोहर रूप?
अरमानों पर चढ़ गयी, शमशानों की धूप।।

|| 590 ||

कनक वर्ण, मुख-चन्द्रमा, गाल-गुलाबी-गात।
पूनम-सी मुसकान को, तरस रहा अब प्रात।।

|| 591 ||

परवशता के हाथ में, बेच दिया अस्तित्व।
मौलिकता गायब हुई, कहाँ बचा कृतित्व।।

|| 592 ||

फूल नहीं काँटे दिए, बाँटी नहीं सुगंध।
अपने तक सीमित रही, अरे गुलाबी गंध।।

|| 593 ||

जीवन-भर करता रहा, उत्पीड़न-उपहास।
पतझर- उपवन को दिया, खोज रहा मधुमास।।

|| 594 ||

हे बट! तू चुपचाप ही, खड़ा अकेला राह।
जो भी आया पास में, सुनी न उसकी आह।।

|| 595 ||

सूख गया जल कूप का, हुआ भूत का वास।
बुरे दिनों का आगमन, जमें हथेली घास।।

|| 596 ||

प्राणी मन में फूलता, करता अत्याचार।
धरता नव-नव युक्तियाँ, बढ़ता भ्रष्टाचार।।

|| 567 ||

विषम वेदना झेलता, मानव अपने आप।
भटक रहा है लक्ष्य से, बढ़े निरन्तर पाप।।

|| 598 ||

सुख जिसको समझे हुए, क्षण-भर मन का फेर।
उत्पीड़ित संसार है, रही दीनता घेर।।

|| 599 ||

बड़े-बड़े ढ़ोंगी यहाँ, पूत-कपूत-कुजात।
करते ओछी बात हैं, फूले नहीं समात।।

|| 600 ||

कर्म-शिवा का सृष्टि में, बिछा हुआ है जाल।
लौट कभी आते नहीं, जल-जीवन औ' काल।।

|| 601 ||

रोज सैकड़ों कट रहे, बैल-भैंस औ' गाय।
भारत का कानून ही, मौत बेचता हाय।।

|| 602 ||

बाहर से भोले लगें, भीतर कितनी घात?
मीठी वाणी बोलकर, पूछें मन की बात।।

|| 603 ||

बिन शिक्षा के स्वास्थ्य औ', जीवन-धन बेकार।
मिले ज्ञान की गोद तो, ये बनते उपहार।।

|| 604 ||

जहाँ बने, जैसे बने, करिए भूल सुधार।
कितनी भी पीड़ा मिले, लेना नहीं उधार।।

|| 605 ||

मानवता के रास्ते, आज हुए हैं तंग।
लोहा-सा माहौल है, लगी हुई है जंग।।

|| 606 ||

सुनी-सुनायी बात पर, करते कितना रोष?
बोल पड़ें यदि कान में, लगें छूटने होश।।

|| 607 ||

बेच दिया साहित्य को, व्यापारी के हाथ।
कविता कुंठित हो गयी, कलम-काव्य के साथ।।

|| 608 ||

भौतिकता का शीष पर, बँधा हुआ है ताज।
करता नंगा नृत्य क्यों? तू अम्बर में बाज।।

|| 609 ||

क्षणिक सफलता जो मिली, समझ रहा उत्कर्ष।
पलभर का किसको पता, बदल जाय निष्कर्ष।।

|| 610 ||

जिस घर में विपदा बसे, रहे कलह दिन-रैन।
उस घर में आते नहीं, हँसी-खुशी औ' चैन।।

|| 611 ||

उचक-उचक कर देखते, पर-घर की दीवार।
अपने ही घर-वार का, कर लो तुम दीदार।।

|| 612 ||

कहीं चमेली फूलती, मॅहक दूर तक होय।
आदर्शो की सभ्यता, युगों सुवासित होय।।

|| 613 ||

मनुज आचरणहीन है, आपद-संकट-ग्रस्त।
लक्ष्यहीन जब कर्म हो, सदा रहेगा त्रस्त।।

|| 614 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम की, होली जलती रोज।
लोग खड़े चुपचाप हैं, रहे किसी को खोज।।

|| 615 ||

अम्बर में कुहरा भरा, दूर-दूर तक धूल।
सूरज-शावक छुप गया, बन्द कमल के फूल।।

|| 616 ||

मानवता के दायरे, हुए संकुचित घोर।
फैल रहा दुर्गन्ध-सा, बेरहमी का शोर।।

|| 617 ||

संकेतों में कीजिए, हृदय का व्यापार।
मन के मन में राखिए, गोपित मन-व्यवहार।।

|| 618 ||

लोक-लाज की भावना, मरूथल बीच बबूल।
राही को छाया नहीं, नीचे ऊपर शूल।।

|| 619 ||

पड़ी विश्व के सिंधु में, साँसों की पतवार।
जीवन रूपी नाव को, लगा रही है पार।।

|| 620 ||

पता नहीं किस दौर से, गुजर रहा संसार।
धन पर मिटता आदमी, धन में बिकता प्यार।।

|| 621 ||

अवसरवादी - वृत्तियाँ, क्या जानें सम्मान?
गली-गली हर मोड़ पर, पाती हैं अपमान।।

|| 622 ||

जिस आँगन खिलते सुमन, खुशियाँ थीं घर-द्वार।
आज उसी आँगन खड़ी, मज़हब की दीवार।।

|| 623 ||

मन शोषण में पल रहा, उपज रहा आक्रोश।
तानाशाही घूमती, हथिनी-सी मदहोश।।

|| 624 ||

तुमने बाँटा आदमी, बाँटा श्रद्धा-प्यार।
बिलख रहे हैं देखलो!, ममता औ' मनुहार।।

|| 625 ||

समय नहीं, पैसा नहीं, बेकारी-अनुभाग।
विधवा की गति प्राप्त है, शिक्षा-जगत-विभाग।।

|| 626 ||

अगणित घोटाले किए, बहुत किए गठजोड़।
फंदा गर्दन में फँसा, कैसे दें पद छोड़।।

|| 627 ||

घोटालों में बन गये, कौन पूछता तात?
नाम 'हवाला' में लिखा, पूछें पद-औकात।।

|| 628 ||

संकट औ' संतान में, गहरा है सम्बंध।
मात-पिता सब जानते, करते यह अनुबंध।।

|| 629 ||

ज्यों भादों बरसे बिना, रहती धरा अतृप्ति।
त्यों माँ के परसे बिना, मन को मिले न तृप्ति।।

|| 630 ||

लोहा पानी से मिले, बनता मिट्टी-खाक।
शिष्ट जनों के साथ से, ऊँची बनती साख।।

|| 631 ||

बिन अंकुश हथिनी चले, झपट चलाती सूँड।
ऊँचे पद त्यों बैठकर, कुलटा बनती मूँढ़।।

|| 632 ||

निर्मल मन, निश्छल वचन, करते शीतल छाँव।
धर्म-नीति औ' सभ्यता, बसते मेरे गाँव।।

|| 633 ||

नयी-नयी अठखेलियाँ, नवल वधूटीं राह।
मुस्कानों में बँध गया, जीवन का प्रवाह।।

|| 634 ||

बालक माँ की गोद में, पल-पल करे किलोल।
मानो पर्वत-गोद में, झरना भरे हिलोल।।

|| 635 ||

आँखों ने देखे जहाँ, निर्मल रूप अनूप।
मन के कोरे पृष्ठ पर, अंकित हैं वे रूप।।

|| 636 ||

अजब तरह का मोद है, प्राकृतिक मुसकान।
नवल वधूटीं-सा करें, सहज नृत्य औ' गान।।

|| 637 ||

अदभुत गति तूफान में, जीवन देता तोड़।
छोटी-सी घटना सखे! मन को देती मोड़।।

|| 638 ||

कल तक धरती पर खड़े, अम्बर करें विहार।
आज पड़े हैं देखलो!, कातर नैन निहार।।

|| 639 ||

सूना-सूना कुँज है, चुभें पथिक के शूल।
जहाँ सुमन फूलें कभी, क्रोधित खड़े बबूल।।

|| 640 ||

अपने-अपने देश का, करते सभी बखान।
संस्कृति, शिक्षा, नीति पर, देते मधुर बयान।।

|| 641 ||

कुछ अपनी कमजोरियाँ, कुछ विधना के खेल।
टूट रहा परिवार है, बिखर रहा है मेल।।

|| 642 ||

अजब तरह की बह रही, हवा कुँज के बीच।
मन कैसा मदमस्त है, नहीं देखता कींच।।

|| 643 ||

कभी बुराई से हुये, ये नैना-दो-चार।
दो पग चल फिर छोड़ते, ज्यों मृतक का भार।।

|| 644 ||

धरती पर फूला खड़ा, नभ से करता बात।
हे वट! तू किस हेतु को, करे पथिक से घात।।

|| 645 ||

यहाँ दुखी हर आत्मा, भोगे कष्ट अपार।
मन की मल-मल पर पड़े, विपदा-रंग हजार।।

|| 646 ||

सिसक रहा जीवन-चमन, मनुज-सुमन बेहाल।
वैभव-स्वामी पूछता, स्वार्थ अड़े पर हाल।।

|| 647 ||

पाकर रक्षा-सूत्र को, मन को कितना नाज।
बिन देखे, परखे हुआ, कोई अपना आज।।

|| 648 ||

हृदय के नभ में उड़े, कोई चन्द्र-चकोर।
नैना हैं उत्सुक बड़े, होता भाव-विभोर।।

|| 649 ||

राखी के धागे नहीं, यह पावन सम्बंध।
हृदय की अनुभूतियाँ, बाँध चली अनुबंध।।

|| 650 ||

जीवन सुन्दर हो सुखद, उन्नत होता भाल।
धरती के इतिहास में, अंकित होती चाल।।

|| 651 ||

कैसी-कैसी हो गयी, हाय! जगत की सोच।
जो कहते मजबूत थे, आज बताते पोच।।

|| 652 ||

कहाँ नियम औ' नीति हैं, कहाँ धरे सिद्धांत?
अब जीवन का अर्थ है, केवल रहो सुखान्त।।

|| 653 ||

मन याचक-सा मिल रहा, आकर द्वार अनाथ।
दया मिले जब आपकी, जीवन बने सनाथ।।

|| 654 ||

धर्म-कर्म-ईमान सब, हुआ कलंकित आज।
हंस न कोई दीखता, है कौओं का राज।।

|| 655 ||

यहाँ न कोई जानता, मान और अपमान।
बात करो-पैसा भरो, यह जीवन की शान।।

|| 656 ||

मन करता कुछ और है, हो जाता कुछ और।
बुरे दिनों के फेर में, सहज बदलता ठौर।।

|| 657 ||

जो विधि ने माथे लिखा, कभी टले है नाय।
सीधा सरल उपाय भी, उलटा होता जाय।।

|| 658 ||

अजब समय का दौर है, बदल गये हालात।
करते मीठे बोल हैं, हृदय पर आघात।।

|| 659 ||

प्रभु की दी आवाज को, चाहे जैसे ढाल।
कटुता से या गीत से, रंग ले अपना भाल।।

|| 660 ||

शब्द-शब्द में बस रहा, सुखद-दुःखद संसार।
मीठे-कडुवे बोल से, मिले जीत औ' हार।।

|| 661 ||

जिनको पाला गोद में, सुना-सुनाकर राग।
कहा काल ने देखले! वही लगाता आग।।

|| 662 ||

पग-पग पर चुकता किया, ऋण तेरा हे काल!
फिर भी तू अतृप्त है, खाकर अगणित लाल।।

|| 663 ||

कौन बँधाता है यहाँ, मधुर बोल कर धीर।
आँसू बन बहती रही, मानव-मन की पीर।।

|| 664 ||

सुखद-सलोनी जिन्दगी, महक रही ज्यों फूल।
पलक झपकते बन गयी, दो मुट्ठी भर धूल।।

|| 665 ||

बहा किनारे तोड़कर, खुशियों का सैलाब।
उथला होता जा रहा, यादों का तालाब।।

|| 666 ||

मिला कहीं सम्मान तो, कहता-'मेरा दाय'।
चुभे शूल अपमान के, मुख से निकली 'हाय'।।

|| 667 ||

कितना समझाया मगर, तोड़े खूब उसूल।
बनी जिन्दगी वैश्या, तूने करी कबूल।।

|| 668 ||

आदर्शों के गाँव में, खूब लगायी आग।
आज राख के ढेर में, खोज रहे तुम राग।।

|| 669 ||

आया कैसा दौर है, उभर रहे अपकर्ष।
उछल-उछल कर भर रहे, जीवन में उत्कर्ष।।

|| 670 ||

आम आदमी सो रहा, पेट पकड़ कर हाथ।
कहीं भूख भी एक दिन, छोड़ न जाए साथ।।

|| 671 ||

लोक लाज देखे नहीं, रति में रत दिन रात।
बिन ब्याहे बालक जने, ऐसी नारि कुजात।।

|| 672 ||

ईश्वर जो करता वही, होता है जग बीच।
निर्मल नलिनी देखलो! खिले सरोवर कींच।।

|| 673 ||

समय सुनिश्चित ही करे, सबके जीवन-काज।
पल में सुख की जिन्दगी, पल में दुःख का राज।।

|| 674 ||

'दुकी-मिचौना' खेल-सा, जीवन का व्यापार।
पता न अगले पोत में, विजय मिले या हार।।

|| 675 ||

पशु-पक्षी करते नहीं, ऊँच नीच का भेद।
इन्सानों के बीच में, क्यों ऐसा मतभेद??

|| 676 ||

ईश्वर ने पैदा किया, सबको एक समान।
बड़ा हुआ तो आदमी, राम बना रहमान।।

|| 677 ||

सबका मौला एक है, जन्म-मृत्यु सब एक।
लेकिन जग में आदमी, धरता रूप अनेक।।

|| 678 ||

जले जिन्दगी बल्ब-सी, करती है प्रकाश।
पता नहीं किस पल बुझे, विद्युत रूपी साँस।।

|| 679 ||

दिल के बँटवारे हुए, अलग-अलग हैं धाम।
करनी ने निश्चित किए, इन्सानों के नाम।।

|| 680 ||

खान-पान से जिन्दगी, नहीं बदलती यार!
लेकिन संगति से मिले, जीत-सफलता-हार।।

|| 681 ||

भीड़ भेड़ियों की बढ़ी, गलियारे में शोर।
काँप-काँप कर जिन्दगी, ढूँढ रही है भोर।।

|| 682 ||

घर के आँगन में खड़े, हँसते लाल गुलाब।
पछुआ की आँधी चलीं, बिखर गयी सब आब।।

|| 683 ||

कल तक अधरों पर सजी, फूलों-सी मुस्कान।
आज बड़े ग़मगीन हैं, निकल गयी ज्यों जान।।

|| 684 ||

नव किसलय सम ओंठ पर, ऊषा-सी मुस्कान।
पलक झुकीं, मुख आवरण, दुलहिन की पहचान।।

|| 685 ||

खुशी-खुशी में कैक्टस, आँगन लई उगाय।
शूल चुभे तो कह रहे, 'यह तो बुरी बलाय'।।

|| 686 ||

घाब कैक्टस ने किये, केले के तन-पात।
सूख गयीं रस बेलियाँ, देख-देख कर घात।।

|| 687 ||

अनुबंधों के दायरे, करो न इतने तंग।
सम्बंधों की अल्पना, संजो न पाये रंग।।

|| 688 ||

टुकड़े-टुकड़े कर दिए, धरती-घर-परिवार।
हाय! तड़पती जिन्दगी, अब खोजे तू प्यार।।

|| 689 ||

छोटी-छोटी भूल से, क्यों तोड़े सम्बंध?
दुर्लभ रिश्ते प्यार के, नाजुक हैं अनुबंध।।

|| 690 ||

खोया धन वापस मिले, मिले हार कर जीत।
लेकिन टूटा प्यार तो, मिले न वैसी प्रीत।।

|| 691 ||

प्यार भावना मर गयी, बँटी धरा इन्सान।
लाश लिए कन्धे चली, मानवता शमसान।।

|| 692 ||

सत्ता की ख़ातिर रचें, नेता रोज प्रपंच।
भेदभाव की जिन्दगी, करें सुशोभित मंच।।

|| 693 ||

क्यों होते ग़मगीन हो? पकड़ हाथ में हाथ।
यह कैसी है जिन्दगी, लगे लाश-सा साथ।।

|| 694 ||

रोज-रोज जब माँगते, सुलभ न होता न्याय।
बन जाता आक्रोश तब, अनजाने अन्याय।।

|| 695 ||

देख-देख अन्याय को, रहें कहाँ तक मौन?
अपराधों के दौर में, लाज बचाये कौन?

|| 696 ||

सिर-माथा पकड़े हुए, बैठा बरगद छाँह।
शीतल-मंद बयार भी, रोक सकी क्या आह।।

|| 697 ||

चुगलखोर के पेट में, पची कभी क्या बात?
जितना मीठा बोलता, उतनी कड़ुवी घात।।

|| 698 ||

ऊँचे कद के साथ में, समकद भी घट जाय।
गाय, ऊँट के साथ में, जैसे अजा दिखाय।।

|| 699 ||

कल तक तो हम और थे, आज हुए हैं और।
राजनीति के दौर में, नहीं टिकाऊ ठौर।।

|| 700 ||

मातम है परिवार में, गाँव खड़ा खामोश।
मौन दीखते लोग हैं, उड़े हुए हैं होश।।

|| 701 ||

श्रम पूजा, श्रम साधना, श्रम जीवन-प्रवाह।
श्रमवीरों की देश में, कौन करे परवाह।।

|| 702 ||

सुख-दुःख में संवेदना, करती रही विभाग।
सब दिन सम होते नहीं, रहे न राग-विराग।।

|| 703 ||

रक्त-स्वेद से सींचकर, किया कुँज तैयार।
माली की आँखें भरीं, देख उमसता प्यार।।

|| 704 ||

हाय! पवन कैसी चली, शब्द हुए खामोश।
मौन सिसकियाँ ले रहे, संकेतों में रोष।।

|| 705 ||

अत्याचारी ने रचे, कुछ ऐसे संयोग।
भूले शिष्टाचार को, शिष्टाचारी लोग।।

|| 706 ||

नहीं नियम, सिद्धांत कुछ, अजब बने हो यार!
बोलो! तुम किस हेतु को, सहते मन पर भार।।

|| 707 ||

पल पहले कुछ और थे, पल बीता कुछ और।
ज्यों दादुर बरसात के, रूकें न अपने ठौर।।

|| 708 ||

हर संकट के मूल में, है अपना व्यवहार।
मधुर बोल के दान का, प्रतिफल ही है प्यार।।

|| 709 ||

बिना वसन कितने पड़े, आज यहाँ नवजात।
पानी भी दो जून का, मिलना दूभर बात।।

|| 710 ||

यह कैसा विज्ञान है, उपजाता मन खोट।
मनुज-मनुज को बाँटता, करके अणु विस्फोट।।

|| 711 ||

आख़िर चलता कब तलक, नर का अत्याचार।
नारी ने भी ज्ञान का, उठा लिया हथियार।।

|| 712 ||

युद्ध-कला, विज्ञान हो, या दर्शन अनुभाग।
कहाँ न नारी ने किया, दर्शित निज अनुराग।।

|| 713 ||

पुरूषों से पीछे नहीं, अब भारत की नार।
उसे नहीं स्वीकार है, अब जीवन में हार।।

|| 714 ||

नर-नारी परब्रह्म के, दो हैं कला विधान।
विधना की इस सृष्टि में, दोनों रूप महान।।

|| 715 ||

देश द्रोह, गद्दार पर, राजा कसें लगाम।
मुखबिर औ' जासूस पर, सख्ती करें तमाम।।

|| 716 ||

लूट-लूटकर बैंक को, भाग गये परदेश।
घूम रहे परदेश में, मानो हों दरवेश।।

❁ ❁ ❁

युवको सोचो!

अपनी बात

आज सम्पूर्ण विश्व अमानवीय समस्याओं से आक्रांत है। ये समस्याएँ मानवता का गला घोंटने में लगी हैं। चारों ओर अन्याय और अत्याचार का बोलबाला है। फलतः आतंक सिर पर चढ़कर बोल रहा है। स्वार्थी मनोवृत्तियों ने हृदय को जकड़ लिया है। जिन मूल्यों के लिए आदमी की पहचान थी, उन मूल्यों को निरंकुशता के दानव ने लील लिया है। ऐसा लग रहा है कि अब कुछ भी करने से कुछ नहीं होने वाला है।

युवा शक्ति सोई है अथवा दिशाहीन भटक रही है। वरना, यह प्रदूषित परिवेश सुधर सकता था। मेरी मान्यता है कि इस बिगड़े माहौल को केवल युवा–शक्ति ही सही रास्ते पर ला सकती है। आज युवा–शक्ति को जागृत करने, उसे भटकाव के जंगल से निकालकर सही दिशा–पथ देने की जरूरत है। अन्याय, अत्याचार और आतंक को प्रेम की भाषा खत्म कर सकती है। वस्तुतः **पथ की अनुभूतियाँ** करते हुए **अन्याय के विरुद्ध** संघर्ष करके **कालभेद** को पहचानना और सश्रद्ध **भावना का मंदिर** में **आस्था के फूल** समर्पित कर **विविधा** को जानना ही युवा–शक्ति का परिचायक है। आज **वीरबाला कुँवर अजबदे पंवार** और **महासाध्वी अपाला** जैसी वीरांगनाएँ ही युवकों की सोच को बदल करती हैं।

युवकों! सोचो! में कहीं आप स्वयं को भी किसी भी रूप में उपस्थित होने का अहसास करें तो रचनाकार का श्रम, समय व धन सार्थक हो जायेगा।

युवकों सोचो! में आम आदमी की कसक है, उसका दर्द है, छटपटाहट है, पीड़ा है, बेचैनी है, लेकिन कुंठा, निराशा, पलायन कहीं नहीं है। दुनिया में किसी भी दुष्प्रवृत्ति ने कभी भी स्थायी रूप से एकाधिकार नहीं किया। अन्ततः हमेशा सद्‌वृत्तियाँ ही विजयी रही हैं, उनका ही एकाधिकार रहा है। रात्रि के उपरान्त सूर्य प्रस्फुटित होता है, उसकी किरणें सारे तम को हर लेती हैं। संसार में कुछ भी तो असंभव नहीं है। बस, प्रयासगत चूक और तुरन्त उद्‌भूत नैराश्य की भावना ही प्रदूषित प्रवृत्तियों को फलने फूलने देती है। हमें धैर्य, विश्वास, समर्पण, निष्ठा एवं त्याग के सद्‌वृत को धारण करते हुए युवकों को सही दिशा देना है। यही कुछ प्रयास आम आदमी की भाषा में **युवको सोचो!** में परिलक्षित होगा। युवकों का मन वायु–सा निश्छल और दर्पण–सा निर्मल है। अतः मैंने **युवकों सोचो!** में उसी भाषागत सादगी, सरलता और सहजता के साथ अपनी बात युवकों से कही है। सबसे बड़ी बात यह है कि आप अपनी बात जिससे कहना चाह रहे हैं, उससे उसी की भाषा में बात की जाए जिससे सहज संप्रेषण बना रहे। वस्तुतः **युवको सोचो!** आपके कर–कमलों में भेंट करते हुए तोष का अनुभव कर रहा हूँ। यह सब माँ सरस्वती की कृपा से सम्पन्न हो रहा है। अतः माँ का नेह, माँ की सन्तति को भी भेंट कर दिया है।

प्रसव की असह्य पीड़ा सहकर जिसने अबोध बचपन दिया, ऐसी ममतामयी माताश्री पूज्या **विद्यादेवी** और अबोध बचपन को पल–पल सँवारकर, सहेजकर जिसने यौवन की देहरी तक पहुँचाया, ऐसी प्रातः स्मरणीय महामयी दादीमाँ–**स्व. चम्पा देवी** की पावन स्मृति को यह काव्य प्रसूनः जिसमें मेरी गृहस्थ वाटिका की सुमन–सहधर्मिणी – **डॉ. चन्द्रा पंवार,** एम.ए., पी–एच.डी. (हिन्दी) एवं प्रिय **डॉ. मयंक पंवार, डॉ. ऋजु पंवार, डॉ. स्वाति पंवार, कु. वाणी पंवार** जैसे सुन्दर सुवासित पुष्पों की मनुहार है, सश्रद्ध समर्पित करते हुए पूज्या माताश्री

के कर– कमलों में सादर भेंट कर अनिर्वचनीय सुख का अनुभव कर रहा हूँ।

आशा है आपको मेरा यह प्रयास भी सहज रास आयेगा। अस्तु!

मन में दृढ़ विश्वास हो, और आस्था संग।
देर भले ही कुछ लगे, वह दिखलाता रंग।।

भ्रष्ट राजनेता हुये, यह जगज़ाहिर बात।
पर, सरकारी तंत्र ने, बेच दिया क्यों गात??

इसी सद्‌भावना के साथ 'युवको सोचो!' हिन्दी जगत को समर्पित है।

8 मार्च, 2003

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

भक्ति प्रसंग

|| 1 ||

कैसा जादू कर दिया, तुमने मन पर यार!
मूर्तरूप प्रभु सामने, देख रहा हूँ प्यार।।

|| 2 ||

नहीं किसी से भी कही, अपने मन की बात।।
दर्द सुने जो प्यार का, केवल तू ही तात!!

|| 3 ||

मैं तो इतना जानता, सबके दाता राम।
भरते रहते प्यार से, भक्तों के उर धाम।।

|| 4 ||

बोलो! मैं किससे कहूँ, अपने मन की पीर।
सारी जगती में बता, किसने दी है धीर।।

|| 5 ||

जीवन-हीरा का दिया, सहज भाव उपहार।।
यार! कभी भूलूँ नहीं, तेरा मधुमय प्यार।।

|| 6 ||

तुम वृंदावन- कुँज हो, भाँति-भाँति के फूल।
एक फूल दो प्यार का, सभी मिटेंगे शूल।।

|| 7 ||

कुछ भी कम होता नहीं, कभी सिंधु में नीर।
यार! तनिक-सा सौंप दे, अरे! प्यार का क्षीर।।

|| 8 ||

तुमको मेरा ख़्याल है, राम! रखो जिस ठौर।
कुछ भी शिकवा है नहीं, हे मेरे सिरमौर।।

|| 9 ||

माधव! जब तुम चाहते, सुख-दु:ख बढ़ता जाय।
तेरी कृपा के बिना, कुछ भी मिलता नाय।।

|| 10 ||

जो कुछ पल-पल घट रहा, सब उसकी है चाह।
हम सब उसके हैं निमित, चलते-जाते राह।।

|| 11 ||

मुझसे कहते लोग हैं, 'तुम यह करते नाय'।
मैं कहता- 'मैं कौन हूँ? जो कुछ करता नाय'।।

|| 12 ||

सहज भाव जो कुछ हुआ, सब तेरा आदेश।
भला-बुरा जानूँ नहीं, हे मेरे अवधेश।।

|| 13 ||

मैंने तो जो कुछ किया, सबमें तेरी सोच।
तुम बिन मैं किस योग्य हूँ? मैं तो कितना पोच।।

|| 14 ||

कितना सुंदर तन दिया, मन कोमल अभिराम।
जन्म-जन्म गाता रहूँ, तेरा यश अविराम।।

|| 15 ||

तेरी कृपा से सखे! पाया जन्म महान।
मैं अतिशय कृतज्ञ हूँ, होता नहीं बयान।।

|| 16 ||

जबसे नैनों में बसा, मनमोहन का रूप।
तबसे हृदय-धाम का, बना हुआ है भूप।।

|| 17 ||

मैं अपने मन की व्यथा, किसे सुनाऊँ यार!
तुमसे अच्छा कौन है? ओढ़े सबका भार।।

|| 18 ||

सबकी पीड़ा ओढ़ते, करते सभी निदान।
आया तेरी शरण में, 'त्राहि-त्राहि' भगवान।।

|| 19 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, और आस्था संग।
देर भले ही कुछ लगे, वह दिखलाता रंग।।

|| 20 ||

अगर भावना पाक हो, बन जाते सब काम।
शबरी के घर देख लो! खुद ही पहुँचे राम।।

|| 21 ||

उगता-छिपता सा लगे, सूरज ज्यों आकाश।
विविध रंग जगदीश के, होते त्यों आभास।।

|| 22 ||

पलभर में जो कुछ घटा, समझो अपनी ख़ैर।
उसे दोष मत दीजिये, मान पुराना बैर।।

|| 23 ||

पर पीड़ा समझी नहीं, देखे अपने रोग।
फिर कैसे जगदीश से, होवे तेरा योग।।

|| 24 ||

मेरे प्यारे राम का, नहीं किसी से बैर।
वे तो हरदम चाहते, सबकी पल-पल ख़ैर।।

|| 25 ||

ले-ले तेरे नाम की, फिरें माँगते भीख।
जाने कैसी हो गयी, राम-नाम की सीख।।

|| 26 ||

ईश्वर ने पैदा किया, सबको एक समान।
जिसकी जैसी भावना, बन जाता इंसान।।

|| 27 ||

तुमने जग-उपकार को, युग-युग माँगी भीख।
उलट कहानी कह रहे, लिये सैकड़ों सीख।।

|| 28 ||

हाय! आचरण राम का, बिल्कुल असफल आज।
कूटनीति से कृष्ण की, सुलझें अब तो काज।।

|| 29 ||

गहन रखें जो आस्था, प्रेम-सहज-विश्वास।
उनके जीवन कुँज में, राम रखें मधुमास।।

|| 30 ||

राम आस्था-गंग हैं, कृष्ण साधना-पुँज।
रख-हृदय में राम को, कृष्ण भावना-कुँज।।

|| 31 ||

हे मोहन! कैसे भये, भूले गोपी-ग्वाल।
नैनों में आँसू भरे, सजे आरती-थाल।।

|| 32 ||

भला-बुरा जो कुछ किया, सब तेरे अनुकूल।
ऐसा भाव न दीजिये, जो मन हो प्रतिकूल।।

|| 33 ||

भला-बुरा सब कर दिया, सखे! तुम्हारे नाम।
सहज भाव अब देखता, राम! जगत के काम।।

|| 34 ||

मनमानी चलती रही, यदि दुनिया की रीत।
कैसे फिर जीवित रहे, निश्छल मन की प्रीत।।

|| 35 ||

तू रग-रग में रक्त-सा, समा गया बन प्रेम।
कुशल-क्षेम मन पूछता, निभा रहा ब्रत नेम।।

|| 36 ||

तुमने ही तो दे दिये, दुनियाभर के काम।
कहो! राम! कैसे करूँ? व्रत-पूजा अविराम।।

|| 37 ||

मेरा मन तो चाहता, जपूँ "राम" दिन-रात।
हा! कलियुग की कामना, छूट न पाती तात!!

|| 38 ||

लोग भले कहते रहें, भली-बुरी है सोच।
राम! फ़र्क़ पड़ता नहीं, वीर कहें या पोच।।

|| 39 ||

मुझे छोड़कर चल दिए, क्यों दुष्टों के गाँव?
अरे यार! इतना बता, मुझको मेरा ठाँव।।

|| 40 ||

दुनियाभर के दर्द को, सहन करें चुपचाप।
पराकाष्ठा हो गयी, देख रहे हैं आप।।

|| 41 ||

तुमने भक्तों के लिये, दी मर्यादा तोड़।
धरी वीरता ताक में, नाम लिया रणछोड़।।

|| 42 ||

भला-बुरा सब कर दिया, मैंने तेरे नाम।
चाहें मुझे संवारले, चाहें कर बदनाम।।

|| 43 ||

भोले! तेरे सामने, झुके सहज ही शीष।
ज्यों ही लेते नाम हैं, मिल जाता आशीष।।

|| 44 ||

चरण-कमल की भक्ति दो, महादेव अधिदेव!
और नहीं कुछ चाहिये, इतनी-सी है टेव।।

|| 45 ||

बिन श्रद्धा-विश्वास के, मिलें न मन के मीत।
बिना समर्पण- त्याग के, जुरै न सच्ची प्रीत।।

|| 46 ||

भौतिक दूरी कर रही, हमको माधव! तंग।
इस कारण मजबूर हूँ, रहता हूँ बदरंग।।

|| 47 ||

सकल सृष्टि को ईश की, करता मन से प्यार।
कितना ही वैषम्य हो, मन क्यों माने हार।।

|| 48 ||

मेरे उर-मंदिर बसो, श्रीराधे-घनश्याम।
तुमसे लौ लागी रहे, हर पल आठों याम।।

|| 49 ||

पलभर भी देखे बिना, पड़े न मन को चैन।
हर पल रहते साथ हैं, फिर भी मन बेचैन।।

|| 50 ||

चंचल मन की वृत्तियाँ, खोज रही हैं राम!
बिना राम के जग लगे, जैसे मुरदा धाम।।

|| 51 ||

शब्द सच्चिदानंद हैं, शब्द ब्रह्म भगवान।
शब्द-साधना का दिया, तुमने ही वरदान।।

|| 52 ||

मैं कितना कृत कृत्य हूँ, मेरे मन के मीत!
तुमसे बढ़कर जगत में, नहीं किसी से प्रीत।।

|| 53 ||

चीख़-चीख़ सब गा रहे, हम सब तेरे भक्त।
मैं कैसे प्रमाण दूँ? तन-मन से अनुरक्त।।

|| 54 ||

राम! नहीं मैं जानता, भले-बुरे का भेद।
चंचल मन की वृत्तियाँ, कैसे करें विभेद।।

|| 55 ||

तेरी कृपा से सखे! जग होता आबाद।
तेरी कृपा के बिना, सब होता बर्बाद।।

|| 56 ||

मेरे प्रेरक राम हैं, पैदा करते चाह।
पल-पल दिखलाते वही, मुझको मेरी राह।।

|| 57 ||

बड़े-बड़े ठग-चोर हैं, शक्ति-पुँज सामंत।
जब तेरी भृकुटि तने, पल में होता अंत।।

|| 58 ||

'प्रभु ने ऐसा कर दिया', दें जगवाले दोष।
लेकिन, अपने कर्म पर, करें नहीं अफ़सोस।।

|| 59 ||

पलक मूँद कर देखले, अपने सीता-राम।
देख सूर के सामने, मुस्काते घनश्याम।।

|| 60 ||

काँप उठी है आत्मा, देख-देख करतूत।
आया कैसा दौर है, हे मेरे अवधूत!!

|| 61 ||

जाति-रूप-विद्या-विभव, कुल-यश-क्रिया-काम।
भक्ति रूपिणी नाव में, व्यर्थ सभी का दाम।।

|| 62 ||

पलभर का स्पर्श था, विलग हुआ क्या चित्त।
तू ही मुझको दे बता, मेरे मन के मित्त!!

|| 63 ||

कभी किसी से भी सखे! हुआ न तू नाराज़।
मन कहता फिर किसलिये, सुने नहीं आवाज़।।

|| 64 ||

प्रभु! तुम अपने भक्त को, रखते पल-पल ध्यान।
साम, भेद औ' दण्ड से, रखवाते सम्मान।।

|| 65 ||

उल्टी-सीधी बात का, देता वह आग़ाज़।
मन! कितना दुर्बोध तू, सुने नहीं आवाज़।।

|| 66 ||

हर घटना में राम हैं, घटना घटती रोज़।
राम खड़े हैं सामने, दूर रहा तू खोज।।

|| 67 ||

हर घटना के मूल में, राम-रसायण होय।
सोच, अरे! मन बावरे, तू काहे को रोय।।

|| 68 ||

करता व्यर्थ विलाप क्यों, दुःख-सुखमय फल देख।
सब कुछ है श्रीराम का, मन! उनको अवरेख।।

|| 69 ||

मन रमता श्रीराम में, माँ की शक्ति अपार।
आदिदेव आराध्य की, महिमा अपरंपार।।

|| 70 ||

'मैंने ऐसा कर लिया', कहता करता नाँच।
सब माया श्रीराम की, भूल गया क्यों साँच।।

|| 71 ||

देख अरे! मन बावरे, सुन ले सच्ची बात।
'मेरे तो श्रीराम हैं' सच्चे मेरे तात।।

|| 72 ||

पूजा, जप, तप, साधना, करलो कितने नेम।
यदि भूले श्रीराम को, कहाँ कुशलता-क्षेम।।

|| 73 ||

राम कहो या शिव कहो, अनुपम दिव्य सुगंध।
जीवन रूपी काव्य में, भरते लय-गति-छंद।।

|| 74 ||

जब कृपा हो राम की, तभी भागती पीर।
सब कुहरा छँट जाय रे! मत हो अरे! अधीर।।

|| 75 ||

अपने मन से पूछ लो, कब से देखूँ वाट?
लगे कहीं यदि भोथरी, प्रभुवर! दीजे डाँट।।

|| 76 ||

राम-श्याम-शिव एक हैं, युग-युग शक्ति अपार।
किसी रूप में देख लो, होगा बेड़ा पार।।

|| 77 ||

बिन श्रद्धा के आस्था, बिना समर्पण-त्याग।
भजन बिना भगवान ज्यों, बिना तपन के आग।।

|| 78 ||

जीवन-पथ पर चल रहे, धरे राम का नाम।
मन में दृढ़ विश्वास है, सहज मिलेंगे राम।।

|| 79 ||

संत और भगवान में, है सम्बन्ध अनंत।
संत रूप सोपान चढ़, मिल जाते भगवंत।।

|| 80 ||

तुमने पग-पग पर दिया, मुझको जीवनदान।
कहो! व्यक्त कैसे करूँ? यह तेरा अहसान।।

|| 81 ||

अमरबेल बिन मूल की, चढ़ जाती है पेड़।
ईश्वर के वरदान को, कोई सका न छेड़।।

|| 82 ||

जग में गंध अनेक हैं, पर सुगंध है एक।
त्यों जग में ईश्वर विविध, पर परमेश्वर एक।।

|| 83 ||

भांति-भांति के संत हैं, प्रभु को कहें अनेक।
लेकिन, मेरे उर बसा, वह तो प्रभुवर एक।।

|| 84 ||

अरे! व्यर्थ क्यों कर रहा, मन में बड़ा गुमान।
प्रभु की ताक़त का तुझे, तनिक नहीं अनुमान।

|| 85 ||

उसकी मरजी से घटें, घटना पल-पल रोज़।
जन्म-मृत्यु, दुःख-सुख सभी, हर्ष-ग़मी के भोज।।

|| 86 ||

उसकी ताक़त का तनिक, करलो तुम अनुमान।
अगले पल का क्या पता, रूंठ जाय भगवान।

|| 87 ||

पलभर के स्पर्श से, बदल जाय संसार।
पल ही का स्पर्श था, शिला बन गई नार।।

|| 88 ||

नन्हा-मुन्ना दे रहा, हँसकर बाल-प्रसाद।
मानो बालक रूप में, मुस्काता आह्लाद।।

|| 89 ||

बौराया है आदमी, भूल गया निज धाम।
चौराहे से पूछता, कहाँ मिलेंगे राम??

|| 90 ||

सुमिरन की कर कोठरी, श्रद्धा-आसन बैठ।
सहज समर्पण प्यार की, दिखला देगा पैंठ।।

|| 91 ||

हम तो हर पल नाचते, तेरे ही अनुसार।
छुप-छुप कर तू देखता, करता है मनुहार।।

|| 92 ||

मैं वह वाणी बोलता, करता हूँ वे काम।
मुझको जिसकी प्रेरणा, देते हैं श्रीराम।।

|| 93 ||

जो कुछ पल-पल घट रहा, घटे-घटेगा और।
उसमें बंदे! देख ले! तेरे प्रभु सिरमौर।।

|| 94 ||

बंदे! करता कर्म चल, मत कर फल में आस।
परम शक्ति के धर्म में, रख निश्छल विश्वास।।

|| 95 ||

अपनी इच्छा से चलें, हम होते हैं कौन?
निखिल सृष्टि यह चल रही, देखो! कितनी मौन।।

|| 96 ||

रही अधूरी साधना, हुआ न पूरण काम।
सहज भाव से चल अरे! रख हृदय में राम।।

|| 97 ||

सत्य बोलने की सज़ा, देते न्यायाधीश।
पापी का उद्धार तो, कर देते जगदीश।।

|| 98 ||

हर तरु, शाखा पात पर, थिरक रहे तुम मीत!
निखिल सृष्टि में सुन रहा, तेरा ही संगीत।।

|| 99 ||

खड़ी फ़सल को चूमती, डाल-डाल औ' पात।
पुरबइया जो बह रही, है तेरी सौग़ात।।

|| 100 ||

नीलगगन में देख लो! पल-पल छाया-घाम।
पल में बहती है पवन, पलभर में घनश्याम।।

|| 101 ||

नाच उठे मन मयूरा, देख-देख घनश्याम।
जड़-चेतन-जग बावरा, देख-देख यह राम!!

|| 102 ||

आकुल-व्याकुल भोग में, अधरों पर मुस्कान।
रोग-शोक औ' क्रोध में, तुम ही हो भगवान!!

|| 103 ||

पल में भरते हो खुशी, पल करते ग़मगीन।
सीमा पर तुम ही खड़े, हाथ लिए संगीन।।

|| 104 ||

उलटा-पुलटा हो चलन, बदल जाए सम्बन्ध।
सबके हृदय में बसे, तुम रहते स्वच्छंद।।

|| 105 ||

खुले हाथ से बाँटते, सबको सबका मान।
जिसको अच्छा जो लगे, ले लेता है दान।।

|| 106 ||

क्या माँगू तुमसे सखे? तुम मेरे भगवान।
जो तुमको अच्छा लगे, देते मुझको दान।।

|| 107 ||

जप-तप-व्रत-जानूँ नहीं, पता न अपना ठाँव।
सहज समर्पित कर दिया, यह तन-मन का गाँव।।

|| 108 ||

उल्टा-सीधा जो लिखा, लिखवाते तुम यार!
तेरी करते चाकरी, तेरा ही व्यापार।।

|| 109 ||

जैसा तुमको भावता, तैसा मिले विचार।
भला-बुरा जो सोचता, तू ही देता यार!!

|| 110 ||

जब तक तुम चाहो नहीं, नहीं निकलते बोल।
तेरी कृपा से सखे! लाख टका हो मोल।।

|| 111 ||

पाप-पुण्य जानूँ नहीं, नहीं मान-सम्मान।
जो तुमको अच्छा लगे, वह करते भगवान!!

|| 112 ||

मन में दृढ़ विश्वास है, यह तेरी मनुहार।
अरे! भला मैं कौन हूँ? जो घृणा दूँ प्यार।।

|| 113 ||

जो भी मिलते राह में, मीठे-कड़ुवे मीत।
वीणारूपी राम के, सब हैं स्वर संगीत।।

|| 114 ||

जब तक तेरा प्यार है, लोग चल रहे साथ।
पता नहीं किस मोड़ पर, भगें छोड़कर हाथ।।

|| 115 ||

मेरा मन अति बावरा, चला खोजने धाम।
देख सुमन के कुँज को, भटक गया हे राम!!

|| 116 ||

भली-भाँति मन जानता, क्या तुम पर अधिकार।
पता नहीं कब जीव को, हो जाता है प्यार।।

|| 117 ||

प्राण! प्राण को प्राण से, हो जाता है प्यार।
जब तू चाहेगा सखे! होगी मन की हार।।

|| 118 ||

ऊँच-नीच का भेद कर, बंदे! किया सलाम।
सहज भाव से कर अरे! जय-जय-जय श्रीराम!!

|| 119 ||

सुख दे या दुःख दे प्रबल, नहीं छूटता साथ।
पकड़ा मन के हाथ से, राम-नाम का हाथ।।

|| 120 ||

यह मन शंकित है बड़ा, नहीं देखता नीड़।
भटक गया है देखकर, चौराहे की भीड़।।

|| 121 ||

वन-उपवन में देखकर, सुंदर-सुंदर फूल।
मन-भंवरा पागल हुआ, नहीं देखता शूल।।

|| 122 ||

अपना कुछ भी है नहीं, क्या दें तुमको तात!
तेरी तुझको दे रहे, प्यार भरी सौग़ात।।

|| 123 ||

जीवन-पथ में जो मिला, पल-दो-पल का साथ।
यह सब कृपा राम की, है उनका ही हाथ।।

|| 124 ||

बिन माँगें ही दे दिया, तुमने सब कुछ दान।
किसी-किसी को दे दिये, कई-कई वरदान।।

|| 125 ||

मुझसे आय न माँगना, फिर भी माँगू यार!
हर ख़ाली झोली भरो, मेरे प्यारे प्यार।।

|| 126 ||

यार! कौनसी हो गयी, अनजाने ही भूल।
तुमने अब तक की नहीं, विनती हाय! कुबूल।।

|| 127 ||

मैं तो तेरा प्राण हूँ, तू मेरा है प्राण।
प्राण-प्राण ने छू लिए, अनजाने संप्राण।।

|| 128 ||

तू जाने मैं जानता, कहीं न कोई दाँव।
मुझको प्रभुवर! चाहिये, चरण-कमल की छाँव।।

|| 129 ||

राम कहूँ या शिव कहूँ, अथवा कहूँ रमेश।
माधव! मैं क्या-क्या कहूँ, तुम मेरे प्राणेश।।

|| 130 ||

जीवन-पथ पर चल रहे, धर अधरों पर नाम।
तुम ही मुझको दो बता, मेरा कहाँ मुकाम।।

|| 131 ||

तेरे हाथों सोंप दी, अपनी जीवन-डोर।
पीड़ा दे या दर्द दे, तम दे अथवा भोर।।

|| 132 ||

पग-पग पर होता रहा, तेरा ही अहसास।
पत्ता-पत्ता हिल रहा, कण-कण में मधुमास।।

|| 133 ||

जो माँगो देता वही, पर लेता है जांच।
आने भी देता नहीं, कभी प्रेम पर आंच।।

|| 134 ||

पल-दो-पल का ही रहा, प्राण! तुम्हारा साथ।
लेकिन, अब भी लग रहा, थाम रहे तुम हाथ।।

|| 135 ||

एक-एक पल कट रहा, गुज़र रहा ज्यों वर्ष।
मूर्तरूप ही देखकर, होता कितना हर्ष।।

|| 136 ||

तन तो मेरे साथ है, मन है तेरे पास।
नैन तुझे ही खोजते, रहते बड़े उदास।।

|| 137 ||

तू जाने मैं जानता, कितना तुमसे प्यार।
शब्द कभी करते नहीं, शब्दों का व्यापार।।

|| 138 ||

चौराहे पर थे खड़े, जाने को तैयार।
बदल गया है रास्ता, तुमसे मिलकर यार!!

|| 139 ||

मंजिल कितनी दूर है? अथवा कहाँ पड़ाव?
राम! नहीं मैं जानता, कब हो गया जुड़ाव।।

|| 140 ||

रोज़ लहकती आँख है, रोज़ बोलता काग।
प्राण! अभी आये नहीं, बीत रहा है फाग।।

|| 141 ||

चाँद बिना ज्यों चाँदनी, जल बिन ज्यों बरसात।
कैसी हालत हो रही, प्राण बिना दिन-रात।।

|| 142 ||

तुम ही बतलाओ अरे!, कोई सरल उपाय।
माधव! पीड़ा प्यार की, कुछ तो कम हो जाय।।

|| 143 ||

जब चाहा दर्शन दिये, सपनों में की बात।
बोलो! अब कैसे कटें? तुम बिन यह दिन-रात।।

|| 144 ||

श्याम! बड़े बेचैन तुम, कर देते बेचैन।
देख महक मुस्कान की, पलभर पड़े न चैन।।

|| 145 ||

कितना तुमको चाहते, देखो! दिल यह चीर।
रोम-रोम में रम रहा, तेरी छवि का नीर।।

|| 146 ||

दर्द निरंतर बढ़ रहा, यह कैसा है प्यार।
कुछ भी कह सकते नहीं, यह कैसा अधिकार।।

|| 147 ||

इंतज़ार के पल बड़े, कर देते बेचैन।
हर दस्तक पर देखते, तुमको प्यासे नैन।।

|| 148 ||

भली-भाँति मैं जानता, तेरा मालिक कौन।
हो जाता है प्यार जब, मन हो जाता मौन।।

|| 149 ||

तुम कुछ भी समझो सखे! अथवा मानो ग़ैर।
वृंदावन को छोड़कर, करूँ कहाँ की सैर।।

|| 150 ||

सुभग-सलोने चित्र में, मनमोहक मुस्कान।
अनुपम दिव्य स्वरूप है, राम! राम!! भगवान।।

|| 151 ||

यों तो मोहन बहुत हैं, तुम अपने में एक।
जो मन को वश में करे, उस मोहन में टेक।।

|| 152 ||

बता कौन-सी बात है? जिसे छुपाया होय।
फिर भी तू भोला बने, तुझे न समझा कोय।।

|| 153 ||

पत्थर-पत्थर पूजते, समझ तुझे भगवान।
दे दो! मेरे देश को, मंगलमय वरदान।।

|| 154 ||

जिसने मंदिर से चुरा, किया भवन में क़ैद।
उसके तुमने कर दिये, दुखड़े सभी नपैद।।

|| 155 ||

तेरी चोरी देखकर, मैं रोया दिन-रात।
तुम मेरे मन की अरे! समझ न पाये बात।।

|| 156 ||

पत्थर-पत्थर पूजते, गये भवन से दूर।
एक झोंपड़ी के लिए, बहुत हुए मजबूर।।

|| 157 ||

तू भी कैसा यार है! दे न सका सौगात।
एक झोंपड़ी के लिए, मनुज लड़ें दिन-रात।।

|| 158 ||

जितनी अब तक कट गयी, उतनी आगे नाय।
अब तो मन कहने लगा, तू भी सुनता नाय।।

|| 159 ||

धीरे-धीरे टूटता, जाय सब्र का बाँध।
पल-पल रोती दोस्ती, सुबह हो रही साँझ।।

|| 160 ||

जो तुमको नित कोसते, हर पल, हर दिन-रात।
उनका देता साथ तू, जो करते हैं घात।।

|| 161 ||

साथ कभी छूटे नहीं, कर लो मिट्टी ख्वार।
चीख़-चीख़ सबसे कहें, हम मोहन के यार।।

|| 162 ||

यह तन रूपी कोठरी, ईश्वर का आवास।
तनिक प्यार से झांकले! अन्दर हो आभास।।

|| 163 ||

गिरे हुओं को थामकर, जो बाँटे मुस्कान।
ऐसे बंदे से मिलें, सहज भाव भगवान।।

|| 164 ||

देना है तो दे सखे! तू खुशियों का दान।
अपनी पीड़ा का कभी, करता नहीं बखान।।

|| 165 ||

तुम बिन मन लगता नहीं, रहे खोजते नैन।
हाय! आस्था ने किया, सखे! बहुत बेचैन।।

|| 166 ||

मैं तो दर-दर घूमता, तुम्हें खोजता राम!
तुम भी बड़े विचित्र हो, छुपे हमारे धाम।।

|| 167 ||

मन ने समझाया बहुत, भटक रहे क्यों यार?
कहाँ-कहाँ तुम खोजते, खोजो अपना द्वार।।

|| 168 ||

अलग-अलग हैं रास्ते, बटिया कोई नाय।
'पी'को फिर-फिर खोजता, लीक छानता जाय।

|| 169 ||

जाने किस-किस द्वार पर, फिरा झुकाता शीष।
मन की दहरी से कभी, लिया नहीं आशीष।।

|| 170 ||

तरह-तरह की अल्पना, फिरे सजाता यार!
मन की रंगोली कभी, नहीं सजायी द्वार।।

|| 171 ||

अहंकार की गोद में, रखकर सोया शीष।
कभी किसी को प्यार से, दिया नहीं आशीष।।

|| 172 ||

वैभव पा भटका फिरा, खुद को कहता संत।
सहज भाव से खोजता, मिल जाते भगवंत।।

|| 173 ||

दर-दर पर जाकर झुका, फिरा माँगता भीख।
बता! सरलता से कभी, ली है तूने सीख।।

|| 174 ||

द्वेष, दंभ, पीड़ा, कसक, देख हँसा नादान!
पर-पीड़ा जानी नहीं, खोज रहा भगवान।।

|| 175 ||

मन जिसको कहता नहीं, करे वही तू काम।
टेढ़े-मेढ़े काम से, कहाँ मिलेंगे राम।।

|| 176 ||

तू भी अब सुनता नहीं, निर्धन की कुछ बात।
हर मंदिर में देख ले! मिलते धक्के-लात।।

|| 177 ||

पग-पग मिलती प्रेरणा, देते तुम आशीष।
इसीलिए झुकता नहीं, कहीं हमारा शीष।।

|| 178 ||

जब तक था शमसान में, याद रहा भगवान।
जैसे ही घर आ गया, खड़ा मिला शैतान।।

|| 179 ||

पग-पग पर करते रहे, मुझको जीवन दान।
कहो व्यक्त कैसे करूँ? मैं तेरा अहसान।।

|| 180 ||

कहाँ यार! गुम हो गयी, अब बंशी की तान।
बढ़ता जाता कंस का, बिना बात ही मान।।

|| 181 ||

आया कैसा दौर है? हे मेरे भगवान!
खोती जाती जिन्दगी, नित अपनी पहचान।।

|| 182 ||

पतितों के उद्धार को, बाना धरो अनूप।
फिर भी मुझे न तारते, मैं इसके अनुरूप।।

|| 183 ||

इतना कम देना नहीं, झुके कहीं यह शीष।
दर-दर खाये ठोकरें, तेरा ही आशीष।।

|| 184 ||

कल जाते शमसान को, राम-नाम था सत्य।
आज भावना कर रही, मंदिर में दुष्कृत्य।।

|| 185 ||

हम तो कुछ रचते नहीं, तू ही रचता यार।
आदि, मध्य औ' अन्त का, तू ही सृजनकार।।

|| 186 ||

तुम मेरे स्वामी-सखा, मैं सेवक लाचार।
सेवा- भाव न जानता, क्या जानूँ आचार।।

|| 187 ||

जैसा तुम देते मुझे, वैसे आते भाव।
दिखला देते शब्द हैं, प्रेम - पीर औ' ताव।।

|| 188 ||

मुझे चुनौती दे रहे, ले-ले तेरा नाम।
यार! मुझे पीड़ा बड़ी, तुम होते बदनाम।।

|| 189 ||

दुष्ट-भ्रष्ट-कायर सभी, करते नित बकवास।
बता सहन कैसे करूँ, यह तेरा उपहास।।

|| 190 ||

बिगड़ रही है आस्था, देख जुल्म के काज।।
भ्रष्ट आचरण कर रहा, सदाचरण पर राज।।

|| 191 ||

टूट रहा विश्वास है, देख-देख हालात।
आज पुजारी सत्य के, देते हैं आघात।।

|| 192 ||

प्रभुवर अपने भक्त का, सह न सकें अति कष्ट।
पलभर के संकेत में, मिट जायें सब भ्रष्ट।।

|| 193 ||

अन्दर तो झाँका नहीं, फिरा खोजता धाम।
मन्दिर-मस्जिद-चर्च औ', गुरूद्वारे में राम।।

|| 194 ||

इतनी दे ताकत मुझे, निर्बल के बल राम!
सह न सकूँ अन्याय को, हे मेरे घनश्याम!!

|| 195 ||

हार- जीत- संघर्ष का, तुमने दिया विवेक।
दीन- दु:खी- संतप्त हित, प्रभुवर! देना टेक।।

|| 196 ||

मैं तेरे संकेत पर, करता हूँ सब काम।
अपनी इच्छा कुछ नहीं, मेरे दांता राम!!

|| 197 ||

जहाँ-जहाँ तू भेजता, जाता हूँ निष्काम।
बँधा पतंग की डोर-सा, नाच रहा मैं राम!!

|| 198 ||

दूरभाष कोई नहीं, नहीं रेडियो, तार।
हो जाता अहसास है, तू ही रहा पुकार।।

|| 199 ||

पहले बालक, फिर सखा, दिया शिष्य को प्यार।
गुरु-पितु, बाबा रूप में, दिए विविध उपहार।।

|| 200 ||

मान और अपमान क्या, नहीं जानता यार!
सखे! तुम्हारे प्यार का, पहन रखा है हार।।

|| 201 ||

तू अद्भुत है आदमी, अद्भुत तेरी प्रीत।
बता आँसुओं के सिवा, क्या दूँ तुमको मीत!!

|| 202 ||

अपनी पीड़ा का सखे! कहाँ मुझे अहसास?
भला, बता किससे कहूँ, मैं अपना उपहास।।

|| 203 ||

राम-भरोसे चल रही, जीवन-रूपी रेल।
ईधन जलता प्यार का, पल-पल पेलम पेल।।

|| 204 ||

सोच रहा मन बाबरा, कर ली आँखें बन्द।
सखे! तुम्हारी सृष्टि में, दुष्ट हुए स्वच्छंद।।

|| 205 ||

अक्षर-अक्षर, शब्द में, समा रहे हर बोल।
प्रेम- समर्पण- आस्था, श्रद्धा तेरा मोल।।

मातृभूमि के लिए

|| 206 ||

चप्पा-चप्पा देश का, भारत-माँ का अंग।
मातृभूमि के प्रेम से, बड़ा न कोई रंग।।

|| 207 ||

हे माँ! मुझे न चाहिये, जन्म अनेकों धाम।
मिले जन्म जिस ठौर भी, आय देश के काम।।

|| 208 ||

दस जन्मों के कर्म से, भला एक ही कर्म।
मातृभूमि के वास्ते, मिटना पावन धर्म।।

|| 209 ||

सोये तेरी गोद में, हे माँ! नमन-प्रणाम।
हाथ फेर कर देख लो! लिखा वक्ष पर नाम।।

|| 210 ||

छलनी-छलनी हो गया, हे माँ! तेरा लाल।
गोली खायी वक्ष पर, झुका न फिर भी भाल।।

|| 211 ||

केसरिया कर में सजा, किया वीर प्रस्थान।
अब कण-कण में गूँजता, 'जय-जय हिन्दुस्तान'।।

|| 212 ||

सोये माँ की गोद में, ध्वजा-तिरंगा ओढ़।
देश-धर्म पर मिट गये, खूब लगायी होड़।।

|| 213 ||

बेसुध तन अर्थी रखा, सजा तिरंगा बीच।
ओठों पर मुस्कान है, रही ग़मों को सींच।।

|| 214 ||

चले गये हे वीरवर! बसे राम के धाम।
हमें गर्व उत्सर्ग पर, करते नमन-प्रणाम।।

|| 215 ||

रचे पृष्ठ इतिहास के, लिखा रक्त से नाम।
समय-शिला पर कर गये, अंकित अपने काम।।

|| 216 ||

गये महा प्रस्थान पर, ले उद्देश्य महान।
क़सक हमें बलिदान की, रखें देश का मान।।

|| 217 ||

सीमाओं को तोड़कर, ज्यों बहता तालाब।
देश भक्ति के सिंधु में, त्यों आया सैलाब।।

|| 218 ||

छोटा-सा ज़ीवन मिला, करले ऐसे काम।
मर जाने के बाद भी, रहे देश में नाम।।

|| 219 ||

देश भक्ति कब की फँसी, राजनीति की कींच।
दादुर जैसी एकता, गुटबंदी के बीच।।

|| 220 ||

देश-द्रोह-विष-बेलिका, बढ़ती जाती रोज़।
देश-सम्पदा फूँककर, युवा दिखाते ओज।।

|| 221 ||

आज़ादी के गाँव में, वीर हुआ नीलाम।
रक्षा करने देश की, बेच दिया तन-धाम।।

|| 222 ||

उल्टे-सीधे भर गये, जाने नियम न ज्ञान।
धन्य! भारती- भूमि पर, फूल रहा अज्ञान।।

|| 223 ||

शिष्ट नहीं, उच्छिष्ट हैं, अहं भरे मग़रूर।
लगा रहे हैं देश को, ये चूना भरपूर।।

|| 224 ||

बदल गयी है जिंदगी, उलटे हुए उसूल।
देशभक्ति की भावना, कीमत रही वसूल।।

|| 225 ||

सत्य और ईमान की, धरी बहुत सौगंध।
राष्ट्र भावना गुम गयी, फैल गयी दुर्गंध।।

|| 226 ||

आज देश की अस्मिता, है अंधों के हाथ।
गूँगों-बहरों का मिला, सहज रूप में साथ।।

|| 227 ||

लूट रहे हैं देश को, बेच रहे ईमान।
कैसे-कैसे लोग हैं, भारत में श्रीमान।।

|| 228 ||

समय माँगता आज है, देशभक्ति का दान।
देना है, तो दे सखे! जीवन का बलिदान।।

|| 229 ||

अजब भ्रष्ट माहौल है, घुटन भरा परिवेश।
ऐसे ही चलता रहा, कहाँ टिकेगा देश।।

|| 230 ||

कैसे सुधरे देश का, बिगड़ा हुआ मिज़ाज।
अरे! बताओ कुछ सखे! इसका सही इलाज।।

|| 231 ||

संत और भगवान ने, दी जिसको पहचान।
उसी धरा की लुट रही, अस्मत हे भगवान!!

|| 232 ||

आते-जाते ही रहें, संवत्सर चुपचाप।
भरत भूमि पर इसलिए, रहे फूलते पाप।।

|| 233 ||

बीते संवत्सर बहुत, भारत रहा गुलाम।
हा! भारत की संस्कृति, ख़ूब हई नीलाम।।

|| 234 ||

यहाँ राम का राज था, कहाँ गया वह देश?
अब केवल विस्फोट ही, बदलेगा परिवेश।।

पाकिस्तान के प्रति

|| 235 ||

बहुत सहन हमने किये, तेरे पाप कुपाप।
अरे पाक! तू जाने ले, मिट जायेगा आप।।

|| 236 ||

सत्ता के मद चूर है, अरे पाक! नृशंस।
महा शक्तियाँ साथ थीं, फिर भी बचा न कंस।।

|| 237 ||

बिना वज़ह करता रहा, तू पैदा दुर्घात।
हमने तो समझा अनुज, मार रहा है लात।।

|| 238 ||

आखिर कितनी अनुज की, कहो! सहें हम लात।
रिश्तों का अनुबंध भी, सहे कहाँ तक घात।।

|| 239 ||

चीख़ उठी शैतानियत, टूट गये अभिलेख।
हाय! क्रूरता ने किये, धरती- अंबर एक।।

|| 240 ||

पराकाष्ठा हो गयी, देख मौत बदहाल।
पाक! क्रूर कितना हुआ, बना रहा कंकाल।।

|| 241 ||

पाक-बदन में रक्त है, रज भी वही सुगंध।
भारत की सौग़ात को, नहीं समझता अंध।।

|| 242 ||

क्रूर न सृजन जानता, रचता रहे विनाश।
अरे पाक! होकर रहे, तेरा सत्यानाश।।

|| 243 ||

सत्य, अहिंसा, प्रेम का, अब तो रहा न दौर।
युद्ध! युद्ध! बस युद्ध ही, घर-बाहर सब ठौर।।

|| 244 ||

नाग उठाये फन खड़ा, गरल रहा फुंकार।
जब तक फन कुचलो नहीं, मिटे नहीं भय-भार।।

|| 245

जीवन दुष्कर हो गया, खाना हुआ हराम।
बिना युद्ध अब पाक से, मिले न शांति मुक़ाम।।

|| 246 ||

अंग कैंसर ग्रस्त हो, बढ़ता जाए बुखार।
शल्य चिकित्सा के बिना, निष्फल सब उपचार।।

|| 247 ||

सीमा की अवहेलना, करता पाक-कुरंग।
भारत के बलराम के, कंधे सजा निषंग।।

|| 248 ||

नियम्-नीति-सिद्धांत की, बात न समझे कोय।
फिर तो, केवल न्याय की, जीत युद्ध से होय।।

|| 249 ||

बहुत हो चुका, खा गया, माँ के अगणित लाल।
पाक-भेड़िया की करो, गर्दन चाक - हलाल।।

|| 250 ||

हम तुमसे लेकर मिले, प्रेम-शांति-उपहार।
तुमने समझा देश यह, गया अंतत: हार।।

|| 251 ||

अपराधी पाले बहुत, ख़ूब बढ़ाया बैर।
सर्प पालकर कुँज में, खोज रहे अब ख़ैर।।

|| 252 ||

कैसे तुमसे हो सुलह, रहा नहीं विश्वास।
टूट गया है प्यार का, युग-युग का अहसास।।

|| 253 ||

जब-जब भारत में बढ़ी, विश्वासों की बेल!
तब-तब तेरी क्रूरता, खत्म कर गयी खेल।।

|| 254 ||

तुमने कभी पड़ौस-सा, किया नहीं व्यवहार।
वही बधिक सी ज़िन्दगी, मार-काट-व्यभिचार।।

मानवता

|| 255 ||

कहाँ गयी संवेदना, सहनशीलता नाय।
तड़प रही है जिन्दगी, मनुज देखता जाय।।

|| 256 ||

कार्य नहीं, अब जाति से, होती है पहचान!
मानवता औ' मनुज की, भिन्न-भिन्न मुस्कान।।

|| 257 ||

शून्य मनुजता हो गयी, कहाँ कुशल व्यवहार।
रहा न अब तो लोक में, जीवनगत आचार।।

|| 258 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम का, बीत गया अब दौर।
बदल गये हैं विश्व के, ठीक-ठिकाने-तौर।।

|| 259 ||

लुप्त सभ्यता हो रही, हुआ आदमी मौन।
आतंकित माहौल है, इसे बचाये कौन।।

|| 260 ||

टूट गया है आदमी, देख-देख व्यवहार।
हाय! सोच ने कर दिये, उलट-पुलट आचार।।

|| 261 ||

यह कैसी पछुआ चली, सूखा दरिया-सोच।
मनुज-किनारा हो गया, देखो! कितना पोच।।

|| 262 ||

साहुकार के सूद-सा, बढ़ता जाता लोभ।
देख पतन इंसान का, होता मन को क्षोभ।।

|| 263 ||

दर्द देख इंसान का, रहते कान कराह।
उठता हृदय-सिंधु में, विप्लव-ज्वार अथाह।।

|| 264 ||

मानवता नभ में उड़े, जैसे कटी पतंग।
चले लूटने-दौड़ते, लुच्चे और लफंग।।

|| 265 ||

चलीं हवा में गोलियाँ, धरती उठी कराह।
माँग रही इंसानियत, कातर नैन पनाह।।

|| 266 ||

पता नहीं कैसे हुआ, उलट-पुलट परिवेश।
यहाँ-वहाँ चारों तरफ, दीख रहा है द्वेष।।

|| 267 ||

पहले मेरे गाँव में, जलती होली एक।
आया कैसा दौर है, घर-घर जलें अनेक।।

|| 268 ||

रोती है इंसानियत, करती घोर विलाप।
मानव से शैतान का, अद्भुत देख मिलाप।।

|| 269 ||

मानवता की हंसिनी, रही नदी में डूब।
खड़े किनारे आदमी, देख रहे हैं ख़ूब।।

|| 270 ||

जिन पर होता गर्व था, उच्च शिखर आसीन।
रहे नहीं वे आदमी, इतने गिरे कमीन।।

|| 271 ||

देख-देख अन्याय को, सत्य हुआ हैरान।
मानवता के ताज को, पहन रहा शैतान।।

|| 272 ||

क्रूर काल ने फिर किया, पल में घोर विनाश।
चिथड़े-चिथड़े हो गयी, मानवता की लाश।।

|| 273 ||

पता नहीं किस दौर से, गुज़र रहा संसार।
रोज़ टूटते जा रहे, मानवता के द्वार।।

|| 274 ||

आज बुराई जो करे, होता ऊँचा नाम।
सत्य बुराई का रहा, खोटा ही परिणाम।।

|| 275 ||

जला स्वार्थ की आग में, मानवता का कुँज।
दूर-दूर तक दीखता, हाय! ज्वाल का पुँज।।

|| 276 ||

नव संवत्सर दे रहा, हमको यह संदेश।
भेदभाव को भूलकर, मेंटें सबके क्लेश।।

|| 277 ||

मानवता औ' धर्म में, यह कैसा व्यवहार।
आग लगाते, लूटते, करें क़त्ल-व्यभिचार।।

|| 278 ||

मानवता की हंसिनी, वाह! धर्म का राज।
जंगल का क़ानून है, पहरा देता बाज़।।

|| 279 ||

धर्म और ईमान की, टूट गई है लीक।
अब देती इंसानियत, कुछ उलटी ही सीख।।

|| 280 ||

जाति-धर्म के नाम पर, हिंसा-अत्याचार।
अब केवल उत्सर्ग ही, रोके यह व्यभिचार।।

|| 281 ||

कंचन से महँगा हुआ, अब माटी का बोल।
यह कैसी इंसानियत, कोई रहा न बोल।।

|| 282 ||

कल तक जो आदर्श थे, आज हुए सब हीन।
वंदे! धन के लोभ में, पल में बने कमीन।।

|| 283 ||

जाति-धर्म की आग में, सुलग रहा संसार।
रोज़ सैकड़ों मर रहे, झुलस गया है प्यार।।

|| 284 ||

ढ़ेर लगे बारूद पर, बैठा है संसार।
बचा सकेगा अब इसे, केवल जन का प्यार।।

|| 285 ||

मानवता की हंसिनी, बहुत हुई बदनाम।
आग लगे इस लोक में, जलें धर्म के धाम।।

|| 286 ||

जब तक मिटे न लोक से, धर्मों का पाखंड़।
तब तक मानवता सदा, रहे भोगती दंड।।

|| 287 ||

दुनियाभर से धर्म का, जब हो बेड़ा ग़र्क़।
तभी प्यार की चाँदनी, नहीं करेगी फ़र्क़।।

|| 288 ||

एक जाति हो विश्व में, एक धर्म ईमान।
जिसको अच्छा जो लगे, प्यार करे इंसान।।

|| 289 ||

यह हिन्दू, यह मुसलमां, यह है ओछी जात।
प्यार भला क्या जानता, जाति-धर्म की बात।।

|| 290 ||

हिंदू औ' इस्लाम ने, किया देश बर्बाद।
अब तो यारों! छोड़ दो, दंगा और फ़साद।।

|| 291 ||

आग लगे हिंदूत्व में, डूब जाय इस्लाम।
पूरा होगा स्वप्न जब, खुश होगा हर धाम।।

|| 292 ||

एक-दूसरे के सभी, सुख-दुःख बाँटें लोग।
लड़ें लड़ाई काल से, अपने-अपने योग।।

|| 293 ||

जब तक हैं इस लोक में, तरह-तरह के धर्म।
तब तक सुख की कामना, व्यर्थ मनुज के कर्म।।

|| 294 ||

आग लगी चारों तरफ, जलता है संसार।
जला रहा है आग में, धर्मों का आचार।।

|| 295 ||

काँप उठा है प्यार भी, देख धर्म का रूप।
फूँक रहा है प्यार को, यही धर्म का भूप।।

|| 296 ||

रहें परस्पर प्यार से, मानवता हो धर्म।
करें लोक-कल्याण के, अपने-अपने कर्म।।

|| 297 ||

अब तो दम घुटने लगा, देख-देख यह हाल।
मानवता का कुँज यह, बहुत हुआ बदहाल।।

|| 298 ||

जला दिया है धर्म ने, मानवता का कुँज।
खड़ा देखता आदमी, हाय! शक्ति के पुँज।।

|| 299 ||

सिसक रही इंसानियत, देख-देख इंसान।
रूप बदल कर घुस गया, घर-घर में शैतान।।

|| 300 ||

पटरी से उतरी हुई, मानवता की रेल।
हुए ब्रेक आदर्श के, अनजाने ही फ़ेल।।

|| 301 ||

दो नैना, दो हाथ हैं, दो पद, दो ही कान।
भला, बता किस भाव से, दलित अलग इंसान।।

|| 302 ||

जातिवाद ने कर दिया, जग का बंटाधार।
इसीलिए तो हो रही, मानवता की हार।।

|| 303 ||

यों तो सब ही आदमी, खुद को समझें संत।
पता नहीं होगा कभी, जातिवाद का अंत।।

|| 304 ||

जान गँवाई रात-दिन, जिसने रखा न भेद।
आज आदमी रख रहा, उससे ही मतभेद।।

|| 305 ||

लोग भूख के सामने, छोड़ भगें आचार।
देख भूख संतान की, माता हो लाचार।।

प्रकृति-नटी

|| 306 ||

नाच रही प्रकृति-नटी, झर-झर झरता नीर।
पशु-पक्षी-कृषक-पथिक, मिटे सभी की पीर।।

|| 307 ||

तनिक निकलकर देखिये, खुद बाहर आ मीत!
स्वागत में प्रकृति-वधू, लुटा रही है प्रीत।।

|| 308 ||

मिले अचानक प्रेयसी, ज्यों हो हर्ष अपार।
सावन की बौछार त्यों, करती है मनुहार।।

|| 309 ||

सावन में सूखा पड़ा, कृषक हुआ अधीर।
पास खेंत में देखता, छल-छल बरसे नीर।।

|| 310 ||

'सन-सन' करती बह रही, हवा-घटा घनघोर।
जड़-चेतन हर्षित भये, तन-मन भाव विभोर।।

|| 311 ||

नदिया में जल कम हुआ, खिलने लगे पलाश।
छुप-छुप कर अब प्रेयसी, करती प्रेम तलाश।।

|| 312 ||

जब तक फल था वृक्ष पर, मनमोहक था दृश्य।
टपक पड़ा जब भूमि पर, बदल गया परिदृश्य।।

|| 313 ||

बड़ी अलौकिक है छटा, नाच उठा मन-मोर।
पुलकित सारी सृष्टि है, ऋतुयें भाव विभोर।।

|| 314 ||

तरु पर बैठा मेमना, नीचे बहती धार।
जड़ में बैठा भेड़िया, ऊपर रहा निहार।।

|| 315 ||

नित प्रकृति देती बहुत, तन-मन को आनंद।
नग्न बदन अब यौवना, रहना करे पसंद।।

|| 316 ||

भीनी-भीनी हो रही, बरखा की बौछार।
भोर सुहानी हो गयी, सावन की मनुहार।।

|| 317 ||

जलते दिये गुलाब से, फैला रहे सुगंध।
मानो तम को बेंधकर, लगा रहे पैबंद।।

|| 318 ||

गाँव-खेत-खलियान-सर, सूख गये सब हार।
सबसे गर्मी ले रही, जीवन का अधिभार।।

|| 319 ||

शोषक-शोषित की व्यथा, सुना रहा यह कौन?
जलता देख अलाव को, शीत-सुंदरी मौन।।

|| 320 ||

फैली गर्द-गुबार है, देख हुये बैचेन।
क्या होगा तूफ़ान में, दिवस न होगी रैन।।

|| 321 ||

इधर-उधर तितली उड़ें, खोज रहीं मधुमास।
भौंरों की रुनझुन मधुर, बाँट रही मृदुहास।।

|| 322 ||

उमड़-घुमड़ कर आ रहे, बादल बनकर रोग।
बरखा के संकेत को, समझ न पायें लोग।।

|| 323 ||

अमराई की डार पर, कोयल करती कूक।
देख रहा मन-बावरा, चातक भरता हूक।।

|| 324 ||

झर-झर-झर-झर झर रही, अंबर से बौछार।
मानो निर्धन् देश का, मना रहा त्यौहार।।

|| 325 ||

तपन-उमस का हो गया, सहज रूप में अंत।
कातर नैना कह रहे, हे मेरे भगवंत!!

|| 326 ||

लोक-ज्ञान औ' वाणियाँ, फेल हुआ विज्ञान।
कौन सृष्टि के खेल का, पूर्व दे सका ज्ञान।।

|| 327 ||

बिन पानी के थी मची, त्राहि-त्राहि सब ओर।
पानी की बौछार का, हुआ जगत में शोर।।

|| 328 ||

धरती से आकाश तक, तम का ओर न छोर।
चीख़ सुनायी दे रही, पता नहीं किस ओर।।

|| 329 ||

पता नहीं क्या बात है, चली न अब तक ब्यार।
उमस रहा सारा चमन, सिसक रहा है प्यार।।

|| 330 ||

गलियारे में खेलता, माँ का प्यारा लाल।
पल में खुशियाँ छीनकर, बिहँस रहा है काल।।

श्रीगंगा-महिमा

|| 331 ||

बैठे तेरे तीर पर, बजें मंजीरा-ढोल।
मन में दस्तक दे रहे, माता! मधुमय बोल।।

|| 332 ||

हे माँ! मन की जानती, तू बेटे की बात।
कब से लगी मुराद है, पूरी कर दे मात!!

|| 333 ||

आये तेरे द्वार पर, लेने को आशीष।
माँ! करुणा का हाथ तुम, रखो हमारे शीष।।

|| 334 ||

तू जाने, मैं जानता, प्रकट न होता लक्ष्य।
माँ! सबको देती रही, होकर सदा अलक्ष्य।।

|| 335 ||

कल-कल, छल-छल बह रहा, माता! तेरा नीर।
हा! कलियुग की वासना, जकड़े हुये शरीर।।

|| 336 ||

घंटी के स्वर बज रहे, पहुँच गयी फरियाद।
तेरी लहरें कह रहीं, होगी फलित मुराद।।

|| 337 ||

पापों का करती रही, गंगा-माँ उद्धार!
हाय! पापियों ने दिया, रोक उसे मँझधार।।

|| 338 ||

टूट गया विश्वास तो, जुड़े न फिर विश्वास।
पतझर में पैदा करे, माँ! तू ही मधुमास।।

|| 339 ||

गंगा के तट बैठकर, देख रहे जलधार।
करती चंदा की किरन, लहरों से मनुहार।।

|| 340 ||

आदिकाल से बह रहा, गंगा तेरा नीर।
युगों-युगों से हर रही, तू धरती की पीर।।

भाषा मेरी हिन्दी

|| 341 ||

आज़ादी हमको मिली, बीते सत्तर वर्ष।
बनी राष्ट्र भाषा नहीं, यह कैसा अपकर्ष??

|| 342 ||

रोज़ निखरती जा रही, भारत की तस्वीर।
पर, भाषाई दृष्टि से, उलझ गयी तक़दीर।।

|| 343 ||

प्रजातंत्र की गोद में, बैठा देश महान।
पर, भाषा के प्रश्न ने, उलटा किया मचान।।

|| 344 ||

भाषाई-वैविध्य तो, बुरी नहीं है बात।
पर, भाषा पहचान की, देश किसे कह तात!!

|| 345 ||

नेता ने पैदा किए, भाषा-वाद-विवाद।
कुछ आलोचक भी जटिल, पैदा करें फ़िसाद।।

|| 346 ||

कहाँ यार! गुम हो गयी, वह हिंदी की तान।
भूले अपने राग को, सुन अंग्रेजी गान।।

|| 347 ||

पृथक-पृथक देश के, पृथक हैं उपमान।
भारत मेरे देश की, हिंदी है पहचान।।

|| 348 ||

यों तो हम आजाद हैं, दुनिया कहे स्वतंत्र।
लेकिन भाषा दृष्टि से, अब भी हैं परतंत्र।।

|| 349 ||

नीति-नियंता देश के, स्वाभिमान से हीन।
अंग्रेजी के दास हैं, कुर्सी चढ़े कमीन।।

|| 350 ||

बड़े एक से एक हैं, धूर्त-मूर्ख-मक्कार।
नेता दुश्मन देश के, भाषाई गद्दार।।

|| 351 ||

हिन्दी के अपमान पर, आता नहीं जुनून।
इनकी रग-रग में बहे, अंग्रेजी का खून।।

धन चकमक

|| 352 ||

नहीं असंभव विश्व में, कोई ऐसा काम।
जो पूरा होवे नहीं, बिना चुकाये दाम।।

|| 353 ||

अपव्यय तो करते सभी, व्यर्थ पालते मान।
धन-व्यय से कुछ लोग ही, पाते हैं सम्मान।।

|| 354 ||

वैभव ने कर्तव्य की, मिट्‌टी करी पलीत।
इसीलिए तो आदमी, है इतना भयभीत।।

|| 355 ||

सब धन रह जाता यहीं, जोरू और ज़मीन।
ज़रा-ज़रा-सी बात पर, मत लड़ अरे! कमीन।।

|| 356 ||

न्याय नहीं, निष्ठा नहीं, बिकता है ईमान।
धन-दौलत को देखकर, चुप होते श्रीमान।।

|| 357 ||

सत्य-प्रेम-श्रम-साधना, कर्म गये सब हार।
धन की चकमक कर गयी, सबका उपसंहार।।

|| 358 ||

जीवनभर रहती नहीं, वैभव की बरसात।
थोड़ा-सा धन क्या मिला, भूल गया औक़ात।।

|| 359 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त तुम, उनको रहे सिखाय।
जिनको धन के लोभ ने, पागल दिया बनाय।।

|| 360 ||

ज्वार चढ़े तो टूटते, सागर के तटबंध।
धनवानों के देश में, कहाँ टिकें प्रतिबंध।।

|| 361 ||

स्वर्ग-नर्क कुछ भी नहीं, केवल सृष्टि अपार!
जब तक सुखी न आत्मा, तब तक धन-व्यापार।।

|| 362 ||

पल-पल दम घुटता रहे, देख-देख निज हाल।
सदा गरीबी का रहा, जग में नीचा भाल।।

|| 363 ||

निर्धन की तक़दीर का, कोई नहीं उपाय।
उसका आटा ही सदा, गीला क्यों रह जाय।।

|| 364 ||

धन से क्रय करलो भले, वैभव का संसार।
धन से क्रय होता नहीं, जगती का आधार।।

हे मन!

|| 365 ||

दो पैसा क्या पा गया, करता राग अलाप।
मुठ्ठी ख़ाली हो गयी, मन! क्यों करे विलाप??

|| 366 ||

मैले कपड़े तन पड़े, पड़े न कोई फ़र्क।
मन पर छायी गंदगी, करती बेड़ा गर्क़।।

|| 367 ||

है तन-मन की शुद्धता, भावों का उपहार।
सकल विश्व को सौंपता, राखी का त्यौहार।।

|| 368 ||

किधर-किधर को मोड़ती, जीवन-रूपी लीक।
हे मन! हमसे पूछते, किसने दी यह सीख।।

|| 369 ||

अरे! अकारण ही किया, हे मन! जग से बैर।
पलभर में होती विदा, कौन जानता ख़ैर।।

|| 370 ||

'सन-सन' करती जा रही, भौतिकता की कार।
मन छूटा उस पार है, तन जाता उस पार।।

|| 371 ||

शिष्ट जनों का आगमन, मन में भरता हर्ष।
प्राची में सूरज उगा, मनु करता उत्कर्ष।।

|| 372 ||

सबके आँसू पौंछते, मिली हमें जो राह!
सत्य आँसुओं ने भरी, सदा मनुज की चाह।।

|| 373 ||

हुआ पराई वस्तु पर, कब-किसका अधिकार?
हे मन! कितना बावरा, सह लेता अधिभार।।

|| 374 ||

देखो! मन है बावरा, फिर-फिर लेता खींच।
बिन कारण ही आ गया, मन! सांसों के बीच।

आदमी

|| 375 ||

जन्मजात यह आदमी, है सद्‌गुण की खान।
जहाँ मिले अधिकार तो, रहे न फिर इंसान।।

|| 376 ||

गिरा इस क़दर आदमी, फैल रही दुर्गंध।
बात-बात में खा रहा, बच्चों की सौगंध।।

|| 377 ||

मौन खड़ा है आदमी, मचा हुआ है शोर।
लोग कहें क्यों हो रहा, क्रंदन चारों ओर।।

|| 378 ||

ऊँच-नीच के भेद का, बंद करो अब खेल।
हवा-सरीखे तुम बहो, करते सबसे मेल।।

|| 379 ||

खून चूंस मज़दूर का, भरता अपना पेट।
रोज़ बेच भगवान को, बना हुआ है सेठ।।

|| 380 ||

करता भूखा आदमी, सहज क्षणों में पाप।
निखिल सृष्टि भी भूख का, सहे नहीं परिताप।।

|| 381 ||

हत्या-चोरी अपरहण, औ' परिवार- विनाश।
करे भूख में आदमी, खुद का सत्यानाश।।

|| 382 ||

जो कुछ तेरे पास था, दिया उसी का दान।
सांप भला कैसे करे, अमृत-रस प्रदान।।

|| 383 ||

मूल भाव तो बीज है, मनुज इसी का रूप।
उगना-पलना-महकना, और झेलना धूप।।

|| 384 ||

गाली दे या प्यार दे, अथवा दे तू कष्ट!
भौतिकता के सिन्धु में, डूब गया तू भ्रष्ट।।

|| 385 ||

घर में लगती आग तो, जलता कुछ सामान।
लगी अगिन यदि उदर में, भस्म करे सम्मान।।

|| 386 ||

लोक-लाज, आदर्श सब, कर देता है राख।
भूखा-नंगा आदमी, नहीं देखता साख।।

|| 387 ||

अपराधी की जिंदगी, मिटे नहीं तत्काल।
लेकिन, यह भी सत्य है, रहे नहीं दस साल।।

श्रम

|| 388 ||

जादूगर बनते नहीं, बसने से बंगाल।
सागर के तट पर रहें, ज्यों प्यासे कंगाल।।

|| 389 ||

श्रम की पूजा के बिना, बने न विश्व महान।
बैठा धन के ढेर पर, अमेरिका-जापान।।

|| 390 ||

समय नहीं अनुकूल तो, जाता श्रम-धन व्यर्थ।
जब श्रम-धन में योग हो, होता काल समर्थ।।

|| 391 ||

दीन-दुःखी बेहाल है, श्रमिक और किसान।
रोटी दो भर जून की, दे पाया विज्ञान।।

|| 392 ||

आशाएँ मन में लिए, खड़ा हुआ मज़दूर।
पलक झपकते हो गए, सपने चकनाचूर।।

|| 393 ||

रोज़ी-रोटी के लिए, श्रम करता मज़दूर।
कहाँ चैन इस दीन को, पल-पल है मजबूर।।

|| 394 ||

जीवनभर जिसने किया, श्रम-श्रम का सम्मान।
आज वही बदहाल है, झेल रहा अपमान।।

|| 395 ||

बिन श्रम-साधन के किए, मुफ़्त मिले आशीष।
उन्हें कटाना ही पड़े, राहु-केतु सम शीष।।

|| 396 ||

दुनिया के मज़दूर सब, हो जायें यदि एक।
अमीर, ग़रीब के समक्ष, घुटने देगा टेक।।

|| 397 ||

क्या होगा उस दिन भला, फ़सल न उपजे खेत।
रह जायेगा तब धरा, सभी तरह का हेत।।

|| 398 ||

तन-मन व्याकुल है बड़ा, देख जगत की चाल।
दीन-दुःखी मज़दूर का, लोग न पूछें हाल।।

आंतक

|| 399 ||

आतंकित माहौल के, कितने गहरे दंश।
चौंक गया शैतान भी, देख मृत्यु के ध्वंस।।

|| 400 ||

किया क्रूरता ने अरे! कितना क्रूर मज़ाक़?
कैसा क्रंदन मृत्यु का, देखें लोग अवाक।।

|| 401 ||

चूहे को अतिशय दिया, अरे सिंह! सम्मान।
अब चढ़कर वह नाक पर, करता है अपमान।।

|| 402 ||

जीवन-वीणा बज रही, भरी अनूठी तान।
फिर भी, नीरस है जगत, आतंकित मुस्कान।।

|| 403 ||

मादक द्रव्यों का चलन, आज हो गया आम।
लोकलाज बिलकुल नहीं, कोई भी हो धाम।।

|| 404 ||

प्रेम नहीं, आतंक की, भाषा है आतंक।
गद्दारों को मार दो! राजा हो या रंक।।

वसुधैव कुटुंबकम्

|| 405 ||

शांति और सद्भाव का, एक यही है मंत्र।
सारा जग-परिवार है, एक ईश का तंत्र।।

|| 406 ||

अपनी चाहो शांति तो, तजो द्वेष का भाव।
बिन कारण क्यों आ रहा, तुमको भारी ताव।।

|| 407 ||

'यह तो मेरी भूमि है', 'वह अरि का आवास'।
'निज-पर' के ही भाव ने, किया जगत का नाश।।

|| 408 ||

दनुज-मनुज सब एक हैं, केवल दृष्टि विचार।
छोड़ अहं का आसरा, बदले दनुज-विकार।।

|| 409 ||

जिसको अरि तू मानता वह तो तेरा गर्व।
हाथ बढ़ा तू प्यार का, मिटे बैरता सर्व।।

|| 410 ||

भला कभी होगा नहीं, करलो कितने युद्ध।
जीत-जीतकर हारते, दोनों पक्ष विरूद्ध।।

|| 411 ||

'तेरा-मेरा' कुछ नहीं, सब है मन का फेर।
सारी बसुधा एक है, अरे! ध्यान से हेर।।

|| 412 ||

माली ही जब बाग़ को, काट रहा दिन-रैन।
राही को कैसे भला, मिले धूप में चैन।।

राजनीति

|| 413 ||

राजनीति कुंठित हुई, स्वार्थ भरा भरपूर।
देशभक्ति की भावना, हा! कितनी मजबूर।।

|| 414 ||

राजनीति के वन बसें, नेता-हिंसक जीव।
बैठे अपने ठेर पर, बोलें बोल अजीब।।

|| 415 ||

राजनीति के विपिन में, यार! खोजते शांति।
अजगर-चीता-भेड़िया, पल में करते क्रांति।।

|| 416 ||

झूंठ-दंभ-पाखंड में, डूब गया जनतंत्र।
झाड़-फूँक नेता करें, वशीकरण पढ़ मंत्र।।

|| 417 ||

बंदर-भालू को पकड़, किया मदारी सीज।
नेता-अजगर आज के, मना रहे हैं तीज।।

|| 418 ||

विषधर-सम नेता हुए, पड़े कुंडली मार।
दूध पिलाता जो इन्हें, डसें उसी को यार।।

|| 419 ||

ईश्वर को कर साक्षी, खायी थी सौगंध।
कहाँ गयी वह भावना, पास सजी दुर्गंध।।

|| 420 ||

भ्रष्ट राजनेता हुए, यह जग ज़ाहिर बात।
पर, सरकारी तंत्र ने, बेच दिया क्यों गात।।

|| 421 ||

रोम-रोम में भरा है, नेताओं के दर्प।
दौलत ने पैदा किए, राजनीति में सर्प।।

|| 422 ||

राजनीति ने धर दिया, गुंडों के सिर ताज।
गोरी-छोरी-दीन की, अब न बचेगी लाज।।

|| 423 ||

जागी महिला शक्ति तो, संसद उठे सवाल।
नेता जी चिंतित बड़े, करने लगे बवाल।।

|| 424 ||

राजनीति के भेड़ियों, कहते हो 'श्रीराम'।
मानवता को कर दिया, तुमने पंगु गुलाम।।

|| 425 ||

पकड़ दबोची, मार दी, मानवता की गाय।
राजनीति के अजगरों! तुमको शर्म न आय।।

|| 426 ||

रूप बदलकर भेड़िये, बन बैठे इंसान।
सीधे-सच्चे लोग सब, देख-देख हैरान।।

लोक सत्य

|| 427 ||

तोड़ किनारे बह रही, सहमी-सी जलधार।
घर की सीमा तोड़कर, किसे मिला है प्यार।।

|| 428 ||

अपने वैभव-इत्र की, रखना शीशी बंद।
खुले हुए माहौल में, टिकती नहीं सुगंध।।

|| 429 ||

घर का चूल्हा तोड़कर, अलग पकायी खीर।
अपने किए कुकर्म की, भोग रहे अब पीर।।

|| 430 ||

वरजाया तुमको बहुत, मत खेलो यह खेल।
अजगर-चीता में सखे! कहीं हुआ है मेल।।

|| 431 ||

पलक झपकते धूल में, मिल जाते उद्दंड।
अपनी ताक़त का कभी, करना नहीं घमंड।।

|| 432 ||

गाँव-गाँव रावण हुए, गली-गली में कंस।
नाम बदलकर भेड़िये, बन बैठे हैं हंस।।

|| 433 ||

गरल उगलते सांप की, घातक है फुंकार।
इससे पहले वह डंसे, कर दो! फन पर वार।।

|| 434 ||

केवल सीमित है धरा, बढ़े अपरिमित लोग।
घटता जाता प्यार है, बढ़ता जाता रोग।।

|| 435 ||

वहाँ सुलह होगी नहीं, जहाँ द्वेष की बाढ़।
देख क्रोध के अस्त्र को, लगें कांपने हाड़।।

|| 436 ||

जिव्हा-कैंची एक-सी, कर्म करें ज्यों सौत।
एक भाव को बेंधती, दूजी देती मौत।।

|| 437 ||

मनुज भूख से मर रहा, खाता श्वान पुलाव।
मरा भिखारी शीत से, बिल्ली तपे अलाव।।

|| 438 ||

प्राण हुए अवरूद्ध हैं, व्यर्थ गये उपचार।
हाय! काल के सामने, गयी जिंदगी हार।।

|| 439 ||

जबसे भ्रष्टाचार का, उच्च हुआ है शीश।
तब से लोगों की समझ, बदल गयी जगदीश।।

|| 440 ||

पकड़ कान को जा रहा, अजा झुकाये माथ।
कटने की तैयारियाँ, तबल बधिक के हाथ।।

|| 441 ||

सुरसा-मुख-सी बढ़ रही, यहाँ बुराई रोज़।
लपक रही है लीलने, रक्त-अस्थियाँ ओज।।

|| 442 ||

कर्म-मछरिया फाँसकर, समय-मनोहर-जाल।
मनुज-मछेरा खींचता, ज़गत-सिंधु में डाल।।

|| 443 ||

अंधकार को चीरकर, बढ़ता जाय प्रकाश।
चले निराशा भेदकर, त्यों जीवन में आश।।

|| 444 ||

लोहा छोड़े निज बरन, रंग-रोगन के साथ।
त्यों भूले सब आदमी, छू कुलटा का हाथ।।

|| 445 ||

जितना ही झुकते अधिक, चीता-चोर-कमान।
उतना गहरा लक्ष्य पर, करते हैं संधान।।

|| 446 ||

मिट जाती सुख-शांति है, पीकर मादक द्रव्य।
मिथ्या सपने पालकर, किसे मिला गंतव्य।।

|| 447 ||

दीवाली की रात ने, अजब धरा है रूप।
भगा दिलद्दर को रही, बजा-बजा माँ सूप।।

|| 448 ||

गलियारे में खेदकर, करी किवाड़ें बन्द।
तभी दिलद्दर हो गया, तू इतना स्वच्छन्द।।

|| 449 ||

गाँव-गली-खलिहान में, कोई बचा न ठेर।
जहाँ दिलद्दर ने कहीं, बाड़ा रखा न घेर।।

|| 450 ||

कहते हैं युग-ग्रंथ में, बसते हैं रहमान।
रोज़-रोज़ जारी करें, नये-नये फ़रमान।।

|| 451 ||

खड़े किए विज्ञान ने, बड़े-बड़े ही बांध।
लगी काल की अग्नि तो, पल में देती रांध।।

|| 452 ||

भवन धराशायी हुए, उड़े किले-प्राचीर।
खड़ी झोंपड़ी देखती, कुदरत की शमशीर।।

|| 453 ||

झुकते हैं गुणवान ही, औ' फलवाले वृक्ष।
दुष्ट कभी झुकते नहीं, झुकें न सूखे वृक्ष।।

|| 454 ||

खड़े वृक्ष को काटना, बड़ा सरल है काम।
जो अंकुर को सींचता, पाता सुख अभिराम।।

|| 455 ||

दलित-दलित कहकर करें, मानव का अपमान।
किसी दलित के साथ में, किया भोज जलपान।।

महानगर और गाँव

|| 456 ||

महानगर आये हुए, बीत रहे हैं साल।
ऐसी भी क्या बेरुख़ी, नहीं पूछते हाल।।

|| 457 ||

याद करो तुम गाँव को, हम मिलते थे रोज़।
महानगर में पहुँचकर, बदल गए क्यों भोज??

|| 458 ||

यहाँ-वहाँ कचरा पड़ा, बनी गंदगी ठेर।
महानगर की जिंदगी, है कष्टों का ढेर।।

|| 459 ||

महानगर में पहुँचकर, बदल गए प्रतिमान।
रहा न मेरे मीत में, बचपन का अरमान।।

|| 460 ||

बच्चे मेरे गाँव के, नक्षत्रों-सी ज्योत।
वर्षा में अठखेलियाँ, ज्यों करते खद्योत।।

|| 461 ||

घास-फूंस की झोंपड़ी, मन में भरे हुलास।
बच्चों को किलकारियाँ, करतीं नया विकास।।

|| 462 ||

धूल भरे आवास की, ऊँची थी वह सोच।
महानगर की जिंदगी, बना रही है पोच।।

|| 463 ||

गलियारों में खेलना, सहभोजन-उपवास।
महानगर में लोग सब, कहते हैं बकवास।।

|| 464 ||

महानगर में पहुँचकर, भूल गया वह प्यार।
भव्य भवन को देखकर, गयी झोंपड़ी हार।।

|| 465 ||

बचपन बीता गाँव में, स्वर्णिम सोलह साल।
महानगर में दोस्ती, भूल गये तत्काल।।

|| 466 ||

'दुकी-मिचौनी' रात-दिन, चौपालों का साथ।
पिलखन भागी छोड़कर, महानगर का हाथ।।

|| 467 ||

महानगर में जब मिला, बूढ़ी माँ का पत्र।
बिन बांचे ही रख दिया, बीत गया ज्यों सत्र।।

|| 468 ||

राह पुत्र की जोहती, हुआ मोतियाबिंद।
महानगर में गुम गये, यादों के अरविंद।।

|| 469 ||

कहाँ भावना गुम गयी, कहाँ लुटा वह चैन?
बचपन के आदर्श को, भूल गये क्यों नैन??

|| 470 ||

नहीं भावना गुम गयी, नहीं भूलते नैन।
महानगर की ज़िंदगी, खुद इतनी बेचैन।।

|| 471 ||

महानगर के रास्ते, कैसे मिलें सपाट?
कूड़ा-कर्कट गंदगी, के जब लगे कपाट।।

|| 472 ||

गाँव-गली-खलिहान से, महानगर तक यार!
इस बिगड़े माहौल में, खोज रहा तू प्यार।।

|| 473 ||

घुसे भेड़िये गाँव में, महानगर में स्यार।
जंगल का क़ानून है, अरे! संभल जा यार!!

|| 474 ||

धीरे-धीरे जा रही, छोड़ मनुजता साथ।
खड़ी संस्कृति रो रही, होती देख अनाथ।।

|| 475 ||

महानगर का आचरण, क्या जाने सद्‌भाव।
इसीलिए गुम हो गया, समरसता का भाव।।

|| 476 ||

घटना घटती रोज़ है, जीवन मिटते रोज़!
महानगर में चल रहे, शान-बान से भोज।।

|| 477 ||

महानगर में हो गये, दिल के फाटक बंद।
तड़प रही है आत्मा, होने को स्वच्छंद।।

|| 478 ||

पर-पीड़ा, दुख-दर्द को, गाँव समझता यार!
महानगर से दूर है, मानवता का तार।।

|| 479 ||

भव्य भवन ने तो अरे! बेच दिया ईमान।
फुटपाथों पर देख लो, सोता है इंसान।।

|| 480 ||

घर हो अथवा हो डगर, पूजाथल-शमसान।
केवल धन की दौड़ में, महानगर-इंसान।

|| 481 ||

मृग-तृष्णा-सम बन गए, यहाँ भाव-सम्बन्ध।
महानगर-मृग दौड़ता भटक रहा स्वच्छंद।।

|| 482 ||

पैसा- पैसा सब तरफ, पैसा ज्यों हो बाप।
महानगर में हो गया, अनजाने अभिशाप।।

|| 483 ||

हमको जिन पर नाज़ था, भाव-भरे अनुबुंध।
महानगर में बिक गये, पैसे में सम्बन्ध।।

|| 484 ||

अब अपने मन की व्यथा, किसे सुनायें यार?
तड़प रहे हैं मीन-से, ममता और दुलार।।

|| 485 ||

भव्य भवन में देख लो! चलते रहते भोज।
देख-देख इंसानियत, मरती कितनी रोज़।।

|| 486 ||

वाणी औ' व्यवहार में, बढ़ती जाती खोट।
महानगर का आदमी, शीष पाप की मोट।।

|| 487 ||

मिथ्या वैभव-सिंधु में, डूब गये अनुबंध।
राम सहारे चल रहे, महानगर-सम्बन्ध।।

|| 488 ||

महानगर के बीच में, गया आदमी खोय।
घर-बाहर-परिवार में, अपना बचा न कोय।।

|| 489 ||

महानगर में लग रही, 'धूं-धूं' करती आग।
पता नहीं क्यों आदमी, रहा गाँव से भाग।।

|| 490 ||

महानगर में मच रही, 'त्राहि-त्राहि' सब ओर।
चला गाँव को छोड़कर, मनुज नगर की ओर।।

|| 491 ||

अरे! गाँव के आदमी! यह भूतों का सैर।
महानगर में दौड़ते, सिर पर धरकर पैर।।

|| 492 ||

महानगर में हो गयीं, दिल की गलियाँ तंग।
इसीलिए छिड़ने लगी, बात-बात में जंग।।

|| 493 ||

नाम-पता रख जेब में, महानगर में यार!
पता नहीं किस ठौर पर, बिछुड़ जाय परिवार।।

|| 494 ||

सब दरवाजें बंद हैं, अंदर चलती बात।
बता रहीं स्वर लहरियाँ, महानगर की घात।।

|| 495 ||

जीवन में संयम नहीं, भीतर घातक रोग।
बाहर से चिकने लगें, महानगर के लोग।।

|| 496 ||

बीवी यहाँ अमीर की, मेमसा'ब कहलाय।
निर्धन की जोरू यहाँ, नगरवधू बन जाय।।

|| 497 ||

झूंठी को सच्ची करें, औ' सच्ची को झूठ।
धनवानों की जिंदगी, मजे रही है लूट।।

|| 498 ||

महानगर में झूठ को, करते श्वेत गवाह।
लेकिन, निर्धन को यहाँ, देता कौन पनाह।।

|| 499 ||

निर्धन को मिलता नहीं, महानगर में हेत।
निर्धन की जड़ खोजते, धनिकों के संकेत।।

|| 500 ||

धन का आगम क्या हुआ, बन बैठे भगवान।
महानगर के आदमी, घर में भी अनजान।।

|| 501 ||

मर जाता है आदमी, जिस दिन छोड़े गाँव।
महानगर में गंदगी, उसको लगती छाँव।।

|| 502 ||

गाँव-गाँव मोदक बने, मीठे-मीठे बोल।
महानगर आकर हुए, ये मोदक अनमोल।।

|| 503 ||

रहो बुलाते, चीखते, जोर- जोर से द्वार।
गूँगे-बहरे हो गये, महानगर में यार!!

मनमौजी रिश्ते हुए

|| 504 ||

कालचक्र तू भी भला, पग-पग करे सचेत!
सारी खुशियाँ सामने, फिर भी मनुज अचेत।।

|| 505 ||

परिवारों के लोह-दर, चढ़ी स्वार्थ की जंक।
टूट-टूटकर गिर रहे, अर्थहीन ज्यों रंक।।

|| 506 ||

अर्थहीन आकाश में, ऊँचे उड़ते भ्रात।
हाय! न नीचे देखते, कहाँ रह गये तात!!

|| 507 ||

ख़ूब उड़ो आकाश में, रहे तनिक यह ध्यान।
साथ पखेरू भी उड़ें, नन्हीं-सी है जान।।

|| 508 ||

हिंसा पर उतरा मनुज, करे दनुज-व्यवहार।
केवल धन के लोभ ने, तोड़े सब आचार।।

|| 509 ||

हुआ बावरा आदमी, नैन गये चुंधियाय।
प्यार न उसको दीखता, धन ऐसा अंधियाय।।

|| 510 ||

केवल मिथ्या मान को, इतना किया ग़रूर।
सपनों का तोड़ा महल, दर्पण चकनाचूर।।

|| 511 ||

परिवारों की एकता, नदिया के तटबंध।
बहें स्वार्थ की बाढ़ में, भावों के अनुबंध।।

|| 512 ||

किया अलंकृत शीश पर, परिणय-बंधन-मौर।
ममता-डोरी टूट कर, सरक गयी उस ठौर।।

|| 513 ||

मात-पिता ग़मगीन हैं, करें साधना पूत।
शुभ-फल ऐसे पुत्र को, क्या देंगे अवधूत?।

|| 514 ||

पुत्र स्वर्गवासी हुआ, मना रहे सब शोक।
पत्नी, पति के प्रेम को, पाल रही निज कोख।।

|| 515 ||

मात-पिता-सम विश्व में, कौन पूज्य इंसान?
पूजा इनकी कीजिए, मिल जाये भगवान।।

|| 516 ||

खड़ी बुराई सामने, देख रहे सम्बन्ध!
भाव उमड़ता है नहीं, हाय! रक्त अनुबन्ध।।

|| 517 ||

बिगड़ गयी आबो-हवा, घुटती जाती सांस।
जीवन दूभर हो गया, बिंधी गले में फांस।।

|| 518 ||

दिल के बँटवारे हुए, टूट गए परिवार।
हाय! संपदा मनुज की, कितने हैं संसार।।

|| 519 ||

मनमौजी रिश्ते हुए, नहीं दीखती ख़ैर।
मानवता के कुँज में, सुमन बाँटते बैर।।

|| 520 ||

नाजुक रिश्ते खून के, खाते बहुत उबाल।
आया कैसा दौर है, घर-घर बड़े बवाल।।

|| 521 ||

ये कैसे सम्बन्ध हैं, जिनका कहीं न अर्थ।
प्रेम-भावना के बिना, मानव-जीवन व्यर्थ।।

|| 522 ||

आँखों में आँसू भरे, पूछ रही कुशलात।
चिंतित है मन देखकर, क्षीण अनुज का गात।।

|| 523 ||

जिन हाथों ने प्यार से, भरी मांग-सिंदूर।
उन हाथों ने प्यार को, झोंक दिया तंदूर।।

|| 524 ||

सहनशीलता में लगी, अहंकार की आग।
धुँआ उड़ रहा क्रोध का, नहीं दीखता राग।।

|| 525 ||

मचा रखी है किसलिए? त्राहि-त्राहि जल बीच।
मगरमच्छ! तुमको पड़े, कभी निगलनी कींच।।

|| 526 ||

रिश्ते ज्वालामुख हुए, खाते बहुत उबाल।
शक के बढ़ते दायरे, उत्तर बने सवाल।।

|| 527 ||

समा आँसुओं में गया, जीवन का सुख-रंग।
जिसे देख इंसान के, नैन हुए बदरंग।।

|| 528 ||

मानव-मन अतृप्त है, इसका कहीं न ठौर।
पलभर में चरणों पड़े, पल में हो सिरमौर।।

|| 529 ||

सुबक-सुबककर हो गया, बालक आख़िर, मौन।
बाल-सुमन की भावना, हाय! समझता कौन।।

|| 530 ||

घात छुपाने के लिए, फिरा बोलता झूंठ।
विलग हुआ परिवार से, लगता है ज्यों ठूंठ।।

|| 531 ||

निष्ठा पर चोटें पड़ीं, छला गया विश्वास।
पलभर में पतझर हुआ, जीवन का मधुमास।।

|| 532 ||

बहुत बड़े परिवार की, कम हो जाती आय।
असंतोष-अतृप्ति के, बदरा रहते छाय।।

|| 533 ||

नहीं ग़रीबी से बड़ा, जग में कष्ट अपार।
पीड़ा देता है सखे! बहुत बड़ा परिवार।।

|| 534 ||

धोखा-धोखा सब तरफ, दूर-दूर तक शोर।
नाच रहा भयभीत-सा, यह उपवन का मोर।।

|| 535 ||

बता कहाँ तक आदमी, तू छानेगा ख़ाक।
बना रहा सम्बन्ध को, धन की ख़ातिर राख।।

|| 536 ||

बैठा ऊँची डाल पर, काट रहा है डाल।
कुछ ही दिन में विटप का, होगा कैसा हाल।।

|| 537 ||

घर के सभी सदस्य हैं, मुखिया का व्यक्तित्व।
ज्यों दीवारों पर टिका, छप्पर का अस्तित्व।।

|| 538 ||

आया कैसा दौर है, लगी प्यार को जंक।
नाजुक रिश्ते हो गए, अब राजा से रंक।।

|| 539 ||

अब रिश्तों में है नहीं, वह भावुक अंदाज़।
सबकी ढपली बज रही, अपने-अपने साज़।।

|| 540 ||

बिना बात में कर रहे, तू-तू मैं-मैं लोग।
अहंकार ने दे दिए, कैसे-कैसे रोग।।

|| 541 ||

पता नहीं किस बात पर, नदी हुई मजबूर?
गयी किनारा छोड़कर, अनजाने ही दूर।।

|| 542 ||

घर में निर्णय कीजिए, सोच-समझ चुपचाप।
वरना तो, परिवार में, रह जाऐंगे आप।।

|| 543 ||

जिनको करते प्यार वे, देते गाली रोज।
कोस-कोसकर कर रहे, प्रकट अपना ओज।।

|| 544 ||

जबसे शब्दों ने दिया, मन का दर्पण तोड़।
तब से ओठों ने दिया, मुस्काना भी छोड़।।

|| 545 ||

बिगड़ गया माहौल सब, रहा न शिष्टाचार।
अब तो गाली बन गयी, मानव का आचार।।

एक आत्मीय की मृत्यु पर

|| 546 ||

चले गये लगता नहीं, ऐसा था व्यक्तित्व।
यादों के पृष्ठों लिखा, वह अनुपम कृतित्व।।

|| 547 ||

सहज भाव से थे मिले, हमसे पहली बार।
इतनी जल्दी क्या हुई? तुमने मानी हार।।

|| 548 ||

अल्पकाल तक ही रहा, जीवन में संसर्ग।
अरे! दिवंगत आत्मा, याद रहे उत्सर्ग।।

|| 549 ||

अभी-अभी परिचय हुआ, अभी जुड़ा था प्यार।
अभी गमकती ज़िंदगी, गयी मौत से हार।।

|| 550 ||

ख़त्म कहानी हो गयी, गया पींजरा टूट।
पंछी बैठा डाल पर, गया ठींगरा छूट।।

|| 551 ||

तोड़ गये अनुराग को, हुए दिवंगत मीत।
अब यादों में ढल गयी, अल्पकाल की प्रीत।।

|| 552 ||

पता नहीं किस दौर से, गुज़र रहा संसार।
साथ छोड़कर जा रहे, भावों के सहकार।।

|| 553 ||

तेरे इस संसार की, अजब निराली चाल।
जग में जिसकी चाहना, उसे उठाता काल।।

|| 554 ||

तूने ही कुसुमित किए, जीवन-बगिया फूल।
तू ही उनको दे गया, तीखे-तीखे शूल।।

|| 555 ||

यह कैसी है दोस्ती? यह कैसा है प्यार?
यार, यार की भावना, नहीं समझता यार।।

|| 556 ||

ऐसे ही चलते रहे, यदि निर्मम आदेश।
तो फिर तेरे नाम का, लेवा बचे न शेष।।

|| 557 ||

सहज भाव मिलते रहे; सुख-दु:ख के प्रस्ताव।
पूर्व नियोजित कालक्रम, करता सम बर्ताव।।

|| 558 ||

नित प्रति जीवन चल रहा, लिए पाप की ओट।
घायल हो संवेदना, जब मन लगती चोट।।

|| 559 ||

नित प्रति दुर्घटना घटें, पता न चलता लेश।
रोती है संवदेना, अपना जाय विशेष।।

|| 560 ||

भली-भाँति हम जानते, बिछुड़ गया है प्यार।
फिर भी मन माना नहीं, उनके पहुँचे द्वार।।

|| 561 ||

वाणी औ' व्यवहार की, जब-जब होगी बात।
तब-तब अनुपम आचरण, याद करेंगे तात!!

|| 562 ||

चले गये सुरलोक को, फैला गये सुगंध।
मन के पृष्ठों पर रचे, यादों के प्रबंध।।

|| 563 ||

पल-पल मन की सादगी, ऐसी रही विनीत।
अंतिम क्षण तक ज़िंदगी, गयी इसी में बीत।।

|| 564 ||

जो भी आया पास में, ख़ूब लुटायी प्रीत।
भेदभाव की ज़िंदगी, जीते नहीं सुमीत।।

|| 565 ||

सदा दूसरों के लिए, रहते थे कुर्बान।
सुख-दुःख समझे आवरण, थे सच्चे इंसान।।

|| 566 ||

अल्पकाल की जिंदगी, आदर्शों के पुँज।
कर्म-सुवासित-आचरण, भरे जगत के कुँज।।

|| 567 ||

पल-पल आती याद है, वाणी मधुर ललाम।
माँ वाणी के पुत्र! हम, करते नमन प्रणाम।।

|| 568 ||

भावों की श्रद्धांजली, अर्पित करते मीत!
वाणी पुत्र! स्वीकार लो! यह अँसुवन की प्रीत।।

|| 569 ||

साथ छोड़कर चल दिये, ख़ूब निभाया नेह।
अल्पकाल में कर गये, प्रीत सुवासित गेह।।

|| 570 ||

खड़े सोचते रह गये, यह कैसी है घात?
तात! महाप्रस्थान की, ख़बर मिली जब प्रात।।

|| 571 ||

फंदा फेंके काल जब, फंसता जीव अचूक।
अजगर-चींटी कोई भी, बचते नहीं उलूक।।

|| 572 ||

धन्य! दिवंगत आत्मा, शिशु-सी रही अबोध।
अब हँसमुख किलकारियाँ, देती हमें प्रबोध।।

|| 573 ||

भाव-सुमन अर्पित करें, शब्द-अर्थ के गीत।
मीत! मिले सुख-शांति-पद, भक्ति-भाव-संगीत।।

प्रेम और सौंदर्य

|| 574 ||

मन कहता संसार में, महाशक्ति है प्यार।
दुनियाभर की शक्तियाँ, गयीं प्यार से हार।।

|| 575 ||

अनजाने ही जुड़ गया, तुमसे इतना प्यार।
मन को भी अच्छी लगी, हृदय की यह हार।।

|| 576 ||

प्रणय की अभिव्यक्ति में, शब्द रहें असमर्थ।
नैनों के मिस बोल ही, समझाते तब अर्थ।।

|| 577 ||

अंबर हो या सिंधु हो, या थल दृश्य अनेक।
प्रेम और सौन्दर्य ही, करें सृष्टि अभिषेक।।

|| 578 ||

प्रेम और सौन्दर्य में, है अनुपम सम्बंध।
एक-दूसरे के बिना, फलें न जग अनुबंध।।

|| 579 ||

निखिल सृष्टि सौन्दर्यमय, प्रेम भरा भरपूर।
निश्छल मन की भावना, देख होय मजबूर।।

|| 580 ||

सौंदर्य-अनुभूति ही, ईश्वर का अहसास।
प्रीत-सिंधु में डूबकर, खिल उठता मधुमास।।

|| 581 ||

कोई ऐसा है नहीं, जीव जगत में शेष।
प्रेम और सौंदर्य का, जहाँ न भाव विशेष।।

|| 582 ||

जीव-जगत के साथ ही, वानस्पतिक समूह।
प्रेम और सौंदर्य के, फँसे हैं चक्रव्यूह।।

|| 583 ||

प्रेम और सौंदर्य का, यह अनुपम उपहार।
सकल सृष्टि को दे रही, होकर प्रकृति उदार।।

|| 584 ||

कितने सुंदर है अधर, ज्यों गुलाब की कोर।
अथवा सूरज की किरन, मुस्काती हो भोर।।

|| 585 ||

नख-शिख तक परिपूर्ण है, सौंदर्यमय गात।
पता नहीं क्यों नैन ने, कही न सीधी बात।।

|| 586 ||

प्यार समझ पाये नहीं, जहाँ प्यार संकेत।
तब कहना स्पष्ट ही, इंगित करता हेत।।

|| 587 ||

तुमसे मिलकर ही हुआ, यह मुझको अहसास।
बदल गया है प्यार का, वह मधुरिम इतिहास।।

|| 588 ||

औचक ज्यों पथ में मिले, थकित पथिक को छाँह।
ख़ूब अचानक त्यों मिली, सखे! प्यार की बाँह।।

|| 589 ||

सहज समर्पण प्यार का, होता है निष्काम।
प्रेमी-प्रेयसि जानते, अथवा जाने राम।।

|| 590 ||

वाणी रहती मौन जब, नैन करें तब बात।
ज्यों अंधेरी रात में, जुगनू सब बतियात।।

|| 591 ||

कामदेव करते सदा, सुभग बदन में वास।
जिसे देखती है शुभे! लेती उसको फांस।।

|| 592 ||

कौन करे, किसके लिए, बिना प्यार के काम!
प्यार रहित हो आदमी, पाता नहीं मुकाम।।

|| 593 ||

धन-वैभव-सम्मान-पद, जाति-धर्म के भेद।
प्रेम न इनको जानता, करे सभी में छेद।।

|| 594 ||

जन्म-जन्म के पुण्य जब, पैदा करें निखार।
तब मानस के सर उगे, कमल-पुष्प-सा प्यार।।

|| 595 ||

कितना दुर्लभ लक्ष्य हो, बड़ा कठिन हो काम।
जग में केवल प्रेम ही, कर्म करे निष्काम।।

|| 596 ||

इन्द्रधनुष-सा गात से, लिपट गया परिधान।
रोम-रोम में रम गयी, विद्युत-सी मुसकान।।

|| 597 ||

अधर नहीं जब बोलते, नैन करें तब बात।
बन जाती है दृष्टि वह, प्यार भरी सौगात।।

|| 598 ||

कंचन जैसे बदन में, चांदी जैसा प्यार।
मानो दीपक की शमा, करती हो उजियार।।

|| 599 ||

आया जीवन-सिंधु में, चाँद देख तूफान।
माथे पर बिंदिया सजी, पूनम-सी मुस्कान।।

|| 600 ||

जन्म-जन्म का प्यार है, तुम ही जानो यार!
पावन कितना प्यार है, बिछुड न जाये प्यार।।

|| 601 ||

सिर्फ काज परमार्थ के, मिले कभी थे यार!
बात-बात में हो गया, अनजाने ही प्यार।।

|| 602 ||

यों तो दुनिया में पड़ी, सूरत बड़ी हंसीन!
पर, तुमसे बढ़कर नहीं, जग में अन्य हंसीन।।

|| 603 ||

गौर बदन, साड़ी सुघड़, झिलमिल-झिलमिल गात।
खिली रूप की चाँदनी, सुमन-सुमन मुस्कात।।

|| 604 ||

तन से अतिशय दूर हूँ, मन से पल-पल साथ।
वरना आकर चूमता, सखे! तुम्हारा हाथ।।

|| 605 ||

अपना कुछ रहता नहीं, तन-मन मनो फ़कीर!
प्रेम अकिंचन तत्त्व है, कहते रांझा-हीर।।

|| 606 ||

बिन देखे आता नहीं, इन आँखों को चैन।
अद्‌भुत गति है प्रेम की, देख-देख बेचैन।।

|| 607 ||

तन बेसुध चलता रहे, मन है सागर पार!
ऊबड़-खाबड़ रास्ता, फिर भी करता प्यार।।

|| 608 ||

मिलते-मिलते जिन्दगी, बीत रही है रोज।
कभी प्यार का एक पल, तुमने दिया न भोज।।

|| 609 ||

अनगिन कागा बोलकर, चले गये हैं दूर।
लेकिन, मन को प्यार पर, अपने बड़ा ग़रूर।।

|| 610 ||

जाते-जाते दो बता, कब आओगे यार?
बाट जोहती थक रहीं, ये अंखियाँ हर बार।।

|| 611 ||

इंतज़ार कर थक गये, उलटे हुए मिज़ाज।
अब तो दर्शन के बिना, होगा नहीं इलाज।।

|| 612 ||

तुम बिन मन लगता नहीं, अब जाऊँ किस ठौर?
पलभर की मुस्कान ने, किया और से और।।

|| 613 ||

बना घोंसला प्यार का, तिनका-तिनका जोड़।
निर्मम शावक ने दिया, पलभर में ही तोड़।।

|| 614 ||

देखा अद्भुत स्वप्न था, मिलन हुआ भरपूर।
आँख खुली तो हो गये, सपने चकनाचूर।।

|| 615 ||

मन सपने की बात का, क्यों करता विश्वास।
चुप रह घर में बैठ जा, वरना हो उपहास।।

|| 616 ||

भले आदमी स्वप्न भी, कभी हुये हैं सत्य।
अवचेतन की वृत्तियाँ, करें नींद में नृत्य।।

बोल रे, अबोल!

|| 617 ||

बोले किस अंदाज़ में, प्यार-भरे दो बोल।
जीवन-भर देते रहें, हम दो पल का मोल।।

|| 618 ||

पता नहीं किस ख्याल से, तुमने दी आवाज।
अर्पित तुमको कर दिया, अपना जीवन-ताज।।

|| 619 ||

दो पल जिनसे भी मिलो, मन में रहे विचार।
वह दो पल की ज़िंदगी, बन जाये उपहार।।

|| 620 ||

सोच-समझकर छोड़िये, मर्म बचन के बान।
वरना, कुल-परिवार का, नहीं बचेगा मान।।

|| 621 ||

आम आदमी जब तलक, तुम्हें न करता प्यार!
तब तक मानुष जिन्दगी, है बिल्कुल निस्सार।।

|| 622 ||

करते जप-तप-साधना, पढ़ते रोज नमाज।
फिर भी बने न आदमी, ऐसे तुनक मिज़ाज।।

|| 623 ||

दीन-दुःखी के साथ में, खूब लुटाओ प्यार।
सभी जगह होता नहीं, खुशियों का इज़हार।।

|| 624 ||

जोड़-जोड़कर भर लिया, अपना घर-भंडार।
दीन-दुःखी को क्या कभी, अरे! दिया उपहार।।

|| 625 ||

जीते जी तूने दिया, क्या अपनों को प्यार?
अब जाकर शमसान में, रखता दिया पजार।।

|| 626 ||

बोल बोलने की नहीं, जिनको रही तमीज।
वही शिष्टता की हमें, करते भेंट कमीज़।

|| 627 ||

मात-पिता ग़मगीन हैं, तनय हर्ष का पुँज।
क्या माली की वेदना, समझ सकेगा कुँज।।

|| 628 ||

चलते-चलते जब लगे, यह जीवन बेकार।
धैर्य और विश्वास ही, उन पल के उपचार।।

|| 629 ||

नहीं सफलता भाग्य में, रहते व्यर्थ उपाय।
जब आते अनुकूल दिन, ऊसर फसल उगाय।।

|| 630 ||

मन में निष्ठा-लगन हो, नहीं असंभव ठौर।
अपने बनते ग़ैर भी, कैसा ही हो दौर।।

|| 631 ||

चिकनी सड़कों पर अरे! खोज रहे भगवान।
इन पर चलकर आदमी, बन जाता शैतान।।

|| 632 ||

तरह-तरह की जातियाँ, तरह-तरह के धर्म।
कुत्तों जैसे कर रहे, सारे धर्म कुकर्म।।

|| 633 ||

ऊबड़-खाबड़ रास्ता, धरती हो विकराल।
पर, जल की धारा कभी, नहीं छोड़ती चाल।।

|| 634 ||

बँटता जाता आदमी, घटता जाता प्यार।
मनुज-मनुज के बीच में, खींच रहा दीवार।।

|| 635 ||

युद्धहीन होगी धरा, नहीं रहेगी हार।
आओ! मिलकर बाँट लें, दीन-दुःखी में प्यार।।

|| 636 ||

जब आया संसार में, क्या था तेरे हाथ?
भला, बता! किस हेतु को, लिया बैर का साथ।।

|| 637 ||

जब तू आया सृष्टि पर, बता कहाँ था बैर?
ज्यों-ज्यों बचपन बीतता, त्यों-त्यों मिटती खैर।।

|| 638 ||

द्वार बजी शहनाइ थी, ढोल-नगाड़े-चंग।
जन्म हुआ किस हेतु था, बदल गये सब ढंग।।

|| 639 ||

राजा हो या रंक हो, या मजदूर-किसान।
दो गज़ धरती अंत में, सबकी बने मचान।।

|| 640 ||

अगले पल का क्या पता, आ जाये भूचाल।
यह सुंदर-सी जिंदगी, पल में हो बदहाल।।

|| 641 ||

भाग्य लिखा टलता नहीं, उलट जाय तदबीर।
शुभकर्मों के बाद भी, पड़े भोगनी पीर।।

|| 642 ||

दु:ख-सुख मन के खेल हैं, ज्यों पतझर-मधुमास।
जीवन-रूपी कुँज का, मधुरिम-सा अहसास।।

|| 643 ||

आँगन में बैठे हुये, करें न कोई बात।
ऐसे जन घातक बड़े, करें भुलाकर घात।।

|| 644 ||

बात जरा सी थी अगर, आये फिर क्यों द्वार?
हाव-भाव बतला रहे, कहीं गये कुछ हार।।

|| 645 ||

तनक-मनक-सी भूल पर, आता भारी ताव।
जहाँ न हृदय स्वच्छ हो, सफल न हो प्रस्ताव।।

|| 646 ||

बिना प्रेम संभव नहीं, कभी शांति की राह।
बिना शांति के एकता, सदा भरेगी आह।।

|| 647 ||

कौन सुने? किससे कहें? हुआ अराजक बाज।
रखा गरुड़ के शीश पर, खुद उसने ही ताज।।

|| 648 ||

पता नहीं किस दौर से, गुज़र रहा इंसान।
दीन-बंधु को छोड़कर, खोज रहा मुसकान।।

|| 649 ||

जीवन-तरु फल-फूल बिन, ज्यों सूरज बिन सांझ।
कितने सद्गुण हों भले, मान न पाती बांझ।।

|| 650 ||

बुरे दिनों के सामने, बिगड़ें सारे काज।
वर्षा की बौछार में, नभ से गिरती गाज।।

|| 651 ||

धीरे-धीर जा रहे, सभी पतन की ओर।
आयेगा वह दिन कभी, रहे न अंतिम छोर।।

|| 652 ||

क्षत्रिय-कुल का त्याग है, जीवित हिन्दुस्तान!
मरा नहीं वह शौर्य है, आन-वान औ' शान।।

|| 653 ||

राजनीति के फूंक दो, अपराधी-आवास!
क्षत्रिय-कुल की भावना, जो कर रहे विनाश।।

|| 654 ||

युवक-युवतियों देश के, अगर रह गये मौन!
क्षत्रिय-कुल की अस्मिता, हाय! बचाये कौन??

|| 655 ||

यदि क्षत्रिय जागे नहीं, मिट जाये इतिहास!
आने वाली पीढ़ियाँ, खूब करें उपहास।।

|| 656 ||

समय आ गया देश का, करना पड़े इलाज!
बिना दण्ड सुधरे नहीं, इनका तनिक मिजाज।।

|| 657 ||

उठो क्षत्रिय-बन्धुओं! भारत-हित के काज!
अपने कुल-परिवार की, रख लो भैया! लाज॥

|| 658 ||

करलो कितने भी यतन- रहते 'सब बकवास'।
शंकाओं के जाल में, व्यर्थ सभी विश्वास॥

|| 659 ||

जब तक मन में प्रीत है, तब-तक पति भगवान।
उपजी शंका तो बना, जीवन-धन शैतान॥

|| 660 ||

कानों की कच्ची बड़ी, झूँठ, सत्य ले मान।
मन-मंदिर के देव की, क्षण में लेती जान॥

|| 661 ||

नारी को समझाइये, कभी न माने हार।
शंकाओं की धार से, कटें प्रीत के तार॥

|| 662 ||

किसी देव सौगन्ध का, करे नहीं विश्वास।
त्याग-समर्पण-प्रीत सब, शंका में उपहास॥

|| 663 ||

नारी को अबला कहें, नारी रही अजेय।
पलभर की मुस्कान से, करती विश्व विजेय॥

|| 664 ||

नारी-सा जग में नहीं, कोई नाटककार।
पलक झपकते जीत है, पलक झपकते हार॥

|| 665 ||

नारी-उर शंका पले, करलो अथक उपाय।
पलभर में सब तोड़कर, अन्त वहीं आ जाय।।

|| 666 ||

नारी की रग-रग पुरा, निश्छल प्रेम अपार।
हाय! कभी जब रूँठती, करती जीवन-क्षार।।

|| 667 ||

कितने ही सुन लीजिये, जग में पुष्ट प्रमाण।
नारी ने नर के लिये, निर्ममता से प्राण।।

|| 668 ||

नारी जब करने लगे, नर पर शासन-तंत्र।
मानो हथिनी हो गयी, बिन अंकुश-परतंत्र।।

|| 669 ||

बात-बात में जब करे, नारी खड़े विवाद।
कहाँ चैन होगा वहाँ, जन्मे नित्य प्रवाद।।

|| 670 ||

छोटी-छोटी भूल पर, पति-पत्नी हों क्रुद्ध।
प्रेम वहाँ रहता नहीं, होय रोज ही युद्ध।।

|| 671 ||

पढ़ी-लिखी नारी करे, तन-मन-धन अभिराम।
पर, उगता सन्देह तो, जीना करे हराम।।

|| 672 ||

कितने ही कर लीजिये, निश्छल प्रेम-उपाय।
पर, नारी-हठ में कभी, अन्तर तनिक न आय।।

|| 673 ||

जब तक नारी साथ में, नर की सच्ची मीत।
पर, चण्डी के रूप में, राख करे सब प्रीत।।

|| 674 ||

नारी है सहधर्मिणी, नर-हित सब बलिदान।
केवल निश्छल प्रेम पर, करती जीवन-दान।।

|| 675 ||

हमने देखे नर बड़े, करते नारि-बखान।
धिक्! नारी के सामने, बन जाते अज्ञान।।

|| 676 ||

मितवा! बोल न बोलना, 'नारी परम उदार'।
लेकिन हठ के सामने, भूल जाय सब प्यार।।

|| 677 ||

नेताओं ने तो किये, सभा बीच गुणगान।
कवियों ने भी रच दिये, इन पर नारि-पुरान।।

|| 678 ||

नर! नारी के सामने, हो जाता लाचार।
नारी का क्या कुछ पता, कब बदले आचार।।

|| 679 ||

नेता-व्यापारी-श्रमिक, जग करता मनुहार।
पर, नारी के सामने, सबने मानी हार।।

|| 680 ||

नारी के पीछे सभी, बनते तीरन्दाज।
नारी आती देखकर, बदल जाय आवाज।।

|| 681 ||

हमने देखे हैं सुने, ज्ञानी-वीर-महान।
पर, नारी ने सभी के, फेल किये विज्ञान।।

|| 682 ||

जब तक नारी साथ है, करती तुमको प्यार।
समझो भैया! स्वर्ग है, क्रोध - नर्क - संसार।।

|| 683 ||

जग के सारे प्रकारण, सुलझ न्याय से जाय।
धिक्! नारी के सामने, न्याय धरा रह जाय।।

|| 684 ||

नारी जब घर छोड़ती, मिले नहीं सम्मान।
पग-पग पर उसको मिलें, आपद औ' अपमान।।

|| 685 ||

जग में शोषण नारि का, करते कामुक लोग।
भूखे नाहर-से पड़ें, मानो मधुरस भोग।।

|| 686 ||

प्रथम मिलन में ही करें, सम्मोहन-अभिराम।
नारी को सपने दिखा, करते काम-तमाम।।

|| 687 ||

नारी जिनको भोग है, उनको नहीं मलाल।
नारी को वे लूटते, अज-सा करें हलाल।।

|| 688 ||

मीठी-मीठी बात कर, सपने मधुर दिखाय।
नारी तो ममतामयी, रीझ सहज ही जाय।।

|| 689 ||

जग में लम्पट हैं बड़े, नारी लेते फाँस।
तन-मन से शोषण करें, अन्त निकालें साँस।।

|| 690 ||

तरुणी कोई फँस गयी, किसी दुष्ट के हाथ।
फिर तो जीवन है कठिन, झुका सदा रह माथ।।

|| 691 ||

सावधान रहना सखे! पग-पग बड़ा कमाल।
फैल रहा चारों तरफ, इन दुष्टों का जाल।।

|| 692 ||

जगह-जगह होता यहाँ, नित अबला अपमान।
न्यायतंत्र को चाहिये, शोषण का प्रमाण।।

|| 693 ||

नारी की अस्मत लुटे, बिकती रोज छदाम।
भव्य-भवन में हो रहा, देश-धर्म नीलाम।।

|| 694 ||

वृंदा-सीता-द्रौपदी, या कलियुग की नार।
रूप भले ही कुछ रहा, शोषित थी हर बार।।

|| 695 ||

घर-गृहस्थी में पल रहा, अमित क्रोध-अपमान।
घर-जीवन की कल्पना, बन जाते शमशान।।

|| 696 ||

खुले आम नित लुट रहा, नारी का सम्मान।
नेता, अधिकारी करें, अबला का अपमान।।

|| 697 ||

नारी-नारी का कभी, करे नहीं सम्मान।
जहाँ सौतियाडाह है, पल में लेती जान।।

|| 698 ||

शोषण-अत्याचार का, जीवन बना गवाह।
अब नारी-सम्मान का, कैसे हो निर्वाह।।

|| 699 ||

आज न्याय बिकता यहाँ, बिकता न्यायाधीश।
कंचन-तन बिकता रहा, बिकता माँ का शीश।।

|| 700 ||

ऊँचे आसन बैठकर; तनिक न कीजे गर्व।
नहीं नियति का कुछ पता, मिट जाता है सर्व।।

|| 701 ||

पापी मन में फूलता, उससे बड़ा न कोय।
आता जब तूफान है, खड़ा-खड़ा ही रोय।।

|| 702 ||

भाँति-भाँति के उड़ रहे, खुले गगन खग-वृंद।
साथ-साथ विचरण करें, सभी उड़ें स्वच्छंद।।

|| 703 ||

दुर्दिन अपने देखकर, भूल न जाना ध्येय।
सत्य-साधना से मिले, प्रीतम को निज प्रेय।।

|| 704 ||

सेवक यदि होता नहीं, रुक जाते सब काम।
बिन सेवक खिलता नहीं, स्वामी का भी धाम।।

|| 705 ||

बिना दण्ड फिरते नहीं, गीदड़-गधा-गंवार।
लोहा ज्यों बनता नहीं, बिन पीटे हथियार।।

|| 706 ||

जो कुछ अपने पास था, रखा न हमने सेंत।
दुश्मन भी आया अगर, किया प्यार से भेंट।।

|| 707 ||

ज्यों घर में चूल्हा जले, ऐसे जलते लोग।
अपने-अपने कर्म का, प्रतिफल भोगें लोग।।

|| 708 ||

बड़े-बड़े आये यहाँ, करने बदल समाज।
बंदर की औलाद के, बदले कहीं मिज़ाज।।

|| 709 ||

मुखड़ा तो कमसिन लगे, बोल झरें मुस्कान।
ऐसे नर-नारी कभी, करें नहीं सम्मान।।

|| 710 ||

झूँठ बोलकर भर लिये, घर के सारे ढोल।
धोखा कितनों को दिया, खुले अंत में पोल।।

|| 711 ||

बड़े-बड़े अब माँगते, छोटों से उत्कोच।
ऊँचा उठता आदमी, नीचे गिरती सोच।।

|| 712 ||

देश द्रोह की सजा हो, मिले मृत्यु का दण्ड।
चप्पे-चप्पे पर रहे, निगरानी प्रचण्ड।।

|| 713 ||

सीमाओं की चौकसी, करनी है मजबूत।
रहे ध्यान में देश हित, दुश्मन की करतूत।।

|| 714 ||

हमें चाहिए राज यदि, सुदृढ़ और स्वतंत्र।
तो विकसित करना पड़े, सही सूचना तंत्र।।

|| 715 ||

शासक भी करता रहे, भेष बदलकर जांच।
परखें अपनी आँख से, क्या है असली सांच।।

|| 716 ||

चाटुकार देता सदा, अपयश औ' अपमान।
ये घातक हर तंत्र को, रखना इन पर ध्यान।।

|| 717 ||

चोरी कर-कर देश में, धन कर लिया अकूत।
भाग गये परदेश को, भारत माँ के पूत।।

|| 718 ||

न्याय सजा देगा नहीं, अर्थ-पाप का दण्ड।
जाओगे जिस देश में, होगा चूर धनण्ड।।

|| 719 ||

जनता का धन लूटकर, बेहद बने अमीर।
बिधना का चाबुक पड़े, पल में बनो फ़कीर।।

|| 720 ||

झिलमिल-झिलमिल सिन्धु जल, मनमोहक अतिशोर।
डगमग-डगमग चल रहा, क्रूज लक्ष्य की ओर।।

❁ ❁ ❁

सूत्रधार है मौन

अपनी बात

परमेश्वर के इस विशाल सृष्टि-मंच पर हम सब कठपुतली की भाँति अभिनय कर रहे हैं जिनका सूत्रधार परमेश्वर है। हम सब नाच रहे हैं और वह नचा रहा है। जब तक वह चाहता है, नचाता है और हम नाचते रहते हैं, क्योंकि हम सब उसकी निर्मित कठपुतली हैं।

कठपुतली का कुछ ख़ास प्रयोजन है। वह प्रत्येक कार्य अपने सूत्रधार के मनोनुकूल ही करती है। और, एक समय तक नाचने और नचाने के पश्चात उसका प्रयोजन पूर्ण हो जाता है। आगे के खेल के लिए उसका स्थान कोई दूसरी कठपुतली ले लेती है। वस्तुतः यही जीवन का क्रम है, जो निखिल सृष्टि की आदि बेला से चला आ रहा है। कठपुतली हैं हम! सूत्रधार है वह परमेश्वर! परमेश्वर मौन है अर्थात् **सूत्रधार है मौन!** विशिष्टता यह है कि मंच पर कठपुतली बदलती है, सूत्रधार नहीं। कठपुतली का कार्य नाचना है और सूत्रधार नचाता रहता है। यही मानव-नियति है! उसकी विवशता भी है।

एक दिन प्रातःकाल, बैठे-ठाले, यही सब सोचते-विचारते निम्नलिखित काव्य-पंक्तियाँ अनायास ही लेखनी से निःसृत हो गयीं।

हम किसकी चिन्ता करें, हम होते हैं कौन?
हम सब कठपुतली बने, सूत्रधार है मौन!!
शब्द न कोई बोलता, पता नहीं हम कौन?
निखिल सृष्टि इंगित करे, सूत्रधार है मौन!!

और, इसी क्रम में 'सूत्रधार है मौन!' का कलेवर बनता चला गया।
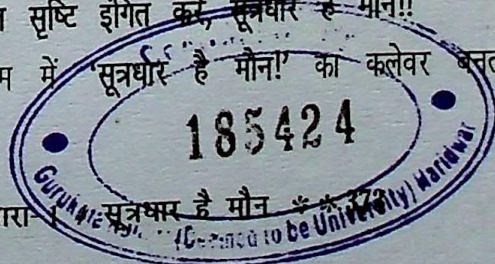
यह सत्य है कि सूत्रधार की इच्छा के विरूद्ध 'कठपुतली' कुछ नहीं कर सकती अतः यहाँ जो कुछ भी है, वह सूत्रधार का है और सूत्रधार है **मौन!**

'सूत्रधार है मौन' में मानव-जीवन, परिवार और जगत की विविध झाँकियाँ हैं। अस्तु कठपुतली के खेल की भाँति यदि आपको इसमें तनिक भी अच्छा लगता है तो इसका श्रेय 'सूत्रधार' को ही है।

आपकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

प्रकाश पर्व, 2006

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

श्री गणेश-वन्दना

।। 1 ।।

धूम्रकेतु! गजकर्ण हे! विकट! सुमुख! इकदन्त!
लम्बोदर! गणाध्यक्ष! कपिल! विध्न-विनाशक! सन्त!
वीर विनायक! गजानन! भालचन्द्र! भगवान!
मेरे प्रभुवर! कीजिये, विपदाओं का अन्त।।

इष्ट देव-वन्दना

।। 2 ।।

अजा, अनंता, अपर्णा, इला, भवानी नाम!
गिरिजा, गौरा, चण्डिका, शैलसुता! प्रणाम।।

।। 3 ।।

अक्षय, अक्षर, अगोचर, अच्युत, अज, भगवान!
अजर, अमर, परमात्मा, केशव! कर कल्यान।।

।। 4 ।।

परमेश्वर, परमात्मा, परमपिता, जगदीश!
निराकार, चिन्मय, अगुण, चरण कमल में शीश।।

।। 5 ।।

सूर- अर्क- रवि- हंस- अवि, पूषा- अर्णव-पाथ!
अरणि-तरणि-पुष्कर-हरित, हरो! तमो हरिनाथ।।

भक्ति भावना

।। 6 ।।

लोग चुनौती दे रहे, करें बहुत बदनाम।
मैं कितना बेचैन हूँ, तुम ही जानो राम!!

|| 7 ||

दिन हो गये पहाड़-से, सागर-सी हैं रात।
काटे से कटते नहीं, तुम बिन पल-पल तात!!

|| 8 ||

तेरी करते चाकरी, तेरा करते काम।
मात-पिता, स्वामी-सखा, मैं तो सेवक राम!!

|| 9 ||

पता नहीं किस ओर को, जाती जीवन-रेल।
चले जा रहे खेलते, खिला रहे तुम खेल।।

|| 10 ||

जीवन का संग्राम है, रखो राम का ध्यान!
हार-जीत औ' मृत्यु का, वही एक भगवान।।

|| 11 ||

रखो राम को लक्ष्य में, सदा झुकाकर माथ।
सहज करो मन-साधना, सत्यप्रेम के साथ।।

|| 12 ||

सौंप दिया तुमको सखे! अपना जीवन भार।
चाहे हमको दो खुशी, दुःख-पीड़ा या प्यार।।

|| 13 ||

यह तेरा संसार है, अथवा मेरा धाम।
मन तो तेरा प्यार से, लेता पल-पल नाम।।

|| 14 ||

पूजा-विधि समझी नहीं, किया नहीं उपवास।
मन पल-पल करता रहा, तेरे घर सहवास।।

|| 15 ||

पीड़ा दो या प्यार दो, सखे! तुम्हारा काम।
जैसी इच्छा राम जी! जिस विधि राखो राम!!

|| 16 ||

धीमी-धीमी चल रही, शीतल मंद समीर!
दूर बजें शहनाइयाँ, इधर हो रही पीर।।

|| 17 ||

आये थे किस काम को, करना था क्या काम?
सुना तुम्हारा नाम तो, भूल गये सब काम।।

|| 18 ||

रहो परस्पर प्यार से, कर निश्छल सहयोग।
मेहनत व सद्भाव से, प्रभु से हो संयोग।।

|| 19 ||

सूप सुशोभित भाल पर, बड़नी-जल-घट हाथ।
नग्न बदन, गर्दभ चढ़ी, शीतल माँ हैं साथ।।

|| 20 ||

कठपुतली के नाच में, सूत्रधार का काम!
सकल सृष्टि यह नाचती, सूत्रधार हैं राम।।

|| 21 ||

शिव के हाथों सौंप दी, जीवन की पतवार।
फिर क्यों लेकर जा रहा, कांवर औ' तलवार।।

|| 22 ||

महाशक्ति के स्रोत हैं, बाबा भोलेनाथ!
रहे समर्पण भाव तो, वे रहते नित साथ।।

|| 23 ||

जहाँ बनावट का नहीं, रहता तनिक न नाम।
वहाँ सादगी में बसें, मेरे स्वामी राम।।

|| 24 ||

जब आती है सादगी, टिके बनावट नाय।
कर्म और व्यवहार में, सहज सरलता आय।।

|| 25 ||

रिश्ते-नाते तब तलक, जब तक जिन्दा छोह।
जब आ जाती सादगी, जिन्दा बचे न मोह।।

|| 26 ||

कमल-नयन, मुख-चन्द्रमा, मोर-मुकुट, उरमाल।
पीत वसन, मुरली अधर, नमन नित्य गोपाल!!

|| 27 ||

शीश मुकुट, बिम्बा-अधर, कमल नयन, मुख चन्द!
पीत वसन, उरमाल है, नमन कृष्ण श्री चन्द!!

|| 28 ||

अनुपम छवि के धाम हो, प्राण राधिका नाथ!
जहाँ रखो, जैसे रखो, कमल-चरण में माथ।।

|| 29 ||

रूप भले ही कुछ रहे, रहे नित्य ही ध्यान।
हर पल मोहन रूप पर, रहे मुझे अभिमान।।

|| 30 ||

चार सुमन तुमने दिए, किया सुगंधित प्यार।
इन सुमनों की जिन्दगी, भर दो नेह अपार।।

|| 31 ||

जीवन-नौका चल रही, जगत-सिन्धु मँझधार।
नाथ राधिका हाथ है, सांसों की पतवार।।

|| 32 ||

मन तो तेरे पास है, सिर पर चिन्ता-भार।
बिना तुम्हारे राम जी, होय न बेड़ा पार।।

|| 33 ||

मेरे तन-मन लग रही, चिन्ताओं की आग।
तुम बिन मेरा कौन है, जो समझे अनुराग??

|| 34 ||

भला बता किससे कहूँ, सब तो हैं मजबूर।
मेरे तो तुम ही सखा, पास रखो या दूर।।

|| 35 ||

जो भी अब तक हुए हैं, भले-बुरे सब काम।
तेरी कृपा के बिना, पूरे हुए न राम!!

|| 36 ||

राम सभी हो जानते, मेरे मन की बात!
फिर भी चिन्ता है कहीं, अब तुम जानो तात!!

|| 37 ||

कभी श्रेय लेते नहीं, पूर्ण किए सब काम।
तुम अपने में एक हो, बड़े अनौखे राम!!

|| 38 ||

हे प्रभु! लेकर नाम ही, कहता-करता काम।
लोग कहें सब बावरा, मुस्काते तुम राम!!

|| 39 ||

या तो मुझको मेंट दो, या पूरण कर काम।
यह भी कोई प्रीत है, मेरे प्यारे राम!!

|| 40 ||

दर्द, आंसुओं के सिवा, क्या है मेरे पास।
ये भी तेरे नाम बिन, नहीं बुझाते प्यास।।

|| 41 ||

तेरी कृपा से हुआ, मुझको तुमसे प्यार।
दर्द मिला उपहार में, आँसू का अम्बार।।

|| 42 ||

मुझे गिला-शिकवा नहीं, केवल तुमसे प्यार।
दर्द न कोई जानता, आँसू देखें यार।।

|| 43 ||

मोहन! कुछ ऐसा करो, जिससे चिन्ता जाय।
यह चिन्ता का दायरा, पल-पल बढ़ता जाय।।

|| 44 ||

रहते दिल के पास हो, फिर भी कितनी दूर?
कुशल-क्षेम भी पूछना, है कितना मजबूर??

|| 45 ||

पता नहीं किस बात से, उपजा इतना प्यार।
बिन माँगे ही चाकरी, दी तुमने उपहार।।

|| 46 ||

तुम जानो, मैं जानता, कितना रखते ख्याल।
बीच रास्ते में पड़ा, छू भी सका न ब्याल।।

|| 47 ||

मैं कितना कृतज्ञ हूँ, दया-सिन्धु भवसेतु!
चालक बनकर आ गये, प्राण बचाने हेतु।।

|| 48 ||

चाहें जैसे भी रखो, हम तो तेरे यार!
बिना सहारे के दिए, उठे न जीवन भार।।

|| 49 ||

जहाँ करे मन ले चलो, यह तन-मन है साथ।
छप्पर ज्यों टेकन बिना, रुके न नभ में नाथ!!

|| 50 ||

इष्टदेव हनुमान का, माता के संग चित्र।
सजा भक्ति के रंग में, कैसा चित्र-विचित्र!!

|| 51 ||

जहाँ - जहाँ तुम चाहते, जाते हैं उस ठाँव।
अपना तो कोई नहीं, इस दुनिया में गाँव।।

|| 52 ||

पुलकित मन मेरा हुआ, आनंदित है देह।
पाकर दर्शन आपके, महक उठा उर-गेह।।

|| 53 ||

सत-रज-तम अनुपात सम, देता सुख-सत्संग!
इनका बिगड़ा रूप ही, पैदा करे कुसंग।।

|| 54 ||

ऐसा भी आता समय, सब होते निरूपाय।
घोर निराशा में सखे! करते तुम्हीं सहाय।।

|| 55 ||

मेरे प्यारे राम जी! तुम बिन कौन हमार?
संकट के हर दौर से, तुमने लिया उबार।।

|| 56 ||

हमने तो सुख-दुख-व्यथा, करी तुम्हारे नाम।
तुम जानो अब तो सखे! सबके स्वामी राम!!

|| 57 ||

ईश्वर जिसको चाहता, उसे मिटाये कौन?
आधि-व्याधि के चक्र से, बचे भक्त ही भौन।।

|| 58 ||

बड़ी शक्ति है भक्ति में, उच्च साधना मंत्र!
कैसा ही दुश्चक्र हो, फूँके उसका तंत्र।।

|| 59 ||

तेरी कृपा के बिना, हुआ न कोई काम।
तेरे ही संकेत से, मिलता दुःख-आराम।।

|| 60 ||

हम किसकी चिन्ता करें, हम होते हैं कौन?
हम सब कठपुतली बने, सूत्रधार है मौन।।

|| 61 ||

कौन किसे है मारता, किसको कौन जिलाय?
माता मात्र निमित्त है, तू ही दूध पिलाय।।

|| 62 ||

दृढ़ निष्ठा, विश्वास-बल, सहज आस्था भाव।
जो प्रभु को अर्पित करे, भर जाते सब घाव।।

|| 63 ||

आने भी देता नहीं, अपनों पर कुछ आंच।
समय-समय पर भी सखे! करे प्रेम की जांच।।

|| 64 ||

हम उसके बन्दे सभी, बहुत करे वह प्यार!
वशीभूत वह प्रेम के, जाय सभी कुछ हार।।

|| 65 ||

हर घटना के मूल में, जीवन का विस्तार।
सखे! मर्म तुम जानते, हम तो निपट गँवार।।

|| 66 ||

पल-पल जो भी घट रहा, है जीवन संयोग।
जगत नियन्ता मूल में, मिलते मिलन-वियोग।।

|| 67 ||

हृदय केवल मोहवश, भला-बुरा कह जाय।
विधना की इस सृष्टि का, भेद न कोई पाय।।

|| 68 ||

ममता - श्रद्धा - भावना, प्रेम - द्वेष - सम्मान।
सब माया के आवरण, मोह बड़ा बलवान।।

|| 69 ||

मृग-तृष्णा को सुख कहे, मन! कितना कमजोर?
बैल लीक जब काटता, चलता है पुरजोर।।

|| 70 ||

यह पीड़ा का दौर है, सुख से कोसों दूर!
माया की छाया मधुर, मन होता मजबूर।।

|| 71 ||

मन होता पथ भ्रष्ट जब, करे भावना चोट।
भला-बुरा समझे नहीं, देखे सबमें खोट।।

|| 72 ||

'यह शोषक','यह भ्रष्ट है','दुष्ट','नीच','मक्कार'।
बुरा बताना है सरल, माया-वश में यार!!

|| 73 ||

क्या कुछ अपने पास था, क्या लाये हम साथ?
आये खाली हाथ थे, जायें खाली हाथ।।

|| 74 ||

काल-चक्र नित चल रहा, होते हैं दिन-रात।
सहज रूप पथ में मिलें, घात और प्रतिघात।।

|| 75 ||

मन-वृन्दावन धाम है, पावन औ' अभिराम।
रोम-रोम बसते यहाँ, राम और घनश्याम।।

|| 76 ||

यों तो ईश्वर सब जगह, देखा कहीं न जाय।
जड़-चेतन हर रूप में, उसका रूप समाय।।

|| 77 ||

मानव-जीवन खेल है, चलो खेलते खेल।
करिये ऐसे कर्म नित, बढ़े परस्पर मेल।।

|| 78 ||

नन्हें - नन्हें बाल - मन, पिता - भ्रात औ' मात।
मेरे प्यारे! प्यार की, दे सबको सौगात।।

|| 79 ||

कोई भी तो है नहीं, तेरे बिन भगवान!
तुम निर्देशन दे रहे, नाच रही सन्तान।।

|| 80 ||

लूला - लँगड़ा आदमी, जले आग में अंग!
देखो! विधि के मर्म को, किया उसे बदरंग।।

|| 81 ||

पता नहीं क्यों ले रहे, इतनी गहरी जांच!
यह कलियुग श्री राम जी, कहाँ टिकेगा सांच।।

|| 82 ||

जैसी जिसकी भावना, धरता है वह रूप।
कष्ट वही सबके हरे, जड़-चेतन का भूप।।

|| 83 ||

जिसकी करी न कल्पना, रहा न मन में रूप।
औचक ही आकर वही, दिखलाता है रूप।।

|| 84 ||

कितने भी कर ले अरे! मानव! तंत्र-उपाय!
विधि की सृष्टि विचित्र है, सब रहते निरूपाय।।

|| 85 ||

हर घटना के मूल में, छुपा हुआ है राज!
फ़र्क न पड़ता सृष्टि पर, मरो किसी भी काज।।

|| 86 ||

जो भी जन्मा है यहाँ, सबका जीवन-कथ्य।
सबको जाना एक दिन, मृत्यु-जीवन, सत्य!!

|| 87 ||

भाँति-भाँति की साधना, भाँति-भाँति के मंत्र!
सारे निष्फल ही रहें, काल-चक्र के तंत्र।।

|| 88 ||

थोड़ा-सा जीवन मिला, कर ले ऐसे काम!
जब जाये जग छोड़कर, याद करें सब नाम।।

|| 89 ||

भव्य भवन है सृष्टि में, यह मानव की देह।
इसके अन्दर मन बसे, रहता सदा अदेह।।

|| 90 ||

मन के ही अधिकार से, होते सारे काम।
जब तक मन चाहे नहीं, नहीं मिलेंगे राम।।

|| 91 ||

दुश्मन है सबसे बड़ा, मानव का अज्ञान।
रक्षक से भक्षक बना, इसीलिये विज्ञान।।

|| 92 ||

रहे न कोई आवरण, रहे न कोई रंग।
सत्य रूप परमात्मा, देता है सत्संग।।

|| 93 ||

भेदभाव करते नहीं, कहलाते वे संत।
लेश न कोई भेद है, सन्त और भगवंत।।

|| 94 ||

मिलता है सत्संग से, परम तत्व का ज्ञान।
बिना गुरू-सत्संग से, बनता नहीं महान।।

|| 95 ||

दण्ड लिए बैठा वही, ईश्वर जिसका नाम!
गलत काम की सजा ही, देना उसका काम।।

|| 96 ||

वे कहते- 'भगवान को, बहुत मानते, तात'!
सच, सपने में भी कभी, मानी उनकी बात??

|| 97 ||

आज नहीं, कल करेंगे, पैदा कर न विकल्प!
जो सोचो, पूरा करो, यह है दृढ़ संकल्प।।

|| 98 ||

सत्य कहीं बिकता नहीं, घर-बाहर-बाजार।
बिकें झूंठ की ढेरियाँ, ज्यों बिकते उपहार।।

|| 99 ||

माता के मिस बाल को, भोजन देता ईश!
वह रक्षक इस सृष्टि का, इसीलिए जगदीश।।

|| 100 ||

हीनभाव से सोचना, ईश्वर का अपमान!
आखिर तो हम हैं सभी, उसकी ही सन्तान।।

|| 101 ||

आत्म नियंत्रण ही सखे! है अनुशासन-मंत्र।
अनुशासन-प्रभु से मिलन, फूँके झूंठे तंत्र।।

|| 102 ||

कोई भी समझा नहीं, कितने हुए सुमित्र!
प्रभु की लीला है अगम, दुनिया बड़ी विचित्र।।

|| 103 ||

तू तो मेरा यार है, मैं हूँ तेरा प्यार।
घिसट-पिसट की जिन्दगी, दे मत देना यार!!

|| 104 ||

चलते फिरते ही सखे! हो जाये बस काम।
कीड़ों जैसी जिन्दगी, मत दे देना राम!!

|| 105 ||

पाप-पुण्य के बीच में, यहाँ छिड़ी है जंग।
कुरुक्षेत्र चारों तरफ, सभी हुए बदरंग।।

|| 106 ||

कौरव-दल के साथ हैं, बड़े-बड़े दिनमान!
पाण्डव-दल सहता रहा, नित्य नये अपमान।।

|| 107 ||

अब गीता-सन्देश को, कृष्ण सुनाओ आय!
बजे शंख जब प्यार का, अन्धकार मिट जाय।।

|| 108 ||

कैसे दल-दल में फँसे, विवश और असहाय।
ऊपर से कीचड़ सने, कातर रहे बुलाय।।

|| 109 ||

जगती के कुरुक्षेत्र में, कृष्ण बजाओ शंख!
मानवता की हंसिनी, पा जायेगी पंख।।

देश-धर्म-मानवता

|| 110 ||

घोर लड़ाई चल रही, शब्द-अर्थ में रोज।
किसको चिन्ता देश की, खड़े सोचते भोज।।

|| 111 ||

बदल रहा है नित्य ही, देश-वेश-परिवेश।
रिश्ते दिल के बाँटता, घूम रहा दरवेश।।

|| 112 ||

हमको अपने देश पर, रहा सदा ही गर्व!
हाय! द्रोह की अग्नि को, फूँक रहे हैं सर्व।।

|| 113 ||

सीमा पर आतंक है, धन-जन हानि फिजूल!
देशभक्त अब देश में, बाँट रहे त्रिशूल।।

|| 114 ||

इतनी चिन्ता देश की, लो सीमा का भार!
दुश्मन के आतंक को, कुचलो अब तो यार!!

|| 115 ||

सीमा की चिन्ता नहीं, हुआ अधर्मी राज!
हिन्दू-मुस्लिम-एकता, सिसक रही है आज।।

|| 116 ||

राम मरे, ईसा मरे, बुद्ध मरे रहमान!
धर्म-नाम कुछ भी रहे, मरता है इन्सान।।

|| 117 ||

मन्दिर-मस्जिद कर रहे, झगड़े रोज अपार!
कहाँ राम-रहमान का, कहता शिष्टाचार।।

|| 118 ||

मन्दिर या मस्जिद बने, कहाँ पड़ेगा फर्क़!
भैय्या! तुमने देश को, बना दिया है नर्क।।

|| 119 ||

मन्दिर - मस्जिद - चर्च सब, शान्ति - एकता - धाम।
आज दे रहे देख लो! हिंसा का पैग़ाम।।

|| 120 ||

मन्दिर या मस्जिद बने, गुरूद्वारा या चर्च!
मानव के कल्याण हित, मानव करता खर्च।।

|| 121 ||

सारी जगती एक है, केवल मानव धर्म!
तुम मानव को बाँटने, रचते रोज कुकर्म।।

|| 122 ||

जप-तप या पूजा करो, अथवा पढ़ो नमाज़!
धर्म कभी कहता नहीं- 'विघटित करो समाज'।।

|| 123 ||

पता नहीं किस धर्म की, तुम करते हो बात!
चीख-चीख सब कह रहे, 'करो सभी से घात'।।

|| 124 ||

द्वेष-धर्म के नाम पर, मिट जायेगी सृष्टि!
फिर किसके कल्याण हित, तुम बदलोगे दृष्टि।।

|| 125 ||

तेरे अन्दर राम हैं, छुपे हुए रहमान!
खुद उनको पहचान ले, बन जाये प्रतिमान।।

|| 126 ||

अपने हृदय का करो, तुम इतना विस्तार।
डूबे प्रणय - सिन्धु में, मानव सृष्टि अपार।।

|| 127 ||

जाति-धर्म के नाम पर, बढ़ा रहे क्यों क्लेश?
शान्ति और सौहार्द्र को, निगल रहा है द्वेष।।

|| 128 ||

यह हिन्दू, यह मुसलमां, यह ईसा, यह बुद्ध!
धर्मध्वजाधारी करें, बातें बड़ी विशुद्ध।।

|| 129 ||

मस्जिद में मुल्ला करे, तोड़-फोड़ की बात।
राम-धाम में बैठकर, रचे पुजारी घात।।

|| 130 ||

खून-खून सब एक हैं, एक रंग है कर्म।
गहन चिकित्सा कक्ष में, चढ़े बदलता धर्म।।

|| 131 ||

यह हिन्दू का खून है, यह मुस्लिम का खून!
जब तनकी चक्की पड़े, बन जाता है चून।।

|| 132 ||

बना नहीं है आज तक, कोई भी विज्ञान!
जो मानव की रक्त से, करे धर्म पहचान।।

|| 133 ||

नहीं नीति-सिद्धान्त कुछ, झूंठ बोलना धर्म।
इनको नहीं सराहिए, पल-पल करें कुकर्म।।

|| 134 ||

जहाँ तृप्ति औ' त्याग है, प्यार और सहकार।
बन जाता है स्वर्ग वह, घर-आंगन-परिवार।।

|| 135 ||

नहीं असंभव धरा पर, पाना कोई लक्ष्य।
प्यार-समर्पण-त्याग से, मिलती वस्तु अलक्ष्य।।

|| 136 ||

अभी अधूरी साधना, छोड़ दिया विश्वास!
माँ तो ममता माँगती, जगत करे उपहास।।

|| 137 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, त्याग-समर्पण-प्यार।
मिल जाता है एक दिन, मन चाहा उपहार।।

|| 138 ||

छुपे हुए इस भूमि में, पुरखों के बलिदान!
जैतवार की भूमि यह, करती मौन बखान।।

|| 139 ||

आपस में लड़कर हुए, क्यों जेलों में बन्द?
जाकर सीमा पर लड़ो, अरि के काटो फन्द।।

|| 140 ||

बैर-द्वेष-घृणा सदा, यहाँ कराते जेल।
सखे! साथ परिवार के, रहे खेलते खेल।।

|| 141 ||
वैर-द्वेष की जिन्दगी, छोड़ो! अब तो यार!
करो आज से ही शुरू, सभी परस्पर प्यार।।
|| 142 ||
किस कारण से हो गयी, सोचो! भैया! जेल!
मिली मनोहर जिन्दगी, हुई व्यर्थ ही फेल।।
|| 143 ||
जहाँ सत्य, ईमान, श्रम, और साथ हो प्यार।
ऐसा धन व्यक्तित्व का, करता सदा निखार।।
|| 144 ||
ममता के रिश्ते मिटें, करता कौन दुलार?
घर में भी सुनता नहीं, कोई मौन पुकार।।
|| 145 ||
चलो चलें उस देश में, जहाँ बसें इन्सान।
पत्थर भी जिस देश में, कहलाते भगवान।।
|| 146 ||
जहाँ पहुँचकर आदमी, बन जाता भगवान!
दुनिया में वह देश है, भारत बड़ा महान।।
|| 147 ||
बात गयी, इज्जत गयी, लूट लिया है वेश।
बदल गया परिवेश जब, कहाँ बचा फिर देश।।
|| 148 ||
बिकते कौआ-हंस हैं, यहाँ एक ही भाव!
भले-बुरे सब देखते, कोई खाय न ताव।।
|| 149 ||
प्रेम-दया औ' त्याग का, भारत का इतिहास।
कहाँ गयी वह भावना, कैसे होय विकास।।

|| 150 ||

तनक-मनक-सी बात पर, दिखा रहे हैं रोष!
नेताजी के बाप का, देश हुआ मदहोश।।

|| 151 ||

नेह, त्याग, ममता हुए, आज यहाँ सब व्यर्थ!
अन्धायुग है स्वार्थ का, सबको किया अनर्थ।।

|| 152 ||

रहते हैं जिस भवन में, औढ़ें जिसका नाम!
उसी भवन के नाम को, खूब किया बदनाम।।

|| 153 ||

अपने हित को साधने, नियम बने चुपचाप!
देशभक्त ही देश को, आज खा रहे आप।।

|| 154 ||

नहीं नियम औ' पात्रता, और न वैसी भक्ति!
चुगली-निन्दा-ईर्ष्या, आज बन गयीं शक्ति।।

|| 155 ||

माली ही जब बाग का, बैठा आँखें मूँद!
पशु-पक्षी का दोष क्या, उन्हें न होती सूद।।

|| 156 ||

जिस दिन तुमने था रखा, चोरों के सिर ताज।
छली गयी थी उसी क्षण, सखे! देश की लाज।।

|| 157 ||

चोरों का क्या दोष है? उनका क्या आदर्श?
मिला कर्म है लूटना, करें सदा अपकर्ष।।

|| 158 ||

मानवता से है नहीं, जिसे तनिक भी प्यार।
देश-जाति-परिवार पर, बन जाता वह भार।।

|| 159 ||

देश-जाति परिवार सब, लगते भिन्न समाज।
जब तक मन में खोट है, पूजा और नमाज।।

|| 160 ||

सत्य कभी करता नहीं, ऊँच-नीच का भेद।
पैदा करता झूठ ही, जाति-धर्म का भेद।।

|| 161 ||

उच्च लक्ष्य रख सामने, करिये ऐसे काम।
याद करे संसार सब, रहे युगों तक नाम।।

|| 162 ||

मन में दृढ़ संकल्प हो, सत्य-कर्म-सहवास।
मिले सफलता त्याग से, रख धीरज-विश्वास।।

|| 163 ||

समय और श्रम का सखे! जो न करे सम्मान।
असफलता उनको मिले, निन्दा औ' अपमान।।

|| 164 ||

सतत परिश्रमहीनता, पैदा करे विवाद।
असफलता के मूल में, आलस औ' प्रमाद।।

|| 165 ||

पर-दोषों को देख मत, ले प्रेरक गुण सीख!
बन्धु! बना व्यक्तित्व को, ज्यों गाँवों की लीक।।

|| 166 ||

रखो नियंत्रण रोष पर, अपना दोष विचार।
वाणी औ' व्यवहार ही, पैदा करें विकार।।

|| 167 ||

मात-पिता-गुरू-देवता, हैं ऐसे दिनमान।
इनके ही आशीष से, सखे! होय कल्यान।।

|| 168 ||

प्रेम सुखद अनुभूति है, यह अद्भुत अनुबंध।
काल-चक्र के तोड़ता, पल भर में प्रतिबन्ध।।

|| 169 ||

मिल-जुल कर रहना सखे! करना कर्म-विकास।
पा जाओगे एक दिन, जीवन में प्रकाश।।

|| 170 ||

कम खाना-कम बोलना, सुनें अधिक विद्वान।
हो विद्वानों की सभा, बोलें सहित प्रमान।।

|| 171 ||

गप्पें मत हाँका करो, बोलो सदा सटीक।
सत-चिन्तन रखता सखे! मन वाणी को ठीक।।

|| 172 ||

सदा सत्य साहित्य का, अध्ययन आता काम।
बन जाता है आदमी, तन-मन से निष्काम।।

|| 173 ||

मिटा नहीं है आज तक, सखे! सनातन धर्म।
यही देश की अस्मिता, यही हमारा कर्म।।

|| 174 ||

भारत की पहचान है, सखे! सनातन धर्म।
यह युग-युग की सभ्यता, पूर्वजों का मर्म।।

|| 175 ||

दीप जलाओ प्यार का, अन्धकार भग जाय।
मानवता की हंसिनी, फूले नहीं समाय।।

|| 176 ||

समय प्रतीक्षा का नहीं, तुमने किया बवाल!
दीप जलाओ बन्धुवर! साथी करें सवाल।।

|| 177 ||

अन्धकार जब दूर हो, मानवता हरषाय।
पापी-मन बंजर पड़ा, हरियाली छा जाय।।

|| 178 ||

नेता बदला देश का, बदला सबका वेश।
नेता-अधिकारी सभी, लूट रहे हैं देश।।

|| 179 ||

बदल गयी सरकार तो, बदल गये आचार।
लेकिन रूका न देश में, अब भी भ्रष्टाचार।।

|| 180 ||

महाभ्रष्ट है आदमी, ढोंगी बड़ा कमीन।
इसे कहीं भी भेज दो, देगा बेच जमीन।।

मीत-प्रीत

|| 181 ||

सखे ! तुम्हारी याद में, मन कितना बेचैन?
मिलने तुमसे आ गया, देखा दिवस न रैन।।

|| 182 ||

पता नहीं क्यों हो गया, तुमसे इतना प्यार।
पहले तो भटका नहीं, गया तुम्हीं से हार।।

|| 183 ||

पग-पग पर कितने मिले, तरह-तरह के फूल।
छुआ न मन ने एक भी, समझ नुकीले शूल।।

|| 184 ||

शुभे! तुम्हें मन देखकर, भूल गया रस रंग।
डूब गया कब प्यार में, रंगा तुम्हारे रंग।।

|| 185 ||

पागल मन माने नहीं, रहे सदा बेचैन।
चाहे तुम संग खेलना, दिन हो अथवा रैन।।

|| 186 ||

तुम चाहे कुछ भी कहो, अथवा दो तुम सीख।
सखे! तुम्हारे प्यार की, प्राण माँगता भीख।।

|| 187 ||

अब तो मन माने नहीं, करता नित मनुहार।
भला-बुरा कुछ भी कहो, सखे! तुम्हारा प्यार।।

|| 188 ||

प्रेम अमित उर में भरा, मूरति बनी अनूप।
बसता हृदय कुँज में, सखे! अनूठा रूप।।

|| 189 ||

बात-बात में बढ़ गयी, बढ़कर इतनी बात।
पता नहीं कब बन गयी, बात प्यार की बात।।

|| 190 ||

चन्दन शीतलता तजी, बरगद छोड़ी छाँव!
बिरवा सूने हो गये, हाय! पिया के गाँव।।

|| 191 ||

मुझे याद है प्यार का वह, पहला दिन-रात!
चुम्बन की बौछार से, अब तक पुलकित गात।।

|| 192 ||

गौर-वर्ण दुलहन चली, लेकर पूजा-थाल।
मानो चलती चाँदनी, चाँद चमकता भाल।।

|| 193 ||

ओठों ने पल में रचा, कुछ अद्भुत संयोग!
रहे परस्पर चूमते, प्रणय और वियोग।।

|| 194 ||

मनका-मनका फेरते, बिखर गयी सब माल!
चूम रही थी प्यार से, किस्मत किसका भाल।।

|| 195 ||

बार-बार कर वायदा, मिले न फिर भी यार!
नैन तरसते रह गये, खूब निभाया प्यार।।

|| 196 ||

जो सह लेते दर्द को, उनको मिले न हार!
शनैः शनैः यह दर्द ही, बन जाता है प्यार।।

|| 197 ||

प्यार की प्रथम शर्त है, करो दर्द से प्यार!
देता है यह दर्द ही, मनचाहा उपहार।।

|| 198 ||

शान्त, सौम्य, मुख-चन्द्रमा, वाणी ललित ललाम!
धन्य सरलते! सादगी! तन-मन-छवि-अभिराम।।

|| 199 ||

किसलय जैसे ओठ हैं, सुआ-सरीखी नाक।
मुख-मण्डल-छवि-चाँद-सी, शतदल मानो आँख।।

|| 200 ||

नैन रसीले, मदभरे, पूनम-सी मुस्कान!
प्रतिमूरति स्नेह की, अति भोली, अनजान।।

|| 201 ||

वृन्दावन-सा तन-बदन, अनुपम प्राण सनेह।
फूल झरें मुस्कान-से, गंग-नीर-सा नेह।।

|| 202 ||

स्वर्ण-बदन, मुख-कमल-सा, नैन शान्ति के दूत।
हिरणी जैसी चाल पर, मुग्ध सरस्वती-पूत।।

|| 203 ||

मन-वृन्दावन बावरा, श्याम सलौना गेह!
पता नहीं कब जुड़ गया, स्नेहिल से नेह।।

|| 204 ||

भाल चन्द्रमा-सा लसै, मलयज-शोभित गात!
मन-चकवा उड़ने लगा, चाह चूमना माथ।।

|| 205 ||

भोली, मुग्धा, मानिनी, अनुपम रूप अपार!
बिखर रही है चाँदनी, बरस रहा है प्यार।।

|| 206 ||

नहीं निकलते प्यार के, जिनके मुख से बोल।
वे क्या समझेंगें सखे! अरे! प्यार का मोल।।

|| 207 ||

अति मनमोहक ज्यों लगें, सखे! गुलाबी फूल!
लेकिन, मिला समीप तो, चुभे बदन में शूल।।

|| 208 ||

तनक-मनक-सी बात पर, हा! इतना प्रतिरोध!
तुम भी कैसे यार हो?, करते इतना क्रोध।।

|| 209 ||

प्राण! सताती याद नित, दिवस रहे या रात।
चैन तनिक आता नहीं, करूँ न जब तक बात।।

|| 210 ||

बेचैनी बढ़ती बहुत, करके तुमसे बात।
यार! कौन-से तीर से, करते तुम आघात।।

|| 211 ||

सपनों में होता मिलन, बढ़ जाती अतिचाह।
पथ में तुम-सा देखकर, मुख से निकले आह!!

|| 212 ||

पता नहीं किस जन्म का, बदला लेते मीत!
वरना तो क्यों कर जुड़ी, तुमसे इतनी प्रीत।।

|| 213 ||

सफल मनुज का जन्म यदि, मिला सुमित्र-सुजान।
दुःख-सुख बाँटे प्यार से, सत्य देय नित ज्ञान।।

|| 214 ||

केवल सच्चा मित्र ही, करता है सम्मान।
उसकी वाणी प्यार की, सदा करे कल्यान।।

|| 215 ||

उसका जीवन सफल है, जिसको मिला सुमित्र।
वरना, इस संसार में, पग-पग बड़ा विचित्र।।

|| 216 ||

बिना तर्क स्वीकार कर, मीत कहे जो बात।
वरना, पछताना पड़े, इस दुनिया में तात!!

|| 217 ||

कौन किसी को देखकर, निश्छल मन हरषाय!
केवल सच्चा मीत ही, फूले नहीं समाय।।

|| 218 ||

सोना, चलना, पहनना, खान-पान-व्यवहार।
मीत रखे हर बात का, ध्यान भली प्रकार।।

|| 219 ||

अपने तन पर ओढ़ता, सारे कष्ट अभाव।
लेकिन, अपने मीत का, सदा बढ़ाता भाव।।

|| 220 ||

जाति-धर्म-औ' आयु को, नही देखती प्रीत!
मन को मिल जाता कहीं, चलते-चलते मीत।।

|| 221 ||

निश्छल मन की भावना, सदा खेलती खेल।
खेल-खेल में बन्धुवर! हो जाता है मेल।।

|| 222 ||

पूर्व जन्म के कर्म से, मिलती सच्ची प्रीत।
अनजाने ही चित्त में, आ जाता है मीत।।

|| 223 ||

देखा कभी न स्वप्न में, हुआ नहीं सहवास।
हो जाता है चित्त में, जीवन भर को वास।।

|| 224 ||

कितने मिलते नित्य ही, तरह-तरह के लोग।
पर, सबसे होता नहीं, हृदय का संयोग।।

|| 225 ||

अनोयास मिलता यहाँ, मन का सच्चा मीत।
सहज भाव से चित्त की, जुड़ती उससे प्रीत।।

|| 226 ||

कितना मन समझाइये, करके तर्क-वितर्क!
सच, प्रियतम के सामने, निष्फल रहें कुतर्क।।

|| 227 ||

जहाँ समर्पण-त्याग है, कहें उसे ही प्यार!
मीत-प्रीत के सामने, कहाँ जीत औ' हार।।

|| 228 ||

देख मित्र को सामने, होता हर्ष अपार!
आता हृदय-सिन्धु में, सहज प्यार का ज्वार।।

|| 229 ||

नर हो अथवा नारि हो, मीत सदा ही मीत।
कहीं फ़र्क पड़ता नहीं, प्रीत रही है प्रीत।।

|| 230 ||

आज प्यार की भावना; हुई परस्पर लुप्त।
जन संवेदन शून्य है, मानव हुआ विलुप्त।।

।। 231 ।।

खोज रहे सब प्यार को, ज्यों मरूथल में पान!
निर्मम हृदय को भला, क्यों होगी पहचान??

।। 232 ।।

दिन में तो मिलते नहीं, रहो सदा ही दूर!
पर, आकर नित स्वप्न में, करो बहुत मजबूर।।

।। 233 ।।

बीत रही है जिन्दगी, खोज रहे हैं मित्र।
बोतल भरी शराब में, समझ रहे हम इत्र।।

।। 234 ।।

यह जीवन अनमोल है, करो नहीं बेकार।
सदा परखकर कीजिए, नर-नारी से प्यार।।

।। 235 ।।

चलो, यार! अच्छा हुआ, शुरू किया संवाद!
किसी बहाने ही सही, आयी तुमको याद।।

।। 236 ।।

वस्तु-स्थिति का सखे! क्षण में होय न ज्ञान!
'व्यक्ति बसे, सोना कसे', सही होय संज्ञान।।

।। 237 ।।

तुम बिन कुछ भी है नहीं, चलो! मान लें यार!
तुम ही सब कुछ हो अरे, कैसे मानें यार!!

।। 238 ।।

घर आये जब मीत को, दे न सके तुम प्यार!
चला गया परदेश तब, उसको रहे निहार।।

।। 239 ।।

रूठे-रूठे फिर रहे, कुछ तो बोलो बोल!
गिने-चुने पल हैं मिले, समझो इनका मोल।।

|| 240 ||

बता उदासी को रहे, मुख से निकले बोल!
अरे सखे! क्या हो गया, तनिक राज तो खोल।।

|| 241 ||

तुम्हें देख ऐसा लगे, कुछ तो है सम्बन्ध।
वरना, कारण कौन-सा, सहज जुड़ा अनुबन्ध।।

|| 242 ||

अब कुछ भी समझो सखे! पुण्य कहो या पाप!
पता नहीं कब बस गये, हृदय में चुपचाप।।

|| 243 ||

सखे! तुम्हारे प्यार को, हृदय रखा संभाल!
छुपा इसे ऐसे लिया, धन को ज्यों कंगाल।।

|| 244 ||

किया तुम्हीं से प्यार सच, पाप किया कुछ नाय।
भला-बुरा कुछ भी कहो, सखे! छूटता नाय।।

|| 245 ||

बार-बार तुम पूछते, हुआ मुझे क्यों प्यार?
अपने दिल से पूछलो, इसका उत्तर यार!!

|| 246 ||

प्यार नहीं छल जानता, और न जाने घात।
बस, अपने प्रिय के लिए, चाहें सुख दिन-रात।।

|| 247 ||

कभी प्यार का अर्थ था-सत्य और भगवान।
आज देखलो! चढ़ गया, प्यार स्वार्थ-सोपान।।

|| 248 ||

बाहों में कसकर सखे!, लूँ हृदय चिपटाय!
नैन बंद कर चूँम लूँ, अंग-अंग हरषाय।।

|| 249 ||

पत्थर से नित माँगते, चाहत का वरदान!
पत्थर तो पाषाण है, वह क्या देगा प्रान??

|| 250 ||

दिल तो दिलबर ने दिया, नहीं दिया पर प्यार!
भला, बता कैसे करे, वह तुमसे मनुहार।।

|| 251 ||

बार-बार कहते रहे, 'मुझे न तुमसे प्यार'!
पता नहीं क्यों आ गये, सखे! रोकने द्वार।।

|| 252 ||

तुम अपने मन की व्यथा, मुझे बताते आप!
बात-बात में कह गये, 'सखे! प्यार है पाप'।।

|| 253 ||

चलो, बात यह मानलें, सखे! न हमसे प्यार!
बिना हेतु क्यों कर रहे, फिर इतनी तकरार।।

|| 254 ||

अनजाने ही हो गया, पता नहीं कब प्यार।
बोलो! तुम-सा कौन है, करूँ जिसे मनुहार।।

|| 255 ||

भैया! इस संसार में, सुलभ न सच्चा मीत।
बड़भागी होगा वही, मिले जिसे सद्प्रीत।।

|| 256 ||

भेदभाव की जिन्दगी, हमें न भाती यार!
इससे तो अच्छा सखे!, रहें बिना ही प्यार।।

|| 257 ||

भेदभाव करता नहीं, रखे सदा ही ध्यान!
जो सुख-दुःख में साथ दे, ऐसा मित्र महान।।

|| 258 ||

तुम्हें देख होता मुझे, कुछ ऐसा अहसास।
पूर्व जन्म में रहा है, सखे! निकट् सहवास।।

ऋतुओं की सौगात

|| 259 ||

बदल गयी जब भावना, उमस गया तब हेत।
बिन वर्षा के देख लो! झुलस गया सब खेत।।

|| 260 ||

दूर-दूर तक दीखती, हरियाली चहुँ ओर।
वर्षा की मनहर छटा, कैसी स्वर्णिम भोर!!

|| 261 ||

धरती से आकाश तक, वर्षा की बौछार!
मना रहे हैं मेघ मिल, सावन का त्यौहार।।

|| 262 ||

मेरे मन को खींचता, यह हरियाला गाँव!
दूर-दूर तक जा रही, प्यार-प्यार की छाँव।।

|| 263 ||

बड़ा अनूठा दृश्य है, यह वर्षा की भोर!
बच्चों की किलकारियाँ, औ' खग-कुल का शोर।।

|| 264 ||

शान्त चित्त अमराइयाँ, करती हैं मनुहार!
वर्षा का स्वागत करें, लुटा रहीं हैं प्यार।।

|| 265 ||

लिए फावड़ा हाथ में, खेतों बीच किसान!
फिरे भीगता खेत में, कहता हे भगवान!!

|| 266 ||

तोता, बगुला, कबूतर, कौआ, तीतर, क्रौंच!
नर-मादा सब वृक्ष पर, लड़ा रहे हैं चोंच।।

|| 267 ||

पतझर के कारण गिरे, पत्ते कईं हजार!
कलियों का स्वागत करें, मिलकर वृक्ष अपार।।

|| 268 ||

धरती से आकाश तक, धुँआ-धुँआ सब ओर!
धुँआ किया सब शीत ने, छोड़ा ओर न छोर।।

|| 269 ||

खग कुल विचरण कर रहे, भीमताल के नीर!
धुँआ-धुँआ बनकर उड़ी, मानो उनकी पीर।।

|| 270 ||

पता नहीं किस शोक से, बोझिल हुआ अशोक!
देख शीत की अगिन को, मानो हुआ सशोक।।

|| 271 ||

शोकाकुल सब सृष्टि है, पड़ी शीत की मार!
जड़-चेतन सब रो रहे, किया शीत ने क्षार।।

|| 272 ||

सहम गया मानो पवन, देख धुँआ का राज!
ज्यों दुष्टों के सामने, नमता साधु-समाज।।

|| 273 ||

दूर कहीं आकाश में, उठा रहा रवि भाल!
धुँआ चीरता आ रहा, गोल-गोल-सा लाल।।

|| 274 ||

बदल रहा पर्यावरण, बदल रही ऋतु-नेह!
भीषण गर्मी पड़ रही, नहीं बरसता मेह।।

|| 275 ||

ठंडी-ठंडी है हवा, मीठी-मीठी धूप।
सर्दी रानी आ गयी, धर कर रूप-अनूप।।

|| 276 ||

मौसम बड़ा सुहावना, छाया मेघ-वितान!
जड़-चेतन सब झूमते, खगकुल करते गान।।

|| 277 ||

निखिल सृष्टि संयत बड़ी, रखती है समभाव!
शनैः-शनै भरती वही, उत्पीड़ित के घाव।।

|| 278 ||

निखिल सृष्टि आनंदमय, संध्या कितनी मौन?
वृक्षावलियाँ पूछतीं, उनका दिलबर कौन??

|| 279 ||

जब पागल होती धरा, नहीं समझतीं अर्थ!
गर्मी-वर्षा-शरद ऋतु, करतीं सभी अनर्थ।।

|| 280 ||

गर्मी से बेचैन है, दूर क्षितिज तक सृष्टि।
सावन भी सूखे गये, हुई न अब तक वृष्टि।।

राजनीति

|| 281 ||

यहाँ सभ्यता-शिष्टता, खोज रहे तुम आज!
जंगल का कानून है, पहरा देता बाज।।

|| 282 ||

धता बताकर सिंह को, बोल मनोहर बैन।
आसन बैठी लोमड़ी, चला रही है सैन।।

|| 283 ||

छली जा रही सभ्यता, राजनीति के गाँव!
आम, धतूरे बन गये, अमराई की छाँव।।

|| 284 ||

दण्डकवन परिवेश है, खरदूषण-सा राज!
सत्ता-मद में चूर है, फिर सूपणखाँ आज।।

|| 285 ||

भाषण देते प्यार का, करें मनों पर चोट!
मानवता का ध्वंस कर, माँग रहे हैं वोट।।

|| 286 ||

राजनीति घोड़ी सदृश, हट्टी बिना लगाम!
चले नहीं जो लक्ष्य पर, नेता सब नाकाम।।

|| 287 ||

देश-धर्म के नाम पर, छाया हुआ जुनून!
रहें सलामत कुर्सियाँ, बना लिया कानून।।

|| 288 ||

'बुल्डोज़र' चलवा दिए, तनिक न आयी लाज!
मानवता की लाश पर, राजनीति का ताज।।

|| 289 ||

यह हिन्दू का खून है, यह मुस्लिम का खून!
दोनों की कीमत अलग, अंधा है कानून।।

|| 290 ||

इधर सेंकते रोटियाँ, उधर बिछाते गोट!
संगीनों की छाँव में, मानवता पर चोट।।

|| 291 ||

शान्ति-वार्ता चल रहीं, संगीनों के बीच!
इधर रक्त को सैकड़ों, बहा रहे हैं नीच।।

|| 292 ||

इधर मौत रहमान की, कई लाख था दाम!
उधर मिला क्या राम के, शव पर एक छदाम??

|| 293 ||

लोग सैकड़ों मर रहे, प्रतिपल प्रतिदिन रात!
मिली हमें आतंक की, कुछ ऐसी सौगात।।

|| 294 ||

शान्ति वार्ता चल रही, कायरता के साथ!
राजनीति ने देश का, झुका दिया है माथ।।

|| 295 ||

हा! आतंकी राक्षस, मचा रहा उत्पात!
ब्रस्मास्त्र से कीजिए, अब इसका संघात।।

|| 296 ||

मृगतृष्णा इतनी विपुल, देखे दिवस न रैन!
नेता मेरे देश का, रहता नित बेचैन।।

|| 297 ||

रहते मेरे देश में, करते नित संघात!
पता नहीं क्यों देश यह, करता उनसे बात।।

|| 298 ||

जब तक फन कुचलो नहीं, सर्प करे आघात!
दूध पिलाना सर्प को, कहाँ उचित है तात??

|| 299 ||

आज आचरणहीन हैं, सारे नौकरशाह।
रिश्वत-लूट-खसोट से, देश लूटते आह!!

आदमी

|| 300 ||

कहाँ आदमी? आदमी, इसके विविध प्रकार!
देश-धर्म-गुण-जाति में, बाँट दिया संसार।।

|| 301 ||

ख़ोज रहा हूँ आदमी, मिला अभी तक नाय!
विविध धर्म औ' वर्ण में, छुपा कहीं पर जाय।।

|| 302 ||

'ब्रास्मण' निज को मानते, मानव की सन्तान!
इनमें भी हैं सैकड़ों, अलग-अलग दिनमान।।

|| 303 ||

बँटे गुटों में **क्षत्रिय**, अलग-अलग शमसीर!
सूर्य-चन्द्र के हाथ में, पुरखों की तस्वीर।।

|| 304 ||

वैश्यों को खोजा मिला, धन तो अमित अकूत!
कैद भवन में लक्ष्मी, बाहर खड़े सपूत।।

|| 305 ||

जिन्हें बताया **'शूद्र'** था, वहाँ मिला इन्सान!
एक नहीं कितने दिखे, साक्षात भगवान।।

|| 306 ||

मैंने पूछा **'शूद्र'** से, क्या है भैया! नाम?
अलग-थलग क्यों रह रहा? कहाँ बसा है धाम??

|| 307 ||

ब्राहमण - क्षत्रिय - वैश्य हैं, तीनों मेरे भ्रात!
समझ सका भैया! नहीं, अलग किया क्यों तात??

|| 308 ||

रहता सबके साथ हूँ, रहता सबके बीच!
घर में ऐसे रह रहा, ज्यों पानी में कींच।।

|| 309 ||

मुझे गिला किंचिद् नहीं, शिकवा तनिक न यार!
आँखें अम्बर में लगीं, भ्रात कभी दें प्यार।।

|| 310 ||

भ्रष्ट आदमी के लिए, कहाँ मान-सम्मान!
दो-दो पैसे के लिए, पाता है अपमान।।

|| 311 ||

भ्रष्ट आचरण का यहाँ, सभी ओर है जोर!
भैया! चुप हो बैठ जा, बनो नहीं मुँह जोर।।

|| 312 ||

इस जंगल में देख लो! करें भेड़िए राज!
पकड़ भेड़ को खा गये, हुई नहीं आवाज।।

|| 313 ||

यहाँ आदमी है कहाँ, सब हैं अफ़लातून।
यहाँ चतुर्दिक चल रहा, जंगल का कानून।।

|| 314 ||

बाहर से अच्छा लगे, चिकना-चुपड़ा गात।
जब आता व्यवहार में, पता चले तब तात!!

|| 315 ||

यही राम का रूप था, यही कृष्ण का रूप।
कहाँ गया वह आदमी, जो था सबका भूप??

परिवार

|| 316 ||

माता-पिता-सन्तान के, होली जैसे रंग!
घर के उपवन में सभी, नित्य खेलते संग।।

|| 317 ||

कहीं न कोई भेद हो, कहीं न कोई छेद!
ममता-प्यार-दुलार से, दूर करें सब खेद।।

|| 318 ||

जहाँ न कोई भेद हो, करें परस्पर प्यार!
सबकी जनहित सोच हो, ऐसा हो परिवार।।

|| 319 ||

ऊँची शिक्षा-प्यार से, हो घर का विस्तार!
रहे समर्पण-भावना, हों उदात्त विचार।।

|| 320 ||

कुछ अपनी मजबूरियाँ, कुछ उपजे हालात!
बिखर गयी परिवार की, प्यार भरी सौगात।।

|| 321 ||

कहाँ साधना में रही, हाय! पथिक की खोट!
घाव न कोई दीखता, नहीं दीखती चोट।।

|| 322 ||

अपने-अपने स्वार्थ में, डूब गयी सन्तान!
हा! पछुआ ने छीन ली, ओठों से मुस्कान।।

|| 323 ||

घर में पूजा प्यार की, करते कह भगवान!
उसी प्यार को निमिष में, निगल गया शैतान।।

|| 324 ||

बेटा का परिणय हुआ, हर्षित घर-परिवार।
मानो कुल को मिल गया, एक नया उपहार।।

|| 325 ||

लेकिन, कुछ ही दिन रहा, उपवन में उत्कर्ष!
फिर, पतझर ने कुँज का, शुरू किया अपकर्ष।।

|| 326 ||

ममता-प्यार-दुलार का, लगे लगाने मोल!
कडुवे-से लगने लगे, प्यार प्यार के बोल।।

|| 327 ||

भ्रात-बहिन के बीच में, मौन हुयें सम्बन्ध!
घर-आँगन के बीच ज्यों, टूट गया अनुबन्ध।।

|| 328 ||

माँ की ममता का करें, नित्य अनादर खूब!
उसके पीड़ा-सिन्धु में, गयी एकता डूब।।

|| 329 ||

उपवन की गति देखकर, माली हुआ उदास!
हाय! विवशता क्या करे, लेता सांस-उसांस।।

|| 330 ||

आँखें अम्बर में लगीं, मौन-भाव-विश्वास!
मानो कृषक कर रहा, सूखे में उपवास।।

|| 331 ||

एक आस-विश्वास-बल, लौटे फिर मधुमास!
सब दिन रहें न एक-से, भोग-योग-सहवास।।

|| 332 ||

सपना यह मन में बसा, हो अनुपम परिवार!
जहाँ ईर्ष्या-द्वेष का, पैदा हो न विकार।।

|| 333 ||

अपने-अपने कर्मरत, जहाँ रहे सन्तान!
भोजन लें मिल-बैठकर, बाँटे दुःख-मुस्कान।।

|| 334 ||

मात-पिता माली सदृश, उपवन ज्यों सन्तान!
दोनों के ही योग से, होय जगत कल्यान।।

|| 335 ||

प्यार जहाँ आतिथ्य में, सदाचार की छाँव!
घर हो या परिवार हो, स्वर्ग बनेगा गाँव।।

|| 336 ||

पहले तो तुम व्यस्त थे, आज हुये हम व्यस्त!
अपनी मरजी के हुये, हम-दोनों अभ्यस्त।।

|| 337 ||

अहंकार की गोद में, पहुँच गया है प्यार!
इसीलिए चौपट हुए, घर-आँगन-परिवार।।

|| 338 ||

मात - पिता - भाई - बहिन, पति- पत्नी - सन्तान!
कोमल रिश्तों से सखे! दूर गया इन्सान।।

|| 339 ||

बेटी को करके विदा, जब लौटा निज धाम।
झड़ी आँसुओं की लगी, लगा न कहीं विराम।।

|| 340 ||

खाली-खाली-सा लगे, घर आँगन हर ओर!
यौवन तक पाला जिसे, चली गयी वह भोर।।

|| 341 ||

मेरे घर में रह रहे, करें न मुझसे बात।
पता नहीं क्यों सह रहा? मन उनका उत्पात।।

|| 342 ||

बँध जायें सब सूत्र में, सकल जगत परिवार।
अभी अधूरी साधना, बदलेगा संसार।।

पैसा

|| 343 ||

चोर रहगा चोर ही, भले बने धनवान!
गुणी न छोड़े सहजता, भले चढ़े परवान।।

|| 344 ||

बिन श्रम के अर्जित किया, धन का ढ़ेर अकूत!
पड़े चुकांना मित्रवर! पाई-पाई सूत।।

|| 345 ||

पहले जैसा है नहीं, अब तेरा सम्मान!
पैसा जैसा ही लगे, हो वैसी सन्तान।।

|| 346 ||

झूंठ बोल, धोखा दिया, धन कर लिया अपार!
अब प्रतिफल को भोगने, हो जाओ तैयार।।

|| 347 ||

लगता पैसा एक-सा, लेकिन कोटि प्रकार!
जैसा पैसा तन लगे, वैसा हो आचार।।

|| 348 ||

सखे! अनैतिक धन कभी, करे नहीं उत्थान!
तन-मन ले धन डूबता, बिगड़ जाय सन्तान।।

|| 349 ||

तुम रिश्ता मानो कहाँ, धन की समझो बात!
धन की खातिर वाह रे! भूल गये औकात।।

|| 350 ||

कहीं आदमी बिक गया, कहीं मरा इन्सान!
कहीं ज्ञान धन में लुटा, कहीं बिका भगवान।।

|| 351 ||

बगिया में कीड़ा लगा, विटप हुये कमजोर!
एक-एक कर गिर रहे, माली सुने न शोर।।

|| 352 ||

पहले बेचा कर्म को, फिर बेचा ईमान!
बंची-खुची जो शाख थी, बेच रहे श्रीमान।।

|| 353 ||

कहाँ यार! तुम मानते, हो जिद्दी इन्सान!
पैसा-पैसा के लिए, बेचा पद-पहचान।।

|| 354 ||

पैसा आया पास में, मत कर देख गरूर!
कुछ ही पल की बात है, होगा खर्च जरूर।।

समाचार-पत्रों के नाम

|| 355 ||

'ताकि सत्य जिन्दा रहे, कहते ये अखबार!
मानो मरता सत्य हो, ये उसके पतवार।।

|| 356 ||

सत्य कभी मरता नहीं; भले रचो षड्यंत्र!
बँधा न बंधन में कभी, रहता सदा स्वतंत्र।।

।। 357 ।।

नारे खूब उछालते, सभी बड़े अखबार!
उत्तर कुछ मिलता नहीं, प्रश्नों के अम्बार।।

।। 358 ।।

राजनीति-पाखण्ड को, छाप रहे अखबार!
नेताजी की जीत का, बाँट रहे उपहार।।

।। 359 ।।

नेताओं की रैलियाँ, धरना-बंद-बवाल!
अखबारों की भूमिका, उठते मौन सवाल।।

।। 360 ।।

प्रश्न न सत्य-असत्य का, लक्ष्मी का दरबार!
लक्ष्मी पति जो बोलता, लिखे वही अखबार।।

।। 361 ।।

बहिन सरस्वती को किया, लक्ष्मी जी ने कैद!
इसीलिए अखबार से, खबरें हुई नपैद।।

।। 362 ।।

माँ कितनी बेवश हुई, पिता हुआ बेहाल!
हाय! सिपाही कलम का, लिख न सका सच हाल।।

।। 363 ।।

लक्ष्मी ने क्रय कर लिए, सारस्वत अभिलेख!
कलम सरस्वती-पुत्र की, लिखती कहाँ सुलेख।।

।। 364 ।।

जीवन-नौका की उसे, सौंपी थी पतवार!
वरद सरस्वती-पुत्र ने, बेच दिया अखबार।।

।। 365 ।।

लक्ष्मी ने अखबार की, इतनी कसी नकेल!
मानवता-रथ चल रहा, अब तो बिना चकेल।।

|| 366 ||

घोर घमण्डी हो गये, अखबारों के लोग!
गला सत्य का काटकर, नित्य लगाते भोग।।

|| 367 ||

आम आदमी की सखे! कौन सुने अब आह?
अखबारों को है नहीं, निर्धन की परवाह।।

|| 368 ||

अब क्यों सुनें गरीब की, ये जालिम अखबार!
जब लक्ष्मी को बेच दी, कलम-रूप तलवार।।

|| 369 ||

हावी हैं अखबार पर, भू-माफिया विराट।
सम्पादक, स्वामी भये, स्वामी भये सम्राट।।

|| 370 ||

सौदागर-भू-माफिया, बड़े-बड़े अखबार!
सही खबर छपनी हुई, आज बड़ी दुश्वार।।

|| 371 ||

गली-गली में बेचते, कल तक जो अखबार।
भव्य भवन में रह रहे, अब उनके सरदार।।

|| 372 ||

कदाचार में लिप्त हैं, आज सभी अखबार।
धन-वैभव के सिन्धु में, डूब गये आचार।।

|| 373 ||

खबरें अब छपती नहीं, खबरें लिखते भोज!
चकलाघर थाने हुए, खबरें बनतीं रोज।।

|| 374 ||

दुराचार में खो गया, अखबारों का ओज!
अपहरण-हत्या-लूट के, नाटक छपते रोज।।

|| 375 ||

आज एक भी है नहीं, दूध धुला अखबार!
सीना ताने जो चले, बीच भरे बाजार।।

|| 376 ||

अख़बारों से मिली थी, कभी शक्ति प्रचण्ड!
आजादी के दौर का, ज्यों **'उदन्त मार्तण्ड'**।।

|| 377 ||

बहिष्कार अखबार का, करें सभी परिवार!
तब सुधरेंगे, एक दिन, भारत के अखबार।।

|| 378 ||

अखबारों पर जब तलक, कसी न जाय लगाम!
तब तक जनता एक भी, देवे नहीं छदाम।।

|| 379 ||

अखबारों से जो जुड़े, देखो! उनके ठाट!
राई से पर्वत बने, पर्वत बने विराट।।

|| 380 ||

ढाल और तलवार में, ज्यों गहरा सम्बन्ध!
राजनीति-अखबार में, त्यों वैसा अनुबन्ध।।

|| 381 ||

खबर सनसनीखेज हो, छपती है मुखपृष्ठ!
अखबारों की भूमिका, हाय! हुई पथभ्रष्ट।।

डॉ० मानव के प्रति

|| 382 ||

पचपन के अब हो गये, 'मानव' राम निवास!
बड़े विलक्षण आदमी, युग के तुलसीदास।।

|| 383 ||

मिलनसार व्यक्तित्व है, हँस-मुख है आचार!
गद्य-पद्य की सम्पदा, सारस्वत आगार।।

|| 384 ||

शिक्षाविद, साहित्यविद, पत्रकार का रूप!
शोध-समीक्षा-साधना, ललित कला के भूप।।

|| 385 ||

दो पल जिनसे भी मिलें, रहे न उसकी खैर!
राग-द्वेष के सिन्धु में, डूब जाय सब वैर।।

|| 386 ||

मानवता के पुँज हैं, सचमुच में उल्लास!
अनुपम 'मानव' रूप में, करते 'राम-निवास'।।

|| 387 ||

तन की, मन की खिड़कियाँ, देते मानव खोल!
जीवन का उद्देश्य है- 'बोल न कड़ुबे बोल'।।

|| 388 ||

जैसी रचना-धर्मिता, वैसा सामंजस्य!
अद्भुत क्रियाशीलता, बदलेगी परिदृश्य।।

|| 389 ||

क्रिकेट के मैदान में, 'बैट-पैड' का खेल!
वाणी औ' व्यवहार में, रखते 'मानव' मेल।।

|| 390 ||

रहें स्वस्थ-सानंद औ', रिद्धि-सिद्धि हों साथ!
सत्य-भावना-साधना, उच्च रखें नित माथ।।

स्वास्थ्य संचेतना

|| 391 ||

जीवन-पथ पर जा रहे, ले अपने अवसाद।
प्रभु की कृपा से मिला, 'बाबा' से प्रसाद।।

|| 392 ||

मात-पिता ज्यों बाल का, चलें पकड़कर हाथ!
त्यों 'बाबा' लेकर चले, सहज भाव से साथ।।

|| 393 ||

'बाबा' का अनुभव विशद, ज्ञान-सिन्धु साकार!
उच्च साधना पुंज हैं, सारस्वत अवतार।।

|| 394 ||

'बाबा' फक्खड़ मस्त हैं, उच्च कोटि के सन्त!
सत्य-साधना से करें, रोशन दिशा-दिगन्त।।

|| 395 ||

वाणी औ' व्यवहार में, 'बाबा' रखते मेल!
सत्य-साधना, यम-नियम, संयम उनके खेल।।

|| 396 ||

अद्‌भुत स्मरण शक्ति है, अनुपम है कृतित्व!
लोभ-मोह से दूर है, 'बाबा' का व्यक्तित्व।।

|| 397 ||

यश-धन-लोलुपता नहीं, अमित सादगी पुँज!
सत्य-ज्ञान-सत्संग के, 'बाबा' नन्दन-कुँज।।

|| 398 ||

अर्जुन को कुरूक्षेत्र में, श्याम दिया उपदेश!
हमको 'बाबा' ने दिया, पथ में ज्ञान विशेष।।

|| 399 ||

स्वास्थ्य चिकित्सा पर दिया, 'बाबा' ने जो ज्ञान!
हुआ लेखनी-बद्ध है, 'बाबा' का विज्ञान।।

|| 400 ||

'बाबा' की वाणीं अमर, अनुभव-सिद्ध अपार!
जो लाये व्यवहार में, उसका बेड़ा पार।।

|| 401 ||

वेद - धर्म - दर्शन - कला, संस्कृति - शिक्षा - सार!
विश्व वांगमय ज्ञान के, 'बाबा' हैं आगार।।

|| 402 ||

इधर-उधर नित घूमकर, किए वर्ष बर्बाद!
जब से 'बाबा' मिल गये, तब से मन आबाद।।

|| 403 ||

मानव के नित स्वास्थ्य हित, 'बाबा' ने दी युक्ति!
जो इसका चिन्तन करे, मिले रोग से मुक्ति।।

|| 404 ||

'बाबा' सच्चे संत हैं, विधि सारस्वत पूत!
मानव-तन-मन-शील को, करें सहज मजबूत।।

|| 405 ||

स्वास्थ्य बिना कुछ भी नहीं, जप-तप-पूजा-काम!
स्वास्थ्य-चेतना-कुँज है, जिसमें रमते राम।।

|| 406 ||

'बाबा' का सन्देश है- तन-मन का उपचार!
पहले तन को स्वस्थ कर, मन से हटे विकार।।

|| 407 ||

कहीं न कोई ब्याधि है, कहीं न कोई शूल!
'बाबा' का अनुभव कहे, 'पाप, रोग का मूल'।।

|| 408 ||

सुख-दुःख जीवन-कर्म हैं, कर्म जन्मता पाप!
पाप, रोग की चाशनी, जीवन का अभिशाप।।

|| 409 ||

बोया पेड़ बबूल का, फिर क्यों उतरे आम?
भला-बुरा जो कर्म है, वैसा हो परिणाम।।

|| 410 ||

रहे संयमित आदमी, पाये परमानंद!
तन-मन से नीरोग हो, जीवन भर आनंद।।

|| 411 ||

गगन-अनिल-पावक-धरा, और नीर का साथ।
जड़ चेतन के मूल में, पंच तत्व का हाथ।।

|| 412 ||

सत-रज-तम में निहित है, सकल सृष्टि का भेद।
यही ब्रह्म-परमात्मा, लेश न भेद-अभेद।।

|| 413 ||

सोना - उठना - घूमना, शौच - भोजं - स्नान।
इनको नियमित करे जो, उसका हो कल्यान।।

|| 414 ||

देर रात तक जागना, बढ़े बदन में **'वात'**।
दिन में सोने से करे, **'कफ़'** तन में आघात।।

|| 415 ||

वात-पित्त-कफ़-दोष त्रय, इनकी कर पहचान!
फिर षट्रस के वाण से, कर इनका संधान।।

|| 416 ||

मीठा - खट्टा - कसैला, औ' कडुवा - नमकीन।
बिना चरपरे के सभी, रस रहते ग़मगीन।।

|| 417 ||

गर्मी - वर्षा - शरद ऋतु, शिशिर और हेमन्त।
पर, ऋतुराज बसंत का, राज दिगन्त-दिगन्त।।

|| 418 ||

वात-पित्त-कफ़-दोष से, षड्ऋतु भी लाचार!
'बाबा' षट्रस-भोग से, करते हैं उपचार।।

|| 419 ||

छः घण्टे सोना भला, यौवन में प्रति रात!
अधिक नींद पैदा करे, तन में कफ-पित्त-वात।।

|| 420 ||

वृद्ध जनों को चाहिए, सोयें घण्टे आठ।
नियमित जीवन-कर्म से, सदा रहेंगे ठाठ।।

|| 421 ||

बचपन बड़ा अबोध है, अलग-अलग हैं धर्म।
समय की इसको छूट है, नींद-सात्त्विक कर्म।।

|| 422 ||

दिन में सोने से सखे! यौवन होता क्षीण।
बढ़ जाता है **कफ** बहुत, जीवन करे विदीर्ण।।

|| 423 ||

संयम मन की सादगी, अति मजबूत-अकाट।
इस पर जो चलता बना, हो फौलादी लाट।।

|| 424 ||

वृक्षों पर पंछी रहें, हर ऋतु-निशा-विहान।
नियमित सोना-जागना, भोजन और उड़ान।।

|| 425 ||

सीधी रेखा खींचना, पाप-पुण्य के बीच।
बड़ा कठिन है मापना, ज्यों पानी औ' कींच।।

|| 426 ||

मन कहता है- पुण्य वह, मन माने वह पाप।
कर्म-प्रकृति-विरूद्ध ही, बन जाता अभिशाप।।

|| 427 ||

नमन-नियम को जानकर, चल निश्छल मन साथ!
'बाबा' का सन्देश है- 'प्रभु पकड़ेंगे हाथ'।।

|| 428 ||

प्रातःकाल उठकर करें, चिड़ियाँ कलरब-गान।
प्राकृतिक विज्ञान को, समझे वही सुजान।।

|| 429 ||

बे-मौसम फल-सब्जियाँ, करो नहीं उपभोग!
लग जायेंगे आपको, वरना सौ-सौ रोग।।

|| 430 ||

करो कलेवा दही से, उसमें मीठा डाल।
पर, नित खाना रात में, करता हानि विशाल।।

|| 431 ||

मीठा मिलकर दही की, शक्ति सौ गुनी होय!
नमक डालकर खाय तो, रोग बनेगा कोय।।

|| 432 ||

मिर्च-मसालों से बचो, इनसे बढ़ता पित्त!
'पित्त' बढ़ा तो देख लो! होगा तन-मन चित्त।।

|| 433 ||

बैठे यौवन-कुँज में, खाय-खटाई चाँट!
होगा कुछ दिन में सखे! यौवन बारह बाँट।।

|| 434 ||

'पित्त' जमाई की तरह, **'वात'** मित्र सम जान!
'कफ़' भी दुश्मन की तरह, करले तू पहचान।।

|| 435 ||

गर्म हैं - खट्टा, चरपरा, और नमक को जान।
मीठा-कडुवा-कसैला, ये **शीतल रस** मान।।

|| 436 ||

वात-पित्त-कफ़ से ग्रसित, यह मानव की देह!
इनके सम अनुपात से, बनता मनुज विदेह।।

|| 437 ||

वात-पित्त-कफ़ हैं सखा, घोर परस्पर प्यार!
जहाँ विषमता आ गयी, करते मिट्टी ख्वार।।

|| 438 ||

बचपन **'कफ़'** प्रधान है, यौवन **'पित'** प्रधान!
वृद्धावस्था में सखे! **'वात'** चढ़े परवान।।

|| 439 ||

बालक-युवक-वृद्ध को, क्रमशः **कफ़-पित्त-वात!**
सावधान रहना सखे! करें यही उत्पात।।

|| 440 ||

षड्ऋतु का श्रृंगार है, ज्यों ऋतुराज बसंत!
त्यों षट्रस में श्रेष्ठ है, यह मधुरस जीवंत।।

|| 441 ||

यों तो **अगहन-पौष** में, **कफ** रहता प्रधान!
किन्तु, **चैत्र-बैसाख** में, भरता बहुत उफान।।

|| 442 ||

बढ़ता **ज्येष्ठ-आषाढ़** में, तन में **'पित्त'** विशाल!
क्वार-कार्तिक मास में, कर देता बेहाल।।

|| 443 ||

सावन-भादों मास में, बढ़े सहज ही **'वात'**।
माघ-फाल्गुन में सखे! खूब करे उत्पात।।

|| 444 ||

मन से कडुवा-कसैला, और चरपरा खाय।
कैसा ही **'कफ'** शत्रु हो, ये रस देंय भगाय।।

|| 445 ||

जामाता - सा मानकर, करो **'पित्त'** सम्मान!
मीठा-कडुवा-कसैला, रूचिकर भोजन दान।।

|| 446 ||

करो **'वात'** का बात से, सखा भाँति उपचार!
मीठा-खट्टा प्यार से, दो नमकीन अचार।।

|| 447 ||

ऋतुओं के अनुसार जो, करें भोज-रस पान!
ब्याधि रहित तन-मन बनें, 'बाबा' का वरदान।।

|| 448 ||

पहले खा मिष्ठान्न को, पीछे कर आहार!
इसी नियम से खाय नित, होवे खत्म विकार।।

|| 449 ||

मीठा - कडुवा - चरपरा, खाय कसैला भोज!
क्रमशः जो भोजन करे, बढ़ता-पौरूष ओज।।

|| 450 ||

शक्कर या बूरा मिला, खा ऋतु में **खरबूज!**
कभी न उदर विकार हो, **गुड़** से खा **तरबूज।।**

|| 451 ||

केला साथ **इलायची, दूध-खजूर** मिलाय!
कभी अपच होगा नहीं, **चावल-दधि** से खाय।।

|| 452 ||

गाजर में **मेंथी** मिला, सब्जी लेय पकाय!
बथुआ-दधि का रायता, पाचन शक्ति बढ़ाय।।

|| 453 ||

आम खाय होने लगे, भारी-भारी पेट!
पीकर ठण्डा दूध फिर, जाय खाट पर लेट।।

|| 454 ||

मक्का की रोटी बना, खाय **छाछ-गुड़** डाल!
कीड़े रहें न पेट में, लाभ करे तत्काल।।

|| 455 ||

खाना हो **अमरूद** तो, खाओ सौंफ मिलाय!
इन दोनों के योग से, उदर शक्ति बढ़ जाय।।

|| 456 ||

नियमित जीवन-साधना, मानव रहे निरोग!
लापरवाही की सजा, मिल जाता है रोग।।

|| 457 ||

खाना-पीना गर्म अति, पैदा करे विकार!
दाँत-आँत औ' जिन्दगी, हो जाते बेकार।।

|| 458 ||

मौन भाव से कीजिए, नित प्रति भोजन तात!
वरना,' उर्जा हो क्षरित, और बढ़ेगी **'वात'**।।

|| 459 ||

नित्य सवारी ऊँट की, या करना घुड़दौर!
ऐसे लोगों में रहे, **'वात-दोष'** सिरमौर।।

|| 460 ||

अमृत प्रौढ़ों के लिए, **सिरका** का रस पान!
लेकिन, यौवन के लिए, है यह गरल समान।।

|| 461 ||

भोजन नित्य बनाइये, **सेंधा नमक** मिलाय!
सब नमकों में श्रेष्ठ है, देता रोग भगाय।।

|| 462 ||

दूध-दूध के भोज सब, सात्त्विक हैं स्वादिष्ट!
लिए नमक के साथ तब, करते बहुत अनिष्ट।।

|| 463 ||

रक्त चाप नियमित करे, करे रक्त का शोध!
सेंधा नमक विकार का, करता है प्रतिरोध।।

|| 464 ||

भाँति-भाँति के नमक हैं, भाँति-भाँति के काम!
सेवन सेंधा नमक का, तन को दे आराम।।

|| 465 ||

शक्ति बढ़े, वय भी बढ़े, यौवन बढ़े अपार!
करिये सेंधा नमक का, भोजन में आहार।।

|| 466 ||

प्रकृति विरूद्ध न लीजिये, खान-पान-सम्मान!
वरना, यश औ' देह का, शीघ्र होय अवसान।।

|| 467 ||

भूख लगे, भोजन करे, बिना भूख क्यों खाय?
वरना होगा अपच भी, आँव भयंकर जाय।।

|| 468 ||

सूत्रधार हर रोग की, आंत करे कमजोर।
जिसे लगे छूटे नहीं, आँव बड़ी मुँह जोर।।

|| 469 ||

अपच जिसे होगी नहीं, उसे न आँव सताय।
आँव जिसे होगी नहीं, उसे न रोग डराय।।

|| 470 ||

मन्दाग्नि पैदा करे, अगणित उदर विकार।
नित्य सौंठ काढ़ा पिये, बढ़ती अग्नि अपार।।

|| 471 ||

त्रिफला का नियमित करे, शयन पूर्व उपभोग!
मानव-जीवन में कभी, पैदा होय न रोग।।

|| 472 ||

अर्द्धशती जीवन हुआ, रखिए इतना ध्यान!
स्वस्थ आदमी के लिए, दालें गरल समान।।

|| 473 ||

लघु पीपल, काली मिरच, सौंठ बराबर होय!
बना **त्रिकुटा** खाइये, रोगी होय न कोय।।

|| 474 ||

दालें भूल न खाइये, अर्द्धशती के बाद!
वरना **वात विकार** से होय बदन बर्बाद।।

|| 475 ||

'त्रिफला'-त्रिकुटा' सम मिला, **काढ़ा** सखे! बनाय!
नित प्रति प्रातः लीजिए, स्वस्थ बदन हो जाय।।

|| 476 ||

ग्रीष्म ऋतु में लीजिए, **त्रिफला गुड़** से रोज!
सेंधा नमक से कीजिए, वर्षा ऋतु में भोज।।

|| 477 ||

शरद ऋतु में **त्रिफला, मिश्री** से कर पान!
शिशिर ऋतु में **पीपली**, करे लाभ अति जान।।

|| 478 ||

ऋतु हेमन्त में **त्रिफला**, सखे! **सौंठ** के साथ!
बसंत ऋतु में खाइये, **शहद** घोलकर तात!!

|| 479 ||

बथुआ या **चौलाइ** का, **साग** निरन्तर खाय!
कभी बने **पथरी** नहीं, बनी खत्म हो जाय।।

|| 480 ||

सेंधा नमक से लीजिए, **'त्रिफला'** रोज मिलाय!
कितना मोटा हो बदन, सुन्दर-सा बन जाय।।

|| 481 ||

अर्द्धशती जीवन हुआ, करले सोच-विचार।
किया न तूने आज तक, अपना दूर विकार।।

'सुनील रावत' के नाम

मेरठ-विक्टोरिया पार्क अग्निकाण्ड ११/४/२००६ से
२४/४/२००६

जन्म ३० सितम्बर १६६६ : दिवंगत २४-०४-२००६
प्रातः लगभग १० बजे
सफदर जंग अस्पताल, नई दिल्ली
वार्ड नं० - २२/ICU - सघन चिकित्सा कक्ष,

|| 482 ||

बड़ा भयानक हादसा, क्रंदन चारों ओर!
आग-आग ही दीखती, धुँआ-धुँआ हर छोर।।

|| 483 ||

धरती से आकाश तक, आग-धुँआ का जाल!
सुरसा जैसा था बदन, आग-आग का हाल।।

|| 484 ||

जड़-चेतन धूँ-धूँ जले, जला वहाँ विज्ञान!
विवश रहे सब चीखते, जलते प्राण-निशान।।

|| 485 ||

पति-पत्नी, माता-पिता, भ्रात-बहिन-सम्बन्ध!
ज्वाल-ब्याल ने डँस लिये, रिश्तों के अनुबन्ध।।

|| 486 ||

माँ की ममता जल गयी, छोड़ न पायी साथ!
छाती से चिपटी रही, लिए खिलौना हाथ।।

|| 487 ||

बने राख की ढेरियाँ, वृद्ध-युवा औ' बाल!
चीख-पुकारें पूछतीं, कहाँ गये हा! लाल।।

|| 488 ||

जड़-चेतन सब कुछ जला, जला वहाँ व्यापार!
जले नयन के सामने, मानवता के तार।।

|| 489 ||

चीख पुकारें गूँजतीं, घोर त्रास, अवसाद!
रिश्ते रो-रोकर करें, दर्द भरी फरियाद।।

|| 490 ||

जले-अधजले कुछ बचे, पड़े मिले बेहोश!
अनजाने कितने जले, मरे रहा क्या होश!!

|| 491 ||

नेताओं का जुड़ गया, राजनीति से तार!
लाशों के अम्बार में, वोटों का व्यापार।।

|| 492 ||

फँसा जाल में देखती, ज्यों हिरणी निज बाल!
त्यों माँ की ममता लखे, काल-चक्र का जाल।।

|| 493 ||

कसा शिकंजा मौत ने, नाच रहा शैतान!
नैन आँसुओं से भरे, याद करें भगवान।।

|| 494 ||

गहन चिकित्सा कक्ष में, पड़े सैकड़ों लोग!
बचा न पाये मृत्यु से, दवा, दुआ औ' योग।।

|| 495 ||

अजब मृत्यु का जाल है, गहन चिकित्सा कक्ष!
जो भी चंगुल में फँसा, लिया उसी को भक्ष।।

|| 496 ||

गहन चिकित्सा कक्ष से, मिले सूचना रोज!
'किया तुम्हारे प्यार का, आज मृत्यु ने भोज'।।

|| 497 ||

गहन चिकित्सा कक्ष से, जब आती आवाज!
परिजन विवश निहारते, मृत्यु का आगाज।।

|| 498 ||

गहन चिकित्सा कक्ष है, स्वच्छ मृत्यु का धाम!
यहाँ चिकित्सक-नर्स दें, मृत्यु के पैगाम।।

|| 499 ||

गहन चिकित्सा कक्ष में, धत! मानव-सम्बन्ध!
यहाँ चिकित्सक-नर्स के, मृत्यु से अनुबन्ध।।

|| 500 ||

यहाँ 'नर्स' सुनती नहीं, दर्द भरी फरियाद!
और चिकित्सक भी यहाँ, हृदयहीन जल्लाद।।

|| 501 ||

गहन चिकित्सा कक्ष में, करती मृत्यु विहार!
यहाँ चिकित्सक-नर्स हैं, दास सभी लाचार।।

|| 502 ||

गहन चिकित्सा कक्ष में, क्या बचना आसान?
यहाँ मृत्यु का राज है, बचा वही भगवान।।

|| 503 ||

मुँह पर पहने 'मास्क' नित, रहें चिकित्सक-नर्स!
रोगी-परिजन को यहाँ, पड़े लोटना फर्श।।

|| 504 ||

मानव-मानवता यहाँ, हैं निरीह लाचार!
बकरा-बकरी ईद के, कटना ही ज्यों सार।।

|| 505 ||

गहन चिकित्सा कक्ष का, सुनते ही बस, नाम!
रोगी-परिजन सभी के, उड़ते होश तमाम।।

|| 506 ||

हाय! परस्पर देखते, पति-पत्नी बेचैन!
किंकर्त्तव्य विमूढ़ से, आँसू डूबे नैन।।

|| 507 ||

कोई भी समझे नहीं, हाय! दर्द की बात!
परिजन झूँठी दें यहाँ, ढाढ़स की सौगात।।

|| 508 ||

देख पुत्र की लाश को, उठी रक्त की ज्वाल!
पलभर में ही प्यार ने, पैदा किया बवाल।।

|| 509 ||

शीशे-शीशे कर दिये, सारे चकनाचूर!
रौद्र रूप ममता खड़ी, प्रशासन मजबूर।।

|| 510 ||

क्रोध आँसूओं में बहा, गया अन्ततः हार!
शान्त प्यार भी हो गया, उतर गया ज्यों ज्वार।।

|| 511 ||

कुछ आँसू अवसाद के, कुछ पीड़ा, कुछ प्यार!
कभी निराशा में लगा, गयी मौत भी हार।।

|| 512 ||

हम अपने मन की व्यथा, किसे सुनायें यार!
मौत खड़ी थी सामने, सिसक रहा था प्यार।।

|| 513 ||

'टुक-टुक' - 'टन-टन' की सतत, यंत्र करे आवाज!
हृदय-नभ में खग उड़े, देता यह आग़ाज।।

|| 514 ||

बता, भूल क्या हो गयी, अनजाने में यार!
वरना, क्या कारण हुआ, मिलता कष्ट अपार।।

|| 515 ||

अभी-अभी तो ठीक़ थे, क़रते हँसकर बात!
पल में प्रलय हो गयी, देख रहे हम तात!!

|| 516 ||

दारूण विपदा देखकर, परिजन सब हैरान!
प्रश्न चिन्ह लगने लगे, निष्ठा पर भगवान।।

|| 517 ||

दर्द-कसक-पीड़ा अमित, पल-पल का संत्रास!
सखे! खड़े हो सामने, भोग रहे हम त्रास।।

|| 518 ||

अपने मन की व्यथा को, कहा किसी से नाय!
तेरे ही आदेश से, धीरज रहे बँधाय।।

|| 519 ||

तू जाने, मैं जानता, क्या होगा परिणाम!
सबको ढाढ़स दे रहा, 'याद करो श्रीराम'।।

|| 520 ||

परिजन शैय्या पर पड़ा, निभा रहा मन कर्म!
घोर व्यथा की निशा में, कितना हुआ अधर्म।।

|| 521 ||

सौम्य भाव, कातर नयन, शंकित मन, अभिराम!
मौनभाव से माँगती, पति का जीवन बाम।।

|| 522 ||

झूंठा ढाढ़स दे रहा, ओठों पर मुस्कान!
'सब कुछ होगा ठीक ही, याद करो भगवान'।।

|| 523 ||

बार-बार झलकी यहाँ, आँसू बनकर प्रीत!
शायद तेरे नाम से, मिले कहीं पर जीत।।

|| 524 ||

बालक बाल-मराल-से, छीन रहा मुस्कान!
भोले! क्या अपराध है, कुछ तो कर आसान!!।।

|| 525 ||

कितनी भोली भावना, तेरी कला अनूप!
स्नेह की प्रतिमूर्ति है, यथा नाम अनुरूप।।

|| 526 ||

मूरत मन्दिर में बनी, किए नैन द्वय बन्द!
कलाकार से माँगती, रचना अपना छंद।।

|| 527 ||

पति जब शैय्या पर पड़ा, खड़ा सामने काल!
तू जाने, मैं जानता, क्या पत्नी का हाल??

|| 528 ||

तरह-तरह से मिल रहे, दवा-दुआ-आचार!
जुगनू जैसी चमक दे, बुझ जाते लाचार।।

|| 529 ||

रोगी शैय्या पर पड़ा, तड़प रहा दिन-रात!
उसके ही मुख से करे, बहकी-बहकी बात।।

|| 530 ||

कभी चिकित्सक-नर्स तो, सेवक बने ललाम!
रोगी शैय्या पर पड़ा, हँसकर करे सलाम।।

|| 531 ||

माँ की ममता ने किए, भक्ति-भावना-मंत्र!
पत्नी की भी साधना, हुई अन्त परतंत्र।।

|| 532 ||

दूरभाष से ही मिला, परिजन का सन्देश!
प्राण-पखेरू उड़ गये, प्रियतम गये विदेश।।

|| 533 ||

गूँगा-बहिरा हो गया, तू भी हे भगवान!
काल-चक्र पल भर रुका, जीत गया शैतान।।

|| 534 ||

तूने सुनी न एक भी, पत्थर-उर-भगवान!
दो कलियों की छीन ली, पलभर में मुस्कान।।

|| 535 ||

मधुर-मधुर बातें करीं, भला दिया विश्वास!
चले गये सब छोड़कर, खूब किया उपहास।।

|| 536 ||

बीच अधर में ही गये, बन्धु! छोड़कर साथ!
सिला दिया यह प्यार का, भला मिलाया हाथ।।

|| 537 ||

अन्तिम क्षण तक भी सखे! तनिक न मानी हार!
हाय! अन्ततः जिन्दगी, गयी काल से हार।।

|| 538 ||

बंधु! गये जग छोड़कर, याद रहेगा प्यार!
पूर्व जन्म का कर्ज था, कुछ तो दिया उतार।।

|| 539 ||

बन्धु! गये तुम भी वहाँ, जाय जहाँ परजीव!
हम मानव इस लोक के, लगता बड़ा अजीब।।

|| 540 ||

बंधु! जहाँ पर भी रहो, बढ़े ईश में भाव!
अपने परिजन पर सदा, रखना तुम समभाव।।

|| 541 ||

चले गये इस लोक से, बदल गया सहवास!
पर, मन को होता नहीं, सखे! तनिक विश्वास।।

|| 542 ||

हुआ नैन के सामने, अन्त-क्रिया-स्नान!
लगता मानो सामने, खड़े हुए श्रीमान।।

|| 543 ||

यों तो रहता सामने, मुखड़ा, छवि-मुस्कान!
पर, तेरी आवाज को, तरस गये हैं कान।।

|| 544 ||

आँखों में आँसू भरे, खड़े गंग के तीर!
गंगा-माँ को दे दिया, अस्थि-सुमन का नीर।।

|| 545 ||

भाव-सुमन अर्पित करें, करते तुमको याद!
बन बसंत के दूत तुम, घर रखना आबाद।।

|| 546 ||

हुआ तुम्हारी याद में, आरिष्टी का पर्व!
शेष रह गयीं याद अब, किया करेंगे गर्व??

|| 547 ||

हर रिश्ते के बीच में, उठता दर्द कराह!
नैन सभी कुछ देखते, देखें तुम्हें न आह!!

|| 548 ||

सब कुछ हाथों ने किया, नैना बने गवाह!
हृदय कितना बाबरा, उठता दर्द कराह।।

|| 549 ||

हर रिश्ते की सुन रहा, पैरों की पदचाप!
मन कहता-'तुम आ गये', इस घर में चुपचाप।।

|| 550 ||

हर घटना के मूल्य में, होगा सत्य विशेष!
तथ्य जान स्वीकार ले, छुपा हुआ सन्देश।।

|| 551 ||

टँगा हुआ दीवार पर, माला पहने चित्र!
जीवन की सच्चाई को, समझ गया हूँ मित्र!!

|| 552 ||

दर्द, टीस में ढल गया, फिर भी मन बेचैन!
सब कुछ देखें सामने, समझ न पायें नैन।।

|| 553 ||

गया समय आता नहीं, रह जाता संवाद!
वे पल मिलन-विछोह के, पल-पल आते याद।।

|| 554 ||

सूना-सूना-सा लगे, तुम बिन घर का द्वार!
बैठ सभी के बीच में, नैना रहे निहार।।

|| 555 ||

समदरसी कहते प्रभो! देते सबको न्याय!
कहो! किसलिए? क्यों किया, बच्चों से अन्याय।।

|| 556 ||

दो बालक हैं फूल से, माँ अनाथ, असहाय!
उठा सहारा भी लिया, अब क्या होगा हाय!!

|| 557 ||

अति पीड़ा के दौर से गुजर रहा संसार!
मन कितना बेचैन है, देख-देखकर हार।।

|| 558 ||

जब तक तन में प्राण हैं, तब तक हैं सम्बन्ध!
सांस रूकी तो हो गये, खत्म सभी अनुबन्ध।।

|| 559 ||

हुई दिवंगत आत्मा, खत्म हुए अनुबंध!
याद तनिक रहते नहीं, गत जीवन सम्बंध।।

|| 560 ||

पल-पल करके दिन गये, बीत गयीं सब रात!
जीवन जिया उधार का, देख-देखकर गात।।

|| 561 ||

हुआ दिवंगत आदमी, याद करें फिर लोग!
जितना करते याद वे, उतना बढ़ता योग।।

हंस-हंसिनी : एकार्थ काव्य

|| 562 ||

रहते घर के कुँज में, हंस-हसिनी साथ!
नित प्रति क्रीड़ा-कर्म से, उठा हुआ था माथ।।

|| 563 ||

साथ-साथ रहते हुये, बीत गये कुछ साल!
हँसते-उड़ते-खेलते, रहते वे खुशहाल।।

|| 564 ||

ईश्वर की कृपा बड़ी, प्यार चढ़ा परवान!
मूर्त्त रूप हो प्यार का, मिला उन्हें वरदान।।

|| 565 ||

जन्मी बाल - मराल सी, हंस - हंसनी - प्रीत!
जब माता हो हंसिनी, पिता हंस - सा मीत।

|| 566 ||

जन्म हंसिनी ने दिये, प्यार रूप द्वय बाल!
जिन्हें देखकर हंस का, बड़ा मुदित था भाल।।

|| 567 ||

कली-कली हर्षित हुई, हर्षित कुँज अपार!
दोनों बाल-मराल से, हंस करें मनुहार।।

|| 568 ||

खुशी-खुशी में कट गये, साथ-साथ कुछ साल!
समझ न पाये काल की, हंस-हंसिनी चाल।।

|| 569 ||

पता नहीं कब चमन को, लगी नज़र की आग!
हंस, छोड़कर हंसिनी, गया अकेला भाग।।

|| 570 ||

सन्न रह गयी हंसिनी, समझ न पायी बात!
किंकर्तव्य विमूढ़-सी, हाय! काल की घात।।

|| 571 ||

रही तड़पती-बिलखती, कातर नैन निहार!
हा! निर्मोही हंस को, याद न आया प्यार।।

|| 572 ||

भूल गया क्यों हंस ही, बच्चों की मनुहार!
हंस-हंसिनी ने किया, जिनको अतिशय प्यार।।

|| 573 ||

हाय! अभागी हंसिनी, है कितनी मजबूर!
पल-पल पथ को हेरती, स्वप्न हो गये चूर।।

|| 574 ||

रो-रो अँखियाँ पूछती, हर राही से बात!
क्या देखा है हंस को, कहीं बताओ तात??

|| 575 ||

कवि ने देखी हंसिनी, रोती अति बेचैन!
रोदन हृदय छू गया, भूल गया सब चैन।।

|| 576 ||

कभी-कभी तो हंसिनी, इतनी हुई उदास!
जीवन-इच्छा की सखे! टूट गयी ज्यों आस।।

|| 577 ||

कई बार ऐसा लगा, यह जीवन बेकार!
कुछ जीवन की वंचना, मिली हार ही हार।।

|| 578 ||

रहा हंसिनी को सदा, इसका बड़ा मलाल!
कुछ भी कहा न हंस ने, कैसा किया कमाल??

|| 579 ||

जिसको अर्पण था किया, इस जीवन का सार!
चला गया चुपचाप हा! छोड़ अपरिमित भार।।

|| 580 ||

चन्द दिनों के साथ में, खूब लुटाया प्यार!
ऐसा भी क्या हो गया, छोड़ गये घर-बार।।

|| 581 ||

रहा न पलभर एक भी, कभी किया हो तंग!
सदा समर्पण-प्यार में, दोनों का रस-रंग।।

|| 582 ||

कैसी विपदा आ गयी, भूल गये यह कुँज!
प्यार, हंस का रूप था, हंस प्यार का पुँज।।

|| 583 ||

हंस गया घर छोड़कर, कौन करे विश्वास?
नित्य हंसिनी कर रही, जप-पूजा-उपवास।।

|| 584 ||

सहसा पतझर आ गया, लौटे फिर मधु मास!
इसी आस-विश्वास में, टिकी हुई हैं सांस।।

|| 585 ||

कभी-कभी तो चेतना, प्रश्न करे बेचैन!
'गया हुआ लौटा कहाँ?' दिन रोओ या रैन।।

|| 586 ||

जो होना था हो गया, करो सहज स्वीकार!
लिखा नियति ने जब तलक, मिले विरह औ' प्यार।।

|| 587 ||

हंस कभी मरता नहीं, और न छोड़े कुँज!
बदल गया है रास्ता, चला गया नवकुँज।।

|| 588 ||

अपने वश कुछ भी नहीं, चलता जीवन-चक्र।
सब कुछ विधि के हाथ में, करो उसी पर फ़क्र।।

|| 589 ||

पता नहीं कब ज़िन्दगी, हमसे जाये रूठ!
यह विधना की सृष्टि है, प्राणि-मात्र है झूंठ।।

|| 590 ||

कितने सुन्दर फूल से, ये बालक उपहार!
सखे! धरोहर ईश की, करो इन्हें तुम प्यार।।

|| 591 ||

दो कलियों को छोड़कर, हंस गया परदेश!
मर्म न कोई जानता, गया कौन-से देश??

|| 592 ||

वन-उपवन औ' कुँज में, खोज रही है हंस!
मिला न अब तक है पता, विरहिन का अवतंस।।

|| 593 ||

रहे खोजते हंस को, बीत गये हैं साल!
शनैः शनैः ही पा गये, यौवन बाल-मराल।।

|| 594 ||

अब प्रफुल्लित हंसिनी, सिमट गयी है याद!
हृदय-सरि में बह गया, विरहिन का अवसाद।।

|| 595 ||

भूल गयी सब हंसिनी, बाल बन गये हंस!
मानो, आँखें कह रहीं, हंस! संभालो! वंश।।

।। 596 ।।

दृढ़ इच्छा औ' त्याग की, मूरति बनी विशाल!
आज हंसिनी बन गयी, जग में एक मिसाल।।

।। 597 ।।

पीड़ा कितनी हो सघन, घटना हो दुर्दन्त!
दृढ़ इच्छा औ' त्याग से, हुआ कष्ट का अन्त।।

।। 598 ।।

आता-जाता सृष्टि में, सदा अकेला जीव!
यह जीवन का सत्य है, इसे न भूलो पीव!!

।। 599 ।।

यह ईश्वर की सृष्टि है, कितनी मनहर गर्क!
फूल सरीखा आदमी, जाय न पड़ता फर्क।।

।। 600 ।।

अलग-अलग मानव यहाँ, अलग-अलग हैं धर्म!
खुद को सेवक मानकर, करता चल नित कर्म।।

।। 601 ।।

जो भी आया एक दिन, जाना देर-सवेर!
गया मीत क्या छोड़कर, अन्तर्मन से हेर।।

।। 602 ।।

छोटा-सा जीवन मिला, खुशियाँ-प्यार-अपार!
चलते-चलते भी सखे! बाँट गया उपहार।।

।। 603 ।।

मन चाहें क्यों भूलना, चन्द दिनों का साथ!
कैसा जादू कर गये, प्यार झुकाता माथ।।

।। 604 ।।

पल-पल सुधियाँ साथ में, है अति पावन स्नेह!
मूर्ति बन गयी हंसिनी, त्याग-समर्पण-नेह।।

।। 605 ।।

विधना की इस सृष्टि का, जड़-चेतन हर रूप!
त्याग-समर्पण-प्यार से, जग में बना अनूप।।

।। 606 ।।

देकर धूनी त्याग की, कर पावन निज नेह!
बदले जीवन दृष्टि भी, बदले तन-मन-गेह।।

।। 607 ।।

लेश याद रहती नहीं, त्याग बदन-सा-गेह!
लोग याद करते जिसे, वह है-तेरा स्नेह।।

।। 608 ।।

पता नहीं हो जाय कब, इस जीवन का अन्त?
करले ऐसे कर्म तू, लोग कहें सब सन्त।।

स्फुट स्वर

।। 609 ।।

दर्द, हर्ष औ' मौत के, कारण बनें अनेक!
जीवन बड़ा विचित्र है, आँसू होते एक।।

।। 610 ।।

आँसू-आँसू में नहीं, होता कोई भेद!
केवल अन्तर्दृष्टि ही, करे मनों में छेद।।

।। 611 ।।

ऊँच-नीच के नाम पर, बाँटे मानव-वंश!
अरे! कलंकित हो गया, तू मानव अवतंस।।

।। 612 ।।

मानव-मानव बीच में, पैदा करीं खपार!
ऐसी माया राम की, अन्तर किए अपार।।

|| 613 ||

माया बसती स्वर्ग में, करे यान से सैर!
चींटी-हाथी में कहाँ, हिम्मत करे न वैर।।

|| 614 ||

घुटनों में होने लगा, मीठा-मीठा दर्द!
अरे! जवानी हो रही, धीरे-धीरे सर्द।।

|| 615 ||

कलम क्रान्ति की वाहिका, कलम शान्ति की पुँज!
जब जग जाती है कलम, लगें मॅहकने कुँज।।

|| 616 ||

शूल-फूल दोनों विषम, बुरी-भली ज्यों बात!
झूंठ बोल त्यों आदमी, करे मनों पर घात।।

|| 617 ||

अजब समय का दौर है, झूंठ चढ़ा परवान!
चौराहे शूली चढ़ा, पलभर में भगवान।।

|| 618 ||

बड़ी विलक्षण नारियाँ, रचना विविध - विचित्र!
क्रोध, अश्क, मुस्कान से, पल में बदलें चित्र।।

|| 619 ||

अभी न निकले दूध के, जिनके कोमल दांत!
दिखा रहे वे वीरता, जिनके ओज न आंत।।

|| 620 ||

ज्यों सुख-दुःख का आवरण, सका न कोई माप!
त्यों ऐसा कोई नहीं, किया न जिसने पाप।।

|| 621 ||

अरबों-खरबों का करें, रोज कलम से मेल!
मालिक नहीं छदाम के, कैसा विधि का खेल।।

|| 622 ||

प्रबंधक हैं कोष के, करें बैंक प्रबन्ध!
चपरासी माने नहीं, पर कोई अनुबन्ध।।

|| 623 ||

ममता-सेवा-त्याग है, और समर्पण-प्यार!
नारी विधि की सृष्टि का, है अनुपम उपहार।।

|| 624 ||

पूर्ण कहें सम्पूर्ण हैं, सभी तरह के लोग!
अपने-अपनों को सभी, बाँट रहे हैं भोग।।

|| 625 ||

जिनको अपने धर्म का, नहीं तनिक भी ध्यान!
वे खुद को कहने लगे, बिना बात भगवान।।

|| 626 ||

मानवता के रक्त में, रंगे जिन्होंने हाथ!
लोकतंत्र में देखलो, ऊँचे उनके माथ।।

|| 627 ||

कत्ल क्रूरता से किया, सारा काम तमाम!
अब नाचें सत्संग में, राम-कृष्ण ले नाम।।

|| 628 ||

शनैः शनैः बदले सभी, युग के लोकाचार!
लेकिन, तुम बदले नहीं, आज तलक भी यार!!

|| 629 ||

लूट रहे हैं अस्मिता, ले सेवक-पद नाम।
सेवा का है आवरण, नियत हुई बदनाम।।

|| 630 ||

किंकर्तव्यविमूढ़ अब, भेड़ें रहीं निहार!
सौंप भेड़ियों को दिया, जंगल बीच विहार।।

|| 631 ||

नहीं परिंदा दीखता, करें भेड़िए राज!
धरती से अम्बर तलक, पहरा देते बाज।।

|| 632 ||

आँख बचाकर भेड़िया, घुसा घेर में आय।
पकड़-पकड़कर भेड़ को, चबा-चबाकर खाय।।

|| 633 ||

मनुज-मनुज के साथ में, छोड़ रहा सम्बन्ध।
इसीलिए दीवार से, जोड़ लिया अनुबन्ध।।

|| 634 ||

महानगर के सामने, नगर हुआ मजबूर!
अनजाने ही हो गया, नगर, गाँव से दूर।।

|| 635 ||

सूखा की बधिया मरी, शोकाकुल था गाँव!
लुटी अस्मिता नगर में, तनिक न आया ताँव।।

|| 636 ||

भला-बुरा कोई नहीं, समय-समय की बात!
ज्यों सूरज आकाश में, ढलते हैं दिन-रात।।

|| 637 ||

अंधे की लाठी भली, चले पकड़कर हाथ।
दो नैनों की दोस्ती, रहे न जीवन-साथ।।

|| 638 ||

नहीं नियम-सिद्धान्त कुछ, धनवानों के संग।
गिरगिट के स्वाभाव-सा, पल-पल बदलें रंग।।

|| 639 ||

मेरा आशय और था, वे समझे कुछ और!
बिना बात ही दूरियाँ, बन बैठीं सिरमौर।।

|| 640 ||

वाह! वाह! रे आदमी! बातें गढ़ता खूब!
ऊँचे बैठ मचान सोपान पर, गया अहं में डूब।।

|| 641 ||

यादों की शहनाइयाँ, बजती रहीं जरूर!
चला जा रहा आदमी, है कितना मजबूर।।

|| 642 ||

सूअर जैसा थूथड़ा, भैंसा जैसा गात!
उल्लू जैसी आँख है, दिवस न समझे रात।।

|| 643 ||

बैठा है जिस डाल पर, काट रहा वह डाल!
यह मनमानी जिन्दगी, चले न ज्यादा साल।।

|| 644 ||

ये तरू छाया- फूल-फल, देते हमें समीर!
तू इनको ही काटकर, होगा नहीं अमीर।।

|| 645 ||

यार! आचरण राम का, जग करता है याद!
अब रावण घर-घर हुए, कौन सुने फरियाद।।

|| 646 ||

महँगाई ने खींच दी, पत्थर बीच लकीर!
साहुकार के सूद से, निर्धन बना फकीर।।

|| 647 ||

बाँस बरेली में मिला, हमें न कोई बाँस!
पर, मानव-व्यवहार में, चुभी हुई थी फाँस।।

|| 648 ||

धन के लोभी हो गये, आज जगत के सन्त!
भक्ति-शक्ति गिरवीं रखी, और बन गये कन्त।।

|| 649 ||

अब तो होते ही नहीं, सन्तों के दीदार!
मनुज-मनुज के बीच में, खिंची हुई दीवार।।

|| 650 ||

घर-आँगन-दहरी तजे, दिया गाँव भी छोड़!
महिलाओं की भीड़ को, सन्त दिखाते मोड़।।

|| 651 ||

मौन खड़ी है देखती, अजा हरी है घास!
पता नहीं कल ईद का, इसको बनना ग्रास।।

|| 652 ||

पशु पाले इन्सान ने, खिला-खिलाकर अंश!
पर, कुर्बानी के लिए, खुद बन जायें कंस।।

|| 653 ||

जल की लहरें उठ रहीं, नाच रही है झील!
बैठ किनारे देखता, बालक इन्हें सुनील।।

|| 654 ||

सेवा औ' सद्भाव से, बनता प्यारा गेह!
खुशियाँ पल-पल बाँटता, सहज भाव स्नेह।।

|| 655 ||

उपवन की रक्षा करे, है माली का काम!
सदन-वाटिका सज रही, माता से अविराम।।

|| 656 ||

पापा की यादें बसीं, इस घर में स्वच्छंद!
बसी हुई है इत्र में, जैसे सहज सुगंध।।

|| 657 ||

स्वस्थ रहो, सानंद हो, कभी न हो अपकर्ष!
शुभे! मुबारक जन्म दिन, रहे सदा उत्कर्ष।।

|| 658 ||

करती है अठखेलियाँ, अम्बर बीच पतंग!
बाल-करों में छोर है, तन-मन भरी उमंग।।

|| 659 ||

राखी बाँधों, प्यार दो, अथवा कहो गँवार!
नेह कभी छूटे नहीं, सदा करेंगे प्यार।।

|| 660 ||

मात-पिता के सामने, करता जग मनुहार!
पता नहीं छिन जाय कब, घर-आंगन का प्यार।।

|| 661 ||

जहाँ-जहाँ जिसको रूचे, रहो वहीं पर मीत!
दूर रहे से ही बढ़े, सन्तानों में प्रीत।।

|| 662 ||

नियम जहाँ होते नहीं, होती वहाँ अनीति!
नियम-नीति होते जहाँ, वहीं निभेगी प्रीति।।

|| 663 ||

आज वही दिखला रहे, सब अपनी औकात!
कभी पिता के सामने, करते प्यारी बात।।

|| 664 ||

तू गैरों को कोस मत, जग को अपना मान!
मिली चुनौती है जहाँ, उसको ले पहचान।।

|| 665 ||

जो रहते हैं पास में, पल में होते दूर!
समय पड़े पर हाथ ही, हो जाते क्यों क्रूर।।

|| 666 ||

सिसक-सिसक कर रो रहा, हाथ-हाथ में फूल!
निर्मम हाथों ने दिये, हाय! शूल पर शूल।।

|| 667 ||

हिन्दू करता भस्म है, मुस्लिम करता ख़ाक़!
केवल मन का भेद है, तन हो जाता राख।।

|| 668 ||

गली - गली में घूमते, लबरे - चोर - गँवार!
भले आदमी का भला, कैसे बचे मयार।।

|| 669 ||

आये थे किस काम को, सौंप दिया क्या काम?
दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम।।

|| 670 ||

यह जीवन है राम का, मिला हमें प्रतिदान!
हँसी-खुशी से बाँटिये, अनुभव का अवदान।।

|| 671 ||

दौड़ रही हैं गाड़ियाँ, मिले न इनका छोर!
मौत हथेली पर रखे, दौड़ रहे चहुँ ओर।।

|| 672 ||

पता नहीं किस काज हित, आता है इन्सान?
चलते-चलते, राह में, बन जाता शैतान।।

|| 673 ||

बड़ी खूबसूरत बनी, विधि की सृष्टि अपार!
रत्न-श्रेष्ठ मानव जहाँ, है अनुपम उपहार।।

|| 674 ||

फूलदार, फलदार हों, अथवा छायादार!
अपने प्रिय को दीजिए, पौधों का उपहार।।

|| 675 ||

मात-पिता-परिवार को, पुत्र वही अनमोल!
जो वाणी-व्यवहार का, मधुरस देता घोल।।

|| 676 ||

राजनीति के कुँज में, कौऐ खेलें खेल!
भोज लोमड़ी बाँटती, गधे कराते मेल।।

|| 677 ||

क्रोध-लाभ औ' भोग का, चले न जिस पर तीर!
मनुज वही संसार में, धीर-वीर-गम्भीर।।

|| 678 ||

धीर - वीर - विद्या निपुण, संत - राज - सम्मान!
पूर्व जन्म के कर्म से, मिलते ये प्रतिदान।।

|| 679 ||

वैर-प्रीत-दुःख-सुख-विपति, पतन और उत्थान!
जड़-चेतनमय सृष्टि का, संचालक भगवान।।

|| 680 ||

लालच की अनुभूति ही, पैदा करे विकार!
बैर-द्वेष-प्रपंच के, सहज मिलें उपहार।।

|| 681 ||

हुआ लालची आदमी, रचे नित्य प्रपंच!
सोने की लंका गयी, रावण बचा न रंच।।

|| 682 ||

घर-बाहर-परिवार में, कोई बचे न मित्र!
लालच रूपी सुरा में, कहाँ समाता इत्र।।

|| 683 ||

आपे से बाहर हुआ, सर वर्षा जल पाय!
जैसे ओछा आदमी, धन पाये बौराय।।

|| 684 ||

कुछ तो हैं मजबूरियाँ, जो हम करें लिहाज़!
वरना कितनों के किये, हमने ठीक मिजाज़।।

|| 685 ||

सिंह सदा ही सिंह है, करे न थोथी बात!
वाणी औ' व्यवहार से, करे लोमड़ी घात।।

|| 686 ||

बड़े-बड़े आये यहाँ, बनकर तीरन्दाज़!
चला चक्र जब काल का, बदल गया अन्दाज़।।

|| 687 ||

ऊँचे पद पर बैठकर, भूल गया आभार!
गिरता तिनका आँख में, बदल जाय आचार।।

|| 688 ||

वाणी औ' व्यवहार में, कुछ तो कर ले मेल!
बिना बात क्यों कर रहे, खत्म प्यार का खेल।।

|| 689 ||

बात-बात में हो गया, खुद से इतना दूर!
इसीलिए तू हो रहा, खुद इतना मजबूर।।

|| 690 ||

पति-पत्नी सम्बन्ध है, जीवन का संवाद!
एक अवतरण प्यार का, दूजा है अनुवाद।।

|| 691 ||

सत-रज-तम सम आवरण, यह धरती-आकाश!
उलट-पुलट अनुपात ही, पैदा करे विनाश।।

|| 692 ||

नन्हीं कली गुलाब की, यह छौना-सा बाल!
स्वस्थ रहे, सानंद हो, जिए हजारों साल।।

|| 693 ||

क्षण-क्षण जीवन बढ़ रहा, पलते हैं दिन-चार!
आयु-परी उड़ती रही, जीत मिली या हार।।

|| 694 ||

मानव-मन अज्ञान से, करता ओछे कर्म!
जब दुःख पड़ता भोगना, तभी समझता मर्म।।

|| 695 ||

डूब गया है स्वार्थ में, मानव-मन अज्ञान!
धन की चक-मक आग ने, बदल दिया विज्ञान।।

|| 696 ||

अपने-अपने कर्म की, सजा भोगते जीव!
विमुख हुआ जो कर्म से, लगता उसे अजीब।।

|| 697 ||

भाँति-भाँति के हैं यहाँ, दुनिया में इन्सान!
निज तन पर पीड़ा सहें, पर बाँटे मुस्कान।।

|| 698 ||

मधुमय वाणी बोलकर, दें सबको सुख लोग!
मिट जाते उनके सहज, दुनिया भर के रोग।।

|| 699 ||

ऊँचा पद-धन पायकर, क्यों बौराया मीत?
पता नहीं छिन जाय कब, पद-बल, धन-बल प्रीत।।

|| 700 ||

धन लोलुप करता सदा, उलटे-पुलटे काम!
उसे न चिन्ता लोक की, मिलता रहे छदाम।।

|| 701 ||

हर घटना का आगमन, देता यह सन्देश!
जीवन का उत्कर्ष है, आवागमन विशेष।।

|| 702 ||

सत्य कहीं छुपता नहीं, और न हो भयभीत!
जितना तह तक जाइये, बढ़े प्रीत ही प्रीत।।

|| 703 ||

मात-पिता के प्यार पर, जो करता सन्देह!
उसे कभी सन्तान से, मिले न सच्चा नेह।।

|| 704 ||

उर का दृढ़ संकल्प ही, पैदा करता शक्ति!
जो सोचें, पूरा करें, बढ़ती मन में भक्ति।।

|| 705 ||

समझ रहा स्थूल को, बड़ी शक्ति नादान!
यह तो भौतिक आवरण, है अति सूक्ष्म महान।।

|| 706 ||

वैभव हो तो स्वास्थ्य भी, हो जाता बेकार!
वैभव हो तो स्वास्थ्य बिन, हो जाता बेकार।।

|| 707 ||

तीनों की गति एक है - वैभव-चोर-विकार!
दृष्टि पड़ी तो भागते, नहीं सुनें मनुहार।।

|| 708 ||

बुद्धि जहाँ चुप बैठती, चले वहीं से सत्य!
बुद्धि, कर्म-सोपान है, सत्य अन्ततः सत्य।।

|| 709 ||

गया न खाली एक दिन, हुई न जिस दिन बात!
बात-बात में मिल रही, तानों की सौगात।।

|| 710 ||

जिए अगर खुद के लिए, तो जीवन बेकार!
सदा दूसरों के लिए, धरो देह पर भार।।

|| 711 ||

राम 'राम' बनते नहीं, कहता जगत न राम!
बना दिया परमार्थ ने, उन्हें दयानिधि-धाम।।

|| 712 ||

गाँव-देश-परिवार हों, अथवा शासन तंत्र।
गरल उगलता रात-दिन, चुगलखोर का मंत्र।।

|| 713 ||

चाटुकार की राय या, चुगलखोर की बात।
वैभव-शासन तंत्र पर, करें मंत्र-सी घात।।

|| 714 ||

घुसते-खुफिया-तंत्र में, चाटुकार-मक्कार।
चुग़लखोर सबसे बड़े, होते हैं गद्दार।।

|| 715 ||

चाटुकार-गद्दार को, होता तनिक न खेद।
भले-बुरे में ये नहीं, करें तनिक भी भेद।।

|| 716 ||

नहीं मान-अपमान का, इनको रहता ध्यान।
श्वान-सरीखी जिन्दगी, इनकी करे गुमान।।

|| 717 ||

ऊँच-नीच का भेद तज, कर तू सबको प्रेम।
बाल न बाँका हो कभी, रहे सदा ही क्षेम।।

|| 718 ||

नभ से किरणें आ रही, सिन्धु-पटल पर नृत्य।
झिलमिल-झिलमिल सिन्धु जल, मनमोहक अति कृत्य।।

|| 719 ||

दूर-दूर तक सिन्धु जल, विस्तृत भाव विभोर।
अटल खड़ी है शृंखला, नाच रहा मन-मोर।।

❁ ❁ ❁

रंग-रंग के दृश्य

अपनी बात

परमेश्वर की असीम कृपा के फलस्वरूप ग्रामीण संस्कारों के सुरसरि जल से स्नात व्यक्तित्व और एक शिक्षकीय कर्म की सुगंध से सुवासित कृतित्व मुझे मिला। सुख–दुःख के दो अगम्य किनारों के बीच सतत प्रवाहमान जीवन–गंगा में परिवार की नौका में बैठकर कर्म की पतवार के सहारे निरन्तर आगे बढ़ते हुए **'पथ की अनुभूतियाँ'** हुईं जिनमें से कुछ लेखनी के कैमरे ने कैद कर लीं और संग्रहणीय बन गयीं मेरे लिए! अपने इर्द–गिर्द नौकायन करते विषमता और बिडम्बनाग्रस्त कुछ लोगों ने व्यर्थ ही चुनौतियाँ दीं। विवशतः **'अन्याय के विरूद्ध'** खड़ा होना पड़ा तो मुझे **'कालभेद'** के यथार्थ को समझने का किंचिद् अहसास हुआ। सुयोग से मुझे **'भावना का मन्दिर'** दिखाई दिया तो दोनों हाथों में **'आस्था के फूल'** संजोये मेरे मन को सुमनों की सुगंध एवं सौन्दर्यमयी **'विविधा'** की आभा में **'वीरबाला कुँवरि अजबदे पंवार'** और **'महासाध्वी अपाला'** के त्याग और समर्पण की अनुभूति ने **'युवको सोचो!'** के रूप में एक निराली नव चेतना और नव स्फूर्ति दी, जिसे **'भोगे हुए पल'** और **'आपकी बात : आपके साथ'** में निरूपित करने का यत्किंचिद् रूपेण प्रयास किया तो अनायास ही **'सूत्राधार है मौन'** ने **'रंग–रंग के दृश्य'** के रूप में मेरे समक्ष साकार कर दिए।

मैं क्या कहूँ? जीवन–गंगा में प्रकृति के सुरम्य स्थलों का अपूर्व सौन्दर्य निहारकर एक अनूठे आनन्द–रस का पान मैंने किया है, जिसने मेरे रोम–रोम को सहज अभिव्यक्ति की शक्ति दी, जोकि **'रंग–रंग के दृश्य'** में साकार हो उठी है। वस्तुतः **'रंग–रंग के दृश्य'** में इसका सुयोग कैसे हुआ और क्यों हुआ? यह तो सूत्राधार ही जाने,

लेकिन सूत्राधार है मौन! तो चलिए आप ही इसको निहारिए! हाँ, कहीं न कहीं आप भी इसमें स्वयं खड़े होने और स्वयं को साक्षात्कार करने के सुख की अनुभूति करने लगें, तो किंचिद ही सही मेरा यह अकिंचन प्रयास सार्थक हो जायेगा।

'रंग–रंग के दृश्य' भी माँ सरस्वती की अपार कृपा का ही मूर्त्त रूप है। यह माँ भी तो मौन है! कुछ कहती नहीं। बस, मौन ही कुछ न कुछ कराती रहती है। माँ! अपनी कृपा की अमृतमयी बौछार यों ही बसुन्धरा पर करती रहें, इसी में ही समग्र सृष्टि का कल्याण निहित है क्योंकिः –

अक्षर–अक्षर शब्द में, करते रामनिवास।
ह्वदय–रूपी–ग्रन्थ में, सियाराम का वास।।

राजनीति की छोकरी, नगर–वधू–सा काम।
सम्मोहन में जो फँसा, उसका काम–तमाम।।

सद्भावनाओं सहित!

8 मार्च, 2016

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

भक्ति-सरोवर

|| 1 ||

शोभित कर-पंकज धनुष, सूर्य-मुकुट अभिराम।
सीता-पति, दशरथ-तनय, बारम्बार प्रणाम।।

|| 2 ||

नैनों में छवि बस गयी, अनुपम ललित ललाम।
हनुमत-सीता-लखन-सह, हृदय बसते राम।।

|| 3 ||

मात-पिता-भ्राता-सखा, तुम ही प्राणाधार।
सुख-दुख-वैभव-सिन्धु के, राम! तुम्हीं दातार।।

|| 4 ||

रोम-रोम में रम रहे, जड़-चेतन सब रूप।
सूत्रधार इस सृष्टि के, जग-संचालक-भूप।।

|| 5 ||

अगम-अगोचर रूप है, खींची गयी न रेख।
सहज समर्पण जो करे, दिव्य राम को देख।।

|| 6 ||

सुबह-शाम तक घूमकर, निशा बितायी सोय।
समझ न पाया राम को, पापी मनवा रोय।।

|| 7 ||

मन में मेरे भर रहा, राम! अमित अवसाद।
मन अविकारी होय जब, पाऊँ भक्ति प्रसाद।।

|| 8 ||

देख-देख छवि राम की, मन है भाव विभोर।
तुम जानो मैं जानता, मेरे रामकिशोर!!

|| 9 ||

सुख-दु:ख जितना राम दो, सब हैं अंगीकार।
चरण-कमल नित मन रमे, विनय करो स्वीकार।।

|| 10 ||

आने-जाने का सखे! मुझे नहीं है बोध।
मृत्युलोक-परलोक पर, किया न नूतन शोध।।

|| 11 ||

मन चाहे जिस लोक में, मुझको भेजो राम!
चरण-कमल में लौ रहे, भक्ति मिले निष्काम।।

|| 12 ||

जन्म-जन्म में मिल रहा, राम! तुम्हारा प्यार।
यह मानव की जिन्दगी, तुमने दी उपहार।।

|| 13 ||

मिला न होता प्यार तो, पग-पग मिलती हार।
स्वाभिमान की जिन्दगी, मिलती नहीं उधार।।

|| 14 ||

यह जीवन तुमने दिया, रहे तुम्हारे नाम।
राम रूप कुछ भी रहे, आय तुम्हारे काम।।

|| 15 ||

जब-जब जीवन में हुआ, राम! मुझे भटकाव।
तब-तब पावन ध्यान ने, दूर किया अटकाव।।

|| 16 ||

भला-बुरा जग ने कहा, करी नहीं परवाह।
पल-पल बढ़ती जा रही, पिया मिलन की चाह।।

|| 17 ||

चौराहे पर आ खड़ा, गया रास्ता भूल।
ऐसे क्षण भी याद हैं, खूब चुभे जब शूल।।

|| 18 ||

तेरी कृपा से सखे! शूल बन गये फूल।
चौराहे से मिल गया, निर्मल पथ अनुकूल।।

|| 19 ||

जिन पर हमको नाज था, रहे नहीं अनुकूल।
समझ न पाया आदमी, क्यों होते प्रतिकूल।।

|| 20 ||

मुझे न चिन्ता लोक की, कुछ भी कहे समाज।
राम! तुम्हारे प्यार की, पढ़ता रहूँ नमाज।।

|| 21 ||

तेरी कृपा का सखे! कोई बार न पार।
तेरी महिमा है अकथ, लीला अपरम्पार।।

|| 22 ||

श्रद्धा-निष्ठा-आस्था, कर्म-शील भगवन्त!
सुन्दरता औ' शक्ति के, रामहिं पुंज अनन्त।।

|| 23 ||

मन से राम पुकारिये, रोम-रोम में राम!
प्रेम, भक्ति औ' ज्ञान से, भरते हृदय-धाम।।

|| 24 ||

चिन्ता-पीड़ा-शून्यता, असफल तंत्र तमाम।
मन से राम मनाइये, पूरण हों सब काम।।

|| 25 ||

जब-जब भूला राम को, पैदा हुआ विकार।
बिना राम यह जिन्दगी, मनो हुई बेकार।।

|| 26 ||

राम-भजन बिन कुछ नहीं, जीवन निष्फल यार!
कोई नहीं सराहता, पग-पग मिलती हार।।

|| 27 ||

जग कोमल सम्बन्ध भी, भूलें सब अनुबन्ध।
राम बिना हर खुशी पर, लग जाता प्रतिबन्ध।।

|| 28 ||

जिनको कहते यार हैं, वही उछालें कींच।
धरती से आकाश तक, मिलें नींच ही नींच।।

|| 29 ||

जब कृपा हो राम की, रहते शीत न घाम।
विपदा के बादल छँटे, जीवन हो अभिराम।।

|| 30 ||

भव्य भवन बसते नहीं, मेरे प्यारे राम।
दीन दुखी की झोंपड़ी, करते प्रभो विश्राम।।

|| 31 ||

दीनबन्धु, दाता, सखा, मात-पिता, घनश्याम।
नाम-रूप कुछ भी रहे, कर्ता-धर्ता राम।।

|| 32 ||

दीन-दुःखी, असहाय को, सहज भाव दे दान।
हो जायेगा एक दिन, बंदे का कल्यान।।

|| 33 ||

गिरा हुआ है आदमी, क्योंकि गिरी है सोच।
राम तुम्हारे देश का, हुआ आदमी पोच।।

|| 34 ||

दूर-दूर तक देखता, हिंसा औ' आतंक।
लूट रही है क्रूरता, नारी के ताटंक।।

|| 35 ||

काशी, मथुरा, अयोध्या, तीरथ-राज प्रयाग।
नगरी बची न एक भी, जहाँ न विघटन आज।।

|| 36 ||

अभी-अभी आँखें खुली, सपने लहू लुहान।
पलक झपकते हो गयी, खुशियाँ सब वीरान।।

|| 37 ||

छलक रहा था नैन में, ममता नेह अपार।
हाय! क्रूरता ने किया, टुकड़े-टुकड़े प्यार।।

|| 38 ||

मात-पिता से खेलता, नन्हा बाल मराल।
पल में झपटी क्रूरता, बनकर काल कराल।।

|| 39 ||

त्राहि-त्राहि सब कर रहे, दशरथ-नन्दन राम!
फिर कब आओगे सखे! मेरे जीवन-धाम।।

|| 40 ||

जम्मू औ' कश्मीर में, बरस रही है आग।
खेल रही साकेत भी, बम-गोली से फाग।।

|| 41 ||
काशी औ' कैलाश में, करती शक्ति विलाप।
चित्रकूट में राम से, रावण करे मिलाप।।

|| 42 ||
देशद्रोहियों ने किया, सारा चक्का जाम।
कातर नैन पुकारती, जनता सीता-राम!!

|| 43 ||
रोम-रोम में बस रहे, अनुपम छवि अभिराम।
मेरे मन की भावना, पूरण करियो राम!!

|| 44 ||
मात-पिता-रक्षक तुम्हीं, मैं तो चौकीदार।
मेरी चिन्ता दूर कर, जग के ठेकेदार।।

|| 45 ||
सारे सुख-दुख कर दिये, भगवन! तेरे नाम।
तुम बिन मेरा कौन है, जिसको करूँ प्रणाम।।

|| 46 ||
यह जीवन तुमने दिया, सुख-वैभव के धाम।
पल-पल चरणों में रहे, तन-मन आठों याम।।

|| 47 ||
तुम घट-घट की जानते, घट-घट बसते राम!
दुखिया की मन-भावना, पूरण करना राम!!

|| 48 ||
भजन-भक्ति जो कुछ करूँ, रहूँ चरण में मीत!
मैं जन-जन में बाँटता, फिरूँ तुम्हारी प्रीत।।

|| 49 ||

जहाँ जन्म जिस काल में, मिले मुझे हे राम!
भारत माता ही रहे, मेरा पावन धाम।।

|| 50 ||

दीन-दु:खी असहाय के, करूँ सदा मैं काम।
उनकी सेवा में रहे, निश्छल मन हे राम!!

|| 51 ||

जहाँ कहीं भी जन्म हो, मेरे जीवन धाम।
तन-मन-धन औ' कर्म से, रहूँ समर्पित राम!!

|| 52 ||

जीवन पथ हो निष्कलुष, रहे बुराई दूर।
ग़लत डग़र यदि पग बढ़े, कर देना मजबूर।।

|| 53 ||

मन प्रतिबंधित कीजिए, जाय न स्वामी! दूर!
राम-रसायन, चरण-रज, मिलती रहे जरूर।।

|| 54 ||

जो भी तेरे नाम का, करते सखे! विरोध।
उन्हें सुबुद्धि दीजिए, तजें सभी प्रतिरोध।।

|| 55 ||

लगे रहो प्रयास में, होंगे पूरण काम।
प्रभुवर की महिमा बड़ी, सुनते सबकी राम।।

|| 56 ||

मान और अपमान के, सूत्रधार हैं राम।
रहे समर्पण-आस्था, पूरण होते काम।।

|| 57 ||

रत्न जड़ित, मणिमय खचित, स्वर्णिम भव्य विशाल।
विश्वनाथ को देखकर, मन हो गया निहाल।।

|| 58 ||

विश्वनाथ का धाम था, कभी गंग के तीर।
निर्मल चरण पखारता, सुरसरि पावन नीर।।

|| 59 ||

देख दिव्यता धाम की, नैन गये हैं खोय।
भक्त और भगवान का, मिलन अनूठा होय।।

|| 60 ||

कोई कुछ कहता रहे, अथवा कहे गुलाम।
हर धड़कन, हर साँस में, बसे हुये हैं राम।।

|| 61 ||

अक्षर से अक्षर मिला, शब्द हुआ साकार।
शब्द-शब्द ने दे दिया, ग्रन्थों को आकार।।

|| 62 ||

अक्षर-अक्षर सत्य है, शब्द-शब्द आनंद।
शब्दाक्षर के मेल में, रहें सच्चिदानंद।।

|| 63 ||

अक्षर-अक्षर शब्द में, करते राम निवास।
हृदय रूपी ग्रन्थ में, सियाराम का वास।।

|| 64 ||

दर्द-शोक-दुख-सुख-सदन, जल-थल-नभ हर धाम।
जड़-चेतन हर रूप में, बसे हुये हैं राम।।

|| 65 ||

दिनचर-रजनीचर रहें, अपने-अपने ठौर।
पर, उनका तेरे सिवा, नहीं जगत में और।।

|| 66 ||

तेरी आज्ञा के बिना, पत्ता हिले न पेड़।
'बिस्मिल्लाह' के नाम पर, कट जाती है भेड़।।

|| 67 ||

पलक झपकते वीरवर, रण में होता ढेर।
पर, तेरे संकेत पर, चींटी बनती शेर।।

|| 68 ||

तन-मन के टुकड़े हुये, प्रभो! किया बदहाल।
बदसूरत-सी हो गयी, खुबसूरत-सी चाल।।

|| 69 ||

अनगिन टेढ़े रास्ते, सीधा नहीं लखाय।
तुम तक प्रभुवर! पहुँचना, करिये तनिक सहाय।।

|| 70 ||

चोर-ठगों के बीच में, प्रभु जी! दिया बसाय।
कैसे इनसे पार हो, देना तनिक बताय।।

|| 71 ||

तुम जो कहते हो सखे! करता हूँ वह काम!
मेरा तो कोई नहीं, तुम बिन मेरे राम।।

|| 72 ||

हाय! क्रूरता ने किये, भक्त सभी बदहाल।
मन्दिर में बजते रहे, शंख और घड़ियाल।।

|| 73 ||

कातर नैन निहारते, माधव! तेरे भक्त।
पता नहीं क्यों कर दिए, अपने भक्त अशक्त।।

|| 74 ||

राम-नाम के सामने, टिकता कभी न पाप।
राम-नाम रख चित्त में, निर्मल मन हो आप।।

|| 75 ||

पद पाया, धन आ गया, बहुत हुआ अभिमान।
अहंकार में चूर हो, भूल गया भगवान।।

|| 76 ||

चोर-लुटेरों ने किया, यों तो काम तमाम।
अपना कुछ बिगड़ा नहीं, क्योंकि साथ हैं राम।।

|| 77 ||

प्रभु की कृपा से मिली, सखे! मनुज-सौगात।
मानव-सेवा में बिता, शेष बचे दिन-रात।।

|| 78 ||

तुम बिन अपना कौन है, समझे मन की बात।
ग़ैरों से शिकवा नहीं, अपने करते घात।।

|| 79 ||

विषम समय का दौर है, तुम ही रखते ख्याल।
छू भी तो पाया नहीं, विपदाओं का ब्याल।।

|| 80 ||

देख लक्ष्य को सामने, मन-तुरंग हरषाय।
अहंकार उपजे सखे! दियो लगाम लगाय।।

|| 81 ||

तनक-मनक-सी बात का, रखते कितना ध्यान?
रहते पल-पल साथ हो, तुम-सा नहीं महान।।

|| 82 ||

पलभर भी रखते नहीं, प्रभुवर! निज से दूर।
वरना तो यह जिन्दगी, हो जाती तन्दूर।।

|| 83 ||

पता नहीं क्या बन गया, दुनिया का इन्सान।
जग आतंकित कर रहा, यही मनुज भगवान।।

|| 84 ||

पागल-मन समझे नहीं, भली-बुरी ज्यों बात।
मनुज-मनुज को देखकर, करता त्यों आघात।।

|| 85 ||

ऐसा मन देना नहीं, जो हो तुमसे दूर।
ऐसी भी क्या जिन्दगी, जो हो अति मजबूर।।

|| 86 ||

सुन्दर तन प्रभु ने दिया, वैभव-बुद्धि-विशाल।
बैर-द्वेष की भावना, उर से सखे! निकाल।।

|| 87 ||

लूट रहा है आदमी, लुटता है इन्सान।
खड़े-खड़े सब देखते, मन्दिर से भगवान।।

|| 88 ||

हमने समझा था सखे! तेरी है सन्तान।
साथ चले बनकर पथिक, निकला वह शैतान।।

|| 89 ||

बिन श्रम के जब आदमी, बन जाता धनवान।
व्यर्थ उसे लगने लगें, मन्दिर के भगवान।।

|| 90 ||

देख दशा संसार की, मन अति होय उदास।
देख-देखकर जिन्दगी, भरने लगे उसाँस।।

|| 91 ||

जिधर देखता हूँ उधर, दीख रहे हो राम।
जड़-चेतन सब ले रहे, तरह-तरह से नाम।।

|| 92 ||

पलभर में बालक बनो, पल में बनते बुद्ध।
पल में सीमा पर खड़े, करो काल से युद्ध।।

|| 93 ||

पलक झपकते दिन गया, पलक झपकते रात।
पलक झपकते जिन्दगी, गयी राम बिन बात।।

|| 94 ||

सांस नहीं तो कुछ नहीं, सांस बिना क्या प्राण।
बिना राम के प्राण भी, हो जाते निष्प्राण।।

|| 95 ||

गंगा जी के तीर पर, रंग-रंग के दृश्य।
जड़ता-चिन्ता मिट गयी, नया देख परिदृश्य।।

|| 96 ||

विष्णु प्रिया विनती करूँ, युग कर जोड़ प्रणाम!
माते! अपनी गोद में, देना अन्त विराम।।

|| 97 ||

हे माँ! जीवनदायिनी, स्वीकारो मनुहार।
कृपा करना पुत्र पर, बुला लेउ हरिद्वार।।

|| 98 ||

चरण-कमल में गंग माँ! झुका रहे नित शीष।
वाणी का मन्दिर मिले, माता दो आशीष।।

|| 99 ||

सेवक हूँ श्रीराम का, मात! तुम्हारा दास।
गंगा मैया! पुत्र की, पूरण करियो आस।।

|| 100 ||

ऐसा अवसर कब मिले, आने का हरिद्वार।
भौतिकता की दौड़ में, दौड़ रहा संसार।।

|| 101 ||

भक्ति न पूजा जानता, आता नहीं उपाय।
निश्छल मन की भावना, माता दई बताय।।

|| 102 ||

भला-बुरा जानूँ नहीं, करना मात! सहाय।
अपने कुछ बस में नहीं, माँ! कितना असहाय।।

|| 103 ||

माँ के रहती हाथ में, सुत की जीवन डोर।
अपनालो या छोड़ दो, माँ! ममता की डोर।।

अम्बर मेरे गाँव का

|| 104 ||

पहले मेरे गाँव में, सब करते थे प्रेम।
एक-दूसरे से सभी, रहे पूछते क्षेम।।

|| 105 ||

छुक-छुक करती रेल की, आयी थी आवाज।
मैंने देखा गाँव ने, बदल दिया अन्दाज़।।

|| 106 ||

गलियारे को चीर जब, सड़क उड़ाया कफ़न।
बचा-खुचा जो प्रेम था, हुआ उसी में दफ़न।।

|| 107 ||

धुँआ, धूल औ' गन्दगी, फैल गयी सब ओर।
प्रेम, शान्ति, सहकार को, निगल गया है शोर।।

|| 108 ||

चली गाँव को रौंदती, मोटर-गाड़ी-कार।
अम्बर मेरे गाँव का, रोय झार-बेझार।।

|| 109 ||

सुबह-शाम की **'बन्दगी'**, गायब हुआ **'सलाम'**।
'गुडमार्निंग' कहने लगा, बेटा **अबुल कलाम**।।

|| 110 ||

दिन पिलखन की छाँव में, चौपालों में रात।
कट जाते थे दर्द सब, आपस में कर बात।।

|| 111 ||

घायल अपनापन हुआ, याद रह गई जात।
अज़ब तरह की दौड़ है, करे न कोई बात।।

|| 112 ||

चाची-चाचा-ताउ के, रिश्तों भरा कमाल।
चौपालें जब गुम गयीं, होता नहीं धमाल।।

|| 113 ||

शादी का त्यौहार हो, रहता था समभाव।
गाँव-गाँव सब बाँटते, खुशियाँ आदर भाव।।

|| 114 ||

ऊँच-नीच औ' जाति का, भेद नहीं था लेश।
पंच अदालत में सभी, मिट जाते थे क्लेश।।

|| 115 ||

पंचों के आदेश का, करते थे सम्मान।
कर न सके था एक भी, बिटिया का अपमान।।

|| 116 ||

निर्धन और अमीर की, बिटिया एक समान।
जब होता था ब्याह सब, लेते कन्यादान।।

|| 117 ||

दुख-सुख-दुर्दिन के समय, सब करते सहयोग।
लोग यहाँ सामर्थ्य का, करते थे उपयोग।।

|| 118 ||

छान चढ़े, शादी रचे, कथा, जन्म, संस्कार।
भेदभाव बिन गाँव में, बँटते थे उपहार।।

|| 119 ||

होली के त्यौहार पर, चलता रहता रंग।
गाँव-गाँव हर गली में, बजें नगाड़े चंग।।

|| 120 ||

दीवाली पर गाँव में, दीपक जलते रोज।
आदर औ' सत्कार के, चलते-रहते भोज।।

|| 121 ||

विजयदशमी पर सभी, रावण देते फूँक।
मानो सभी बुराइयाँ, करी गाँव से कूँच।।

|| 122 ||

सूनी पड़ी कलाइयाँ, पा जाती थीं मान।
रक्षाबंधन पर्व था, रक्षा का सम्मान।।

|| 123 ||

संस्कृति-शिक्षा-सभ्यता, भारत की पहचान।
गली-गली हर गाँव में, खिलती थी मुस्कान।।

|| 124 ||

भौतिकता के ज़हर में, डूबा सारा गाँव।
गयी गाँव को छोड़कर, पिलखन वाली छाँव।।

रिश्तों में बदलाव

|| 125 ||

रोते-रोते क्या हुआ, मुख से निकले बोल।
हँसते-हँसते लिख गया, 'ये तो हैं अनमोल'।।

|| 126 ||

बदल रही है जिन्दगी, बदल रहे सब भाव।
आया है इस दौर के, रिश्तों में बदलाव।।

|| 127 ||

पहले जैसा है नहीं, रिश्तों में ईमान।
दादी-नानी के हुए, रिश्ते सब बेज़ान।।

|| 128 ||

चाची-चाचा-ताउ के, भावुक थे सम्बन्ध।
हवा पश्चिमी क्या चली, चूर हुये अनुबन्ध।।

|| 129 ||

मानवता के ध्येय का, कितना है अपमान।
अपनी-अपनी जाति में, बने हुए उपमान।।

|| 130 ||

जाति-धर्म के नाम पर, बने संगठन खूब।
जीवन-लुटिया मनुज की, गयी कूप में डूब।।

|| 131 ||

रिश्ते-नाते बिलखते, क्रंदन चारों ओर!
दर्द, रुदन औ' रक्त का, मिलता ओर न छोर।।

|| 132 ||

बिलख रही माता खड़ी, देख तनय की लाश।
चूर-चूर ममता हुई, टूट गयी सब आश।।

|| 133 ||

तार-तार रिश्ते किए, ऐसा चढ़ा जुनून।
वात्सल्य ने कर दिया, खुद ममता का खून।।

|| 134 ||

लोग ठगे-से रह गये, देख सामने लाश।
जिसको पाला प्यार से, किया उसी ने नाश।।

|| 135 ||

ममता हत प्रभ रह गयी, सुत ने किया प्रहार।
किया खून का खून ने, पल भर में संहार।।

|| 136 ||

चाक-चाक दामन हुआ, मानवता का आज।
खुद अपनों ने लूट ली, अपने घर की लाज।।

|| 137 ||

पिता देखता रह गया, निज सुत की करतूत।
जिसकी करी न कल्पना, पल में किया कपूत।।

|| 138 ||

ममता के मानक हुए, आज जगत में व्यर्थ।
भौतिकता के सामने, रहा न कोई अर्थ।।

|| 139 ||

सोच-समझकर परखकर, यहाँ बनाना मीत।
वरना, धोखे के सिवा, नहीं मिलेगी प्रीत।।

|| 140 ||

बनते-रुकते-बिगड़ते, रिश्तों के अनुबंध।
भौतिकता के दौर में, अस्थिर सब सम्बन्ध।।

|| 141 ||

पैसा के कारण हुए, सब रिश्ते अनजान।
कोमल रिश्तों में नहीं, अब अपनी पहचान।।

|| 142 ||

कुछ है रिश्ते प्यार के, जिन पर करते नाज।
चौराहे पर लूट ली, मिलकर सबने लाज।।

|| 143 ||

यहाँ-वहाँ नित बह रहा, जन-मानस का खून।
रोगी को मिलता नहीं, बिना खून के खून।।

|| 144 ||

कहाँ बची संवेदना, रिश्ते हैं लाचार।
माँ, बेटे का देखती, शर्मनाक आचार।।

|| 145 ||

पिता देखता रह गया, बेटे का व्यवहार।
दिल की दिल में दब गयी, ममता भरी फुहार।।

|| 146 ||

माँ की ममता पल गयी, बेटी हुई जवान।
व्यथा-कथा करने लगी, रिश्तों की पहचान।।

|| 147 ||

पल-पल करके युग गये, तभी जुड़े सम्बन्ध।
हा! पलभर में स्वार्थ ने, तोड़ दिए अनुबन्ध।।

|| 148 ||

पूरब से पश्चिम हुए, रवि अस्ताचल वास।
पल-पल पथिक निहारती, भगिनी-आस-निराश।।

|| 149 ||

मनुज-मनुज को देखकर, कभी कहे था आह!
कोमल रिश्तों में नहीं, अब तो वैसी चाह।।

|| 150 ||

किसका करता कौन है, यहाँ सहज सहयोग।
अपनी-अपनी अटक को, सटक रहे हैं लोग।।

|| 151 ||

किस सीमा तक गिर गया, अरे! यहाँ पर प्यार।
पल में चाकू प्यार ने, हृदय दिया उतार।।

|| 152 ||

दिखा रहा है आदमी, खुद अपनी औकात।
दर्द भरी क्यों सौंप दी, रिश्तों की सौगात।।

॥ 153 ॥

खून उसी का पी लिया, जिसे किया था प्यार।
मृदु बोलों का बाँटता, अब कैसा उपहार॥

॥ 154 ॥

माँ की ममता का किया, बन्धु! अनादर खूब।
अब 'माँ-माँ' कर चीखता, अन्त रहा जब डूब॥

॥ 155 ॥

मात-पिता जब तक रहे, तब-तक दिया न प्यार।
सिसक-सिसक रोते रहे, ममता-नेह-दुलार॥

राजनीति की छोकरी

॥ 156 ॥

जनता-रूपी-सिन्धु में, आने लगा उबाल।
राजनीति ने कर दिये, पैदा बड़े बबाल॥

॥ 157 ॥

छुप-छुपकर धोखा दिया, किया बार पर बार।
साथ न कुछ भी जाय रे! सत्य समझले यार!!

॥ 158 ॥

राजनीति की छोकरी, नगर-वधू-सा काम।
सम्मोहन में जो फँसा, उसका काम तमाम॥

॥ 159 ॥

काम-केलि की भाँति हैं, राजनीति के दाँव।
वहीं डूबता आदमी, जहाँ पकड़ता पाँव॥

॥ 160 ॥

राजनीति के गाँव में, घर-घर बसते भूप।
खूब लुभाती आदमी, धर-धर नाना रूप॥

|| 161 ||

भला-बुरा कुछ भी नहीं, राजनीति के गाँव।
ज्यों लंका में जम गया, था अंगद का पाँव।।

|| 162 ||

बुरा-भला कुछ भी कहो, पड़े न कोई फर्क।
राजनीति के कूप में, सबका बेड़ा गर्क।।

|| 163 ||

साज़िश रचता है यहाँ, पल में मनुज विरूद्ध।
कहता खुद को आदमी, बनता बड़ा विशुद्ध।।

|| 164 ||

यों तो है हर आदमी, यहाँ बड़ा नादान।
लेकिन, खुद को मानता, बहुत बड़ा भगवान।।

|| 165 ||

राजनीति के भेड़िए, घुसे नगर औ' गाँव।
आओ मिलकर बन्धुओं! फूँके इनके ठाँव।।

|| 166 ||

राजनीति क्यों रक्त की, औ' वोटों की आड़।
कब तक करते रहोगे, मानव से खिलवाड़।।

|| 167 ||

जब तक मानव एकता, राजनीति के जाल।
तब तक होती रहेगी, मानवता बदहाल।।

|| 168 ||

घोर विरोधी बैठ जब, करें परस्पर बात।
राजनीति की धड़कनें, तब बढ़ जातीं तात!!

|| 169 ||

राजनीति में बंधुवर! कोई नहीं उसूल।
अपने-अपने स्वार्थ को, कुछ भी करें कुबूल।।

|| 170 ||

कल तक जो दुश्मन बने, आज बन गये मीत।
राजनीति ज्यों वेश्या, करे सभी से प्रीत।।

|| 171 ||

अमर-मुलायम हो गये, गले-मिले कल्यान।
माया की बैसाखियाँ, राम-नाम सम्मान।।

|| 172 ||

राजनीति के गाँव में, बने रेबड़ी रोज।
अन्धा बाँटे रेबड़ी, भोग लगायें भोज।।

|| 173 ||

बने आँख की किरकिरी, कल तक जो श्रीमान।
आज कसीदे पढ़ रहे, नेताजी की शान।।

|| 174 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त की, करे न कोई बात।
राजनीति की छोकरी, करती सबसे घात।।

|| 175 ||

भेष बदलकर भेडिये, माँग रहे उपहार।
करे समर्थन लोमड़ी, संसद के दरबार।।

|| 176 ||

दम्भ, द्वेष, पाखण्ड का, सिर पर पहने ताज।
राजनीति के भेड़िये, लूट रहे हैं लाज।।

|| 177 ||

रोजी-रोटी के लिये, बेच दिया आचार।
आम आदमी मर रहा, जगह-जगह लाचार।।

|| 178 ||

मचा हुआ चारों तरफ, क्रंदन व कोहराम।
मारकाट औ' लूट को, लगता नहीं विराम।।

|| 179 ||

देश कहीं पर गुम गया, करें भेड़िये राज।
जनता रूपी भेड़ ने, सौंप दिया जब ताज।।

|| 180 ||

साँप, भेड़िया, सूअर सा, नेता का स्वाभाव।
ऊँच-नीच समझे कहाँ, खेले अपना दाव।।

मीत और प्रीत

|| 181 ||

समझाया, माने नहीं, अब तुम भोगो यार!
तुमने तो खुद ही करी, अपनी मिट्टी ख्वार।।

|| 182 ||

तुमने जो कुछ है किया, समझ गया हूँ मीत!
दो पैसे में लुट गयी, नैन सामने प्रीत।।

|| 183 ||

जान-बूझकर मित्रवर! दग़ा मित्र के साथ।
जिसने की है देखलो! मिटा दग़ा के साथ।।

|| 184 ||

दग़ा सगा होता नहीं, चाहें करके देख!
दग़ा बाज़ की ज़िन्दगी, ज्यों पानी में रेख।।

|| 185 ||

जिस पर हमको नाज था, उसने रचा प्रपंच।
खोटे सिक्कों में बिका, नगरी का सरपंच।।

|| 186 ||

बदल रही है मित्रता, गिरगिट जैसे रंग।
खड़े सुदामा देखते, कलियुग के नवरंग।।

|| 187 ||

सतयुग या त्रेता रहें, अथवा द्वापर काल।
हर युग में थी मित्रता, कलियुग से बदहाल।।

|| 188 ||

उलट गयी युग-साधना, है कलियुग की मौज।
टके-टके में लुट रही, निजता-नारी-फौज।।

|| 189 ||

देख रहे हो मित्रवर! इस कलियुग की जीत।
क्षितिज तलक है गन्दगी, बीच सिसकती प्रीत।।

|| 190 ||

धोखा देना मित्र को, है तो पाप-प्रचण्ड।
कितनी तुम पूजा करो, पड़े भोगना दण्ड।

|| 191 ||

कहने को तो मीत हैं, लेकिन फँसे कुसंग।
विधि का जब सोटा पड़े, टिके न कोई संग।।

|| 192 ||

अब तो कलियुग-राज है, उलट-पुलट सब रीत।
व्यभिचारों में फँस गयी, घर-घर पावन-प्रीत।।

|| 193 ||

किसको देगा दोष युग, कलियुग का आचार।
कहाँ प्यार की जिन्दगी, डगर-डगर व्यभिचार।।

|| 194 ||

मीत-मीत की भावना, जाने-समझे मीत।
जो न समझता मीत को, मानो उसे अमीत।।

|| 195 ||

पैसे के तो हैं बहुत, यहाँ सैकड़ों मीत।
जो हृदय को पूजते, ऐसे विरले मीत।।

|| 196 ||

सहज भाव मिलते रहो, बढ़तीं प्रीत अपार।
बिना मिले से दूरियाँ, बढ़ती अपरम्पार।।

|| 197 ||

भावुकतावश ले लिया, तुमने निर्णय यार!
कुछ ही दिन में देखना, मिट्टी होगी ख्वार।।

|| 198 ||

बदन बहुत सुन्दर दिया, झरे बोल से प्रीत।
लेकिन, अन्दर गन्दगी, किसे कहें हम मीत।।

|| 199 ||

जान-बूझ धोखा दिया, कपटी चाल-प्रपंच।
तुमको कैसे मान लूँ, हृदय का सरपंच।।

|| 200 ||

मैं था, तुम थे, साथ में, बीच रहा विश्वास।
युग-युग की थी साधना, पल में किया विनाश।।

|| 201 ||

तुम्हें मानते-मानते, कितने हुए तबाह!
तुम हो, तुमको ही नहीं, इज्जत की परवाह।।

|| 202 ||

विश्वासों की शृंखला, खोज रही आधार।
लेकिन, तुमने तो सखे! छोड़ दिये आचार।।

|| 203 ||

लग जाते हैं युग कई, जुड़ने में विश्वास।
पर, पलकी प्रवंचना, करती घोर विनाश।।

विविध भाव बोध

|| 204 ||

क्षितिज पार क्यों कर भरी, अम्बर बीच उड़ान।
पता नहीं किस बात पर, तुमको बाज! गुमान।।

|| 205 ||

हँसकर उसने बात की, अथवा किया मजाक।
हम यह कैसे मान लें, उसने किया हलाक।।

|| 206 ||

मिटे न जब तक सृष्टि से, युद्ध-युद्ध की सोच।
मानव तब तक रहेगा, युगों-युगों तक पोच।।

|| 207 ||

समता औ' स्वातंत्र्य का, जब तक है अस्तित्त्व।
तब तक मानव-सृष्टि में, मानव का कृतित्त्व।।

|| 208 ||

सत्य, अहिंसा, प्रेम का, जब तक है सम्मान।
तब तक विधि की सृष्टि में, मानव है उपमान।।

|| 209 ||

कितना मनहर रूप है, कितने मधुरिम बोल।
मनु सुन्दरता आ गयी, रूप धरे अनमोल।।

|| 210 ||

मधुर-मधुर मुस्कान की, छेड़ी तुमने तान।
अधंकार के बीच में, पल में हुआ विहान।।

|| 211 ||

मानसरोवर बीच में, करते हंस किलोल।
उड़ते हैं स्वच्छंद मन, बाँट मनोहर बोल।।

|| 212 ||

धरती से आकाश तक, अगणित हैं ब्रह्माण्ड।
इनमें भी अतिश्रेष्ठ है, मानव प्रखर प्रकाण्ड।।

|| 213 ||

जीवन-पथ में जो मिले, सहज भाव स्वीकार।
कुछ भी कम होगा नहीं, करता चल उपकार।।

|| 214 ||

आया खाली हाथ था, जाये खाली हाथ।
बता कहाँ कुछ चुक गया, जो ले जाये साथ।।

|| 215 ||

तू क्या देगा और को, क्या है तेरे पास?
सुबह-शाम तक दीखती, सूरत वही उदास।।

|| 216 ||

बात कहीं कुछ थी नहीं, फिर क्यों खाया ताव?
खुद अपनों के बीच में, पैदा किया तनाव।।

|| 217 ||

कथा-भागवत में सुना, जीवन कर्म प्रधान।
फल की इच्छा मत करो, विधि का यही विधान।।

|| 218 ||

सभी लोग अर्जन करें, करें विसर्जन नाय।
मनुज विसर्जन जो करे, युग-युग पूजा जाय।।

|| 219 ||

कैसे-कैसे लोग हैं, कैसी-कैसी बात।
बाहर से हँसमुख लगें, अन्दर रचते घात।।

|| 220 ||

टुकड़े-टुकड़े मांस के, पड़े सड़क के बीच।
तड़प रही है जिन्दगी, ध्यान रही है खींच।।

|| 221 ||

चिथड़े-चिथड़े तन हुआ, लगी न किंचिद देर।
हुआ निमिष में आदमी, रक्त-मांस का ढेर।।

|| 222 ||

मात-पिता की मृत्यु पर, बिटिया करे विलाप।
हा! इस जीवन-मृत्यु का, कैसा दुखद मिलाप।।

|| 223 ||

खुशी-खुशी घर से चले, दृष्टि सधा था लक्ष्य।
क्रूर काल ने जिन्दगी, पल में करली भक्ष्य।।

|| 224 ||

चीख-चीखकर जिन्दगी, करती रही विलाप।
देख-देखकर आदमी, निकल रहा चुपचाप।।

|| 225 ||

देख रहा है आदमी, मृत्यु-मृत्यु का नृत्य।
पल में भूला आदमी, करने लगा कुकृत्य।।

|| 226 ||

रंगमंच यह जिन्दगी, सुख-दुख के चलचित्र।
घटना विविध प्रकार की, घटती नित्य विचित्र।।

|| 227 ||

देख क्रूरता मृत्यु की, गया सोच में डूब।
यह सब घटना-चक्र है, जीवन से मत ऊब।।

|| 228 ||

नचा रहा है सृष्टि को, इसका रचनाकार।
हम सब इसके पात्र हैं, वह है कर्णाधार।।

|| 229 ||

अपनी-अपनी चाल में, चला जाय संसार।
सोच-सोच दुबला हुआ, बिना बात ही यार!!

|| 230 ||

बता कहाँ से जिन्दगी, मिली तुझे उपहार।
तू ऐसे चिन्ता करें, ज्यों तू सृजनहार।।

|| 231 ||

ले अवलम्बन झूंठ का, चल न सके हम यार!
हाय! सत्य ने भी हमें, किया नहीं स्वीकार।।

|| 232 ||

दृष्टि बदल कर देखिये, यहाँ न कोई ग़ैर।
पता नहीं क्यों आदमी, फिरे निभाता वैर।।

|| 233 ||

मन में निष्ठा हो लगन, आशा औ' विश्वास।
सफल कला होती वहीं, जहाँ रहे अभ्यास।।

|| 234 ||

विनत रहे, विनयी रहे, मृदुभाषित मुस्कान।
अहंकार-पाखण्ड से, दूर रहे इन्सान।।

|| 235 ||

परनिन्दा - संकीर्णता, दम्भ - झूंठ - अभिमान।
पण्डित के स्वभाव के, मानो ये प्रतिमान।।

|| 236 ||

वश न किसी का भी चले, समय बड़ा बलवान।
गृह-देव-नक्षत्र-जन, सबकी लेता जान।।

|| 237 ||

जो भी होता है उदय, होना पड़ता अस्त।
कितना ही बलवान हो, पल में होता पस्त।।

|| 238 ||

युवा शक्ति भरती जहाँ, जब ऊँची हुंकार।
युग-परिवर्तन तब वहाँ, उठता है झंकार।।

|| 239 ||

जग का रचनाकार है, ईश्वर बड़ा विचित्र!
सूरत-सीरत-आदमी, अलग-अलग सब चित्र।।

|| 240 ||

होता है जिस काल में, गुरुओं का अपमान।
युवा शक्ति पथ भ्रष्ट हो, मिले नहीं सम्मान।।

|| 241 ||

समय-समय की बात है, रखो समय का ध्यान।
समय चूककर आदमी, बनता नहीं महान।।

|| 242 ||

अंहकार में डूबकर, हो जाती है सांझ।
बहती नदिया जब रुके, तो बन जाती बाँझ।।

|| 243 ||

छल से, बल से, द्रोह से, बदल-बदलकर वेश।
रावण का परिवार फिर, जला रहा है देश।।

|| 244 ||

माता-बेटी-बहिन की, नित प्रति लुटती लाज।
खोटा सिक्का चल रहा, है आतंकित राज।।

|| 245 ||

नोंक-झोंक करता वही, जो करता है प्यार।
प्यार अनूठा हो जहाँ, होती है तकरार।।

|| 246 ||

यह हिन्दू, यह मुसलमाँ, कैसा यार जुनून।
सबका पानी एक है, एक सभी का खून।।

|| 247 ||

नारी का जिस देश में, होता है सम्मान।
दुनिया भर में देश वह, बन जाता उपमान।।

|| 248 ||

नोंक-झोंक होती वहीं, होता जहाँ लगाव।
मरहम खालिस प्यार का, भर देता है घाव।।

|| 249 ||

खाओ सेंधा नमक को, हर ले सभी विकार।
तन-मन रखता स्वस्थ यह, प्राकृतिक उपहार।।

|| 250 ||

अपना-अपना धर्म है, अपनी-अपनी जात।
मानवता करती नहीं, जात-पांत की बात।।

|| 251 ||

मुझे दिये जो काम हैं, करता हूँ दिन-रैन।
तुमसे मिलने को सखे! रहता हूँ बेचैन।।

|| 252 ||

घर-बाहर-खलिहान में, दूर-दूर तक भीड़।
कहाँ न जाने गुम गया, सम्बन्धों का नीड़।।

|| 253 ||

किसको अब अपना कहें, चले न कोई साथ।
दो पग चलकर ही पथिक, छोड़ जाय फिर हाथ।।

|| 254 ||

बुला-बुलाकर आदमी, बाँटे था उपहार।
आज भीड़ को देखकर, मार रहा दुतकार।।

|| 255 ||

देख मुझे तुम दूर से, हँसकर करते बात।
पता नहीं किस बात पर, बदल गये हालात।।

|| 256 ||

अपना कब अपना रहा, लगा समझने वैर।
अपना होता है वही, सदा चाहता खैर।।

|| 257 ||

मात-पिता-भ्राता-गुरू, सदा करें कल्यान।
अर्थ-लोभ ने बंधुवर! बदल दिये प्रतिमान।।

|| 258 ||

ताँगे में घोड़ी जुड़ी, गिरी सड़क के बीच।
कसकर चाबुक मारकर, उठा रहा है नीच।।

|| 259 ||

भूख, बोझ औ' मार से, घोड़ी थी लाचार।
गिरी सड़क के बीच में, गई अन्ततः हार।।

|| 260 ||

जन से अच्छे जानवर, जो संवेदनशील।
मृत्यु खड़ी हो सामने, श्वान न देता ढील।।

|| 261 ||

न्याय और अन्याय की, करना बात फिज़ूल।
भ्रष्ट कभी सुधरे नहीं, उसके कहाँ उसूल।।

|| 262 ||

जमा-घटा औ' भाग में, डूब रहा संसार।
अपने-अपनों के लिये, बाँट रहे उपहार।।

|| 263 ||

तेरी कृपा के बिना, मिलता नहीं निकेत।
पत्ता तक हिलता नहीं, तेरे बिन संकेत।।

|| 264 ||

स्वाभिमान-इज्जत नहीं, चोरी करे सुनार।
लोहा और लुहार-सा, पिटता करे पुकार।।

|| 265 ||

उमस-घुटन-गर्मी बड़ी, निशा-दिवस बेचैन।
पल में शीतलता हुई, हर्षित हैं दिन-रैन।।

|| 266 ||

विधना की इस सृष्टि में, बालक हैं वरदान।
हरपल इनको बाँटिये, प्यार और मुस्कान।।

|| 267 ||

बच्चों के हर रूप में, छुपा हुआ भगवान।
बच्चों से ही देश को, मिलती है पहचान।।

|| 268 ||

बालक बड़े अबोध हैं, सब चाहें मनुहार।
मात-पिता औ' राष्ट्र के, ये सच्चे उपहार।।

|| 269 ||

बालक रहते मौन हैं, सभी समझते बात।
मान और अपमान को, नहीं समझते तात!!

|| 270 ||

नारी-माता, बहिन हैं, बेटी-पत्नी रूप।
नारी का इस सृष्टि में, है हर रूप अनूप।।

|| 271 ||

नर में भरती ताजगी, नारी की मुस्कान।
युग-युग को देती रही, नारी ही पहचान।।

|| 272 ||

पूर्व जन्म का योग है, अद्भुत यह सम्बन्ध।
चलकर आये आप हैं, निभा रहे अनुबन्ध।।

|| 273 ||

साथ-साथ चलते रहें, साथ रहें दिन-रात।
निष्ठाएँ मिलती नहीं, कुछ तो होगी बात।।

|| 274 ||

रंग अनूठा प्यार का, रंग देता परिदृश्य।
फिर जीवन भर देखते, रंग-रंग के दृश्य।।

|| 275 ||

कभी क्षणिक होता मिलन, होती दो पल बात।
दो पल में ही जिन्दगी, दे जाती सौगात।।

|| 276 ||

प्यार कहीं मिलता नहीं, हो जाता है प्यार।
चलकर आता आदमी, लेकर प्यार अपार।।

|| 277 ||

मन होता, विस्मित बड़ा, देख ईश-संयोग।
अनायास ही आदमी, पाता प्रेम-वियोग।।

|| 278 ||

वसुधा पर छायी हुई, कितनी घोर अशान्ति।
युद्ध और आतंक को, समझ रहे हैं क्रान्ति।।

|| 279 ||

घोर त्रासदी विश्व में, कोई सके न बोल।
महाशक्तियाँ ले रहीं, हथियारों का मोल।।

|| 280 ||

लगा मुखौटे झूठ के, लोग कर रहे जांच।
आने भी देते नहीं, कुछ अपनों पर आंच।।

|| 281 ||

ढाढ़स देते एक को, खड़े अन्य के साथ।
कोई भी इनमें मरे, लड्डू दोनों हाथ।।

|| 282 ||

छुपी हुई है जीत में, कहीं मनुज की हार।
मरता ही है आदमी, करो कहीं पर वार।।

|| 283 ||

जीत-हार के खेल में, महाशक्ति का तंत्र।
बने सपेरे फूँकते, बिच्छू मारक मंत्र।।

|| 284 ||

दूर-दूर तक रेत है, जल का कहीं न नाम।
जल बिन नदिया बन गयी, परिजन बीच अनाम।।

|| 285 ||

भाँति-भाँति के लोग हैं, जगह-जगह पथ भ्रष्ट।
अपने सुख के वास्ते, देते कितने कष्ट।।

|| 286 ||

जगह-जगह पर हो रहा, सखे! क्रूरतम नाच।
रचना विप्लव की रचो, तभी टिकेगा सांच।।

|| 287 ||

शपथ राम औ' कृष्ण की, भारत की सौगन्ध।
वाणी रूपी अस्त्र से, फूँको युग दुर्गन्ध।।

|| 288 ||

कितना घृणित कर्म हैं, रक्त-रक्त के साथ।
हिन्दू या मुस्लिम कटे, कटे देश का हाथ।।

|| 289 ||

घर में या बाहर रहें, घोर निराशा दौर।
भय, पीड़ा, आतंक अब, मानव के सिरमौर।।

|| 290 ||

अस्त कभी होगा नहीं, भारत का दिनमान।
अखिल विश्व का है यही, एकमात्र उपमान।

|| 291 ||

वही पुराने लोग हैं, वही पुरानी बात।
क्या परिवर्तन हो गया, देख रहे जो तात!!

|| 292 ||

आम-बौर को पीसकर, उबटन कर तैयार।
नित्य मलो तन में लगा, रहे न कीट विकार।।

|| 293 ||

किसको चिन्ता है पड़ी, यहाँ सुने है कौन?
देख समय के फेर को, रहो मीत! तुम मौन।।

|| 294 ||

सहज मिलन की भावना, और न इच्छा, प्यार।
भले मिले यह आदमी, करे नहीं उपकार।।

|| 295 ||

नहीं बदलता आदमी, लगा मुखौटे रोज।
अपनी-अपनी रीति से, करें भेड़िये भोज।।

|| 296 ||

मीठी या कड़ुवी कहे, जली-भुनी यदि बात।
मन का सच्चा आदमी, करे नहीं आघात।।

|| 297 ||

मन्दिर में किसने किए, जगह-जगह विस्फोट?
मानवता की देह पर, हाय! करारी चोट।।

|| 298 ||

चौरोहे की भीड़ में, खोज रहे हमदर्द।
तुमको इज्जत की पड़ी, झेल रहे हम दर्द।।

|| 299 ||

हम अपने मन की व्यथा, किसे सुनायें यार!
दूर-दूर तक जिन्दगी, देख रही है हार।।

|| 300 ||

वाणी औ' व्यवहार में, शेष बचा क्या ओज?
अपने-अपने स्वार्थ का, उठा रहे सब बोझ।।

|| 301 ||

ऊपर से कुछ और हैं, अन्दर से कुछ और।
लीक छोड़ बटिया चले, मिला न फिर भी ठौर।।

|| 302 ||

जैसी जिसकी दृष्टि है, वैसी लगती सृष्टि।
बदली सावन दृष्टि तो, लगे व्यर्थ सब वृष्टि।।

|| 303 ||

बिना सत्य सद्गुण सखे! रखे न कोई अर्थ।
बिन निर्भयता सत्य भी, हो जाता है व्यर्थ।।

|| 304 ||

करो न चिन्ता काल की, विफल हुआ, मत सोच।
विफल-सफल हैं भूमिका, सोच बनो मत पोच।।

|| 305 ||

सच्ची निष्ठा लक्ष्य पर, साथ रहे विश्वास।
अन्धकार को चीरकर, आ जाता प्रकाश।।

|| 306 ||

पढ़ते-पढ़ते क्या हुआ, पता नहीं कुछ तथ्य।
लिखते-लिखते बन गया, कुछ अनुपम ही कथ्य।।

|| 307 ||

मैं तो मैं हूँ कौन हूँ? क्यों करते उपहास?
मेरे होने का सखे! कैसे हो विश्वास??

|| 308 ||

निर्धनता में आदमी, हो जाता लाचार।
पल-पल का जीवन लगे, पर्वत जैसा भार।।

|| 309 ||

शोषण को ही जिन्दगी, चली मान उत्कर्ष।
धन के लालच में फँसी, शुरू हुआ अपकर्ष।।

|| 310 ||

सत्य आचरण छिन्न हो, रहे नहीं ईमान।
रहे नहीं ईमान तो, खो जाता इन्सान।।

|| 311 ||

हुआ आगमन सड़क का, गया पुरातन रूप।
लीक और पगडण्डियाँ, खोज रहीं निज भूप।।

|| 312 ||

कोई-कोई तो यहाँ, है कितना मजबूर?
साथ-साथ रहते रहें, फिर भी कितनी दूर?।।

|| 313 ||

यार! उसूलों की बड़ी, तुम करते हो बात।
सत्य खड़ा पिटता रहा, बचा सके क्या घात??

|| 314 ||

तुमने अपने स्वार्थ हित, बेच दिया कानून।
अब शिकवा क्यों कर रहे, झेलो यार! जुनून।।

|| 315 ||

अंधकार में आदमी, हो जाता मजबूर।
पलभर में होते सखे! सपने चकनाचूर।।

|| 316 ||

युग बदला, बदले सभी, जीवनगत आचार।
पर, चोरों ने आज तक, बदला क्या व्यापार??

|| 317 ||

शिक्षा पाकर भी अगर, बदले नहीं विचार।
फिर, यह कैसे मान लें, होगा दूर विकार।।

|| 318 ||

ऊँचा पद पाकर हुआ, तुमको बड़ा गुमान।
कुछ ही दिन में देखना, होगा ख़त्म उफ़ान।।

|| 319 ||

आसमान में उड़ रही, वैभव भरी पतंग।
कुछ ही पलकी बात है, होगी फिर बदरंग।।

|| 320 ||

मात-पिता-सम दूसरा, नहीं सृष्टि पर देव।
इनका नित आदर करें, रहती नहीं कुटेव।।

|| 321 ||

तुमसे अच्छे ग़ैर हैं, रहें पूछते खैर।
तुम किस मिट्टी के बने, मन में रखते वैर।।

|| 322 ||

जो मन आया बक दिया, रखा न पद का ध्यान।
अपने मुँह मिट्ठू बने, बनते मियाँ महान।।

|| 323 ||

कभी हाथ आते नहीं, ज्यों जगती के छोर।
धन आता जिस ओर से, जाय दूसरी ओर।।

|| 324 ||

जन संवेदनशून्य है, कहाँ मनुज औ' प्रीत।
धन की चकमक ने सखे! बदल दिये सब मीत।।

|| 325 ||

कभी जाति-कुल-गोत पर, किया करे थे गर्व।
आज न दीखे आदमी, बदल गया है सर्व।।

|| 326 ||

जब रहता था गाँव में, सब करते थे प्यार।
हवा पश्चिमी क़्या चली, सबका बदला प्यार।।

|| 327 ||

सुनी-सुनायी बात पर, अगर किया विश्वास।
तो जीवन में बंधुवर! रहे नहीं मधुमास।।

|| 328 ||

निभा बाद में मित्रता, पहले तू सच बोल!
वरना, तो घट जाय रे! बंदे तेरा मोल।।

|| 329 ||

अगर गिला हो मित्र से, तो घर में ले डाँट।
चौराहे पर मित्र की, खड़ी न करना खाट।।

|| 330 ||

नये साल के नाम पर, पैदा हुआ जुनून।
मदहोशों ने पी लिया, मानवता का खून।।

|| 331 ||

सौंपी जिनको देश के, विश्वासों की डोर।
वही लोग अब काटते, संस्कृतियों के छोर।।

|| 332 ||

एक नहीं हैं सैकड़ों, खड़े दूर तक कंस।
मानवता के कुँज में, मिला न कोई हंस।।

|| 333 ||

रावण की सेना खड़ी, द्वार खड़े बलवान।
नहीं विभीषण दीखता, लंका के दरम्यान।।

|| 334 ||

मानवता के दायरे, हुए जहाँ भी तंग।
उसी देश में छिड़ गयी, अनजाने ही जंग।।

|| 335 ||

दुर्बल-दीन-अनाथ को, कभी न करना तंग।
वरना, सुख की जिन्दगी, हो तेरी बदरंग।।

|| 336 ||

केवल भौतिक शक्ति पर, करे आदमी गर्व।
पलक झपकते ही सखे! मिट जाता है सर्व।।

|| 337 ||

किसको देवें दोष हम, कहाँ करें फरियाद?
गिरा भवन अब देखता, निज कच्ची बुनियाद।।

|| 338 ||

भ्रष्ट कभी सुधरे नहीं, करलो चीख-पुकार।
अति होने पर राम ही, करते दण्ड प्रहार।।

|| 339 ||

रचता छल-प्रपंच है, धन पाने इन्सान।
ऐसे धन के भोग का, दण्ड पाय सन्तान।।

|| 340 ||

श्रम का पैसा भोग कर, बन जाता इन्सान।
लगा लूट का माल तो, बिगड़ जाय सन्तान।।

|| 341 ||

दीन-दुःखी की याचना, पूरी करना यार!
निर्बल की वाणी सबल, घर भर देती प्यार।।

|| 342 ||

तेरा क्या विश्वास है, तू तो पिये शराब।
सच्चाई को देखकर, लेता ओढ़ नकाब।।

|| 343 ||

छोटे-छोटे काम से, बनता मनुज महान।
जन-संवदेनशून्य ही, बन जाता शैतान।।

|| 344 ||

शक्ति-भक्ति औ' कर्म का, भेद न जानूँ यार!
जो कुछ अब तक है किया, तेरा ही है प्यार।।

|| 345 ||

डोर कहीं, चरखी कहीं, कहीं क्षितिज का छोर।
उड़ता मनुज पतंग-सा, दीखे ओर न छोर।।

|| 346 ||

भला-बुरा कुछ भी कहो, नहीं बदलती सोच।
यार! फर्क पड़ता नहीं, वीर कहो या पोच।।

|| 347 ||

जाट और ठाकुर मिले, कुछ विशिष्ट है बात।
परिवर्तन परिवेश में, देख रहे हो तात!।

|| 348 ||

मौसम ने परिवेश का, बदल दिया है रूप।
घर-घर में मुखिया हुए, घर-घर में हैं भूप।।

|| 349 ||

बागडोर सरकार की, है अंधों के हाथ।
नंगे-भूखे जुड़ गये, अपराधों के साथ।।

|| 350 ||

ओछे को आसन मिला, हुआ अंह से चूर।
सज्जनता को कर दिया, पल में चकनाचूर।।

|| 351 ||

नाम रखे से आदमी, बनता नहीं महान।
केवल उसको कर्म से, जाने सकल जहान।।

|| 352 ||

कौन यहाँ देता किसे, पाप-कर्म का दण्ड।
चिर प्राकृतिक न्याय है, मिलती सजा प्रचण्ड।।

|| 353 ||

जिसका लेश न बोध हो, रही कल्पना नाय।
चलते-चलते बन्धुवर! पल में सब घट जाय।।

|| 354 ||

आग लगी चहुँ ओर है, जलते घर-खलिहान।
दूर-दूर तक शव पड़े, पटे पड़े शमसान।।

|| 355 ||

तनक-मनक-सी बात पर, कितना किया फ़ितूर।
लोक-लाज, भय भी नहीं, मानव कितना क्रूर।।

|| 356 ||

धन पाने की ललक में, शान्ति करी नीलाम।
अब जीवन-सुख खोजता, कहाँ मिलेंगे राम।।

|| 357 ||

ऊँचे पद पर बैठकर, हुआ बहुत अभिमान।
चैन-शान्ति दोनों गये, चला गया सम्मान।।

|| 358 ||

जीवन-सुख गिरवीं रखा, और मिटायी शाख।
दो पैसे को बन्धुवर!, किया सभी कुछ राख।।

|| 359 ||

धूर्त्त कभी माने नहीं, जब तक मिले न दण्ड।
धुँआ कभी टिकता नहीं, अगिन होय प्रचण्ड।।

|| 360 ||

सत्य कभी मिटता नहीं, मिटे नहीं ईमान।
खुद अपने ही जाल में, फँस जाता शैतान।।

|| 361 ||

दुष्ट आदमी का सखे! केवल एक इलाज।
झुके दण्ड के सामने, जाये बदल मिजाज़।।

|| 362 ||

तीन-तीन भैंसे घुसे, हरियाली के खेत।
कुछ ही दिन में देखना, खेत उगेगी रेत।।

|| 363 ||

सच में है ताकत बड़ी, सच में हैं भगवान।
सच बोले यदि आदमी, पाये अति सम्मान।।

|| 364 ||

पहले रावण एक था, अब लग गयी कतार।
जगह-जगह लंका बसी, रावण भीड़ अपार।।

|| 365 ||

पाय विपुल धन आदमी, या बन जाय महान।
जीवन-सच कुछ और है, जाने सकल जहाँन।।

|| 366 ||

देर तलक शिव-साधना, रटते 'राम' सबेर।
ऊँचा पद ज्योंही मिला, गंगू बने कुबेर।।

|| 367 ||

भीख माँगते फिर रहे, लेकिन नाम कुबेर।
देखे हमने शेरसिंह, मारा कभी न शेर।।

|| 368 ||

ग़लती को स्वीकारना, मिले बहुत सम्मान।
वरना, पछताना पड़े, और मिले अपमान।।

|| 369 ||

शान्त खड़े सब वृक्ष हैं, हुआ न झंझावात।
फिर, मैं कैसे मान लूँ, है प्राकृतिक घात।।

|| 370 ||

बदला-बदला-सा लगे, यह सारा परिवेश।
अपना घर यों लग रहा, रहते कहीं विदेश।।

|| 371 ||

सोते-उठते-बैठते, चलते-फिरते भोग।
पता नहीं किस दौड़ में, दौड़ रहे हैं लोग।।

|| 372 ||

कौन यहाँ देता किसे, सुख के पल दो चार।
इसीलिए तो जिन्दगी, उठा रही दुःख-भार।।

|| 373 ||

धूर्त्त कभी समझे नहीं, कही प्यार से बात।
उसकी वाणी में करो, सखे! उसी पर घात।।

|| 374 ||

भ्रष्ट आदमी का सखे! केवल एक इलाज।
पैसा दो या दण्ड दो, होवे सही मिजाज़।।

|| 375 ||

यों तो आज समाज में, प्यार हुआ बेकार।
लेकिन, उनको प्यार कर, समझे दर्द-पुकार।।

|| 376 ||

बेच दिया जिसने सखे! पैसे ले ईमान।
सावधान! उस मनुज से, मिले नहीं मुस्कान।।

|| 377 ||

झूंठ बोल, प्रपंच से, भरते जाते कोष।
विधि का जब सोटा पड़े, उड़ें अचानक होश।।

|| 378 ||

वैसे तो पूजा करें, पर नित खाते ताव।
ऐसे जन की जिन्दगी, बीच भंवर ज्यों नाव।।

|| 379 ||

सही-ग़लत सूझे नहीं, गिरवीं रखा विवेक।
सखे! बुद्धि का कर दिया, झूंठ साथ अभिषेक।।

|| 380 ||

हे गज! पल-सुख के लिए, प्रीत करी नीलाम।
धिक्-धिक् ऐसी जिन्दगी, जो बन जाय गुलाम।।

|| 381 ||

धन पाकर यदि आदमी, बनता यहाँ महान।
तो भारत के नृपाधिप, करता याद जहाँन।।

|| 382 ||

झूंठ न देखे सत्य को, सत्य न बोले बोल।
ऐसी भी क्या जिन्दगी, धन है जिसका मोल।।

|| 383 ||

दुनिया की दौलत मिली, करें यान से सैर।
अरे! बने क्या आदमी? गया न मन से वैर।।

|| 384 ||

दीन-दुःखी असहाय की, सेवा औ' सम्मान।
सहज भाव कर आदमी, बनता देव समान।।

|| 385 ||

जिसे समझ तू जिन्दगी, दिखा रहा है शान।
यह कुछ दिन की चाँदनी, जिससे तू अनजान।।

|| 386 ||

पाप किया, पूजा करें, यह कैसी है नीति।
वैर-द्वेष-प्रपंच से, किसे मिली है प्रीति।।

|| 387 ||

कभी घास खाता नहीं, भूखा रहता शेर।
यथा झूंठ के सामने, झुकता नहीं दिलेर।।

|| 388 ||

दुर्बल-दीन-अनाथ को, पथ में देना प्यार।
इसी बहाने एक दिन, मिल जायेगा यार।।

|| 389 ||

अहित किसी का मत करो, हित ही है आराध्य।
इसी भावना से चलो, सध जाये दुस्साध्य।।

|| 390 ||

सरल आदमी पर कभी, कर मत देना चोट।
पर, अन्यायी की सखे! कभी न सहना खोट।।

|| 391 ||

दुश्मन भी आये शरण, निश्छल करो सहाय।
यही भावना राम की, सच्ची भक्ति कहाय।।

|| 392 ||

बुरा किसी का मत करो, भला करो यदि नाय।
अपनी मस्ती में कहीं, अहित नहीं हो जाय।।

|| 393 ||

राजनीति में हो गये, अपराधी सिरमौर।
इसीलिए तो देश में, अपराधों का दौर।।

|| 394 ||

पढ़ा नहीं तुमने कभी, बंधु! मित्रता पाठ।
धन की चकमक ने कहा, 'सोलह दूनी आठ'।।

|| 395 ||

कारण-लालच ही रहा, घर भूले जो लोग।
काल-चक्र ने जड़ दिए, उन पर सौ अभियोग।।

|| 396 ||

दया भाव रहता नहीं, जब बढ़ जाता क्रोध।
बात-बात में आदमी, दरसाता प्रतिशोध।।

|| 397 ||

अहंकार उर में सजा, चला खोजने प्रीत।
भला, बता कैसे मिले? निश्छल मन का मीत।।

|| 398 ||

करनी में छोड़ी नहीं, तुमने कसर न कोर।
अब क्यों करते हो गिला, नाहक! करते शोर।।

|| 399 ||

चलते सीधे रास्ते, सत का आँचल थाम।
उनके बनते सहज ही, भले कठिन हों काम।।

|| 400 ||

कहाँ गये वे रास्ते, बदल गये सब ठौर।
बटिया-लीकें तोड़कर, सड़क हुई सिरमौर।।

|| 401 ||

बदल रहा है आदमी, गिरगिट जैसा रंग।
सोच-सोचकर जिन्दगी, हुई बहुत बदरंग।।

|| 402 ||

अपराधी को देखकर, बोल रहा कानून।
आम आदमी त्रस्त है, छाया हुआ जुनून।।

|| 403 ||

देश कहीं पर गुम गया, सत्ता के दरबार।
भाषा-संस्कृति-सभ्यता, हुई बहुत लाचार।।

|| 404 ||

सुविधाओं की पोटली, जाति-धर्म के नाम।
निर्धन होता जा रहा, निशिदिन और गुलाम।।

|| 405 ||

कोई भी सुनता नहीं, अब निर्धन की बात।
अपने-अपने स्वार्थ हित, तरह-तरह की घात।।

|| 406 ||

कचरा भरा-विचार में, सड़ने लगे दिमाग।
शनैः शनेः अब प्यार के, बुझने चले चिराग।।

|| 407 ||

सोच नहीं रचनात्मक, बहुत गिर गयी सोच।
इसीलिए तो आदमी, हुआ बहुत ही पोच।।

|| 408 ||

दो पैसे क्या हो गये, इतना हुआ गुमान।
रखे न पैर जमीन पर, बनने लगा महान।।

|| 409 ||

घुला ईर्ष्या-द्वेष में, परिवारों का प्रेम।
पूछ रहे हैं बन्धुवर! आप कुशलता-क्षेम।।

|| 410 ||

कड़क-ठण्ड अति पड़ रही, मौसम है प्रतिकूल।
कुछ ही दिन की बात है, दिन होंगे अनुकूल।।

|| 411 ||

भरा अनैतिक स्त्रोत से, माया का भण्डार।
काम न आयें अन्त में, मिले हुए उपहार।।

|| 412 ||

अन्त समय जब आ गया, चाह देखना भोर।
मन अति व्याकुलता भरी, अँधियारा चहुँओर।।

|| 413 ||

जो भी आया पास में, कपड़े लिए उतार।
तनिक लाज आयी नहीं, बजते रहे सितार।।

|| 414 ||

झूँठ, सत्य के सामने, हो जाता लाचार।
बरबस ही सहनी पड़े, उसे करारी हार।।

|| 415 ||

कुछ ही दिन चलता यहाँ, सखे! झूंठ का काज।
फिर अपनी ही गति चले, जगत सत्य का राज।।

|| 416 ||

पैसा जिसका पूत है, पैसा जिसका मीत।
ऐसा घातक आदमी, करिये कभी न प्रीत।।

|| 417 ||

तन-मन पैसे में बिका, सोच कहाँ से आय?
बुद्धि हो गयी भोथरी, भोज तामसिक खाय।।

|| 418 ||

यहीं-कहीं गुम हो गये, नेह-समर्पण-त्याग।
खोज रहा हूँ बन्धुवर! दादा का अनुराग।।

|| 419 ||

भ्रात-भ्रात के बीच में, रहा न वैसा प्यार।
पता नहीं कब खिंच गयी, आँगन में दीवार।।

|| 420 ||

हाँ! ममता की गोद में, जिनको मिली पनाह।
वही भ्रात अब भ्रात को, देखे शकी-निगाह।।

|| 421 ||

तेरे मेरे बीच में, खड़ी हुई दीवार।
आओ! मिलकर हम सखे! देवें इसे उखाड़।।

|| 422 ||

जहाँ रोशनी ज्ञान की, गुरू सदा अनुकूल।
जहाँ विषमता है नहीं, वह मेरा स्कूल।।

|| 423 ||

नस-नस विष-रस से भरी, अधरों पर मुस्कान।
कपटपूर्ण व्यक्तित्व है, लालच बहुत महान।।

|| 424 ||

घोर घाम-वर्षा-शरद, आँधी-झंझावात।
फ़ुटपाथों पर सैकड़ों, मनुज काटते रात।।

|| 425 ||

जल-थल-सागर-नभ तलक, दुनिया का विस्तार।
वैज्ञानिक-युग बन्धुवर! फिर भी हम लाचार।।

|| 426 ||

जिसने पैसे के लिए, बेच दिया ईमान।
उसका मत विश्वास कर, चाहें हों श्रीमान।।

|| 427 ||

भले-बुरे की एक दम, सखे! न हो पहचान।
पर, वाणी-व्यवहार में, छुपा रहे संज्ञान।।

|| 428 ||

किसको-किसको दोष दें, किसका कहें गुनाह?
अपने ही आतंक को, देते रहे पनाह।।

|| 429 ||

ऊँचे पद पर बैठकर, ऊँची हुई न सोच।
ऐसा मनुज महान भी, हो जाता है पोच।।

|| 430 ||

करी भ्रष्ट से मित्रता, डूब जाय सम्मान।
पग-पग पर मिलने लगे, पीड़ा औ' अपमान।।

|| 431 ||

भ्रष्ट कभी सुधरे नहीं, लाख टके की बात।
जब उसको अवसर मिले, करे सहज ही घात।।

|| 432 ||

भ्रष्ट आदमी के लिए, पैसा ही है प्यार।
हर अवसर पर चाहता, पैसे का उपहार।।

|| 433 ||

भ्रष्ट आदमी का सखे! मात्र दण्ड उपचार।
जहाँ मिले एकान्त में, जूते मारो चार।।

|| 434 ||

ईश्वर के अस्तित्व को, जो जन रहे नकार।
बुरे दिनों के फेर में, करते सभी पुकार।।

|| 435 ||

कंचन की दूकान पर, कंचन करता काम।
कंचन पल-पल मर रहा, कंचन है बदनाम।।

|| 436 ||

वैज्ञानिक इतिहास में, अद्भुत हुआ धमाल।
पहुँच चाँद पर **कल्पना!** तुमने किया कमाल।।

|| 437 ||

युग-युग के इतिहास में, लिखा रहेगा नाम।
भारत की नभ-सुन्दरी! लो **कल्पना!** प्रणाम।।

|| 438 ||

मात-पिता का गर्व से, उच्च रहेगा भाल।
बेटा-बेटी एक-से, भारत-माँ के लाल।।

|| 439 ||

जान-बूझकर जो करें, जनता से अन्याय।
ईश्वर के दरबार में, होता सबका न्याय।।

|| 440 ||

किया अनैतिक स्रोत से, धन का संचय यार!
सजा भोगने के लिए, हो जा तू तैयार।।

|| 441 ||

बचा नहीं सकती कभी, धनवानों की चाह।
रहे डुबाकर बन्धुवर! निर्बलता की आह।।

|| 442 ||

चुगली-निंदा-ईर्ष्या, दुराचरण, छल-द्वेष।
जो नर इनमें रत रहें, कटें न उनके क्लेष।।

|| 443 ||

जीवन-पथ पर चल रहे, खेल रहे हम खेल।
दुःख-सुख की अनुभूतियाँ, सिखा रहीं हैं मेल।।

|| 444 ||

जब पहुँचा शमसान में, बदले सभी विचार।
घर आया तो बन गये, पल में वही विकार।।

|| 445 ||

बदल रहा क्यों आदमी, बदल गया व्यवहार।
दानवता का कर रहा, निज हाथों श्रृंगार।।

भारत से 'नॉर्वे-स्वीडन' की यात्रा
(5 दिसम्बर से 16 दिसम्बर 2008 तक)

|| 446 ||

संस्कृति औ' साहित्य की, कर में लिये मशाल।
चला पश्चिमी देश को, भारत माँ का लाल।।

|| 447 ||

तरह-तरह के प्रश्न भी, उठते हृदय बीच।
उत्तर रूपी नीर से, रही शारदे सींच।।

|| 448 ||

मिला अचानक निमंत्रण, यात्रा हेतु पवित्र।
जाना मुझको **'नॉर्वे'**, जीवन जहाँ विचित्र।।

|| 449 ||

'सारस्वत आदेश है', मन में उठा विचार।
शनैः शनैः ही कर लिया, हृदय ने स्वीकार।।

|| 450 ||

'रनवे' पर चलने लगा, उड़ने हेतु विमान।
मानो कोई स्वप्न हो, या फिर विधिक विधान।।

|| 451 ||

नैनों में माँ भारती, हृदय में सन्देश।
'राम-राम' कहकर उड़ा, भारत से परदेश।।

|| 452 ||

लगे अनूठा यान से, वसुधा का वह छोर।
मनमोहक लगता बड़ा, उगता सूरज भोर।।

|| 453 ||

ऊँची पर्वत श्रेणियाँ, लाल-लाल आकाश।
बाल अरूण करने लगा, अम्बर बीच प्रकाश।।

|| 454 ||

कितनी सुन्दर भोर है, तन हो उठा विभोर।
यान उड़े आकाश में, नाच उठा मन-मोर।।

|| 455 ||

बैठ यान से देखते, जब धरती का दृश्य।
लगता मानो धरा का, बदल गया परिदृश्य।।

|| 456 ||

नभ में तारे खिल रहे, दूर क्षितिज है लाल।
यान उड़े आकाश में, मन्द-मन्द है चाल।।

|| 457 ||

दूर-दूर तक मेघ हैं, मानो रूई-वितान।
उसके ऊपर उड़ रहा, अम्बर बीच विमान।।

|| 458 ||

क्षितिज दूर, पर अरुणिमा, तारों का प्रकाश।
नभ में उड़ता यान है, अद्‌भुत अति आकाश।।

|| 459 ||

कलाकार की तूलिका, धन्य! **मॉस्को** नीर।
जिधर देखता हूँ उधर, देख रही तस्वीर।।

|| 460 ||

जल-थल-नभ का देखता, कितना अद्‌भुत मेल।
प्रकृति-सुन्दरी कर रही, यहाँ अनूठे खेल।।

|| 461 ||

सुन्दर, मनहर नारि-नर, करते मीठी बात।
मुखड़ों से मुस्कान की, बाँट रहे सौगात।।

|| 462 ||

युवक-युवतियाँ-नॉर्वे, हैं सहज स्वच्छंद।
लेकिन, अपने देश से, करते प्यार बुलन्द।।

|| 463 ||

अपनी भाषा बोलते, करें अतिथि सम्मान।
अपनी भाषा-राष्ट्र पर, गर्व करें अभिमान।।

|| 464 ||

जाति-पांति औ' धर्म की, करे न कोई बात।
सभी परस्पर एक हैं, दीखे यहाँ न घात।।

|| 465 ||

गया **'नॉर्वे'** के लिये, लेकर फूल **गुलाब।**
भारत-माँ की भावना, करती कहाँ दुराव।।

|| 466 ||

सत्य-अहिंसा-प्यार का, यह पावन उपहार।
पुष्प गुलाबी कह रहे, **'करो हमें स्वीकार'**।।

|| 467 ||

अजब **'नॉर्वे'** देश है, अजब यहाँ के लोग।
अजब यहाँ का प्यार है, अजब यहाँ के भोग।।

|| 468 ||

'नॉर्वे' व **स्वीडन** लगे, दोनों ललित ललाम।
'ऐश्वर्य-सी' सादगी, औ' विज्ञान **'कलाम'**।।

|| 469 ||

छोटे-छोटे देश ये, लेकिन काम विशेष।
ललित कला-विज्ञान में, उन्नत हैं ये देश।।

|| 470 ||

अम्बर से वसुधा तलक, खिला हुआ है चाँद।
पर्वत-टापू-घाटियाँ, रही चाँदनी फाँद।।

|| 471 ||

यह धरती का छोर है, वह धरती का छोर।
दूर-दूर तक चाँदनी, नाचे, करे न शोर।।

|| 472 ||

ऊपर-नीचे सब तरफ, बर्फ-बर्फ सब ओर।
पर न सुनायी दे रहा, तनिक कहीं भी शोर।।

|| 473 ||

नभ में तारे हँस रहे, लिए चन्द्र को साथ।
थिरक रही है चाँदनी, पकड़ चाँद का हाथ।।

|| 473 ||

तारों के प्रकाश में, करे चाँदनी नृत्य।
जड़ चेतन सब मुग्ध हैं, वाह! वाह! क्या कृत्य।।

|| 474 ||

धरा वधू को चूमने, उचक रहा राकेश।
चुपके-चुपके चाँदनी, चली पसारे केश।।

|| 475 ||

देख चाँद की धृष्टता, तारे अम्बर मौन।
धरा वधू को चाँद से, हाय! बचाये कौन।।

|| 476 ||

शोर-प्रदूषण हो नहीं, **नॉर्वे** रह सचेत।
वास्तु-कला औ' शिल्प के, अनुपम भवन-निकेत।।

|| 477 ||

कहीं नहीं है गन्दगी, सड़क स्वच्छ आवास।
जगह-जगह हैं **'डस्टबिन'**, विद्युत सतत प्रकाश।।

|| 478 ||

संस्कृति-शिक्षा-स्वास्थ्य पर, होता अतिशय खर्च।
सुखमय जीवन-राष्ट्रहित, चलती रहे रिसर्च।।

|| 479 ||

वाणी औ' व्यवहार में, यहाँ प्रेम-सम्मान।
राजनीति निर्मल यहाँ, करे नहीं अपमान।।

|| 480 ||

मन्दिर, मस्जिद, चर्च सब, गुरूद्वारे अभिराम।
शोर कहीं पर है नहीं, धर्म-कर्म निष्काम।।

|| 481 ||

यहाँ नहीं छोटा बड़ा, राजनीति के धाम।
आम आदमी के लिए, शासन करता काम।।

|| 482 ||

मिला **'नॉर्वे'** में नहीं, और न **स्वीडन** बीच।
मानवता औ' राष्ट्र को, जो न रहा हो सींच।।

|| 483 ||

नर-नारी, पशु, सभ्यता, भवन, शिल्प जीवन्त।
ध्रुव देशों की एक-सी, जीवन-कला अनंत।।

|| 484 ||

लोग **'नॉर्वे'** के सभी, रहते हैं अति मस्त।
कहीं तनाव न दीखता, और न जीवन पस्त।।

|| 485 ||

'सौन्दर्य' औ' **'स्वच्छता'**, इनकी है पहचान।
'आदर' औ' **'मुस्कान'** हैं, जीवन के प्रतिमान।।

|| 486 ||

कूड़ा-कर्कट-गंदगी, इसके सभी विरुद्ध।
शोर प्रदूषण है नहीं, बहती वायु विशुद्ध।।

|| 487 ||

झरना झरता प्रेम का, अधरों पर मुस्कान।
बातचीत-व्यवहार में, लगते हैं इन्सान।।

|| 488 ||

राष्ट्र चेतना का यहाँ, हृदय में समभाव।
लोग **नॉर्वे** के सभी, रखते आदर भाव।।

|| 489 ||

साफ-स्वच्छ आवास में, रहें यहाँ के लोग।
कर्म-धर्म के साथ ही, भोग रहे सब भोग।।

|| 490 ||

देश भक्ति की भावना, देखी यहाँ अगाध।
राजनीति औ' जिन्दगी, दोनों चलें अबाध।।

|| 491 ||

संस्कृति-शिक्षा-सभ्यता, करें परस्पर दान!
स्वीडन जैसा **नार्वे**, दोनों एक समान।।

|| 492 ||

नर-नारी व्यवहार में, समता का सन्देश!
स्वीडन मिलकर **नॉर्वे**, देते सम उपदेश।।

|| 493 ||

ज्ञान और विज्ञान में, दोनों सम आकार।
स्वीडन मानो **नॉर्वे**, प्राण एक आधार।।

|| 494 ||

रहे नॉर्वे देश में, घूमें स्वीडन बीच।
गंगा-जमुनी-सभ्यता, मनो रही है सींच।।

|| 495 ||

गंगा, भारत देश को, देती है पहचान।
ग्लोमा, स्वीडन-नॉर्वे, देशों की उपमान।।

|| 496 ||

'दर्पण' हिन्दी पत्रिका, **'स्पाइल'** भी नाम।
भारत-नॉर्वे के हित, करती है नित काम।।

|| 497 ||

सम्पादक के रूप में, **'दर्पण-केतन'** हाथ।
चले **'शरद आलोक'** हैं, भारत माँ का साथ।।

|| 498 ||

संस्कृति औ' साहित्य का, **'दर्पण'** दें सन्देश।
सकल विश्व को दे रही, सारस्वत उपदेश।।

|| 499 ||

'दर्पण' युग-दर्पण बनी, देख रहा भू-लोक।
नौका लेकर ज्ञान की, चलें **'शरद आलोक'**।।

|| 500 ||

रचा नॉर्वे देश में, **'दर्पण'** ने इतिहास।
निखिल विश्व को ज्ञान का, लुटा रही मधुमास।।

|| 501 ||

संस्कृति औ' साहित्य में, **'दर्पण'** का उत्कर्ष।
मना रहा है **नॉर्वे, रजत जयंती** वर्ष।।

|| 502 ||

देश-देश से **नॉर्वे**, गये सरस्वती पुत्र।
समारोह में भव्यता, आयोजित नव सत्र।।

|| 503 ||

हुआ **नॉर्वे** देश में, सृजन का सम्मान।
'लिटरेचर हाउस' बना, दुनिया में उपमान।।

|| 504 ||

'दर्पण' की द्युति देखकर, नाच उठे ध्रुव देश।
भांषा औ' साहित्य में, **भारत** का उन्मेष।।

|| 505 ||

देश **नॉर्वे** ने किया, भारत का सम्मान।
भारत के मानस बढ़ा, ध्रुव देशों में मान।।

|| 506 ||

दिया **'शरद आलोक'** ने, दुनिया को सन्देश।
भारत जैसा विश्व में, कहीं नहीं है देश।।

|| 507 ||

यूरुप-अमरीका सहित, सभी पश्चिमी देश।
'दर्पण' के मिस कर रहे, हिन्दी काम विशेष।।

|| 508 ||

लिए **'वेदना'** साथ में, गये उत्तरी लोक।
'रजनी' ने स्वागत किया, धन्य! **'शरद आलोक'**।।

|| 509 ||

'गंगा से ग्लोमा' तलक, **'फँसे नीड़ में पंख'**।
'अर्द्धरात्रि का सूर्य' भी, लगा बजाने शंख।।

|| 510 ||

जले **'दीप बुझते नहीं'**, करते नित्य प्रकाश।
'नगन पॉव का सुख' करे, **संभावना तलाश**।।

|| 511 ||

गद्य-पद्य में किया है, **सृजन औ' अनुवाद।**
धन्य! **शरद आलोक** जी, करें सहज संवाद।।

|| 512 ||

रहें **नॉर्वे देश** में, पर, **भारत** से प्यार।
अखिल लोक को बाँटते, **'दर्पण'** का उपहार।।

|| 513 ||

सहज, सरल व सौम्य हैं, **श्री शरद आलोक।**
मिलनसार व्यक्तित्त्व में, भारत को अवलोक।।

|| 514 ||

दर्पण-दर्पण की तरह, दिखलाए यह बिम्ब।
वसुधा के हर देश का, बन जाये प्रतिबिम्ब।।

|| 515 ||

पग-पग पर प्रगति मिलें, आयु बढ़े सौ साल।
भारत माँ के पुत्र तुम! सदा रहो खुशहाल।।

|| 516 ||

दस दिन रहकर **'नॉर्वे'**, चले बहुत अविराम।
लौटे अपने देश को, यात्रा कर अभिराम।।

|| 517 ||

भारत माँ की गोद में, उतरा आय विमान।
रोम-रोम कहने लगा - **'भारत देश महान'।।**

प्रो. हरमहेन्द्र सिंह बेदी के प्रति

|| 518 ||

हिन्दी के आचार्य हैं, **'हरमहेन्द्र सिंह'** नाम।
गुरुनानक-वंशज जनम, है **मुकेरियां** ग्राम।।

|| 519 ||

अमृतसर आकर बसे, **बेदीजी** उपनाम।
शिक्षा औ' साहित्य में, ऊँचा मिला मुकाम।।

|| 520 ||

सरल, सौम्य स्वभाव है, मिलनसार व्यक्तित्त्व।
यथानाम-व्यक्तित्व में, विविध, विशद कृतित्त्व।।

|| 521 ||

काव्य-कला मर्मज्ञ हैं, शिक्षक अति बेजोड़।
अध्ययन, सृजन, ज्ञान से, रहती इनकी होड़।।

|| 522 ||

संस्कृति-शिक्षा-राष्ट्र का, करें सदा सम्मान।
भाषा-शैली-वाक-पटु, गहन ज्ञान् की खान।।

|| 523 ||

हिन्दी-पंजाबी सहित, भाषाओं से प्यार।
वाणी औ' व्यवहार से, सबको करें दुलार।।

|| 524 ||

गुरुनानक के वंश का, मिला इन्हें उपहार।
अद्भुत वाणी ज्ञान की, करती है बौछार।।

|| 525 ||

'वाहे गुरु दा खालसा', गुरू ग्रन्थ का ज्ञान।
संत - मंत - भगवंत का, इनको अति संज्ञान।।

|| 526 ||

अध्ययन, चिंतन, मनन से, कर्म करें निष्काम।
गुरुवाणी, गुरु ज्ञान के, मानो तीरथ धाम।।

|| 527 ||

ग्रंथ अनेकों रच दिए, हुआ जगत में नाम।
वरद सरस्वती-पुत्र का, पुण्य सरीखा काम।।

|| 528 ||

जीवन-पथ पर मित्रवत, मिली **गुरनाम कौर।**
पलक झपकते जिन्दगी, बनी और से और।।

|| 529 ||

जीवन-बगिया झूमती, फलित हुआ **'उल्लास'**।
'शैफाली' के रूप में, लक्ष्मी का आवास।।

|| 530 ||

सारस्वत आवास में, करते सन्त निवास।
सन्तों की वाणी करें, मन का सतत विकास।।

|| 531 ||

सबद-कीर्तन की सदा, फैली रहे सुगंध।
संस्कृति औ' साहित्य के, बेदी रचते छंद।।

|| 532 ||

बेदीजी - गुरनाम से, **'शैफाली' 'उल्लास'।**
मानो वैभव-लक्ष्मी, साथ रहें मधुमास।।

|| 533 ||

हाँ निराला निवेश में, आते नित विद्वान।
बेदीजी - गुरनाम से, पाते अति सम्मान।।

|| 534 ||

'बेदी' सत्साहित्य से, सदा कराते मेल।
दूर-दूर तक ज्ञान की, फैल गयी है बेल।।

|| 535 ||

हिन्दी-पंजाबी किया, अध्ययन उच्च प्रकार।
वाणी, चिन्तन, शोध से, किया अमित प्रसार।।

|| 536 ||

हिन्दी भाषी क्षेत्र हो, या पंजाबी क्षेत्र।
बेदी जी ने ज्ञान के, धारण किए त्रिनेत्र।।

|| 537 ||

शिक्षा औ' साहित्य को, पूजें आठों याम।
किए शोध के क्षेत्र में, विकसित नव आयाम।।

|| 538 ||

गद्य-पद्य के क्षेत्र में, किया अनूठा काम।
विविध विधाओं में दिया, सृजन ललित ललाम।।

|| 539 ||

संस्कृति औ' साहित्य का, बेदी करें प्रचार।
युवाशक्ति में कर रहे, देश-भक्ति संचार।।

|| 540 ||

बेदीजी ने देश का, बहुत बढ़ाया मान।
शिक्षा औ' साहित्य में, फूँक दिए नव प्रान।।

|| 541 ||

शिक्षक औ' शिक्षार्थी, करते अति सम्मान।
शिक्षारूपी कुँज में, **'बेदी-बट'** उपमान।।

|| 542 ||

उत्तर से दक्षिण तलक, शिक्षा के प्रतिमान।
चाहें देश-विदेश हो, **बेदीजी** दिनमान।।

|| 543 ||

दिया सरस्वती ने उन्हें, सारस्वत वरदान।
शिक्षा औ' साहित्य में, उच्च रहे अवदान।।

|| 544 ||

अभिनन्दन-सम्मान के, जितने हैं प्रारूप
बेदीजी को मिले हैं, अब तक विविध अनूप।।

|| 545 ||

सपरिवार सानंद हों, नित्य मिले उत्कर्ष।
वैभव, ज्ञान, समृद्धि हो, आयु बढ़े शत वर्ष।।

स्वर्ण मन्दिर के दर्शन

|| 546 ||

कैसा अद्‌भुत दृश्य है, तन-मन हुआ निहाल।
रोम-रोम कहने लगा, '**जयगुरु सत्‌श्रीऽकाल**'।।

|| 547 ||

मानव-मानव बीच में, सदा रहा सम्बन्ध।
अमृतसर आना हुआ, निभा दिया अनुबन्ध।।

|| 548 ||

हुआ अचानक आगमन, **अमृतसर-दरबार।**
मानो लायी खींचकर, **बाबा की मनुहार**।।

|| 549 ||

भीनी-भीनी हो रही, अम्बर से बौछार।
मानो अमृत झर रहा, बाबा के दरबार।।

|| 550 ||

मधुर-मधुर संगीतमय, सन्तों का सन्देश।
संगत मिलकर दे रही, अमृत-सा उपदेश।।

|| 551 ||

सबद-कीर्तन चल रहा, निकल रहे उच्छ्वास।
तन-मन हुआ विभोर है, मग्न हुआ **उल्लास**।।

|| 552 ||

जलधि सरीखा सरोवर, **मन्दिर स्वर्ण** विशाल।
देख धरा पर स्वर्ग को, जीवन हुआ निहाल।।

|| 553 ||

स्वच्छ सरोवर, नील जल, ज्यों अमृत का सिन्धु।
लिया आँचमन नेह का, धन्य हुआ उर-बिन्दु।।

|| 554 ||

जल-थल-नभ के मिलन का, कितना मनहर बिम्ब।
बीच सरोवर स्वर्णमय, मन्दिर का प्रतिबिम्ब।।

|| 555 ||

जनता और जर्नादन, करते यहाँ निवास।
जीवन औ' अध्यात्म का, अनुपम मिलन-विकास।।

|| 556 ||

कर मन्दिर की परिक्रमा, मन फूला न समाय।
'वाहे गुरु दा खालसा', हृदय लिया बसाय।।

|| 557 ||

बाबा के मन्दिर गये, ले हाथों प्रसाद।
त्याग, समर्पण, भक्ति ने, मेंटे सभी विषाद।।

|| 558 ||

उर-मन्दिर में पैठकर, गुरु से की अरदास।
मानवता का कीजिए, **गुरुवर!** सतत विकास।।

|| 559 ||

भटक गयी है लक्ष्य से, युग-मानवता आज।
खोटे उपक्रम कर रही, आती तनिक न लाज।।

|| 560 ||

हिंसा औ' आंतक का, फैला हुआ जुनून।
किंकर्तव्यविमूढ़ सब, अंधा है कानून।।

|| 561 ||

अपने-अपने स्वार्थ में, डूब रहे हैं लोग।
अपसंस्कृति-अन्याय का, लगा रहे हैं भोग।।

|| 562 ||

बाल, युवा औ' बृद्ध के, सपने चकनाचूर।
मानव जीवन हो गया, अब तो ज्यों नासूर।।

|| 563 ||

मात-पिता-गुरुजन कहाँ, पाते अब सम्मान।
नाजुक रिश्ते भोगते, पग-पग पर अपमान।।

|| 564 ||

नित नारी की अस्मिता, लूट रहे हैं बाज।
रक्षक-भक्षक बन गये, आती तनिक न लाज।।

|| 565 ||

रही कहाँ वह सादगी, रहा न वैसा प्यार।
देख रहा चारों तरफ, **गुरुवर!** कैसी हार।।

|| 566 ||

गुरुवर! कृपा कीजिए, सुन लो करुण पुकार।
बहुत हो चुका देख लो! अब तो हरो विकार।।

|| 567 ||

मानवता का कीजिए, **हे गुरुवर!** उद्धार।
करूण कहानी दास की, तुमको रही पुकार।।

|| 568 ||

हाथ जोड़ विनती करूँ, दास करे अरदास।
गुरुवर! कृपा कीजिए, मिट जाये उपहास।।

|| 569 ||

'बेदीजी' बतला रहे, नैन रहे अवलोक।
मन्दिर में **'उल्लास'** है, साथ **'शरद आलोक'**।।

|| 570 ||

अमृतसर में रच रहा, नित्य नया इतिहास।
सहज, मनोहर, मंत्रमय, गुरुवाणी-मधुमास।।

|| 571 ||

मिला **'सरोपा'** भेंट में, अद्‌भुत मिला प्रसाद।
'वाहे गुरुदा खालसा', मिटा दिया अवसाद।।

|| 572 ||

मधुर-मधुर संगीतमय, मनहर वादक-यंत्र।
गूँज रही परिवेश में, **गुरुवाणी** ज्यों **मंत्र**।।

|| 573 ||

दिव्य-भव्य मन्दिर बना, खड़ा सरोवर बीच।
अमृतरुपी नीर से, रहा गुरू-पद सींच।।

|| 574 ||

गुरु का मन्दिर देखकर, रहता नहीं गुमान।
देख रही दिव्यात्मा, बैठी बीच विमान।।

|| 575 ||

पूर्व जन्म के कर्म ही, फलित हुए हैं आज।
गुरुवाणी अमृतमयी, भक्तजनों को नाज।।

|| 576 ||

गुरुवाणी का विश्व में, फैल रहा आलोक।
पढ़े-सुने जो प्रेम से, तन-मन करे अशोक।।

जलियाँवाला बाग के दर्शन

|| 577 ||

अमृतसर के उर बसा, गुरु मन्दिर के पास।
जलियाँबाला बाग में, आजादी का वास।।

|| 578 ||

चली जहाँ थी गोलियाँ, हुआ राक्षसी नृत्य।
अंग्रेजों के राज्य का, भीषणतम दुष्कृत्य।।

|| 579 ||

जलियाँबाला बाग में, वीर अंसख्य शहीद।
गोली से होली खिली, मिले दिवाली-ईद।।

|| 580 ||

जलियाँबाला बाग में, भारी हुआ विनाश।
अंग्रेजों का यहीं से, शुरु हुआ था नाश।।

|| 581 ||

हरमन्दिर नित देखता, **जलियाँबाला बाग।**
इसके कण-कण में रमी, देश-भक्ति की आग।।

|| 582 ||

वीर असंख्य सो रहे, इसी बाग की धूल
आँखें इनको देखकर, बरसाती हैं फूल।।

|| 583 ||

नित प्रति सारे देश से, आते-रहते लाल।
शीष झुका, माटी उठा, और लगाते भाल।।

|| 584 ||

धन्य हो गया देखकर, जलियाँबाला बाग।
अमृतसर! तुम धन्य हो, धन्य! अमर अनुराग।।

|| 585 ||

आजादी की आग की, ऐसी जली मशाल।
भस्म इसी में हो गया, गोरा-राज विशाल।।

|| 586 ||

धन्य धरा! माँ भारती! अनुपम ललित ललाम।
जलियाँबाला बाग हे!, करता नमन प्रणाम।।

|| 587 ||

जलियाँबाला बाग की, धूल दिवाली-ईद।
कण-कण को सज़दा करूँ, भारत-वीर शहीद।।

|| 588 ||

धन्य! दिवंगत आत्मा! धन्य! शहीद महान।
धन्य! तुम्हारा त्याग है! धन्य! अमर बलिदान।।

|| 589 ||

सोचा था, पूरा हुआ, जलियाँबाला बाग!
दर्शन कर कृतज्ञ हूँ, उदित हुआ है भाग।।

|| 590 ||

माटी लेकर जा रहा, जलियाँबाला बाग!
तुमसे कम होगा नहीं, जन्म-जन्म अनुराग।।

|| 591 ||

जहाँ रहूँ, जैसे रहूँ, रहे धरा से प्यार।
भारत माँ की गोद में, सुख है भरा अपार।।

|| 592 ||

त्याग, समर्पण, प्यार की, भारत भूमि महान।
निष्ठा औ' आदर्श की, यह है अद्भुत खान।।

|| 593 ||

भारत जैसा है नहीं, कहीं विश्व में देश।
सत्य-अहिंसा-कर्म का, देता जो संदेश।।

|| 594 ||

ज्ञानी-विज्ञानी हुए, संत, वीर, भगवन्त।
संस्कृति औ' अध्यात्म में, यह है देश अनन्त।।

श्री लक्ष्मण प्रसाद अग्रवाल जी के प्रति

|| 595 ||

सहज सरल व सौम्य हैं, श्री लक्ष्मण प्रसाद।
उनसे मिलकर आदमी, पाता है आह्लाद।।

|| 596 ||

मिलनसार व्यक्तित्व हैं, अद्भुत शोभा खान।
निश्छल मन की सादगी, बाँट रही मुस्कान।।

|| 597 ||

बोली में माधुर्य है, जिसमें घुली सुगंध।
अपनापन भी गज़ब का, टिके नहीं दुर्गन्ध।।

|| 598 ||

जो भी आया राह में, चले पकड़कर बाँह।
निरभिमान व्यक्तित्व की, बरगद जैसी छाँह।।

|| 599 ||

वात्सल्य की डोर में, बँधा हुआ अनुबन्ध।
जन्म-जन्म का आपसे, है कोई सम्बन्ध।।

|| 600 ||

प्रेम-दया औ' त्याग की, मूरति बने विशाल।
कैसा अनुपम है मिलन, जीवन हुआ निहाल।।

|| 601 ||

माँ लक्ष्मी औ' सरस्वती, करतीं अद्भुत खेल।
हैं लक्ष्मण प्रसाद जी, इनका अनुपम मेल।।

|| 602 ||

मानवता रग-रग भरी, उर में दर्द-विषाद।
प्यार सभी को बाँटते, श्री लक्ष्मण प्रसाद।।

|| 603 ||

लक्ष्मण जी लक्ष्मण सदृश, उर में सेवा भाव।
जगत-राम के सामने, आता कभी न ताव।।

|| 604 ||

पतझर झेले आपने, भोगे हैं मधुमास।
कभी किसी का भूल से, किया नहीं उपहास।।

|| 605 ||

हिन्दी भाषा-राष्ट्र का, सहें नहीं अपमान।
ललित कलाओं का सदा, करें बहुत सम्मान।।

|| 606 ||

मानव के कल्याण हित, करते नित्य प्रयत्न।
संस्कृति के प्रसार में, रहते सदा निमग्न।।

|| 607 ||

पर सेवा-उपकार के, सहज करें सब काम।
गीता-गंगा-गायत्री, बसे हुये उर राम।।

|| 608 ||

संस्कृति-शिक्षा-धर्म का, करें बहुत सत्कार।
विद्वानों के वास्ते, करते हैं उपकार।।

|| 609 ||

किया **मुरादाबाद** का दूर-दूर तक नाम।
संस्कृति औ' साहित्य का, बना अनूठा धाम।।

|| 610 ||

ललितकला औ' शिल्प का, ऐसा किया विकास।
पीतलनगरी ने दिया, दुनिया को प्रकाश।।

|| 611 ||

अभिनन्दन है आपका, श्रीमन लक्ष्मण प्रसाद!
जीवन सुन्दर हो सुखद, मिटें सभी अवसाद।।

|| 612 ||

स्वस्थ रहें! सानंद हो! रहें बाँटते प्यार।
जीवन हो सौ वर्ष का, वैभव रहे अपार।।

महाकवि प्रो॰ हरिशंकर आदेश के प्रति

|| 613 ||

दिव्य भूमि माँ भारती, अद्‌भुत है यह देश।
काव्य, कला संगीत के, साधक श्री 'आदेश'।।

|| 614 ||

जन्म बरेली में हुआ, 'हरिशंकर' है नाम।
जैसा इनका नाम है, वैसा इनका काम।।

|| 615 ||

सहज, सरल अति सौम्य हैं, 'हरिशंकर आदेश'।
जन-जन के कल्याण हित, रचते काव्य विशेष।।

|| 616 ||

भाषा औ' साहित्य में, अध्ययन किया ललाम।
साथ-साथ संगीत में, पाया उच्च मुकाम।।

|| 617 ||

अध्ययन-अध्यापन किया, भारत में बहुरू॰।
सृजन औ' संगीत के, साधक बने अनूप।।

|| 618 ||

दिया सरस्वती मात ने, सारस्वत आदेश।
बेटा! भारत छोड़कर, जाकर रहो विदेश।।

|| 619 ||

देश-देश में घूमकर, करना है अब काम।
संस्कृति औ' साहित्य में, खूब कमाना नाम।।

|| 620 ||

रहे पताका हाथ में, भारत की आदेश!
काव्य, कला, संगीत में, बनजाओ राकेश।।

|| 621 ||

माता के आदेश से, छोड़ा भारत देश।
देश-देश में साधना, करते अब आदेश।।

|| 622 ||

यूरुप, अमरीका गये, चीन और जापान।
फ्रांस, जर्मनी, मास्को, अफ्रीका-ईरान।।

|| 623 ||

ध्रुवदेशों में घूमकर, करते सतत प्रवास।
हिन्दी-भाषा-ज्ञान-हित, अनुपम किया प्रयास।।

|| 624 ||

काव्य-कला-संगीत के, खोल दिये संस्थान।
संस्कृति औ' साहित्य के, कहलाये दिनमान।।

|| 625 ||

संस्कृति औ' अध्यात्म की, शिक्षा विविध प्रकार।
किया पश्चिमी देश में, हिन्दी हित प्रसार।।

|| 626 ||

किया कनाडा देश में, आश्रम का विस्तार।
त्रिनिदाद को भी मिला, विद्या का उपहार।।

|| 627 ||

यू.एस.ए. ने आपको, दिया बहुत सम्मान।
'धर्मगुरू' का आपको, पद दे दिया महान।।

|| 628 ||

दिया पश्चिमी देश में, भारत का सन्देश।
धर्म, कर्म, अध्यात्म पर, नित्य नया उपदेश।।

|| 629 ||

भारत, भाषा, भारती, करती है सत्कार।
संस्कृति औ' साहित्य पर, किया अमित उपकार।।

|| 630 ||

गद्य-पद्य-साहित्य में, सृजित ग्रंथ ललाम।
धर्म और संगीत में, सृजन किया तमाम।।

|| 631 ||

हिन्दी-अंग्रेजी सहित, रचा विपुल साहित्य।
उर्दू को भी दे दिया, भाषाई-लालित्य।।

|| 632 ||

'रानी दमयंती' रचा, 'शकुन्तला', 'अनुराग'।
महाकाव्य 'निर्वाण' रच, रचा राम वैराग।।

|| 633 ||

'गीता रामायण' रची, दी 'जनगीता' दान।
'कथा महाभारत' लिखी, सावित्री उपमान।।

|| 634 ||

'मनोव्यथा' रचकर दिया, चिंतामणि-सा ज्ञान।
'देवालय', 'शतदल' रचे, 'मदिरालय' प्रतिमान।।

|| 635 ||

गयी 'निराशा' छोड़कर, 'रवि की भाभी' दूर।
'मन की दरारें' माँगती, लहू और सिन्दूर।।

|| 636 ||

'देह और दानव' रचे, 'लहरों का संगीत'।
'रजनी-गंधा' गा रही, 'मंजु-मिलन' के गीत।।

|| 637 ||

'आहत आकांक्षा' हुई, घूमे 'देश-विदेश'।
'रविप्रिया', 'निर्वेद' से, पूछे काम विशेष।।

|| 638 ||

निर्मल, ज़ीवन, आदेश व, जमुना, सुरभि, विवेक।
पत्नी, प्रवासी, सतसई, कविवर रचीं अनेक।।

|| 639 ||

नाटक रचे निबन्ध भी, कथा कही युगबोध।
गद्य-पद्य-संगीत में, किया अनवरत शोध।।

|| 640 ||

संस्कृति औ' साहित्य में, अमित किया है काम।
'हरिशंकर आदेश' का, सदा रहे जग नाम।।

|| 641 ||

वरद सरस्वती पुत्र का, सृजन ललित ललाम।
'हरिशंकर आदेश' जी, करता देश प्रणाम।।

|| 642 ||

स्वस्थ रहें, सानंद हो, वैभव हो उत्कर्ष।
दीर्घायु जीवन मिले, बीते समय-सहर्ष।।

गुरुकुल-दर्शन

|| 643 ||

धन्य! दिवंगत आत्मा, स्वामी श्रद्धानन्द!
गुरुकुल रूपी कुँज में, भरा हुआ आनंद।।

|| 644 ||

हे ईश्वर के अंश तुम, श्रद्धानन्द! महान।
अपने गुरुकुल कुँज का, स्वामी! रखना ध्यान।।

|| 645 ||

गुरुकुल का मन्दिर लगा, सारस्वत आवास।
भवन-भवन में कर रहे, श्रद्धानन्द निवास।।

|| 646 ||

गंगा माँ की गोद में, गुरुकुल अनुपम कुँज।
वाणी के आलोक में, दिव्य ज्ञान का पुँज।।

|| 647 ||

माँ वाणी की है यहाँ, कृपा दिव्य अपार।
वर्षा करती ज्ञान की, माँ है बड़ी उदार।।

|| 648 ||

शीर्ष ज्ञान के स्त्रोत नित, बाँटें नेह प्रसाद।
साथ-साथ चलते रहें, चर्चा और विवाद।।

|| 649 ||

माँ वाणी! इस धाम का, करना नित उत्थान।
शूल-फूल तेरे सभी, सबका कर कल्यान।।

|| 650 ||

कुलपति गुरुकुल बीच में, ज्यों अम्बर दिनमान।
सज्जनता औ' सादगी, के मानो प्रतिमान।।

|| 651 ||

सहज, सरल औ' सौम्य हैं, कुलपति का स्वभाव।
सज्जन-दुर्जन सभी का, करते आदर भाव।।

|| 652 ||

गायत्री की साधना, पढ़ें वेद नित मंत्र।
माँ वाणी के पुत्र हैं, कुलपति, निडर, स्वतंत्र।।

|| 653 ||

दूर दृष्टि, दृढ़ नीति से, चलता गुरुकुल तंत्र।
अनुशासन औ' ज्ञान के, कुलपति बाँटें मंत्र।।

|| 654 ||

कुलपति के पद पर सजे, श्रीमन **स्वतंत्र कुमार।**
सागर-सा व्यक्तित्व है, हृदय प्रेम अपार।।

|| 655 ||

स्वामी श्रद्धानन्द की, कृपा का वरदान।
मिला तीसरी बार है, कुलपति-पद सम्मान।।

|| 656 ||

गीता-गंगा-गायत्री, वेद ऋचा का ज्ञान।
तपोभूमि गुरुकुल बना, कुलपति अति विद्वान।।

|| 657 ||

जोड़ा सम्यक् ज्ञान से, गुरुकुल का परिवार।
भाँति-भाँति के दे दिए, नए विषय उपहार।।

|| 658 ||

गुरुकुल शिक्षा पद्धति, पाती अति सम्मान।
देश और परदेश में, शिक्षा का प्रतिमान।।

|| 659 ||

यों तो गुरुकुल में सभी, शिक्षक हैं विद्वान।
पर, कुछ रावण वंश के, चौथ-चन्द्र उपमान।।

|| 660 ||

खाते हैं जिस पात्र में, करें उसी में छेद।
शिक्षक हैं या राक्षस, कौन करेगा भेद??

|| 661 ||

दम्भ, झूठ, पाखण्ड से, रखते ऊँचा भाल।
गुरुकुल शिक्षा को किया, गुरुओं ने बदहाल।।

|| 662 ||

ज्ञान और विज्ञान के, कुछ हैं कर्णाधार।
लेकिन, कुछ शिक्षक करें, शिक्षा का व्यापार।।

|| 663 ||

गुरुकुल संस्कृति का नहीं, इनमें मिला निशान।
अधंकार के कूप में, डूबा हुआ विहान।।

|| 664 ||

भाषा के मन्दिर घुसे, घोर विषैले नाग।
मारे बैठे कुण्डली, उगल रहे हैं आग।।

|| 665 ||

नव शिक्षक टिकता नहीं, इन नागों के बीच।
सुरसरि जल भी पी रहे, उगल रहे विष-कींच।।

|| 666 ||

भोले और अबोध हैं, छात्र सभी भयभीत।
नागों की फुंकार से, भूलें भाषा प्रीत।।

|| 667 ||

जब भाषा-मन्दिर बना, नागों का आवास।
तब कुलपति कैसे करें, भाषा अरे! विकास।।

|| 668 ||

भाषा दुर्गति देखकर, कुलपति हैं हैरान।
कातर नैन निहारते, कैसे हो उत्थान।।

|| 669 ||

ज्ञान और विज्ञान में, गुरुकुल किया विकास।
पर, भाषाई दृष्टि से, अद्भुत हुआ विनाश।।

|| 670 ||

भाषा के अनुभाग में, मिले घूमते नाग।
वैर-द्वेष औ' कपट के, उगल रहे थे झाग।।

|| 671 ||

माँ वाणी देखी नहीं, भाषाई अनुभाग।
गुरुकुल संस्कृति गुम गयी, दूर गया अनुराग।।

|| 672 ||

आदर औ' समभाव का, मिला न नाम निशान।
पण्डित निज को मानते, शिक्षक महा महान।।

|| 673 ||

पर निन्दा, अपकार में, डूबा हुआ विभाग।
सिंहासन पर जल रहा, उल्टा धरा चिराग।।

|| 674 ||

हिन्दी भाषा रो रही, करती घोर विलाप।
वाणी-भाषा सदन में, करते नाग मिलाप।।

|| 675 ||

कुलपति भी हैरान हैं, देख-देख संकाय।
विद्वानों से पूछते, कोई सरल उपाय।।

|| 676 ||

राजनीति की पंक में, डूबा सकल विभाग।
हिन्दी-हिन्दुस्तान से, किसे यहाँ अनुराग।।

|| 677 ||

पद-गरिमा, आचार का, देखा यहाँ कमाल।
शिक्षक सिर पर नाचता, चढ़कर करे धमाल।।

|| 678 ||

हिन्दी के आचार्य का, मिला देखने सांच।
कुलपति जी के सामने, करता नंगा नाच।।

|| 679 ||

हिन्दी भाषा के लिए, अपव्यय कितना रोज।
नाग अनेकों खा रहे, छीन-छीन कर भोज।।

|| 680 ||

नाग-नाग के बीच में, रचा-बसा पड्यंत्र।
भला असर कैसे करे, बिच्छू मारक मंत्र।।

|| 681 ||

भाषा-मन्दिर में हुए, तंत्र-मंत्र सब फेल।
मनमानी-अज्ञानता, हठधर्मी का खेल।।

|| 682 ||

कुलपति करें समीक्षा, हिन्दी-मन्दिर घेर।
बुला सपेरों से करें, इन नागों को ढेर।।

|| 683 ||

हिन्दी भाषा ने किया, कितना यहाँ विकास।
आख्या लें गतवर्ष की, कितना हुआ विनाश।।

|| 684 ||

कितना धन अपव्यय हुआ, कितना किया विनाश।
पाँच साल का माँग लें, विवरण और विकास।।

|| 685 ||

किसकी क्या-क्या भूमिका, पूछें लिखित सवाल।
उत्तरदायी कौन है, करता कौन बवाल।।

|| 686 ||

नाग बबाली घेर कर, कुचलें उसका माथ।
अन्य नाग भयभीत हो, आ जायेंगे साथ।।

|| 687 ||

बहुत देर अब तक हुई, आगे करो न देर।
जितनी जल्दी हो सके, दूर करो अन्धेर।।

|| 688 ||

माँ वाणी ने किया है, कुलपति पर विश्वास।
गुरुकुल-हिन्दी-सदन से, दूर करें उपहास।।

|| 689 ||

रचना और विनाश में, लेश नहीं है दम्भ।
कुम्भकार को देख लो, तोड़ बनाता कुम्भ।।

|| 690 ||

मन से सृजनकार भी, चाहे नहीं विनाश।
लेकिन, बिना विनाश के, होता कहाँ विकास।।

|| 691 ||

पतन और उत्थान दो, जीवन के अध्याय।
सृजन और विनाश हैं, प्रगति के पर्याय।।

|| 692 ||

बिना दण्ड मिलता नहीं, डूबा हुआ उधार!
माँग रही है जिन्दगी, गुरुकुल बीच सुधार।।

|| 693 ||

पढ़े-लिखे जब कर रहे, बन्दर जैसा काम।
गुरुकुल क्यों होगा नहीं, जगत बीच बदनाम।।

|| 694 ||

पढ़-लिखकर साहित्य को, बने सरस्वती पूत।
लेकिन, भूले आचरण, करते कर्म कपूत।।

|| 695 ||

ओछे-ओछे कर्म कर, गुरुकुल किया खराब।
शिक्षक ये! शिक्षक नहीं, ओढ़े हुए नकाब।।

|| 996 ||

ऊँचे पद बैठे हुए, ऊँची इनकी जात।
ऊँच-नीच का भेद कर, पैदा करते घात।।

|| 697 ||

निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, शोषण औ' अपकार।
गुरुकुल के परिवेश में, ये इनके उपहार।।

|| 698 ||

गुरुकुल के उत्थान हित, करिये दण्ड विधान।
मिला राम को रास्ता, देखी सिन्धु कमान।।

|| 699 ||

धूर्त-मूर्ख समझे नहीं, कभी प्यार की बात।
आ जाते सब रास्ते, जब पड़ जाती लात।।

|| 700 ||

चलो चलें उस देश में, जहाँ बसें इन्सान।
पत्थर भी जिस देश में, कहलाते भगवान।।

|| 701 ||

जहाँ पहुँचकर आदमी, बन जाता भगवान!
दुनिया में वह देश है, भारत बड़ा महान।।

|| 702 ||

बिन श्रम के अर्जित किया, धन का ढ़ेर अकूत!
पड़े चुकाना मित्रवर! पाई-पाई सूत।।

|| 703 ||

पैसा आया पास में, मत कर देख गरूर!
कुछ ही पल की बात है, होगा खर्च जरूर।।

|| 704 ||

हावी हैं अखबार पर, भू-माफिया विराट।
सम्पादक, स्वामी भये, स्वामी भये सम्राट।।

|| 705 ||

बे-मौसम फल-सब्जियाँ, करो नहीं उपभोग!
लग जायेंगे आपको, वरना सौ-सौ रोग।।

|| 706 ||

पहले खा मिष्ठान्न को, पीछे कर आहार!
इसी नियम से खाय नित, होवे खत्म विकार।।

|| 707 ||

दूध-दूध के भोज सब, सात्त्विक हैं स्वादिष्ट!
लिए नमक के साथ तब, करते बहुत अनिष्ट।।

|| 708 ||

रक्त चाप नियमित करे, करे रक्त का शोध!
सेंधा नमक विकार का, करता है प्रतिरोध।।

|| 709 ||

अर्द्धशती जीवन हुआ, रखिए इतना ध्यान!
स्वस्थ आदमी के लिए, दालें गरल समान।।

|| 710 ||

दर्द, हर्ष औ' मौत के, कारण बनें अनेक!
जीवन बड़ा विचित्र है, आँसू होते एक।।

|| 711 ||

बड़ी विलक्षण नारियाँ, रचना विविध - विचित्र!
क्रोध, अश्क, मुस्कान से, पल में बदलें चित्र।।

|| 712 ||

गद्दारों की भूमिका, पैदा करती खोट।
घर या देश-समाज हो, कर देती विस्फोट।।

|| 713 ||

देश भक्त कितने मिटे, हुए शहीद अनाम।
गद्दारों की भूमिका, पीड़ित देश-अवाम।।

|| 714 ||

घर में जब अनबन रहे, वैचारिक टकराव।
तो निश्चित यह जान लो, होना है बिखराव।।

|| 715 ||

लेकिन, होता है वही, जो रच राखा राम।
काल-चक्र चलता रहे, करता अपना काम।।

|| 716 ||

उधर मनोहर चोटियाँ, खड़ी सिन्धु के बीच।
पावन पाँव पखारता, रहा सिन्धु जल सींच।।

❁ ❁ ❁

नया भारत

अपनी बात

वैश्विक स्तर पर होने वाली उथल–पुथल ने मेरी सोच को प्रभावित किया है जिसका प्रभाव मेरी अभिव्यक्ति पर पड़ना स्वाभाविक है। यही नहीं, आज़ादी के पश्चात् भारतीय जीवन में भी आमूलचूल परिवर्तन हुए हैं। विकास की चाह ने भारतीय जनजीवन के संस्कारों को भी परिवर्तित किया है। यह भी सत्य है कि भारत में आज़ादी के पश्चात् जिस गति से विकास की धारा प्रवाहित हुई है, उससे कहीं अधिक तीव्रता से भ्रष्टाचार ने भारत के पारिवारिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर आक्रमण बोला है। फलतः आज जीवन का एक भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहाँ भ्रष्टाचार का बोलबाला नहीं है। भ्रष्टाचार अपने संगी–साथियों– दुराचार, अत्याचार, कदाचार, अन्याय, शोषण और असत्य को साथ लेकर भारतीय जनजीवन पर टूट पड़ा है। 'भ्रष्टाचार' ने सबसे बड़ा हमला भारत के 'सांस्कृतिक जीवन' पर किया है, क्योंकि भ्रष्टाचार को सबसे बड़ा ख़तरा भारतीय सांस्कृतिक जीवन से है। फलतः उसने 'आतंक', हत्या, लूटपाट और फिरौती को अपना हमजोली बना लिया है। यही नहीं, उसने भारत के लोकतंत्र की धुरी– 'भारतीय राजनीति' को भी अपने चंगुल में फांस लिया है, जिसके द्वारा उसने 'संसद' और 'विधान सभाओं' में जातिवाद, सम्प्रदायवाद, प्रान्तवाद, क्षेत्रवाद और भाई–भतीजावाद जैसी क्रूरतम विखण्डनकारी और विघटनकारी दुष्प्रवृत्तियों को सीधे प्रविष्ट करा दिया है। इसका दुष्परिणाम हमारे सामने है–युग–युगों से बना–बनाया हमारा सांस्कृतिक महल जर्जर हो गया है। मानवीय मूल्य विद्रूपताओं के शिकार हो गये हैं। भारतीय जनजीवन में उथल–पुथल मची है। भारतीय लोकतंत्र पर गहरा संकट मंडरा रहा है। 'अब क्या होगा?' की आशंका से सम्पूर्ण समाज दुविधा ग्रस्त है। दुष्प्रवृत्तियों का बोलबाला है। सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, कर्तव्यपरायणता, देशभक्ति, कर्मठता,

मानवतावादी मूल्यों–प्रेम, त्याग, क्षमा, दया, अहिंसा, सहानुभूति, ममता आदि को 'भ्रष्टाचार' के कालिया नाग ने डँस लिया है। अस्तु, घोर अपसांस्कृतिक–प्रदूषण के दौर से भारतीय जनमानस गुजर रहा है; जिससे दूर–दूर तक निवृत्ति की किरण दिखायी नहीं दे रही है।

यद्यपि इस विकटतम, विषमताग्रस्त माहौल में **'नया भारत'** की परिकल्पना 'मरूद्यान' सदृश ही है जिसे यदि सहज रूप में 'संभव' न भी किया जाय तथापि अलौकिक रूप में यह असंभव भी नहीं है। यह श्रीराम–श्रीकृष्ण–गौतमबुद्ध–महावीर स्वामी, विवेकानन्द आदि महापुरूषों और महान सन्तों की भूमि भारत है। यदि इस देवभूमि पर **'नया भारत'** नहीं होगा, तो कहाँ होगा?

आपके कर कमलों में **'नया भारत'** का सारस्वत पुष्प सादर भेंट करते हुए सुखद अनुभूति हो रही है। यह सब माँ सरस्वती की कृपा का प्रसाद है। इसमें जहाँ कहीं भी ,आपको 'सत्यं–शिवम्–सुन्दरम्' की सुखद अनुभूति हो, वह आपकी 'सहृदयता' है और कहीं कंकड़ की किसकिसाहट का आभास हो, तो उसे मेरी 'अल्पज्ञता' मानकर सहन कर लें क्योंकि मेरी रग–रग में तो गाँव गलियारे की धूल के कण ही समाये हैं जिनसे विमुक्त हो पाना इस जन्म में तो असम्भव है।

सद्भावनाओं सहित।

विजयादशमी, 24 अक्टूबर, 2012

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

|| 1 ||

गुरू जीवन के कुंज में, होते दिया समान।
अंधकार को चीरकर, दूर करें अज्ञान।।

|| 2 ||

दर्शन और पुराण में, गुरू महिमा का गान।
परम्परा करती रही, गुरू-पद-अमृत पान।।

|| 3 ||

गुरूओं ने इस देश की, रखी विश्व में लाज।
युग-युग से इस देश को, है गुरूओं पर नाज।।

|| 4 ||

गुरूओं ने ही देश को, ऊँचे दिये विचार।।
पता नहीं क्यों हो गया, पैदा आज विकार।।

|| 5 ||

कैसे हों इस देश के, अब सपने साकार।
गुरूओं ने जब देश के, छोड़ दिये आचार।।

|| 6 ||

संस्कृति औ' साहित्य का, सदा भरा था कोष।
आज गुरू गुम हो गये, रहा न उनमें तोष।।

|| 7 ||

भूल गये गुरू आज के, त्याग-समर्पण-प्यार।
इसीलिये, तो मिल रही, पग-पग उनको हार।।

|| 8 ||

अब कागज के फूल-से, गुरु-शिष्य सम्बन्ध।
शिक्षा अब तो हो गयी, अर्थ भरा अनुबन्ध।।

|| 9 ||

जीवन के हर क्षेत्र में, उमस, गिरावट, ऊब।
लेकिन, शिक्षा जगत की, लुटिया डूबी खूब।।

|| 10 ||

राजनीति ने देश का, ऐसा किया विनाश।
फलत: शिक्षा का हुआ, पूरा सत्यानाश।।

|| 11 ||

जब तक शिक्षा-क्षेत्र में, राजनीति का रंग।
तब-तक शिक्षा-विटप भी, सदा रहे बदरंग।।

|| 12 ||

शिक्षा के पद बिक रहे, धन की मार अकूत।
राजनीति औ' जाति के, मिलते खूब सबूत।।

|| 13 ||

इधर-उधर चारों तरु, देख रहा गद्दार।
दुष्ट-भ्रष्ट नेता बड़े, हैं कितने मक्कार।।

|| 14 ||

किया विधायक निधी से, नेता जी ने दान।
मात-पिता की पुण्य तिथि, जनता का कल्यान।।

|| 15 ||

लोकतंत्र की देह में, ऐसा लगा विकार।
प्रश्न व्यवस्था बन गयी, जन-जन हुआ शिकार।।

|| 16 ||

बोध हुआ तो हो गया, अपराधों से मेल।
चला रहे वे लोग ही, लोकतंत्र की रेल।।

|| 17 ||

मनचाही रुकती जगह, लोकतंत्र की रेल।।
ताकत हो, औ' हौंसला, तुम भी खेलो खेल।।

|| 18 ||

जैसे चाहे ले चलो, लोकतंत्र की नाव।
नियम-नीति-सिद्धान्त का, यहाँ न कोई भाव।।

|| 19 ||

राजनीति सर्कस तरह, शासक जोकर जात।
जनता हथिनी-शेरनी, चाबुक देता मात।।

|| 20 ||

राजनीति की छोकरी, खेल रही है फाग।
जनता पागल हो गयी, लगा रही है आग।।

|| 21 ||

लोक सेवकों को हुआ, खुद पर बहुत गुरुर।
चौराहों पर देखलो, बिकते हुये हुजूर।।

|| 22 ||

जगंल ने कानून भी, बदल लिया चुपचाप।
राज चलाना सिंह को, मनो हुआ अभिशाप।।

|| 23 ||

पीपल-नीम-अशोक-बट, विटप खड़े सब मौन।
अब उपवन की अस्मिता, हाय! बचाये कौन।।

|| 24 ||

कटी-फटी लाशें पड़ीं, बिखर गये सब अंग।
पलक झपकते हो गया, हाय! रंग में भंग।।

|| 25 ||

परिजन सारे रो रहे, क्रंदन चारों ओर।
भय-पीड़ा-आतंक का, मिलता ओर न छोर।।

|| 26 ||

देख-देख यह आदमी, है कितना बेचैन।
लेकिन, मृत्यु न देखती, समय-दिवस औ' रैन।।

|| 27 ||

टूट अचानक ही गयीं, हा! जीवन की डोर।
मन मसोसकर आदमी, रहा देखता भोर।।

|| 28 ||

अब धरती पर हैं नहीं, सखे! तुम्हारे पैर।
पलक झपकते देखना, नहीं रहेगी खैर।।

|| 29 ||

भला-बुरा कहते रहो, खत्म न होय यथार्थ।
सत्य सहज स्वीकारिये, बढ़े सदा पुरुषार्थ।

|| 30 ||

दोष मढ़ो, गाली बको, और बनो इन्सान।
इस पथ पर जो भी चला, बन जाता शैतान।।

|| 31 ||

वाणी में कटुता भरी, बढ़ा ईर्ष्या भाव।
रक्त चाप बढ़ने लगे, क्यों खाते हो ताव??

|| 32 ||

छोड़ द्वेष-पाखण्ड को, रखो सभी से मेल।
खत्म कर रहे क्यों अरे? बना बनाया खेल।।

|| 33 ||
बुरा-भला कुछ भी कहो, कहो न आँखें मींच।
खूब करो आलोचना, बुद्धि कसौटी-सींच।।

|| 34 ||
गरल सदा ही गरल है, आग रहेगी आग।
करता है जो आचमन, भस्म करे सब राग।।

|| 35 ||
राजनीति के क्षितिज पर, दुराचार के कंस।
खड़े युधिष्ठिर झेलते, अपमानों के दंश।।

|| 36 ||
दानव भ्रष्टाचार का, दिखा रहा है दन्त।
विविध रूप धरते फिरें, अफसर-मंत्री-सन्त।।

|| 37 ||
देश-धर्म औ' जाति पर, करिये गर्व जरूर।
लेकिन, ऐसा क्यों लगे, पैदा हुआ गुरूर।।

|| 38 ||
राजनीति में गन्दगी, उछल रही है खूब।
जो सेवक श्रीराम के, सभी गये कुल डूब।।

|| 39 ||
बाहर से कुछ और हैं, अन्दर से कुछ और।
वाणी औ' व्यवहार पर, भैया! कर लो गौर।।

|| 40 ||
भैया! ज़ाति सुधार लो, तब करना तुम बात।
बिना बात फैला रहे, तुम समाज में घात।।

|| 41 ||

जग जन्मा जिस जाति में, वह अवगुण की खान।
आओ! जगत सुधार लें, तब करना सब मान।।

|| 42 ||

रत्नाकर ने कर्म से, करली जाति सुधार।
बाल्मीकि, गुरु बन गये, याद करे संसार।।

|| 43 ||

सखे! मनुज-ईमान का, पहले करो सुधार।
फिर देना संसार को, गाली खूब उधार।।

|| 44 ||

जात-पांत के द्वेष का, मतकर अधिक बखान।
कहीं दीखता प्यार हो, बैठा उसे मचान।।

|| 45 ||

बढ़ता-जाता रात-दिन, सुरसा जैसा गात।
जात-पांत के भेद को, बढ़ा न इतना तात।।

|| 46 ||

सभी परस्पर भ्रात हैं, विविध जाति के लोग।
केवल मानव-दृष्टि ही, पैदा करती रोग।।

|| 47 ||

जगह-जगह होने लगे, दंगे और फिसाद।
जात-पांत के द्वेष ने, पैदा किये विवाद।।

|| 48 ||

जाति-जाति को देखकर, खाय जाति ही ताव।
हुआ आदमी से बड़ा, आज जाति का भाव।।

|| 49 ||

जात-पांत पर आदमी, देता बड़ा बयान।
बड़े-बड़े नेता यहाँ, करते जाति-बखान।।

|| 50 ||

पथिक-पथिक से पूछता, मिलकर पहले जात।
मनुज कहाँ पर मर गया, पैदा करके पांत।।

|| 51 ||

आरक्षण के गरल ने, पैदा किये विकार।
भाँति-भाँति के हो गये, अब तो जाति-प्रकार।।

|| 52 ||

लाभ जाति के नाम पर, लेते लोग अनेक।
वाह! जाति के नाम पर, दरसाते अविवेक।।

|| 53 ||

जाति-धर्म के नाम पर, बँटे रेबड़ी रोज।
नेता खुलकर बाँटते, टिकट-बज़ीफें-भोज।।

|| 54 ||

आरक्षण कर जाति का, करीं जाति बदनाम।।
अच्छा होता मेंटते, जात-पांत का नाम।।

|| 55 ||

जात-पांत के नाम पर, निशिदिन होती राड़।
राजनीति ने देश का, मौसम दिया बिगाड़।।

|| 56 ||

जात-पांत की भावना, अगर बढ़ाये मेल।
तो भैया! तुम खेलते, चलो सतत यह खेल।।

|| 57 ||

जाति-धर्म को भेदकर, नेता जाते जीत।
जनता को गुमराह कर, करें वही भयभीत।।

|| 58 ||

जाति-जन्म से आदमी, क्या पाता पहचान।
जैसा जिसका कर्म हो, बन जाता इन्सान।।

|| 59 ||

सजी हाथ में तूलिका, करें जाति गुणगान।
ऐसे रचनाकार तो, बनते नहीं महान।।

|| 60 ||

खड़ी देश में जब तलक, धर्म-जाति-दीवार।
तब तक सच्ची शान्ति के, नहीं खुलेंगे द्वार।।

|| 61 ||

धर्म-जाति के नाम पर, बदल रहा अब तंत्र।
नेता उच्छृंखल हुये, अथवा हुये स्वतंत्र।।

|| 62 ||

कौन सुने? किससे कहें? आज देश का हाल।
बन्दर-भालू-लोमड़ी, ठोक रहे हैं ताल।।

|| 63 ||

जाति-धर्म को देखकर, करे फैसले तंत्र।
नेता जी बतला रहे, अब हम हुये स्वतंत्र।।

|| 64 ||

नेता करते फैसले, अहंकार में डूब।
सुनते-सुनते आदमी, यार! गया है ऊब।।

|| 65 ||

सुविधाओं की पोटली, जाति-धर्म के नाम।
नेताजी निज जाति को, बाँटें खूब इनाम।।

|| 66 ||

परम्परागत रास्ते, सारे हुये निरुद्ध।
धर्म-जाति- अन्याय के, बोले कौन विरुद्ध।।

|| 67 ||

अरे! कभी इन्सान को, कहीं मिला भगवान।
स्वार्थ-लोभ- लालच मिला, देख मरा इन्सान।।

|| 68 ||

अब कोई सुनता नहीं, प्यार-प्यार की बात।
घर-घर के अब रास्ते, अलग-अलग हैं तात।।

|| 69 ||

पढ़-लिखकर यदि आदमी, बना नहीं उपमान।
इससे तो अच्छा भला, निपट अपढ़ इन्सान।।

|| 70 ||

लोकतंत्र? हा! न्याय की, कौन सुने आवाज?
जिनका सिक्का चल रहा, उनका ही आगाज।।

|| 71 ||

पहले तो घर एक था, रहा एक ही द्वार।
अब आंगन के बीच में, खड़ी हुई दीवार।।

|| 72 ||

देश-देश में देखलो, बसे हुये शैतान।
अमरीका या चीन हो, अथवा पाकिस्तान।।

|| 73 ||

काल कभी करता नहीं, जड़-चेतन में भेद।
सहज रूप हरता रहा, सभी असंभव खेद।।

|| 74 ||

शर्मनाक बनता अगर, अनजाने व्यवहार।
प्यार, क्षमा, मनुहार से, आगे करो सुधार।।

|| 75 ||

मृत्यु सुनिश्चित हो गयी, मिला दिवस जिस जन्म।
फिर क्यों? तू डरता अरे! छोड़ न अपना कर्म।।

|| 76 ||

मृत्यु से डरते सदा, कायर-दुष्ट-लबार।
वीर धरा पर मानते, मृत्यु को त्यौहार।।

|| 77 ||

दुनियादारी से डरे, अगर नींव कमजोर।
स्वाभिमान व्यक्तित्व ही, उत्तर दे पुरजोर।।

|| 78 ||

सत्य कभी झुकता नहीं, दिन हो अथवा रात।
कैसा भी माहौल हो, कहता सच-सच बात।।

|| 79 ||

तुम फूले किस बात पर, झलके साफ गुरूर।
खड़ी सामने मृत्यु है, आकर रहे जरूर।।

|| 80 ||

तुम जो इतना डर रहे, हुआ कहीं पर छेद।
वरना, तुम देते नहीं, उसको अपना भेद।।

|| 81 ||

सीधा-सच्चा आदमी, कहे न खोटी बात।
लोभ-प्रलोभन भी उसे, झुका न पाये तात!!

|| 82 ||

रह जाता सब कुछ यहीं, धन-वैभव श्रीमान!
मृत्यु हुई तो पूछते, धर्म-कर्म-ईमान।।

|| 83 ||

बता भला किस हेतु को, रहा बोलता झूंठ।
आज अकेला ही खड़ा, ज्यों क्यारी में ठूंठ।।

|| 84 ||

कहीं नहीं प्रारम्भ है, देखा कहीं न अन्त।
महानगर की दौड़ है, चलती दिशा-दिगन्त।।

|| 85 ||

दुनिया भर में सोच के, हुये दायरे तंग।
मज़हब की मजबूरियाँ, जाति दिखाती रंग।।

|| 86 ||

महानगर की दौड़ में, शामिल हुये ज़नाब।
हर मौसम, हर ऋतु यहाँ, बढ़ता गया तनाव।।

|| 87 ||

कोई यहाँ न दीखता, महानगर में यार!
शर्मसार रिश्ते सभी, ढोयें तन का भार।।

|| 88 ||

गुरुजन, पण्डित, वैद्य, कवि, साधक, रचनाकार।
महानगर आकर सभी, रहें न वैसे यार।।

|| 89 ||

सुन्दर पुष्प गुलाब के, लेकिन गंध विहीन।
महानगर सम्बन्ध त्यों, होते हृदयहीन।।

|| 90 ||

हर कोई संत्रस्त है, महानगर में यार!
धन का कहीं अभाव तो, बना कहीं धन भार।।

|| 91 ||

मिलने आया गांव से, महानगर में मीत।
युग बीते हारा-थका, खोज-खोज कर प्रीत।।

|| 92 ||

मिला अचानक एक दिन, महानगर में यार।
कूड़ा-कर्कट-गन्दगी, सजा रहा घर-बार।।

|| 93 ||

अपसंस्कृति- अपमान को, जबसे सहते लोग।
लग जाते तन-बदन में, तबसे सौ-सौ रोग।।

|| 94 ||

सगे-सगों के बीच में, कैसे निभता प्यार।
नहीं सिखाया बड़ों ने, बच्चों को व्यवहार।।

|| 95 ||

दो-दो ताले द्वार पर, सारे बन्द कपाट।
बता रहीं खामोशियाँ, जीवन नहीं सपाट।।

|| 96 ||

कालचक्र जब घूमता, पल में करे विनाश।
करे सुरक्षा आदमी, फिर भी होता नाश।।

|| 97 ||

जरा-जरा सी बात को, नेता देते तूल।
राजनीति-दायित्व को, अरे गये क्यों भूल?

|| 98 ||

अपना-अपना धर्म है, अपनी-अपनी जात।
मानवता देखे नहीं, कभी जात औ' पांत।।

|| 99 ||

द्वेष-दम्भ-पाखण्डरत, दूर-दूर तक नीच।
मिला न कोई आदमी, महानगर के बीच।।

|| 100 ||

डण्डा-वर्दी-अस्त्र हैं, सेवा के उपमान।
बना पुलिस यदि आदमी, रहे नहीं इन्सान।।

|| 101 ||

आम आदमी पुलिस से, रहता अति भयभीत।
पर, अपराधी मानते, इसको अपना मीत।।

|| 102 ||

कभी भूल से मित्रता, करो पुलिस से नाय।
वरना, कुल-परिवार का, मान सभी कुछ जाय।।

|| 103 ||

कभी पुलिस की बात पर, करो नहीं विश्वास।
मनुज-मनुजता का करे, पुलिस सदा उपहास।।

|| 104 ||

कभी पुलिस का आदमी, करे न सीधी बात।
जितना मीठा बोलता, उतनी गहरी घात।।

|| 105 ||

सज्जन-दुर्जन की पुलिस, करे नहीं परवाह।
रिश्वत लेकर चोर से, उसे बनाती शाह।।

|| 106 ||

लूटपाट, आतंक को, पुलिस दे रही छूट।
चोर, गिरहकट, माफिया, जब चाहें लें लूट।।

|| 107 ||

पुलिस करे जब मित्रता, देती उसे पनाह।
अपना उल्लू साधने, लेती बना गवाह।।

|| 108 ||

उलट-पुलट प्रकरण करे, करवा देती राड़।
पैसा लेकर भी पुलिस, झुकवा देती भाड़।।

|| 109 ||

बालक, युवती, आदमी, युवा, नपुंसक, नार।
सगी किसी की है नहीं, पुलिस कहीं भी यार!!

|| 110 ||

झूठ बनादे सत्य को, बदले युग-परिवेश।
पुलिस दण्ड के सामने, मनुज भूलता देश।।

|| 111 ||

पुलिस किसी के साथ में, करे न कोई चूक।
लेकिन, जब फँसती पुलिस, लगे निगलने थूक।।

|| 112 ||

पुलिस-पुलिस के साथ भी, करे न शिष्टाचार।
पुलिस-पुलिस की जांच में, रुके न भ्रष्टाचार।।

|| 113 ||

अलग-अलग हैं काम तो, अलग पुलिस के दाम।
ज्यों बिकते बाजार में, लंगड़ा-कल्मी आम।।

|| 114 ||

पुलिस करे अपराध की, पैसा लेकर जांच।
आने भी देती नहीं, अपराधी पर आंच।।

|| 115 ||

आज देश में कर रहे, आतंकी विस्फोट।
कैसे पहुँचे देश में, लिये बिना ही ओट?

|| 116 ||

तोप-तमंचा-रायफल, पिस्टल-गन-हथियार।
बिन जांचे-परखे पुलिस, बाँटे ज्यों उपहार।।

|| 117 ||

जैसा जिसका काम हो, पुलिस माँगती दाम।
चौराहे-चौकी बिकें, थाने हों नीलाम।।

|| 118 ||

नीचे से ऊपर तलक, चले पुलिस का राज।
उपहारों की टोकरी, सजे पुलिस का साज।।

|| 119 ||

हाथ-हाथ को काटता, बचे न कोई हाथ।
शासन कोई भी रहे, पुलिस भ्रष्ट के साथ।।

|| 120 ||

अपराधी नेता बना, किया पुलिस ने काम।
ब्याज सहित फिर पुलिस भी, चुकता करती दाम।।

|| 121 ||

चौराहे पर रात-दिन, देखो, पुलिस धमाल।
आँखों-आँखों में करे, कैसा पुलिस कमाल।।

|| 122 ||

पुलिस-पुलिस का आदमी, भूल गया आचार।
राष्ट्र भावना गुम गयी, दमक रहा व्यभिचार।।

|| 123 ||

राजनीति-व्यभिचार की, जब तक पुलिस शिकार।
तब तक कम होगा नहीं, पैदा हुआ विकार।।

|| 124 ||

रिश्वत के चंगुल फँसा, पुलिस-पुलिस का तंत्र।
रिश्वत लेकर फूँकते, पुलिस-सपेरे मंत्र।।

|| 125 ||

जाति धर्म के नाम पर, भर्ती चलती रोज।
गंगूतेली कोसते, 'ट्रेनिंग' लेते भोज।।

|| 126 ||

अब भारत आजाद है, खुले आम हैं दाम।
चपरासी या पुलिस बन, पाँच लाख में काम।।

|| 127 ||

पैसा लेकर पुलिस में, भर्ती करें जवान।
फिर तो लूटेंगे सखे! दौलत और दुकान।।

|| 128 ||

पैसा वालों का करे, पुलिस बहुत सम्मान।
निर्धन औ' असहाय का, करे बहुत अपमान।।

|| 129 ||

पुलिस न उनको टोकती, दुष्ट-भ्रष्ट-मक्कार।
अपराधी-आतंक हो, या नेता की कार।।

|| 130 ||

धन्य! हमारे देश की, जीवट पुलिस विशाल।
सज्जनता-आदर्श की, छोड़ी नहीं मिशाल।।

|| 131 ||

पुलिस कभी करती नहीं, भले-बुरे में भेद।
जिस बर्तन को भोगती, करे उसी में छेद।।

|| 132 ||

केवल डरती है पुलिस, देखा जहाँ वकील।
यही पुलिस के कृत्य को, करता बड़ा ज़लील।।

|| 133 ||

यों छत्तिस का आंकड़ा, पुलिस-वकीलों बीच।
देखे पुलिस वकील को, आँखें लेती मींच।।

|| 134 ||

भैया! पुलिस-वकील में, व्यवसायी सम्बन्ध।
है दोनों के बीच में, अद्भुत ही अनुबन्ध।।

|| 135 ||

दोनों पक्ष से मार लें, पैसा पुलिस-वकील।
दोनों ही सुनते नहीं, पैसा रहित दलील।।

|| 136 ||

भारत में दुर्लभ हुये, सच्चे पुलिस-वकील।
जो दानवता के लिये, पग-पग करें ज़लील।।

|| 137 ||

कितना खासमखास हो, परिजन अथवा यार।
पुलिस-वकील न चूकते, लिये बिना उपहार।।

|| 138 ||

अपराधी मिल पुलिस से, करता बँटाधार।
मिलकर पुलिस, वकील से, करती बेड़ापार।।

|| 139 ||

माँगो पुलिस-वकील से, दया-मद्द की भीख।
जो इनके चंगुल फँसा, निकले उसकी चीख।।

|| 140 ||

जल में रेखा खींचना, यों तो है आसान।
लेकिन, पुलिस-वकील हैं, शोषण के उपमान।।

|| 141 ||

देखा पुलिस-वकील में, कितना भरा गुमान।
दण्ड और कानून के, बनते चतुर सुजान।।

|| 142 ||

करते पुलिस-वकील क्या, जन-मन का सम्मान।
वाणी औ' व्यवहार में, भरा हुआ अपमान।।

|| 143 ||

जनता में छवि हो गयी, दोनों की बदनाम।
भला आदमी दूर से, डरता करे प्रणाम।।

|| 144 ||

न्यायपालिका कस रही, इन पर अंकुश रोज।
खुद को पुलिस-वकील तो, समझें राजा भोज।।

|| 145 ||

सुधरे पुलिस-वकील तो, नहीं टिकेंगे भ्रष्ट।
आम आदमी को कहीं, होगा तनिक न कष्ट।।

|| 146 ||

जिधर-जिधर को देखिये, उधर देश बदहाल।
हत्या-लूट-डकैतियाँ, अपराधों का जाल।।

|| 147 ||

जाति-धर्म की आग ने, जला दिये आचार।
ढांचा बिगड़ा देश का, फूला भ्रष्टाचार।।

|| 148 ||

हँसती पुलिस-वकील भी, देख-देख अपराध।
मानो, पूरी हो रही, उनके मन की साध।।

|| 149 ||

चाहें पुलिस-वकील तो, रुकें सभी अपराध।
अगर सत्य ईमान से, करते कर्म अबाध।।

|| 150 ||

संस्कृति औ' साहित्य का, खूब करें गुणगान।
पर, वाणी-व्यवहार से, करें नहीं अपमान।।

|| 151 ||

अंहकार के विरुद्ध तो, कविता रचते खूब।
पर, उनको देखा, मिले, अहंकार में डूब।।

|| 152 ||

कविता मन की साधना, शब्दों का उपहार।
सृजक को भी चाहिये, प्रेरक-सा व्यवहार।।

|| 153 ||

स्वयं मियां मिट्ठू बनें, कुछ तो रचनाकार।
वाह! बदल पाये नहीं, निज कर्कश व्यवहार।।

|| 154 ||

कविता में रचते रहें, जाति-विहीन समाज।
पूजा मन्दिर में करें, मस्जिद पढ़ें नमाज।।

|| 155 ||

काव्य-साधना की धरी, यों तो सिर पर मोट।
पर, वाणी- व्यवहार में, सजी हुई है खोट।।

|| 156 ||

यों तो कवि देते रहें, कविता में उपदेश।
पर, क्या निज व्यवहार से, बदल सके परिवेश।।

|| 157 ||

दिखा नहीं व्यवहार में, कवि के शिष्टाचार।
माँ! तेरी सन्तान का, गिरगिट-सा व्यवहार।।

|| 158 ||

अपने दुर्व्यवहार से, तुम कितने अनजान।
हे कवि! मिथ्या ख्याति को, समझ रहे सम्मान।।

|| 159 ||

अपने श्रम साहित्य का, करो आकलन यार!
भेदभाव को भूलकर, बाँटो जग को प्यार।।

|| 160 ||

अहंकार की पी सुरा, हुये कवे! मदहोश।
वाह! सरस्वती पुत्र क्यों, बोले रहा न होश।।

|| 161 ||

बाँट रहे कह द्वेष को, सारस्वत उपहार।
नाम 'सुधारस' रख लिया, पर उलटा व्यवहार।।

|| 162 ||

कविता रच-रच कवि बना, पर न बना इन्सान।।
वैभव-वाणी-बुद्धि से, समझ रहा भगवान।।

|| 163 ||

वाणी औ' व्यवहार में, भरा हुआ विस्फोट।
जैसी जिसकी भावना, करे काव्य भी चोट।।

|| 164 ||

कविता करना बाद में, पहले बन इन्सान।
वरना, तेरा काव्य भी, बने सहज शमसान।।

|| 165 ||

क्रोधा-ईर्ष्या-लोभ का, खुला हुआ बाजार।
कविगण व्यापारी हुये, कविता का व्यापार।।

|| 166 ||

लोभ-द्वेष-पाखण्ड हैं, अब जीवन उपमान।
कविता भी करने लगी, इन सब पर अभिमान।।

|| 167 ||

नाम 'सरस्वती' रख लिया, अथवा रखो 'अनूप'।
यदि अशिष्ट व्यवहार तो, बन न सकोगे भूप।।

|| 168 ||

कविता सृजन-साधना, शाश्वत जीवन कर्म।
निभे समर्पण- त्याग से, यह सारस्वत धर्म।।

|| 169 ||

सोये जब सारा जगत, अथवा खेले फाग।
कवि संक्रमण काल में, भरे जगत में राग।।

|| 170 ||

बंधु! कमालो खूब धन, बेच-बेच ईमान।
पड़े मार जब काल की, बचो नहीं श्रीमान।।

|| 171 ||

ऊँचा पद पाकर सखे! चली गयी सब सोच।
तुम्हें दीखता आदमी, पता नहीं क्यों पोच??

|| 172 ||

साथ-साथ रहते रहे, चले बराबर साथ।
पता नहीं किस बात पर, गये छोड़कर हाथ।।

|| 173 ||

धन की चकमक ने किया, उनको अति मजबूर।
जीवनभर के साथ को, गये छोड़ अति दूर।।

|| 174 ||

ऊँचा पद पैसा मिला, है सत्ता मदचूर।
फिर, क्यों देखे आदमी, दीन-दुःखी मजबूर।।

|| 175 ||

देख सामने सौत को, उठी कुल वधू कांप।
आने वाली व्यथा को, गयी सहज ही भांप।।

|| 176 ||

पर्वत-पर्वत घूमते, गया आदमी हार।
पर, सागर के तट मिला, उसे अन्ततः प्यार।।

|| 177 ||

जड़ता-जड़ता सब तरफ, जड़ता खड़ी अनन्त।
जड़ता जायेगी सखे!, काँपें दिशा-दिगन्त।।

|| 178 ||

कुछ अपनी, कुछ आपकी, हुई न पूरी बात।
होते-होते रात के, बिगड़ गये हालात।।

|| 179 ||

द्वेष, जलन, मद, ईर्ष्या, भरी हुई मन खोट।
रिश्तों में नज़दीकियाँ, करें शब्द से चोट।।

|| 180 ||

हुआ सदी का आगमन, लगी सिमटने खैर।
पता नहीं जाकर कहाँ, रूकें सदी के पैर।।

|| 181 ||

पर्व मकर संक्रान्ति का, संस्कृति का उपहार।
मन कड़ुवाहट छोड़ दो, कहता यह त्यौहार।।

|| 182 ||

यह संस्कृति का जागरण, भारत की पहचान।
त्याग-प्यार की सीख यह, देता पर्व महान।।

|| 183 ||

पंगत में सब बैठकर, करें साथ सहभोज।
खिचड़ी खाकर प्यार की, बढ़े भावना ओज।।

|| 184 ||

भेदभाव को भूलकर, भोजन करते साथ।
सेवा-आदर भाव से, झुकता सबका माथ।।

|| 185 ||

खिचड़ी तो प्रतीक है- त्याग-समर्पण -प्यार।
सच्ची मानवता यहाँ, करती है मनुहार।।

|| 186 ||

पर्व मकर संक्रान्ति का, देता यह सन्देश।
यहाँ बड़ा-छोटा नहीं, प्राणी सभी विशेष।।

|| 187 ||

करो प्रतिज्ञा आज ही, सहें नहीं अन्याय।
दीन दुखी- असहाय को, देंगे उनका दाय।।

|| 188 ||

चकाचौध धन में बड़ी, इसका तेज अपार।
फलतः रिश्तों से हुआ, गायब प्यार-दुलार।।

|| 189 ||

बदल रही है सभ्यता, बदल रहा परिवेश।
सामाजिक व्यंवहार ने, बदल दिये दरवेश।।

|| 190 ||

हे प्रभु! जरा न दीजिये, शिथिल होय सब अंग।
पल-पल बीते कष्टमय, करे रंग में भंग।।

|| 191 ||

जब तक स्पन्दन रहे, करें अंग-तन काम।
सखा भाँति हृदय बसो, मेरे प्यारे राम।।

|| 192 ||

बुरा बुढ़ापा नर्क-सा, करे न कोई प्यार।
तरह-तरह की ब्याधियाँ, होता कहाँ उबार।।

|| 193 ||

आता लेकर यातना, पीड़ा-दर्द-बुखार।
हाय! बुढ़ापा राम जी! तुम ही सको सँवार।।

|| 194 ||

मात-पिता बूढ़े हुये, करे न सन्तति बात।
जिन्हें खिलाया गोद में, करें वही आघात।।

|| 195 ||

बूढ़ी आँखें खोजतीं, ममता और दुलार।
हाथ दया का माँगती, वृद्धा माँ लाचार।।

|| 196 ||

हा! देखी जाती नहीं, माँ की पीड़ा राम!
नैन आँसुओं से भरे, माँग रही निज धाम।।

|| 197 ||

धनुष-बाण कर में लिये, देख रहा हूँ राम।
माँ की पीड़ा को मिले, मोक्ष हरे! निष्काम।।

|| 198 ||

बता सखे! किस भाँति अब, हाय! निभाऊँ धर्म?
तुमने ही सौंपा मुझे, अपर देश में कर्म।।

|| 199 ||

धर्म-कर्म दोनों निभें, युक्ति बता दो तात!
मेरे प्यारे राम जी!, दोनों में निष्णात।।

|| 200 ||

कर्म अगर असफल हुआ, मन पर छाती गर्द।
धर्म अगर जो छूटता,– हृदय करता दर्द।।

|| 201 ||

धर्म-कर्म संसार में, चकिया के दो पाट।
मनुज फँसा है बीच में, कहाँ मिलेगा घाट।।

|| 202 ||

सुख जीवन की कल्पना, मानों मरूथल प्यास।
तृप्ति कभी मिलती नहीं, बढ़ती जाती प्यास।।

|| 203 ||

नए-नए रिश्ते जुड़ें, नए मिलें तब घाव।
मानस-मन्दिर में हुए, घायल कोमल भाव।।

|| 204 ||

कोमल रिश्तों को हुआ, मानो बड़ा गुरूर।
तनक-मनक-सी बात पर, भड़कें मनो हुजूर।।

|| 205 ||

मूंछ सदा ऊँची रहे, देते लोग दबाव।
किंकर्तव्यविमूढ़ मन, झेले बहुत तनाब।।

|| 206 ||

गुटबन्दी के सिन्धु में, डूबा सकल समाज।
अपने-अपने बिलों में, चूहे पढ़ें नमाज।।

|| 207 ||

यह कैसी है विवशता, मानव भावविहीन।
हुए रक्त सम्बन्ध हैं, कितने हृदयहीन।।

|| 208 ||

जहाँ बहे थी प्यार की, शीतल मन्द बयार।
वहाँ प्रदूषित कर दिया, पुरवैया ने प्यार।।

|| 209 ||

व्यस्त हुये इतने अधिक, काम-काम बस काम।
अपने बच्चों को कभी, दिया नहीं आराम।।

|| 210 ||

नगर-गली-खलिहान में, मिली लड़कियाँ चार।
कूड़ा चुनती ज़िन्दगी, बहे नैन से धार।।

|| 211 ||

सावन बिन वर्षा गया, सूखा रहा अषाढ़।
सम्बन्धों की आंच से, कातिक जले किवाड़।।

|| 212 ||

घर-घर लड़की घूमती, कर मैके की याद।
राम कहानी सुन हँसी, हर चौखट के बाद।।

|| 213 ||

रहना तक आता नहीं, परिवारों के बीच।
रिश्तों पर भाषण करें, लोभी-दम्भी-नीच।।

|| 214 ||

'चोर-चोर' जैसे कहो, भग जाता है चोर।
'राम-राम' कहते रहो, मिल जाये चित चोर।।

|| 215 ||

देख रहे हो तुम मुझे, हँसमुख और सजीव।
मुझ पर कृपा राम की, तुमको लगे अजीब।।

|| 216 ||

मेरे हृदय बीच में, राम-नाम की रेख।
तू चाहे, यदि देखना, सखे! प्यार से देख।।

|| 217 ||

मेरे तो बस राम हैं, सखा-भ्रात-पितु-मात।
युग-युग के सम्बन्ध से, पायी है सौगात।।

|| 218 ||

जीवन के हर रूप में, राम रमें मन साथ।
झुके तुम्हारे नाम पर, राम! सदा यह माथ।।

|| 219 ||

बंधन हो या दोस्ती, अथवा जुड़े लगाव।
.सबकी सीमा राम हैं, वे ही अन्त पड़ाव।।

मिलावट

|| 220 ||

मिले न अब बाजार में, कोई चीज विशुद्ध।
खाना-पीना तक हुआ, सारा आज अशुद्ध।।

|| 221 ||

किया मिलावट ने सखे! मानव को बेचैन।
ज़हर उगलतीं सब्जियाँ, कटता दिवस न रैन।।

|| 222 ||

धन की चकमक देखकर, मनुज हुआ बेहोश।
रहा न शुद्ध-अशुद्ध का, उसको लेश न होश।।

|| 223 ||

पैसा डाले जेब में, घूमें आज अज़ीज।
कहाँ अतिथि सत्कार हो, भोजन मिले लज़ीज।।

|| 224 ||

आटा-चावल-दाल-गुड़, भाव चढ़े आकाश।
कृषक औ' मजदूर को, रही न जीवन आस।।

|| 225 ||

मँहगाई अतिशय बढ़ी, जीना हुआ मुहाल।
साथ मिलावट देखिए, करती बड़ा कमाल।।

|| 226 ||

मौत मिलावट रूप में, पीड़ित करती रोज।
बालक बूढ़े-आदमी, बनें काल के भोज।।

|| 227 ||

शुद्ध दूध मिलना हुआ, अति दुष्कर ही काम।
बाल-सुमन की वाटिका, कहाँ बचेगी राम??

|| 228 ||

मावा-मक्खन - छाछ-घी, खुरचन-दही-पनीर।
रबड़ी-दूधा-मलाइ में, मिला कैमिकल नीर।।

|| 229 ||

फल-सब्जी में यूरिया, मिला विषैला घोल।
फूल व कलियाँ दे रहीं, मृत्यु सुवासित मोल।।

|| 230 ||

तिलहन-दलहन गुम गयीं, मँहगे हुए अनाज।
पटी 'रसायन' से पडी़, कृषक भूमि अकाज।।

|| 231 ||

जीवन-रक्षक औषधियाँ, बिकतीं दादा-मोल।
मौत बिके बाजार में, क्या आकर्षक खोल।।

|| 232 ||

भुला चिकित्सक ने दिया, अपना ही दायित्व।
हाय! मिलावटखोर को, बेच दिया कृतित्व।।

|| 233 ||

चन्द टकों के वास्ते, किया स्वास्थ्य नीलाम।
रक्षक-भक्षक बन गया, जीवन लिया तमाम।।

|| 234 ||

भोजन-वस्त्र-दवाइयाँ, दूध-सब्जियाँ, तेल।
तिलहन, पानी दाल में, चले मिलावट खेल।।

|| 235 ||

जीवन लेने की सजा, देता जब भगवान।
पल में तब परिवार का, मिले न नाम निशान।।

|| 236 ||

घोर मिलावट चल रही, अजब प्रदूषण दौर।
सत्ता के रक्षक बने, भक्षक के सिरमौर।।

|| 237 ||

बालक-बूढ़े-युवा सब, नर हो अथवा नार।
हाय! मिलावट का गरल, सबको देगा मार।।

|| 238 ||

ज्यों होते आकाश में, तारे असमय अस्त।
त्यों वसुधा पर बाल सब, करे मिलावट पस्त।।

|| 239 ||

बचे नहीं संसार में, प्राणि-मात्र का बीज।
एक-एक दूषित हुई, खान-पान की चीज।।

|| 240 ||

मनुज मिलावट जो करे, पकड़ो डालो जेल।
जीवनभर की कैद में, खत्म मिलावट खेल।।

|| 241 ||

राष्ट्रद्रोह अपराध में, करें मिलावट मान।
नीलामी सम्पत्ति हो, करें तुरत चालान।।

|| 242 ||

मिले मिलावटखोर को, मृत्यु-दण्ड कठोर!
काल-कोठरी में पड़े, देखे कभी न भोर।।

|| 243 ||

भारत के कानूनविद, करें न लेश सहाय।
मौत मिलावटखोर की, केवल सही सजाय।।

आतंक के विरुद्ध

|| 244 ||

'रोटी'-'कपड़ा' साथ में, रहने हेतु 'मकान'।
आम आदमी चाहता, तीनों माँग समान।।

|| 245 ||

ये तीनों आतंक के, कबके हुये शिकार।
मानव जीवन में भरा, इससे बहुत विकार।।

|| 246 ||

आतंकित माहौल में, कैसे रहें स्वतंत्र?
बिका हुआ है देश का, सत्ता औ' जनतंत्र।।

|| 247 ||

देश-चमन में लग रही, धीमी-धीमी आग।
पुष्प जलें, कलियाँ जलें, जलता राग-पराग।।

|| 248 ||

सीना ताने चल रहा, घोर अराजक दौर।
अब बचकर जायें कहाँ, दीखे कहीं न ठौर।।

|| 249 ||

देख-देख आतंक को, सहम रहे हैं लोग।
कुछ अपने ही बीच के, जिमा रहे हैं भोग।।

|| 250 ||

अगर बचाना चाहते, मानव- जीवन-तंत्र।
खुलेआम आतंक को, फाँसी दे जनतंत्र।

|| 251 ||

टूट पड़ो आतंक पर, उठा हाथ हथियार।
कानन में गजराज को, मिला शक्ति अधिकार।।

|| 252 ||

बिना समर्पण-त्याग के, और किये उत्सर्ग।
मिला किसे है बंधुवर! बिना मरे ही स्वर्ग।।

|| 253 ||

आजादी को देख लो, किए अमित बलिदान।
मिला देखने देश को, पावन तभी विहान।।

|| 254 ||

दृढ़ इच्छा, सकंल्प ले, टूट पड़े जब देश।
भागे भारत क्षितिज से, आतंकित परिवेश।।

|| 255 ||

भारत की सरकार में, जब तक कुर्सी प्यार।
तब तक मिटे न देश से, आतंकित-व्यवहार।।

|| 256 ||

खण्ड-खण्ड जो भी करे, भारत देश अखण्ड।
उग्रवाद की दो सजा, केवल मृत्यु प्रचण्ड।।

|| 257 ||

उग्रवाद 'आतंक' ये, केवल अन्ध जुनून।
इसका 'मृत्यु' इलाज है, व्यर्थ सभी कानून।।

श्रम के प्रति

|| 258 ||

हस्तशिल्प मरती गयी, बढ़ती गयीं मशीन।
ज्यों मानव मिटता गया, बढ़ते गये कमीन।।

|| 259 ||

अब श्रम की इज्जत नहीं, करती काम मशीन।
लगी फैलने भुखमरी, शोषण नित्य नवीन।।

|| 260 ||

कृषक औ' मजदूर का, जब तक था सम्मान।
तब तक कहते लोग थे, 'भारत देश महान'।।

|| 261 ||

भारत जग को बाँटता, सत्य-अहिंसा- प्यार।
'सोने की चिड़िया' इसे, कहता था संसार।।

|| 262 ||

शान्ति-वार्ता हों विफल, बचे न शेष उपाय।
तब केवल तलवार ही, करती सही सहाय।।

|| 263 ||

युग बदला, बदले सभी, जीवन के आदर्श।
बदल गया है आदमी, बदल गये निष्कर्ष।।

|| 264 ||

श्रम-पूजा, श्रम-साधना, श्रम है सदाबहार!
श्रम-साधक की साधना, हरती सभी विकार।।

नव संवत्सर

|| 265 ||

नव संवत्सर आ गया, देने शुभ संदेश।
होगा भारत देश का, अब उत्कर्ष विशेष।।

|| 266 ||

भेदभाव को भूलकर, करिये अपने काम।
बने जगत के मंच पर, भारत ऊँचा धाम।।

|| 267 ||

जाति-धर्म के नाम पर, दंगा और फ़िसाद।
मरे सदा ही आदमी, ज़िन्दा रहे विवाद।।

|| 268 ||

छुआछूत औ' जाति के, उठें बवण्डर रोज।
तूल न इनको दीजिये, नहीं बढ़ाओ ओज।।

|| 269 ||

नया-नया माहौल है, बहती नयी बयार।
गली-गली में बाँट दें, घर-घर जाकर प्यार।।

|| 270 ||

नव संवत्सर से हुआ, नवयुग का प्रारम्भ।
करें विश्व कल्याण से, नवयुग का आरम्भ।।

|| 271 ||

सत्य-अहिंसा-प्यार का, जग को दे सन्देश।
कथनी-करनी एक-सी, मात्र नहीं उपदेश।।

मृत्यु के बाद

|| 272 ||

प्राण, प्राण में मिल गये, खत्म हुए सब योग।
कन्धों पर अर्थी धरे, चले जा रहे लोग।।

|| 273 ||

परिजन सारे बिलखते, माता खाय पछाड़।
पत्नी पर आकर गिरा, मानो टूट पहाड़।।

|| 274 ||

खत्म कहानी हो गयी, लिखकर राग-विराग।
अन्त समय जब आ गया, लगी चिता में आग।।

|| 275 ||

गंगा तट पर जल रहीं, चिता-चिता सब ओर।
आँसू-पीड़ा-राग का, क्रंदन चारों ओर।।

|| 276 ||

पास-पास जलती चिता, दीखे कहाँ सुराग।
भस्म चिता में हो गये, वैभव- राग-विराग।।

|| 277 ||

धुँआ उड़ा आकाश में, देह हुई जल खाक।
गंगा जल में दी बहा, तन की भस्मी-राख।।

|| 278 ||

धीरे-धीरे हो गयी, सबकी पीड़ा शान्त।
अपने-अपने कर्मरत, उत्सवधर्मी प्रान्त।।

|| 279 ||

धीरज औ' विश्वास के, चलो बाँटते फूल।
क्षमा माँगनी जो पड़े, चुभो न पथ में शूल।।

|| 280 ||

धैर्य अगर छोड़े डगर, जमे नहीं विश्वास।
शनैः शनैः व्यक्तित्व का, होता सकल विनाश।।

|| 281 ||

दवा-दुआ जिस देश में, बिकती खोल दुकान।
आधि-व्याधियों का वहाँ, थमता नहीं उफान।।

|| 282 ||

होता बड़ा अचूक है, शब्द-बाण का वार।
बिना घाव औ' मृत्यु के, करता घातक मार।।

|| 283 ||

आये खाली हाथ थे, जायें खाली हाथ।
यों तो जीवन भर रहीं, मुक्ता-मणियाँ साथ।।

हिन्दी के नाम

|| 284 ||

हिन्दी को ख़तरा बता, चोर मचायें शोर।
हिन्दी है ख़तरा कहाँ, यह सूरज ज्यों भोर।।

|| 285 ||

विश्व क्षितिज पर चमकता, भोर अरूण आकाश।
त्यों हिन्दी की भूमिका, देती जगत प्रकाश।।

|| 286 ||

हिन्दी-गंगा बह रही, कल-कल मधुरिम शोर।
पर्वत से मैदान तक, जीवन दे चहुँ ओर।।

|| 287 ||

अंचल-भाषा-बोलियाँ, लें अविरल पहचान।
हिन्दी सबको बाँटती, जीवन औ' मुस्कान।।

|| 288 ||

शब्द-शब्द की चाशनी, सोंधी बहे सुगंध।
हिन्दी-रस-भट्टी जले, मेंट रही दुर्गन्ध।।

|| 289 ||

हिन्दी के बट वृक्ष की, शाखा विविध अनूप।
विकस रही चहुँ ओर है, बहु आयामी रूप।।

|| 290 ||

उत्तर से दक्षिण तलक, पूरब-पश्चिम प्रान्त।
हिन्दी की अठखेलियाँ, लुभा रहीं मनकान्त।।

|| 291 ||

अंग्रेजी के दास अब, विवश हुये बेचैन।
आकर हिन्दी कुँज में, पाते हैं सुख चैन।।

|| 292 ||

माँ निश्छल मन बाँटती, ममता- प्यार-दुलार।
भाषा-बोली-काव्य हो, हिन्दी दे मनुहार।।

|| 293 ||

हिन्दी जननी का कवच, धरे सुरक्षा-भार।
जल-थल-नभ में वीरता, मान रही उपकार।।

|| 294 ||

गाँव-नगर औ' देश को, देता अन्न किसान।
हिन्दी सबको दे रही, जीवन-सूत्र महान।।

|| 295 ||

हिन्दी-गंगा बह रही, चलता काव्य-समीर।
कल-कल, छल-छल, ज्ञान-सा, बहता जाता नीर।।

|| 296 ||

हिन्दी जननी एक-सा, सबको देती प्यार।
नर-नारी के रूप सब, पाते हैं मनुहार।।

|| 297 ||

भारत का जनतंत्र है, यों तो विश्व महान।
लेकिन भाषा-दृष्टि से, पिछड़ा सकल जहाँन।।

|| 298 ||

राजनीति को छोड़कर, नेता करें विचार।
देश-विरोधी भावना, भाषा हरे विकार।।

|| 299 ||

वाणी औ' व्यवहार से, यों तो लगें सपूत।
काटें हिन्दी डाल को, ये अंग्रेजी पूत।।

|| 300 ||

ऊँचे पद पर बैठकर, करते ओछे काम।
ये हिन्दी की अस्मिता, करें नित्य बदनाम।।

|| 301 ||

नितप्रति बढ़ता जा रहा, हिन्दी का परिवार।
हिन्दी भाषा प्रेम का, बाँट रही उपहार।

|| 302 ||

भाँति-भाँति की बोलियाँ, लिपियाँ विविध अनेक।
पर हिन्दी की विश्व में, सहज-सरल लिपि एक।।

|| 303 ||

लिखो किसी भी रूप में, बदले नहीं स्वरूप।
हिन्दी के वैशिष्ट्य में, रमे विश्व हर रूप।।

|| 304 ||

हिन्दी का वट वृक्ष यह, अद्भुत दिव्य विशाल।
पिता-ब्रह्म, माँ-संस्कृत, युग-युग नहीं मिशाल।।

|| 305 ||

हम हिन्दी के नाम पर, नित्य मनाते शोक।
पर, हिन्दी अवमानना, हाय! न पाये रोक।।

|| 306 ||

छोटे अथवा हैं बड़े, सारे शिक्षा धाम।
हिजड़े बन सब बाँटते, अंग्रेजी का नाम।।

|| 307 ||

शिक्षा के हर केन्द्र में, अंग्रेजी का नृत्य।
अहंकार में फूलकर, करते सब दुष्कृत्य।।

|| 308 ||

सभी मानसिक रूप से, अंग्रेजी के दास।
मरी हुई जब आत्मा, क्या समझे उपहास।।

|| 309 ||

देशभक्ति, गौरव नहीं, निज भाषा सम्मान।
आँखों पर पट्टी बँधी, दीखे क्यों अपमान।।

|| 310 ||

जिस दिन तुमको देश से, हो जायेगा प्यार।
उस दिन तन-मन-आत्मा, 'हिन्दी' उठे पुकार।।

|| 311 ||

हिन्दी भाषा राष्ट्र की, यह अपनी पहचान।
इस पर हमको गर्व है, हिन्दी-हिन्दुस्तान।।

|| 312 ||

राजनीति की क्षुद्रता, नेता करें विरोध।
अंग्रेजी के दास ये, फैलाते अवरोध।।

|| 313 ||

लोकतांत्रिक देश यह, हिन्दी भाषा रंक।
युवको! चलो उखाड़ दें, मिल अंग्रेजी डंक।।

|| 314 ||

जितनी जल्दी हो सके, मेंटो बन्धु! कलंक।
हिन्दी जननी देश की, बैठा दो पर्यंक।।

|| 315 ||

आओ! सब मिलकर करें, हिन्दी-जग उत्थान।
हिन्दी-माँ के प्यार से, सींचे युग-उद्यान।।

|| 316 ||

हिन्दी-पथ से दूर हों, अब कैसे अवरोध।
जब हिन्दी-सुत कर रहे, उसका बड़ा विरोध।।

|| 317 ||

जब तक भाषा देश की, बने न हिन्दी एक।
तब तक कम होगा नहीं, भाषाई अविवेक।।

|| 318 ||

भव्य भवन में बैठकर, भाषा के यम दूत।
गढ़ते हिन्दी-नीति को, अंग्रेजी के पूत।।

|| 319 ||

हिन्दी-सम्मेलन सखे! होते देश-विदेश।
चाटुकार-गद्दार ही, पढ़ते जा सन्देश।।

|| 320 ||

'हिन्दी-सम्मेलन- अखिल', होते रहे विदेश।
राजनीति-प्रभाव से, जाते लोग विशेष।।

|| 321 ||

जाति-धर्म- पद-क्षेत्र का, रहता केवल नाम।
रूप बदल कर भेड़िये, घुसते हिन्दी-धााम।।

|| 322 ||

नेता जी कहते जिसे, होता वही सपूत।
घूमे देश-विदेश में, हिन्दी का अवधूत।।

|| 323 ||

जिसकी कहीं न भूमिका, लेश न हिन्दी काम।
लेकिन, वही जुगाढ़ से, सेवक बना ललाम।।

|| 324 ||

सारे सचिवालय बने, युग-परिवेश गुलाम।
हिन्दी भाषा को भला, कैसे मिले मुकाम।।

|| 325 ||

जब तक शासन-तंत्र में, अंग्रेजी के दास।
तब तक हिन्दी का सखे! होगा नहीं विकास।।

मुरादाबाद में बाढ़-विभीषिका

21 व 22 सितम्बर, 2010

|| 326 ||

हुई मूसलाधार जब, वर्षा भादों माह।
मार्ग हुये अवरुद्ध सब, जीवन उठा कराह।।

|| 327 ||

बाँध, नदी-नाले सभी, भरने लगे उफान।
चले किनारे छोड़कर, करते हुये कटान।।

|| 328 ||

बाँधों से पानी बहा, साथ बहे तटबन्ध।
विफल सुरक्षा हो गयी, टूट गये अनुबन्ध।।

|| 329 ||

गाँव-खेत औ' नगर में, जल भर गया अपार।
भौचक्के देखें सभी, सागर-सा विस्तार।।

|| 330 ||

छिन्न-भिन्न जीवन हुआ, देखें सभी अवाक।
जल का ताण्डव देखकर, सूझे कहाँ मजाक।।

|| 331 ||

जल ही जल है दूर तक, जल का ओर न छोर।
जल की भीषण त्रासदी, क्रंदन चारों ओर।।

|| 332 ||

कैसी जल-प्रलय हुई, दिवस बन गया रैन।
पलक झपकते बाढ़ ने, छीन लिया सुख-चैन।।

|| 333 ||

पल में कैसे हो गये, सपने चकना चूर।
हाय! विधाता ने किया, क्यों इतना मजबूर?

|| 334 ||

जल-प्लावन ऐसा हुआ, बचा न कोई धाम।
भव्य भवन मन्दिर बना, डूबे साई राम।।

|| 335 ||

गली-सड़क-मैदान-घर, कालोनी स्कूल।
डूब गये सब बाढ़ में, राम-रहीम-रसूल।।

|| 336 ||

बाल, युवा औ' बृद्धजन, फँसे घरों के बीच।
महाकाल ने मृत्यु की, जल-रेखा दी खींच।।

|| 337 ||

फफक-फफक कर जिन्दगी, रोती रही निराश।
जल के सभी चपेट में, रो-रो हुये उदास।।

|| 338 ||

जल-स्तर को देखकर, याद आ रहे राम।
प्रभो! बचालो जिन्दगी, करें न ओछे काम।।

|| 339 ||

कुछ जीवित, कुछ मर गये, कुछ जल दिये बहाय।
घर की भौतिक सम्पदा, जल में गयी समाय।।

|| 340 ||

पशु-पक्षी - नर-नारियाँ, और विषैले जीव।
मृत्यु से भयभीत सब, हरकत करें अजीब।।

|| 341 ||

चौड़ी-चिकनी सड़क पर, दौड़ लगे थी रोज।
अब नावों से टोलियाँ, बाँट रही हैं भोज।।

|| 342 ||

हुई बाढ़ से जिन्दगी, लोगों की वीरान।
देखा घोर विनाश तो, सभी हुये हैरान।।

|| 343 ||

धीरे-धीरे ले लिया, वर्षा ने विश्राम।
लौट बाढ़ से जिन्दगी, हुई मनुज की आम।।

|| 344 ||

चला भयानक दो दिवस, वर्षा-बाढ़ प्रकोप।
रहा झेलता रात-दिन, शासन जन का कोप।।

|| 345 ||

मनुज समझ पाया कहाँ, महाकाल की चाल।
पल में मिलती जिन्दगी, पल में हो बदहाल।।

|| 346 ||

महाकाल देता सजा, बदल-बदल कर रूप।
खुद अपने ही जाल में, फँसें रंक औ' भूप।।

|| 347 ||

पाकर भौतिक जिन्दगी, भूल जाय औकात।
भ्रष्ट आदमी की सजा, पड़े काल की लात।।

|| 348 ||

दो पैसा क्या हो गया, समझे धन्ना सेठ।
शोषण की दीवार चढ़, भूल गये दिन ठेठ।।

|| 349 ||

आम आदमी को कसा, लूटा उसका दाय।
झूठ-मूठ की जिन्दगी, कुछ भी काम न आय।।

|| 350 ||

लूटपाट कर आदमी, झूठे ज़पता मंत्र।
खड़ा किया मैदान में, किला सरीखा तंत्र।।

|| 351 ||

सुन! शोषण की जिन्दगी, होती चकनाचूर।
डूबेगा मैदान में, तेरा किला जरूर।।

|| 352 ||

जल-प्लावन चेतावनी, सुन अन्दर की बात।
शोषण-पोषण छोड़ दे, त्याग, लूट औ' घात।।

|| 353 ||

घुमड़ रही चारों तरफ, खड़ी मौत की बाढ़।
पर्वत- छत-मैदान हो, डूब जाय सब हाड़।।

|| 354 ||

झूठ-चपलता-घात की, आती कहीं डकार।
ईश्वर के अस्तित्व को, बन्दे! नहीं नकार।।

|| 355 ||

धोखा दे-दे रात-दिन, धन कर लिया अथाह।
विधि की बदली दृष्टि तो, नहीं निकलती आह।।

|| 356 ||

विधि का तंत्र अजीब है, सहज देखता जाय।
जब वह देता दण्ड है, बोल निकलता नाय।।

|| 357 ||

प्रलय या तूफान हो, वर्षा- ओला-वृष्टि।
सहज भाव सब घट रहा, अद्भुत ईश्वर सृष्टि।।

|| 358 ||

जगत-नियन्ता सृष्टि का, एक वही कर्तार।
सुख-दुख में सम भूमिका, जगती का भर्तार।।

|| 359 ||

हर घटना के मूल में, चलता उसका तंत्र।
मनुज बड़ा है बावरा, खुद को कहे स्वतंत्र।।

राजठाकरे के नाम

|| 360 ||

राजठाकरे! क्यों बना, तू इतना नादान।
जान-बूझकर कर रहा, भारत का अपमान।।

|| 361 ||

देशद्रोह की है सजा, केवल मौत सपाट।
कर दो जीवन द्वार के, पल में बन्द कपाट।।

|| 362 ||

नगर मुंबई देश का, सबका सम अधिकार।
जन-जन पर करता सदा, बहुत बड़े उपकार।।

|| 363 ||

रग-रग में इस देश की, भरा-त्याग-उत्सर्ग।
बच्चा-बच्चा भूमि को, रहा मानता स्वर्ग।।

|| 364 ||

मुख से तेरे तीर-से, निकले बोल अबोल।
वरना तो घर का बदल, जाता सब भूगोल।।

|| 365 ||

अपशब्दों पर बन्धुबर! लेते शीश उतार।
माँ की ममता ने किया, मानो विवश अपार।।

|| 366 ||

निशा-दिवस बहता अनिल, रवि करता प्रकाश।
त्यों माता के प्यार से, धरा बने आकाश।।

|| 367 ||

माँ की ममता-प्यार तो, करते नहीं विभेद।
पूत-सपूत-कपूत के, हरे बराबर खेद।।

|| 368 ||

सोच-समझ माँ-भावना, क्षमा कर दिया तात!
बाल ठाकरे! भूल से, कभी न करना घात।।

|| 369 ||

बार-वार की भूल तो, नहीं कहाती भूल।
जीवन-अन्त सुधार है, चुभते कभी न शूल।।

|| 370 ||

माता के सम्मान पर, पड़े न कोई फर्क।
कर दें पूत-कपूत का, पल में बेड़ा गर्क।।

|| 371 ||

सावधान! चेतावनी, बाल ठाकरे! मान।
बार-बार अपमान की, सजा मृत्यु है जान।।

|| 372 ||

देश-जाति अपमान को, सहता नहीं समाज।
उलट-पुलट चाहें पढ़ो, घर में भले नमाज।।

|| 373 ||

देश-धर्म अपमान को, सहते नहीं निकाय।
केवल मृत्यु प्रचण्ड ही, अन्तिम ठोस उपाय।।

नयी गीत शैली

|| 374 ||

भाषा-छंद-विधान में, कठिन शिल्प संगीत।
नीरस रचना गीत को, कवि कहते 'नवगीत'।।

|| 375 ||

गीत बने नवगीत क्यों? आजादी की रात।
कठिन शिल्प, लय-छंद में, शब्दों की बरसात।।

|| 376 ||

व्यक्त हुआ अव्यक्त है, नवगीतों में बोध।
संप्रेषण-संवेदना, माँग रही है शोध।।

|| 377 ||

आज गीत की आत्मा, देख रही सब मौन!
संकेतों से पूछती, 'नयागीत' अब कौन??

|| 378 ||

गीत-मीत-संगीत है, युग-युग से है प्रीत।
कुछ भी इसको नाम दें, गीत रहेगा गीत।।

प्रोफेसर हरिशंकर आदेश के प्रति
(८ अगस्त, २०११ से १६ अगस्त, २०११ तक ट्रिनीडाड यात्रा)

|| 379 ||

काव्य, कला, संगीत के, उच्च शिखर आदेश!
मनुज रूप में देवगुरु, सन्त शिरोमणि शेष।।

|| 380 ||

भारत माँ के पुत्र हैं, सकल विश्व विख्यात।
संस्कृति, दर्शन, काव्य में, प्रवासी प्रख्यात।।

|| 381 ||

काव्य-कला-संगीत में, हरिशंकर दिनमान।
नहीं कहीं आदेश-सा, वसुधा में उपमान।।

|| 382 ||

हरिशंकर आदेश का, गौरव-ज्ञान-अपार।
बाँट रहे हैं विश्व को, शान्ति-एकता-प्यार।।

|| 383 ||

धन्य गुरू! आदेश जी, पाकर हुआ निहाल।
त्रिनीदाद को कर दिया, शिक्षा से खुशहाल।।

|| 384 ||

त्रिनीदाद की सभ्यता, बड़ा जटिल व्यवहार।
सब कुछ बदला प्यार से, दे हृदय उपहार।।

|| 385 ||

शिक्षा-सेवा-शिष्टता, धर्म-कर्म की रीत।
भेदभाव बिन दे रहे, निखिल विश्व को प्रीत।।

|| 386 ||

कर्मवीर! पुण्यात्मा, देव सरीखे सन्त।
काव्य-प्रणेता, धर्मगुरु, महापुरूष भगवन्त।।

|| 387 ||

रोम-रोम में बह रहा, गंगा-माँ का नीर।
नमन! नमन! कोटिश नमन! कर्म-धर्म-सतवीर।।

|| 388 ||

धर्म-कर्म-अध्यात्म की, व्याख्या करी विशेष।
विश्वयात्री-विश्वगुरू! बने आप आदेश।।

|| 389 ||

युगों-युगों तक यश-सुरभि, फैले दिशा अनन्त!
जल-थल-नभ जब तक रहें, होवे कभी न अन्त।।

|| 390 ||

विश्व गुरू प्रणाम लो, वन्दन बारम्बार!
विश्व भवन यश भारती, गूँजे अपरम्पार।।

|| 391 ||

माता श्रीमति 'निर्मला', सहज-सौम्य-गम्भीर।
आदर्शों की पुंज माँ, गंगा-सी तस्वीर।।

|| 392 ||

मितभाषी माँ देवि-सी, मधुर मनोहर बोल।
निर्मल वाणी नेह से, दें हृदय-पट खोल।।

|| 393 ||

निर्मल-वाणी-प्रीत पा, बने गुरू आदेश!
सकल विश्व को दे रहे, मानवता उपदेश।।

|| 394 ||

'सुरभि' गीत-संगीत की, है अद्‌भुत रसधार!
मृदुवाणी-संगीत का, देती हैं उपहार।।

|| 395 ||

गीत और संगीत की, 'सुरभि' कमनीय बेल।
तनया श्री आदेश की, गायन-वादन खेल।।

|| 396 ||

ललित कला-संगीत में, 'कादम्बरी' महन्त।
गायन-वादन की कला, बाँटे देश-दिगन्त।।

|| 397 ||

गृहिणी सद् आदर्श की, पाक कला में दक्ष।
सास-ससुर-परिवार की, हैं आँखों का अक्ष।।

|| 398 ||

पितृ देव आदेश जी, निर्मल-मणि-सी मात।
कादम्बरी-विवेक द्वय, धन्य सुरभि-रवि तात।।

|| 399 ||

सुरभि और कादम्बरी, गायन-वादन कर्म।
मनो गीत-संगीत मिल, निभा रहे निज धर्म।।

|| 400 ||

देवी मानो देविका, सहज, सरल, समभाव।
मिलनसार, श्रमसाधिका, विदुषी, मधुर स्वभाव।।

|| 401 ||

अमरीका-ट्रिनिडाड में, बसा हुआ परिवार।
निखिल विश्व को दे रहा, ललित कला उपहार।।

|| 402 ||

संस्कृति औ' संगीत की, शिक्षा का संज्ञान।
हरिशंकर आदेश जी, बाँट रहे सद्ज्ञान।।

|| 403 ||

त्रिनिदाद में भारतीय, विद्या का संस्थान।
संस्कृति औ' संगीत का, बना विश्व दिनमान।।

|| 404 ||

प्रोफेसर आदेश का, अद्‌भुत शिक्षा धाम।
बाल, युवा औ' वृद्ध सब, पाते सहज मुकाम।।

|| 405 ||

बसा समुद्र के बीच है, ट्रिनीडाड लघु देश।
यह अंग्रेजी राज का, उपेक्षित उपनिवेश।।

|| 406 ||

हरे-भरे सब ओर हैं, कितने अद्‌भुत दृश्य।
ट्रिनीडाड का सृष्टि में, अनुपम है परिदृश्य।।

|| 407 ||

देख-देख प्रति दृश्य को, मन हो भाव विभोर।
सहज उछलता-नाचता, बालक मनो किशोर।।

|| 408 ||

ऊँची पर्वत चोटियाँ, घाटी औ' मैदान।
शस्य-श्यामला भूमि यह, क्या दूँ मैं उपमान।।

|| 409 ||

दिन में सूरज तेजसी, निशा चन्द्रमा शीत।
अपनी-अपनी रीति से, बाँट रहे सब प्रीत।।

|| 410 ||

दिव्य-भव्य मन्दिर बने, बसें यहाँ शिव-राम।
देव-लोक जैसे लगें, भारतियों के धाम।।

|| 411 ||

ट्रिनिदाद के भारतीय, निश्छल, सहज, सपाट।
हृदय में अनुराग के, रहते खुले कपाट।।

|| 412 ||

मिलनसार हृदय सभी, करें प्यार से बात।
त्रिनिदाद में भारतीय, बाँट रहे सौगात।।

|| 413 ||

अपने-अपने कर्मरत, सारे रहें सचेत।
त्रिनिदाद में भारतीय, रहते नहीं अचेत।।

|| 414 ||

सभी परस्पर बाँटते, प्यार भरे उपहार।
त्रिनिदाद में भारतीय, करें तीज-त्यौहार।।

|| 415 ||

त्रिनीदाद में रात को, देखा अद्भुत दृश्य।
जगमग-जगमग दीप-सा, दीवाली परिदृश्य।।

|| 416 ||

ठुमुक-ठुमुक कर नाचती, त्रिनीदाद में रात।
झिलमिल-झिलमिल रोशनी, करे चाँदनी बात।।

|| 417 ||

अम्बर चमके चन्द्रमा, बिम्ब जलधि के बीच।
जल-थल-नभ त्रिनिडाड में, रही चाँदनी सींच।।

|| 418 ||

त्रिनीदाद के घरों में, जगमग दीप सहस्त्र।
प्रतिबिम्बित सागर मनो, नाच रहे नक्षत्र।।

|| 419 ||

विद्युत ऊर्जा का यहाँ, रहता नहीं अकाल।
उन्नत यह विज्ञान में, करता देश कमाल।।

|| 420 ||

ऊँची पर्वत श्रृंखला, सजी-धजी चहुँ ओर।
जलधि तरंगित हो रहा, छूने को हर छोर।।

|| 421 ||

सागर-तट नावें खड़ीं, ताने सभी वितान।
सावधान सब देखता, ट्रिनीडाड विमान।।

|| 422 ||

यहाँ बहुत गर्मी पड़े, काले-काले लोग।
गोरे भागे छोड़कर, मीठे-मीठे भोग।।

|| 423 ||

सड़कें सुन्दर स्वच्छ हैं, चिकनी औ' मजबूत।
देश प्रेम की भावना, देती सत्य सबूत।।

|| 424 ||

मैला-कचरा का कहीं, मिला न नाम निशान।
कहीं न देखी गन्दगी, स्वच्छ पड़े मैदान।।

|| 425 ||

रहते कितनी दूर हैं, सात समुन्दर पार।
कर्मवीर सब भारती, नहीं मानते हार।।

|| 426 ||

रहते हैं ट्रिनिडाड में, अनुशासित हो सर्व।
कर्मठ, निश्छल भारती, ट्रिनीडाड पर गर्व।।

|| 427 ||

बीत गये हैं कई दिन, ट्रिनीडाड के बीच।
श्रम-गंगा इस देश को, रही प्यार से सींच।।

|| 428 ||

मूल प्रवासी भारती, बाँट रहे हैं प्यार।
मृदुवाणी, मुस्कान का, देते हैं उपहार।।

|| 429 ||

हिन्दी भाषा, देश से, सब करते हैं प्रीत।
विश्व भारती जब मिलें, हृदय लेते जीत।।

|| 430 ||

श्रम की सब पूजा करें, धर्म-कर्म बेजोड़।
गौरव, गरिमा राष्ट्र की, बढ़ा रहे कर होड़।।

|| 431 ||

सच्ची निष्ठा, कर्मरत, श्रम में अति विश्वास।
मानवता औ' धर्म का, करें नहीं उपहास।।

|| 432 ||

सबकी जीवन शैलियाँ, अलग-अलग हैं चाह।
ट्रिनिडाड में भारतीय, चलें प्यार की राह।।

|| 433 ||

कर्म और व्यवहार में, सब हैं सच्चे नेक।
ट्रिनिडाड में भारतीय, रहें देशहित एक।।

|| 434 ||

सच्ची निष्ठा देश में, सभी कर्मरत लोग।
भारत जैसा है नहीं, हिन्दू-मुस्लिम रोग।।

|| 435 ||

मिलकर सारे भारती, करें देश उत्थान।
पर-सेवा-उपकार में, सभी मानते शान।।

|| 436 ||

सुन्दर-सुन्दर घर बने, श्रम से किया विकास।
हर घर, हर उर में बसे, प्यार भरा मधुमास।।

|| 437 ||

राजमार्ग, उपमार्ग सब, प्राकृतिक भरपूर।
स्वच्छ, मनोहर, आधुनिक, अतिक्रमण से दूर।।

|| 438 ||

प्रकृति-नटी करती यहाँ, कौतुक विविध प्रकार!
पलक झपकते स्वर्ग सम, देखें दृश्य अपार।।

|| 439 ||

भवन-शिल्प-निर्माण के, अद्भुत हैं ये धाम।
भवन भारती बस रही, हृदय में श्रीराम।।

|| 440 ||

हिन्दी-हिन्दुस्तान की, सभी करें परवाह।
काव्य-कला-संगीत में, सबकी अद्भुत चाह।।

|| 441 ||

यहाँ न अतिक्रमण कहीं, सुन्दर, स्वच्छ मकान।
भारतीय सज्जन, सरल, मुखड़ों पर मुस्कान।।

|| 442 ||

भेदभाव की जिन्दगी, कहीं नहीं इस देश।
सर्विस या व्यापार हो, करते कर्म विशेष।।

|| 443 ||

हिन्दू-मुस्लिम परस्पर, करें अनूठा प्रेम।
ट्रिनिडाड में भारतीय, चाहें सबकी क्षेम।।

|| 444 ||

खड़ा उचकता-देखता, टापू बीच समुद्र।
धानवानों के बीच में, खड़ा हुआ ज्यों क्षुद्र।।

|| 445 ||

जल ही जल है दूर तक, जल का ओर न छोर।
दूर क्षितिज ऐसा लगे, निकल रहा ज्यों भोर।।

|| 446 ||

ऊँची पर्वत शृंखला, सागर करे किलोल।
मातृभूमि को दे रहा, रत्न बड़े अनमोल।।

|| 447 ||

उधर दूर आकाश में, और क्षितिज के पास।
बाल अरूण मुस्कान से, बाँट रहा हर साँस।।

|| 448 ||

नीचे से ऊपर तलक, हरी-भरी सब ओर।
कितना अद्‌भुत दृश्य है, प्राकृतिक हर छोर।।

|| 449 ||

सागर करता गर्जना, पर्वत उठे कराह।
मानो पूत-कपूत की, पिता देखता राह।।

|| 450 ||

बजी चर्च की घण्टियाँ, करती हैं संकेत।
सूरज अपने घर चला, हम भी चलें निकेत।।

|| 451 ||

बहुत हो चुकी देखलो, भैया! अब तो सैर।
देखो, तन-मन भी सखे! लगा निभाने बैर।।

|| 452 ||

लटक रही दीवार पर, घड़ी हुई है बन्द।
मानो जीवन-रेल की, चाल पड़ गयी मन्द।।

|| 453 ||

मिला सकल ट्रिनिडाड में, हिन्दी भाषा प्रेम।
हिन्दी-हिन्दुस्तान की, मना रहे कुल क्षेम।।

|| 454 ||

घर-आफिस-स्कूल में, मिला नहीं अपवाद।
हिन्दी-भाषी-भारती, सहज करें संवाद।।

|| 455 ||

आश्रम श्री आदेश का, ट्रिनिडाड के बीच।
रहे आठ दिन अतिथि बन, प्रेम-गंग को सींच।।

|| 456 ||

ट्रिनिडाड में घूमकर, दिया प्यार-संदेश।
'सकल विश्व परिवार है', भारत का उपदेश।।

|| 457 ||

हैं अद्भुत स्मृतियाँ, धन्य! धन्य! त्रिनिदाद।
तुमको हृदय में बसा, लिये जा रहे याद।।

|| 458 ||

सत्य-शिवम्-सुन्दर सभी, अद्भुत धरा-सुवेश।।
नमन! नमन! ट्रिनिडाड हे, कर्मवीर के देश।।

माँ के महा प्रस्थान पर

|| 459 ||

मात-पिता का जगत में, कोई नहीं विकल्प।
उनके ही आशीष से, पूरे हों संकल्प।।

|| 460 ||

पिता बहुत पहले गये, जाय बसे परलोक।
हाय! मात तुम भी गयीं, दूर पिता के लोक।।

|| 461 ||

मात-पिता ने ही दिया, अद्भुत विद्यादान।
मात-पिता की भूमिका, कहीं नहीं उपमान।।

|| 462 ||

चली गयीं माँ तोड़कर, जगत सहज सम्बन्ध।
श्वेत पृष्ठ पर रच गयीं, ममतामय अनुबन्ध।।

|| 463 ||

खाली-खाली घर लगे, मात! तुम्हारे बाद।
आँखों में आँसू लिए, शेष रह गयीं याद।।

|| 464 ||

खड़े-खड़े हम देखते, हाय! बने ज्यों मूढ़।
प्राण-पखेरू उड़ गये, किंकर्तव्यविमूढ़।।

|| 465 ||

पलक झपकते हो गया, प्राण- देह विच्छेद।
बेसुध तन धरती पड़ा, जाने कौन विभेद।।

|| 466 ||

पिंजरा से चिड़िया उड़ी, अम्बर किया प्रयाण।
खाली पिंजरा द्वार पर, रखा हुआ निष्प्राण।।

|| 467 ||

सारे परिजन कर रहे, बैठे-खड़े विलाप।
अब माते! इस जन्म में, संभव नहीं मिलाप।।

|| 468 ||

जन्म दिया, शुभ नाम भी, मिली अमिट पहचान।
ममता-प्यार-दुलार सब, दी जीवन मुस्कान।।

|| 469 ||

आज जहाँ जिस रूप में, खड़े हुए हम लोग।
माँ! तेरे उपकार का, है अद्भुत संयोग।।

|| 470 ||

दर्द सहा, पीड़ा सही, आधि-व्याधि माँ! रोग।
विकट समय की चाल भी, कम कर सकी न योग।।

|| 471 ||

शवयात्रा पूरी हुई, पहुँची गंगा घाट।
सजा दिया शमसान में, माँ का भौतिक ठाट।।

|| 472 ||

सजा चिता के बीच तन, माँ! गंगा के तीर।
पंचतत्व में मिल गयी, माता की तस्वीर।।

|| 473 ||

ममता-प्यार-दुलार की, देवी-रूप भवान।
धन्य! धन्य! मातेश्वरी, माते! धन्य महान।।

|| 474 ||

जीवन भर भूलें नहीं, माँ! तेरा उपकार।
मात! क्षमा करना अरे! हुआ कहीं अपकार।।

|| 475 ||

तेरी बगिया के सभी, सुन्दर-सुन्दर फूल।
याद कभी आये नहीं, माँ! बच्चों की भूल।।

|| 476 ||

मात! स्वर्गवासी हुई, हम ग़मगीन अधीर।
घर के उपवन में बहो, बनकर प्रेम-समीर।।

|| 477 ||

असफलता-अज्ञान के, संकट करें प्रहार।
तब माते! आकर सदा, लेना हमें उबार।।

|| 478 ||

भाव-सुमन अर्पित करें, लो श्रद्धांजलि मात!
साथ पिता के स्वर्ग में, राज करो दिन-रात।।

|| 479 ||

त्याग-समर्पण-प्यार की, ममता-देवि ललाम।
धन्य! धन्य! दिव्यात्मा, माते! चरण प्रणाम।।

|| 480 ||

माते! यह जग छोड़कर, बसीं स्वर्ग में जाय।
आँखों देखा सत्य है, पर विश्वास न आय।।

स्व॰ शकुंतला गुप्ता को श्र)ांजलि

पुण्य तिथि 19.1.2010

|| 481 ||

ब्रह्मा का आसन बना, श्वेत कमल का फूल।
बना मुरादाबाद त्यों, मानसरोवर स्कूल।।

|| 482 ||

है जनपद बिजनौर में, सूआहेड़ी ग्राम।
पिता विशंभरनाथ का, जहाँ बना है धाम।।

|| 483 ||

जन्म शकुन्तला का हुआ, वैश्य वंश परिवार।
कृषि इस परिवार की, थी जीवन आधार।।

|| 484 ||

पुण्य फला परिवार में, किए उच्च जो कर्म।
कलावती माँ ने दिया, शकुन्तला को जन्म।।

|| 485 ||

कन्यारूपी रत्न पा, हर्षित था परिवार।
लक्ष्मी-सरस्वती का हुआ, घर में ज्यों अवतार।।

|| 486 ||

कन्या को करते सभी, लोग अपरिमित प्यार।
सुघड़ सलोनी बालिका, बनी कंठ की हार।

|| 487 ||

पालन-पोषण प्यार का, दिया पुष्ट आहार।
शनैः शनैः चढ़ने लगा, बचपन यौवन-द्वार।।

|| 488 ||

दादी-दादा ने दिया, घर में उसे पढ़ाय।
मात-पिता नित देखकर, फूले नहीं समाय।।

|| 489 ||

राजनीति के क्षेत्र में, था दादा का नाम।
बड़े-बड़े नेता सदा, आते-रहते धाम।।

|| 490 ||

दादी-दादा-पिता ने, शिक्षा दी भरपूर।
लेकिन, माता ने रखा, राजनीति से दूर।।

|| 491 ||

शनैः शनैः पूरे किए, बिटिया बीस बसंत।
मात-पिता वर खोजते, जाते दिशा-दिगन्त।।

|| 492 ||

मिले मुरादाबाद में, गुप्ता ओम प्रकाश।
वर-कन्या द्वि पक्ष ने, परिणय किया सुहास।।

|| 493 ||

मना मुरादाबाद में, खुशियों का त्यौहार।
मिली वधू के रूप में, शकुन्तला उपहार।।

|| 494 ||

कई दिनों परिवार में, हुए मंगलाचार।
कई दिनों घर-घर बँटे, प्रीतिभोज उपहार।।

|| 495 ||

नई-नई ससुराल में, नये-नये सब लोग।
शकुन्तला नित बाँटती, सहज भाव से भोग।।

|| 496 ||

सेवा-निष्ठा-त्याग से, लिया दिलों को जीत।
मिली अमित ससुराल में, शकुन्तला को प्रीत।।

|| 497 ||

जेठ-जिठानी-सासु औ', ससुर करें गुणगान।
सबकी आँखों का बनी, शकुन्तला उपमान।।

|| 498 ||

मात-पिता से जो मिली, शकुन्तला को सीख।
रखती सद् व्यवहार में, चली न आँखें मींच।।

|| 499 ||

घर-भर के दायित्व को, ऐसा लिया संभाल।
परिजन सब कहने लगे, करती बहू कमाल।।

|| 500 ||

तीन पुत्रियाँ, तीन सुत, मिले समय के साथ।
मात-पिता का कर दिया, विधि ने ऊँचा माथ।।

|| 501 ||

माँ शकुन्तला बन गई, पिता ओम प्रकाश।
कुल-केतन उड़ने लगा, लहर-लहर आकाश।।

|| 502 ||

पाल-पोस बालक किये, शिक्षित विविध प्रकार।।
बनें आत्म निर्भर सभी, विवाह किए सँवार।।

|| 503 ||

माता के दायित्व का, किया सफल निर्वाह।
सतत रहा गतिशील भी, जीवन का प्रवाह।।

|| 504 ||

शिक्षा भी लेती रहीं, साथ निभाया धर्म।।
पति-जीवन-परिवार को, दिया संस्कृति कर्म।।

|| 505 ||

शिक्षित-प्रशिक्षित हुई, उच्च भूमिका आंक।
सदाचार व्यक्तित्व को, कौन सका है नाप।।

|| 506 ||

किया शकुन्तला जी ने, विद्यालय का निर्माण।
जिसमें पढ़ कन्या करें, निज जीवन उत्थान।।

|| 507 ||

शिक्षा का मन्दिर दिया, 'मान सरोवर' नाम।
नारि-जाति उत्थान को, किए अनूठे काम।।

|| 508 ||

यथा नाम अनुरूप गुण, किया सहज चरितार्थ।।
ओमप्रकाश - शकुन्तला, शब्द- अर्थ- परमार्थ।।

|| 509 ||

कन्या के मन्दिर हुई, शिक्षा की आचार्य।
'मानसरोवर' की बनी, शकुन्तला प्राचार्य।।

|| 510 ||

आत्मीया-मृदुभाषिणी सौम्य-सरल व्यवहार।
दृढ़ता-निष्ठा-कर्ममय, ममता-सी मनुहार।।

|| 511 ||

'मानसरोवर' को मिली, जनपद में पहचान।
मानो शिक्षा-क्षेत्र में, एक वही दिनमान।।

|| 512 ||

यश-वैभव- समृद्धि से, निखर गया परिवार।
शिक्षा और समाज का, किया अमित उपकार।।

|| 513 ||

'मानसरोवर' बन गया शिक्षा का प्रतीक।
धर्म-कर्म में रत रहें, पति-पत्नी निर्भीक।।

|| 514 ||

खुशियों से लवरेज था, शकुन्तला-परिवार।
कालचक्र आया तभी, करने दुखद प्रहार।।

|| 515 ||

प्रातःकाल शीतल, सुखद, दो हजार थी पाँच।
हा! उन्नीस थी जनवरी, कितनी कड़ुवी सांच।।

|| 516 ||

कालचक्र ने कर लिए, पूरे सब अनुबंध।
चुरा ले गया आत्मा, तोड़ सभी सम्बन्ध।।

|| 517 ||

चिर निंद्रा में सो गयीं, लिया राम का नाम।
पल में गई 'शकुन्तला', स्वर्ग सरीखे धाम।।

|| 518 ||

परिजन सारे रो रहे, करते घोर विलाप।
शिक्षा की देवी गई, करने मोक्ष मिलाप।।

|| 519 ||

जाकर जहाँ न लौटता, उसी रूप फिर जीव।
लगता जग-परिवार को, जाना बड़ा अज़ीब।।

|| 520 ||

माता-पत्नी-शिक्षिका, देवी रूप ललाम।
'मानसरोवर' कर रहा, ममतामयी! प्रणाम।।

|| 521 ||

धन्य! दिवंगत आत्मा, धन्य दया की पुंज!
बन बासंती प्यार तुम, मँहकाना निज कुंज।।

|| 522 ||

हे देवी! पुण्यात्मा, पुण्यतिथि पर आज।
भाव-सुमन-श्रद्धांजलि, देता सकल समाज।।

ताशकन्द-समरकन्द की साहित्यिक-यात्रा

|| 523 ||

कैसा अद्‌भुत देश है, अहा! उज़्बेकिस्तान।
ताशकन्द है स्वर्ग-सम, कहाँ मिले उपमान।।

|| 524 ||

संस्कृति-शिक्षा, मित्रता, देशभक्ति-सत्कार।
शान्ति-प्रेम-सौहार्द्र का, देता यह उपहार।।

|| 525 ||

नदियाँ, पर्वत चोटियाँ, घाटी औ' मैदान।
झीलों-झरनों पर बसा, अनुपम देश महान।।

|| 526 ||

सीधे-सादे लोग हैं, सहज, सरल-व्यवहार।
ओठों पर मुस्कान से, करते हैं मनुहार।।

|| 527 ||

नर-नारी के बीच में, यहाँ न कोई भेद।
सारे मिलकर बाँटते, सहज परस्पर खेद।।

|| 528 ||

बदन छरहरी युवतियाँ, सुन्दरता की खान।
मुख है मानो चन्द्रमा, मानवता की शान।।

|| 529 ||

श्वेत कमल की पांखुरी, मानो किसलय ओठ।
नैन-बैन-व्यवहार से, करें मनों पर चोट।।

|| 530 ||

अद्भुत साँचे में ढलीं, हैं ईश्वर का खेल।
तितली-सी अठखेलियाँ, सुन्दरता की बेल।।

|| 531 ||

हंस देखकर भूलता, सहसा अपनी चाल।
थिरक-थिरक तन नाचता, पागल मन का हाल।।

|| 532 ||

युवा-शक्ति ही देश का, उठा रही सम भार।
कठिन परिश्रम से कभी, नहीं मानती हार।।

|| 533 ||

काव्य-कला विज्ञान हो, अथवा जीवन-राग।
युवको से आगे सदा, युवती का हर भाग।।

|| 534 ||

युवक-युवतियाँ परस्पर, करें सहज व्यवहार।
भावी जीवन की दिशा, तय करता है प्यार।।

|| 535 ||

अनजाने, बिन प्यार के, बँधे न बन्धन एक।
बँध जाते मन प्यार में, बदले जीवन-टेक।।

|| 536 ||

युवक-युवतियों का यहाँ, जीवन है स्वच्छन्द।
लेश न मन में पालते, देश-विरोधी द्वन्द।।

|| 537 ||

स्वच्छ रहे, फूले-फले, बने चाँद-सा देश।
जनता के मन पल रहा, सपना यही विशेष।।

|| 538 ||

बँधे एकता-सूत्र में, जाति-धर्म परिवार।
बाँट रहे हैं विश्व को, समता- ममता- प्यार।।

|| 539 ||

जीवन-शैली एक-सी, बनी राष्ट्र पहचान।
देशभक्ति की भावना, चूम रही दिनमान।।

|| 540 ||

यहाँ शिष्टता-सभ्यता, बाँट रही है प्यार।
नर-नारी सब बाँटते, मिलकर प्यार अपार।

|| 541 ||

सुन्दर-सुन्दर घर बने, पंक्तिबद्ध आवास।
चहुँ दिशि वृक्षावलि सजी, सूरज करे प्रकाश।।

|| 542 ||

भवन-शिल्प-निर्माण के, बने अनूठे आप।
छोड़ें उज़्बक-प्रेम की, सभी मनों पर छाप।।

|| 543 ||

भव्य भवन, सड़कें बनी, अद्भुत सेतु विशाल।
सुन्दरता औ' स्वच्छता, मानों बनी मिशाल।।

|| 544 ||

सड़कें सुन्दर-स्वच्छ हैं, चौराहे हैं भव्य।
दृश्य अलौकिक-से लगें, मनमोहक अति सभ्य।।

|| 545 ||

देश हुआ आजाद यह, बीत रहे कुछ वर्ष।
खुशहाली सब ओर है, नाच रहा है हर्ष।।

|| 546 ||

जनता के सेवक सभी, निभा रहे दायित्व।
देश प्रगति का लक्ष्य है, श्रम सच्चा कृतित्व।।

|| 547 ||

राजनीति में लेश भी, यहाँ नहीं बिखराब।
देश भक्ति की भावना, ऊँचा है सद्भाव।।

|| 548 ||

अपनी भाषा-देश पर करते उज़्बक गर्व।
बातचीत-व्यवहार में, सधे हुए हैं सर्व।।

|| 549 ||

प्रकृति-वधू से मित्रता, उज़्बक करते प्यार।
शस्य-श्यामला, हरितभू, बहती स्वच्छ बयार।।

|| 550 ||

दूर-दूर तक देश में, कहीं नहीं आतंक।
महिला निर्भय घूमतीं, खिंचें नहीं ताटंक।।

|| 551 ||

गाँव-गाँव हर नगर में, खुले हुए स्कूल।
धर्म-कर्म विज्ञान की, शिक्षा दें अनुकूल।।

|| 552 ||

कहीं प्रदूषण है नहीं, राज न भ्रष्टाचार।
अतिक्रमण औ' गन्दगी, मिले नहीं बाजार।।

|| 553 ||

बड़े मनोरम दृश्य हैं, दर्शनीय स्थान।
जल-थल-नभ सब कर रहे, मिलकर मनहर गान।।

|| 554 ||

समय बड़ा ही कीमती, रहते लोग सचेत।
देश-प्रेम की भावना, रहती कहाँ अचेत।।

|| 555 ||

नदी, झील, झरने यहाँ, भरते मस्त हिलोर।
करते नव अठखेलियाँ, बैठे नाव किशोर।।

|| 556 ||

ऊँची पर्वत श्रेणियाँ, बर्फ-रजत चहुँ ओर।
दूर-दूर तक क्षितिज का, मिलता ओर न छोर।।

|| 557 ||

धरती से आकाश तक, नाचे रात उजास।
झूम रहे हैं खेत में, गेहूँ-मकीं-कपास।।

|| 558 ||

आड़ू-चेरी-सेब के, वृक्ष खड़े मुस्काय।
खड़े पेड़ अखरोट के लहर-लहर लहराय।।

|| 559 ||

फूले- फलों- आनाज से, देश बना सम्पन्न।
तन से, मन से एक भी, देखा नहीं विपन्न।।

|| 560 ||

जनसंख्या विस्फोट से, दूर बहुत यह देश।
छोटे सब परिवार हैं, सीमित है परिवेश।।

|| 561 ||

अति जनसंख्या हो अगर, होता नहीं विकास।
जनसंख्या विस्फोट ही, पैदा करे विनाश।।

|| 562 ||

इसीलिए सम्पन्न अति, है उज़्बेकिस्तान।
शासन ने सबको दिये, भोजन-वस्त्र- मकान।।

|| 563 ||

करता भारत वर्ष का, देश बड़ा सम्मान।
शान्ति-अहिंसा-प्रेम का, यह माने दिनमान।।

|| 564 ||

हिन्दी मेरी आत्मा, हिन्दी मेरी प्रान।
हिन्दी भारतवर्ष की, आजादी की शान।।

|| 565 ||

हिन्दी की लेकर सुरभि, गये उज़्बेकिस्तान,
फैल गयी हर देश में, हिन्दी की मुस्कान।।

|| 566 ||

विश्व विमोहित हो रहा, अब जग कौन बचाय,
ताशकन्द आकर रूका, हिन्दी विश्व निकाय।।

|| 567 ||

हिन्दी सम्मेलन गये, ताशकन्द के बीच।
हिन्दी भाषा प्रेम को, देश रहे हैं सींच।।

|| 568 ||

ताशकन्द के बीच में, देखा हिन्दी-प्रेम।
विविध देश के लोग थे, बता रहे कुल क्षेम।।

|| 569 ||

हिन्दी भाषा का सभी, देश करें सम्मान।
चीन- जर्मनी- फांस हो, अमरीका - जापान।।

|| 570 ||

इटली- योरूप- नौरवे, अफ्रीका- इंग्लैण्ड।
स्वीडन हिन्दी प्रेममय, दिखा सोवियत लैण्ड।।

|| 571 ||

हुआ वैस्ट् इण्डीज में, हिन्दी का सम्मान।
यू॰एस॰ए॰ तो हो गया, हिन्दी पर कुर्बान।।

|| 572 ||

दक्षिण अमेरिका बहे, झिलमिल हिन्दी नीर।
रमें सऊदी अरब में, हिन्दी सन्त फकीर।।

|| 573 ||

डेनमार्क- नेपाल औ', लंका- बंग्लादेश।
आस्ट्रेलिया- पाक में, हिन्दी प्रेम विशेष।।

|| 574 ||

उत्तर से दक्षिण तलक, पूरब- पश्चिम बीच।
हिन्दी- गंगा बह रही, देश दिलों को सींच।।

|| 575 ||

काव्य- कला- विज्ञान हो, अथवा जीवन राग।
देश-देश को दे रही, हिन्दी अपना भाग।।

|| 576 ||

बँधे भिन्नता-सूत्र में, जाति- धर्म- परिवार।
बाँट रही है विश्व को, हिन्दी समता-प्यार।।

|| 577 ||

सकल विश्व को दे रही, हिन्दी नव उपहार।
कहीं फिल्म संगीत तो, कहीं गीत मनुहार।।

|| 578 ||

देश-देश में ज्ञान के, खुले हुए स्कूल।
हिन्दी शिक्षा दे रही, जीवन हित अनुकूल।।

|| 579 ||

बस- रेलें- चलचित्र हों, राजनीति - आचार।
विश्व फलक को दे रही, हिन्दी नव बाजार।।

|| 580 ||

गीत- नृत्य- संगीत में, युवती - युवा कमाल।
हिन्दी भाषा प्रेम में, करते बड़ा धामाल।।

|| 581 ||

पढ़ना- लिखना- बोलना, कैसा अद्भुत रूप।
देखा देश - विदेश का, हिन्दी - प्रेम अनूप।।

|| 582 ||

कार-पार्क-स्टैंड हों, अथवा एयरपोर्ट।
हिन्दी भाषा को करें, मिलकर सभी सपोर्ट।।

|| 583 ||

बढ़ा सकल संसार में, हिन्दी - कुल से प्यार।
विश्व पटल पर बह रही, हिन्दी मधुर बयार।।

|| 584 ||

करते भारत देश का, सभी देश सम्मान।
शान्ति- अहिंसा- प्रेम का, हिन्दी है दिनमान।।

|| 585 ||

आये देश - विदेश से, यहाँ सरस्वती-पुत्र।
समारोह में भव्यता, आयोजित नवसत्र।।

|| 586 ||

हुआ उज़्बेकिस्तान में, हिन्दी का सम्मान।
ताशकन्द भी बन गया, दुनिया में उपमान।।

|| 587 ||

हिन्दी का परिवार है, सकल विश्व विख्यात।
संस्कृति- दर्शन- काव्य में, प्रवासी प्रख्यात।।

|| 588 ||

अपनी भाषा देश पर, करें देश सब गर्व।
पर हिन्दी व्यवहार में, सधे हुए हैं सर्व।।

|| 589 ||

सकल विश्व में देख लो, हिन्दी का उत्थान।
जल-थल-नभ सब कर रहे, मिलकर हिन्दी गान।।

|| 590 ||

नदी, झील, झरने यहाँ, भरते मस्त हिलोर।
लोकगीत, नवलोरियाँ, गाते नवल-किशोर।।

|| 591 ||

डूबा हिन्दी प्रेम में, सब उज़्बेकिस्तान।
भारत ने सबको दिया, सृजन हित सम्मान।।

|| 592 ||

हिन्दी की संगोष्ठियाँ, हुईं विविध प्रकार।
चर्चा- परिचर्चा चली, ताशकन्द के द्वार।।

|| 593 ||

शोध-समीक्षा- कहानी, नाटक-गीति- निबन्ध।
विविध विधाओं में रचे, हिन्दी ने प्रबन्ध।।

|| 594 ||

गद्य-पद्य प्रारूप पर, भाषण हुए अनेक।
शोध-पत्र प्रस्तुत हुए, अद्‌भुत भरे विवेक।।

|| 595 ||

संस्कृति औ' साहित्य, की बही अनूठी गंग।
काव्य-कला-संगीत ने, खूब जमाया रंग।।

|| 596 ||

छह दिन की यात्रा रही, विविध भाँति अनमोल!
देशाटन-साहित्य ने, रचा नया भूगोल।।

|| 597 ||

सारस्वत यात्रा हुई, भली-भाँति सम्पन्न।
हिन्दी भाषा ने किया, सहज प्यार उत्पन्न।।

|| 598 ||

सत्य-अहिंसा-प्यार का, मंगलमय उपदेश।
'सारा जग परिवार है, दिया जगत संदेश।।

|| 599 ||

मिलकर हिन्दी-भारती, करें विश्व उत्थान।
पर सेवा- उपकार से, करें जगत कल्यान।।

|| 600 ||

हिन्दी - हिन्दुस्तान की, देश करें परवाह।
देखी हिन्दी - प्रेम की, सबकी अद्‌भुत चाह।।

|| 601 ||

भेदभाव से दूर है, हिन्दी का सन्दर्श।
सकल विश्व को दे रही, हिन्दी नव उत्कर्ष।

|| 602 ||

दुनिया की सब जातियाँ, सकल धर्म - ईमान।
हिन्दी भाषा से करें, सहज प्रेम श्रीमान।।

|| 603 ||

हैं अद्‌भुत स्मृतियाँ, धन्य! उज़्बेकिस्तान।
तुमको हृदय में बसा, जाते हिन्दुस्तान।।

|| 604 ||

सत्य- शिवं- सुन्दर सभी, हे उज़्बेकिस्तान!
नमन! नमन! हे बन्धुवर! श्रम के देश महान।।

|| 605 ||

सांस्कृतिक- सौहार्द्र का, हिन्दी का सन्देश।
'ताशकन्द' में छोड़कर, लौटे भारत देश।।

|| 606 ||

धन्य! धन्य! माँ भारती! हिन्दी रूप विशाल।
हिन्दी- हिन्दुस्तान की, मिलती नहीं मिशाल।।

शामियाना

|| 607 ||

खड़ा शामियाना तना, बना सभी का ठॉव।
मात-पिता-गुरूजन सभी, हैं बरगद की छॉव।।

|| 608 ||

झेल रहा नंगा बदन, सर्दी- वर्षा- घाम।
धन्य! शामियाना! सखे! अनुपम-निश्छल काम।।

|| 609 ||

अधि-व्यधि तन झेलता, खड़ा रहे दिन-रात।
धन्य! शामियाना किया, मानवता का गात।।

|| 610 ||

वाह! शामियाना सखे! वाह! समर्पण-प्यार।
धन्य! तुम्हारी साधाना, तुम मानव उपहार।।

|| 611 ||

उलट-पुलट सब हो गया, गाँव बन गया ठेर।
लुप्त शामियाना हुआ, काल-चक्र का फेर।।

|| 612 ||

रहे नहीं चौपाल अब, लुप्त हुए मैदान।
कहाँ शामियाना तने, नाच रहे शैतान।।

|| 613 ||

कहाँ शामियाना गया, बस्ती है बेचैन?
कौन बचाये धूप से, दो पल मिले न चैन।।

|| 614 ||

जिस पल गूँजे कान में, जब अन्तिम आवाज।
तब सब कुछ छूटे यहाँ, धरे रहें सर ताज।।

|| 615 ||

पड़ा भूमि निश्चेष्ट है, कातर-नैन-सुगात।
परिजन सारे रो रहे, सुने न कोई बात।।

|| 616 ||

मूल-कथा ज्यों भूलते, याद रहें संवाद।
जीवन-नाटक भूल त्यों, बोल रहें मृदु याद।।

|| 617 ||

चला धनुष से तीर औ', मुँह से निकली बात।
वापस फिर आते नहीं, करलो कितनी तात!!

|| 618 ||

बात-बात में बढ़ गयी, बात हुई तकरार।
बात-बात में गुम गयी, बात हो गयी हार।।

|| 619 ||

हुआ कभी दुष्कृत्य तो, किया प्रायश्चित नाय।
सावधान! उस ज़ीव से, कब कुछ क्या हो जाय।।

|| 620 ||

अपराधी के सामने, आज ठहरता कौन?
कब तक मैं सहता रहूँ, मितवा! तेरा मौन।।

|| 621 ||

जब तक वैभव साथ है, करले भ्रष्ट उपाय।
मनमानी कर पातकी, मिले न अंत सहाय।।

|| 622 ||

विकट समस्या हो गयी, नव पीढ़ी में आज।
तनिक मनोबल है नहीं, करते उलटे काज।।

|| 623 ||

सुखी रहे! सानंद हो! जीवन-रूप-मराल।
आयु-बुद्धि-ऐश्वर्य-सुख, रहें सैकड़ों साल।।

|| 624 ||

मन की कोमल कामना, शिशु की भाँति अबोध।
विकसित होती फूल-सी, पैदा करे प्रबोध।।

|| 625 ||

कौआ को तमगा मिला, भरने लगा उड़ान।
काँव-काँव करता फिरै, बनने लगा महान।।

|| 626 ||

शेर-शेर को देखकर, फौरन भरे दहाड़।
गीदड़ की औकात क्या? छोड़ भगे घर-द्वार।।

|| 627 ||

वरजाया माना नहीं, ले डण्डा से काम।
बिना शक्ति मिलता नहीं, वापस कभी छदाम।।

|| 628 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त सब, हैं कोरी बकवास।
सब ताकत के सामने, बन जाते उपहास।।

|| 629 ||

वाणी औ' व्यवहार में, जब तक होय न मेल।
कार्य सदा असफल रहे, यह जीवन का खेल।।

|| 630 ||

सीधे-सादे लोग जब, करते टेढ़ी बात।
निकट रहे परिवेश का, बिम्ब दीखता तात!!

|| 631 ||

सावधान रहना सखे! यहाँ अजूबा मेल।
लोग बजाते तालियाँ, करे मदारी खेल।।

|| 632 ||

खरे बचन जो बोलते, फिरें छानते खाक।
कूट बचन कहते बनी, उनकी ऊँची शाख।।

|| 633 ||

खरी बात करती सदा, कड़ी अहं पर चोट।
चौंक उठे सुन आदमी, उर में बढ़ती खोट।।

|| 634 ||

कर्म और व्यवहार से, प्रकट होय कुल-गोत।
कर्मवीर से पूछता, कोई कभी न स्रोत।।

|| 635 ||

पूत होय यदि सूर सम, दुराचार आधार।
इकले रावण ने किया, कुल का बंटाधार।।

|| 636 ||

फेर दिनों के देखकर, मुख मत लीजे मोड़।
रखो! कर्म में आस्था, सखे! कर्म बेजोड़।।

|| 637 ||

दुनिया वैभव खोजती, दर-दर ठोक खाय।
कोई भी मन-मीत की, चिन्ता करता नाय।।

|| 638 ||

मानव का जग में हुआ, आज बहुत ही ह्रास।
मानवता लगने लगी, ज्यों कागा का ग्रास।।

|| 639 ||

परिजन सब मिल कर रहें, परिजन का उपहास।
पल-पल गिरता जा रहा, परिजन का विश्वास।।

|| 640 ||

भाँति-भाँति के पल रहे, तन में, मन में भोग।
रोज चिकित्सा बढ़ रही, घातक बनते रोग।।

|| 641 ||

कथनी-करनी में नहीं, जब तक पूरा मेल।
कहने को कुछ भी कहो, जग-मिथ्या सब खेल।।

|| 642 ||

अपने-अपने भोग में, उलझे हैं सब लोग।
दर्द न कोई बाँटता, खुशी बाँटते लोग।।

|| 643 ||

आज न कोई मानता, निश्छल मन की बात।
पल-पल गिरती जा रही, हाय! प्रीति-सौगात।।

|| 644 ||

बार-बार प्रयास के, मीन चढ़े जल-धार।
सतत साधना से मिले, विजयश्री का हार।।

|| 645 ||

बहुत बढ़ी नृशंसता, बहुत बढ़ा-अभिमान।
अपने आपे में नहीं, धरती पर इन्सान।।

|| 646 ||

हमको अपनों ने किया, आज बहुत बदनाम।
अधकचरों के साथ में, हुये सखे! गुमनाम।।

|| 647 ||

जब दुनिया में आ गये, सबसे हैं सम्बन्ध।
चार दिनों के वास्ते, हा! कितने प्रतिबन्ध।।

|| 648 ||

छाया के मन में नहीं, अपना अथवा गैर।
जो भी आया पास में, सबकी रखती खैर।।

|| 649 ||

तोड़ किनारे बह रहा, उफन रहा तालाब।
जग में ओछा आदमी, दिखलाता है ताब।।

|| 650 ||

आओ सब मिलकर करें, जन-जन का उत्थान।
इसी भाव में निहित हैं, वसुधा का कल्यान।।

|| 651 ||

कैसे-कैसे हो गये, अब जग के दस्तूर।
जितना जुड़ता आदमी, उतना-होता-दूर।।

|| 652 ||

छोटे-छोटे मुँह करें, लोग बड़ी ही बात।
वाणी पर अंकुश नहीं, मौत करे उत्पात।।

|| 653 ||

जिस घर में होता नहीं, मुखिया का सम्मान।
उस घर को मिलता सदा, पग-पग पर अपमान।।

|| 654 ||

कितना समझाया उसे, किया नहीं विश्वास।
होनहार होकर रहे, करे नियति उपहास।।

|| 655 ||

पत्नी जब करने लगे, निजपति का अपमान।
टूट जाय परिवार भी, डूब जाय सन्तान।।

|| 656 ||

याचक नित याचक रहे, जीवन रहे उदास।
ऐसी भी क्या साधना, मिटे न मन की प्यास।।

|| 657 ||

जिसको चाहो प्राण से, निश्चित मिलता तात!
दूल्हा-दुल्हन से मिले, झूँठी पड़े बरात।।

|| 658 ||

मात-पिता-परिवार का, बहुत बढ़ाया मान।
बदले में हमको मिला, दर्द-कसक-अपमान।।

|| 659 ||

दौड़-दौड़ सब जा रहे, छोड़ पुरानी राह।
चले खोजने एकता, मिला सौतिया डाह।।

|| 660 ||

डूब रहे सम्मान को, तन-मन-धन से साँट।
सारा जाता देख के, आधा लीजे बाँट।।

|| 661 ||

बिना मरे मिलता नहीं, ज्यों प्राणी को स्वर्ग।
साधक करके साधना, पाता है अपवर्ग।।

|| 662 ||

जीवन-नद में आदमी, सिर पर अघ की मोट।
जितना तिरता आदमी, पड़ती सिर पर चोट।।

|| 663 ||

कभी पलों का साथ भी, बन जाता मधुमास।
परदुःखकातरता कभी, रच देती इतिहास।।

|| 664 ||

आज जहाँ जो भी खड़ा, लिये गुणा औ' भाग।
कसर न कोई छोड़ता, खूब लगाता आग।।

|| 665 ||

धरती को जिसने किया, अतिशय लहूलुहान।
आज वही इन्साफ का, लेता है इम्तिहान।।

|| 666 ||

दाने-दाने के लिये, खूब मची है लूट।
अन्न-क्रान्ति-अभिलेख सब, गये पुराने टूट।।

|| 667 ||

पति के उर-मंदिर करे, जब तक पत्नी वास।
प्रीत-महक से महकता, बनता सदन सुवास।।

|| 668 ||

अमित तोष अनुभव करे, पति, पत्नी के साथ।
बिन पत्नी जीवन लगे, पतझड़ बारहमास।।

|| 669 ||

जग में उनकी जीत है, जिनका यह दस्तूर।
अड़ते से अड़ जाइये, चलते से चल दूर।।

|| 670 ||

नीच-जनों का साथ हो, जीना करे मुहाल।
ज्यों अंधों की दोस्ती, जीवन का जंजाल।।

|| 671 ||

यह कैसा दस्तूर है, या विधि का अभिशाप।
अंधे को गड्ढा मिले, अंधे को ही साँप।।

|| 672 ||

विधना की इस सृष्टि में, छोटा-बड़ा न कोय।
अन्तकाल शमशान ही, सबकी शैय्या होय।।

|| 673 ||

निर्बल-दीन-अनाथ का, कौन देत है साथ?
इक कंचन, इक कुचन पै, को न पसारे हाथ।।

|| 674 ||

निर्धन को कुछ भी नहीं, धनवानों को प्यार।
मुख में जीरा ऊँट के, खीरा खाय सुनार।।

|| 675 ||

शासन के आदेश से, ओछा बना महान।
'अलिफ़-ज़बर' जाने नहीं, लादे फिरे कुरान।।

|| 676 ||

जो नर मान न जानता, करो न उससे प्रीत।
कर ओछे से दोस्ती, गिरे बालु-सी भीत।।

|| 677 ||

गुण की पूजा सब करें, जाति और कुल व्यर्थ।
चुनते फूल गुलाब का, क्या काँटो से अर्थ।।

|| 678 ||

निर्धन अति निर्धन हुआ, और अमीर-अमीर।
अजब समय की चाल है, उलटा बहे समीर।।

|| 679 ||

शब्द-शब्द में व्याप्त है, बड़े ढोल की पोल।
शब्दों के प्रयोग में, करो न उनका मोल।।

|| 680 ||

जल-थल-नभ में व्याप्त है, ईश्वर का प्रभुत्व।
मंगलमय सब सृष्टि हो, यही विश्वबंधुत्व।।

|| 681 ||

सुरसा-मुँह-से फैलते, चले भयानक रोग।
चादर ताने सो रहे, घर-घर में सब लोग।।

|| 682 ||

पता नहीं किस दौर से, गुजर रहा संसार।
मुरदा मन्दिर में पड़ा, नौबत बजती द्वार।।

|| 683 ||

जिसको तन-मन-धन दिया, वही करे आघात।
मचता हृदय-कुँज में, नित कैसा उत्पात।।

|| 684 ||

देख-देख उत्पात को, हृदय बड़ा अधीर।
कब तक हृदय पर सहें, अपनों की शमशीर।।

|| 685 ||

नहीं किसी से वास्ता, नहीं किसी से प्यार।
जीवन मरघट-सा बना, कहाँ जीत औ' हार।।

|| 686 ||

दूर-दूर तक रेत है, फूल रहे हैं काँस।
जीवन-नदिया जल नहीं, पंछी उड़ें उदास।।

|| 687 ||

रूप-रंग-मुख देखकर, फिसल गया अन्जान।
रग-रग में विष व्याप्त है, करी नहीं पहचान।।

|| 688 ||

भला-बुरा जाने नहीं, तरुणाई का दौर।
पागलपन छाया रहे, निशा-दिवस सिरमौर।।

|| 689 ||

धन की सुषमा से मिली, मन को सचमुच हार।
धन की चकमक से हुये, तन-मन सब बेकार।।

|| 690 ||

बिना परख होता नहीं, भले-बुरे का ज्ञान।
कनक-कसौटी पर घिसे, हो असली पहचान।।

|| 691 ||

टुकड़े-टुकड़े कर दिया, मानवता का ताज।
रक्षक खुद भक्षक बने, हत्यारों का राज।।

|| 692 ||

मंगलमय नव वर्ष हो, पग-पग हो उत्कर्ष।
अमित ज्ञान-यश-सम्पदा, मिले सफलता हर्ष।।

|| 693 ||

मुख से कोई बात जब, निकले बार अनेक।
मूल अर्थ रहता नहीं, कहलाता अविवेक।।

|| 694 ||

आसमान में उड़ रहे, बड़े-बड़े खग वृन्द।
चुन-चुन पंछी मारता, बाज बना स्वच्छन्द।।

|| 695 ||

ज्यों-ज्यों बढ़ती ही गयी, विश्वासों की डोर।
त्यों-त्यों ही होते गये, दूर परस्पर छोर।।

|| 696 ||

कहाँ सरल है रोपना, विश्वासों की बेल।
बालक का ज्यों पालना, सहज-नहीं है खेल।।

|| 697 ||

जग-जीवन सुखमय बने, चलता रहा प्रयास।
आराधक, बाधक हुये, रोयी पग-पग आस।।

|| 698 ||

छोटी-छोटी बात को, जितना देते तूल।
उतनी बढ़ती दूरियाँ, भले जरा-सी भूल।।

|| 699 ||

यह दुनिया विद्वेष की, इसे न भाते फूल।
रोते को कह बावरा, हँसते को दे शूल।।

|| 700 ||

हित-अनहित की बात सुन, मन में करो विचार।
आज हितैषी सैकड़ों, रो-रो करें बिगार।।

|| 701 ||

देश-काल परिवार की, परम्परागत प्रीति।
धन-वैभव के सिन्धु में, डूब गयी कुल रीति।।

|| 702 ||

शब्द खोखले हो गये, सभी आचरणनिष्ठ।
सुरा-सुन्दरी-अर्थ ने, बदल दिये सब इष्ट।।

|| 703 ||

मानव-मर्यादा सभी, अर्थहीन स्वच्छन्द।
जितने सुलझाते चले, उतने उलझे बंद।।

|| 704 ||

अपनी-अपनी भावना, अपना-अपना ज्ञान।
किस्मत बूढ़ी हो गयी, देख-देख अज्ञान।।

|| 705 ||

देख श्राद्ध-सम्मान-पद, काग हुआ बाचाल।
अपनी गति को छोड़कर, चला हंस की चाल।।

|| 706 ||

जलता माटी-दीप जब, घर अंधियारा खोय।
मनका दीपक जब जले, जग उजियारा होय।।

|| 707 ||

आतंकित परिवेश में, मानव करता वास।
जैसे मुख में जीभ का, दाँतों बीच निवास।।

|| 708 ||

धरती का उर- चीरकर, बोता बीज किसान।
श्रम-सींकर से सींचता, अंकुर-बाल विहान।।

|| 709 ||

अन्दर-बाहर एक-सा, दिनकर का प्रतिरूप।
नहीं मुखौटों से बना, महाजनों का रूप।।

|| 710 ||

तन की बगिया फूलती, मन-कोयल हरषाय।
प्राण-पपीहा बावरा, देख-देख ललचाय।।

|| 711 ||

भवन जले, छप्पर जले, दई झौंपड़ी फूँक।
दीन खड़ा असहाय-सा, निकल गयी है हूँक।।

|| 712 ||

खोटे सिक्के की तरह, बनिया रहा उछाल।
कितनी गुम चोटें लगीं, मानव है बेहाल।।

|| 713 ||

समय-चूक होती अगर, मिलती नहीं सहाय।
चुका-समय आता नहीं, कर लो लाख उपाय।।

|| 714 ||

आने पर खुशियाँ मनें, जाने पर हो शोक।
सुख-दुख जीवन की नियति, कोई सके न रोक।।

|| 715 ||

आने पर संसार में, भाँति-भाँति के चित्र।
मन मोहक लगते बड़े, रिश्ते सभी विचित्र।।

|| 716 ||

आता खाली हाथ है, जाता खाली हाथ।
थोड़ा-सा वैभव मिला, उच्च समझता माथ।।

|| 717 ||

सब बंदे भगवान के, सबका एक रसूल।
सिंहासन पर बैठकर, आते याद उसूल।।

❁ ❁ ❁

हिन्दी की मुस्कान

अपनी बात

काव्य की गंगा सतत प्रवाहित हो रही है। उसका उद्गम स्थिर है। अचल है। अपरिवर्तित है। लेकिन, प्रवाह–मार्ग निरन्तर बदल रहा है, बढ़ रहा है! पतितपावनी, सिद्धिदायिनी, जीवन साधनी काव्य–गंगा हमें निरन्तर नयी ऊर्जा, नयी स्फूर्ति और नयी सोच प्रदान करती है। युग आयेंगे, युग जायेंगे, इसका शाश्वत स्वरूप अपने विविध रूपों एवं स्वरूपों से विश्व का कल्याण करता रहा है और करता रहेगा। मानव इसके हाथ का खिलौना है जो निरन्तर सप्त स्वरों में बजता रहता है। उसका संकेत पाकर कभी वह सृजन–पथ पर दौड़ता है, कभी जीवन–पथ पर नृत्य करता है तो कभी मधुर स्वर में गायन करता है तो कभी वाद्य यन्त्रों की भाँति बज उठता है। कभी–कभी भ्रम, मोह एवं अहंकार के वशीभूत वह स्वयं को इन कलाओं का स्वामी मानने लगता है और काव्य गंगा की आदिशक्ति को भूल जाता है।

काव्य–गंगा में मानव का अस्तित्व पिपीलिका सृदश है, लेकिन वह स्वयं को ऐरावत जैसा मानता है। वह तो मात्र कठपुतली–सदृश है, लेकिन स्वयं को सृजक, निर्माता और सूत्रधार मानने का भ्रम पालता है, स्वयं को महान रचनाकार मानने का अहं आत्मसात किए रहता है। लेकिन वह भूल जाता है कि पलभर में ही उसका नारदीय–भ्रम–मोह–अहंकार चूर हो जाता है। अतएव जहाँ हो, जैसे हो, अपनी औकात में रहो, वरना हवा का एक ही झोका आयेगा और बीच भंवर में डूब जाओगे। सब ऐंठ और अकड़ पलक झपकते ही समाप्त हो जायेगी। अतएव जो कार्य मिला है, उसे सहज भाव करते

चले जाओ! उसके मौन निर्देशों को समझ सको, तो ठीक है, वरना सहज समर्पण किए चलते रहो, मार्ग स्वतः मिल जायेगा। उसकी परम सत्ता पर विश्वास करो! इसके अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प अथवा पथ नहीं है।

'हिंदी की मुस्कान' इसी भावना–कामना और साधना का मूर्त रूप है। जो अनुरूप लगे, उसे आप ग्रहण कर लें और जो अवांछित लगे, छोड़ दें, मेरी झोली में ही रहने दें, बड़ी कृपा होगी, क्योंकि मैंने 'सृजक' होने का भ्रम नहीं पाला है अपितु, मेरी तो स्पष्ट मान्यता है, धारणा है, निष्ठा है –

तुम जो कहते हो सखे!
करता हूँ वह काम!
अपना तो कोई नहीं,
स्वामी तुम बिन राम!!
तुम जानो मैं जानता!
मेरे मन की बात!
भला–बुरा कोई कहे,
फर्क न पड़ता तात!!

अस्तु! तुम्हारी सौगात तुम्हें ही समर्पित है! और क्या कहूँ? सद्भावनाओं सहित...........जय श्री राम!

25 जनवरी, 2018

– डॉ॰ महेश 'दिवाकर'
डी॰लिट्॰

००० दोहे ०००

|| 1 ||

सागर-तट की रेत पर, लिखा सुमन से 'राम'!
लहरों ने श्री राम-पद, छूकर किया प्रणाम।।

|| 2 ||

देख सिन्धु की आस्था, नाच उठा मन-मोर!
राम-नाम छूकर हुआ, सागर भाव-विभोर।।

|| 3 ||

प्रथम वर्ष शुभ जन्म का, स्वस्थ रहो खुशहाल!
वय-वैभव-जीवन फले, चन्द्र-किरण सम भाल।।

|| 4 ||

ऋतु परिवर्तित हो रही, हुई मकर-संक्रान्ति!
करें देश में युवक सब, मिलकर अब तो क्रान्ति।।

|| 5 ||

समय-समय की बात है, परिजन दें उपहार!
समय-समय की बात है, बदल जाय व्यवहार।।

|| 6 ||

जीवन के संग्राम में, अजब तरह का दौर।
कहीं न नैतिक आचरण, दुराचरण सिरमौर।।

|| 7 ||

संस्कृत भाषा ने दिया, हमें अपरिमित ज्ञान!
छंदशास्त्र, लालित्य-पद, ललित कला विज्ञान।।

|| 8 ||

अपराधी को देखकर, साहस हुआ बुलन्द!
जड़ा तमाचा गाल पर, पल में मार जकन्द।।

|| 9 ||

रूप बदलकर कर भेडिए, पहुँच रहे दरबार!
राजा जी हर्षित हुये, बाँट रहे उपहार।

|| 10 ||

घर-आँगन को बाँटकर, खड़ी करी दीवार!
देख रही ग़मगीन-सी, बीच खड़ी मीनार।

|| 11 ||

जातिवाद औ' धर्म का, चला इस कदर दौर!
भारत की पहचान भी, हुई और से और।।

|| 12 ||

कर्म सदा करते रहो, समय बड़ा बलवान!
यथा समय मिलते सदा, यश-वैभव-सम्मान।।

|| 13 ||

मन में हो दृढ़ आस्था, और कर्म से प्रीत!
कितना दुष्कर लक्ष्य हो, मिले अन्ततः जीत।।

|| 14 ||

रिश्वत लेकर आदमी, बनता नहीं महान!
मान और सम्मान भी, डूबे सकल जहाँन।।

|| 15 ||

यश-वैभव-धन-सम्पदा, मिलें अनैतिक रूप!
सदा साथ रहते नहीं, ज्यों जाड़े की धूप।।

|| 16 ||

वैर-द्वेष-प्रपंच-छल, षड्यन्त्रों के जाल!
बुनती आयी जिन्दगी, गयी काल के गाल।।

|| 17 ||

गागर नेजू में फँसी, पड़ी कूप के बीच!
मँहगाई ने मनुज की, गर्दन ली ज्यों भीच।।

|| 18 ||

सत-रज-तम सम हो गये, लिया राम का नाम!
सुख पालौती मारकर, बैठा हृदय धाम।।

|| 19 ||

'साहित्य कला-मंच' है, नगर मुरादाबाद!
हिंदी के उत्थान हित, 'मंच' हुआ आबाद।।

|| 20 ||

करता देश-विदेश में, हिंदी हित प्रचार।
हिंदी गूँजे विश्व में, बने कण्ठ का हार।।

|| 21 ||

बनी न भाषा राष्ट्र की, हिंदी अब तक हाय!
हिंदी की पीड़ा यहीं, 'मंच' बाँटता जाय।।

|| 22 ||

हिंदी को घर में मिले, गौरवमय स्थान!
जग में भारतवर्ष भी, होगा तभी महान।।

|| 23 ||

हिंदी सेवी विश्व के, मिलते हैं प्रतिवर्ष!
करते देश-विदेश में, खुलकर सभी विमर्श।।

|| 24 ||

हिंदी के उत्थान हित, आयोजन हर साल!
पहुँचें देश-विदेश से, हिंदी सेवी लाल।।

|| 25 ||

सम्मेलन में कई दिन, मिलकर करें विचार!
हिंदी भाषा विश्व की, सक्षम भली प्रकार।।

|| 26 ||

सम्मेलन के अन्त में, हो सबका सम्मान!
हिंदी सेवा के लिए, 'मंच' बना वरदान।।

|| 27 ||

किसको चिन्ता देश की, बड़े भयानक दृश्य!
बाज देश को लूटते, खौफनाक परिदृश्य।।

|| 28 ||

अपनी भाषा-राष्ट्र का, रहा नहीं अभिमान!
भारत माता रो रही, सिसक रहा दिनमान।।

|| 29 ||

कैसी किस्मत देश की, पुत्र बना है चोर!
बना निशाचर लूटता, देखे निशा न भोर।।

|| 30 ||

कौन सुने? किससे कहें? अपने मन की बात!
देश कहीं पर गुम गया, लोग कर रहे घात।।

|| 31 ||

यों तो भारत विश्व में, लोकतांत्रिक देश!
पर, भाषाई दृष्टि से, आज लगे परदेश।।

|| 32 ||

आज देश की आत्मा, अंग्रेजी की दास!
बनी राष्ट्रभाषा नहीं, कितना हिंदी ह्रास।।

|| 33 ||

मानवता की भावना, जब-जब होती पोच!
तब-तब बदले आदमी, अपनी जनहित सोच।।

|| 34 ||

सहजभाव-व्यवहार को, लोग समझते प्रीत!
भावनाओं के सिन्धु में, खोज रहे हैं जीत।।

|| 35 ||

लोग जगत-व्यवहार को, बना रहे हैं ढाल!
बदल रहा सूरज यहाँ, रोज-रोज ही चाल।।

|| 36 ||

घटना घटती रोज है, बढ़ता जाय तनाव!
बदल न पाये आज तक, निज व्यवहार जनाब।।

|| 37 ||

कौआ-कुत्ता-सुअर का, बदले नहीं मिज़ाज!
केवल डण्डा ही करे, इनका सही इलाज।।

|| 38 ||

प्राकृतिक परिवेश में, परिवर्तन हर ओर!
देख-देखकर आदमी, बदल रहा है छोर।।

|| 39 ||

पता नहीं क्यों आदमी, आदत से मजबूर!
भला-बुरा समझे नहीं, इतना पला गुरूर।।

|| 40 ||

अजब तरह के लोग हैं, अजब तरह की बात!
पहले आते पास में, फिर करते हैं घात।।

|| 41 ||

अनजाने ही लोग जब, करते मृदु व्यवहार
सोच-समझकर लीजिए, फिर उनसे उपहार।

|| 42 ||

सहज, सरल, अति सौम्य है, ईरा का व्यवहार
मुदुवाणी-मुस्कान का, देती नित उपहार।

|| 43 ||

शब्द-शब्द अमृत भरा, करता शब्द कमाल
शब्द - शब्द विष - रस भरा, रखिए शब्द संभाल

|| 44 ||

शब्द-शब्द विस्मय भरे, शब्द चलें हर दॉव
शब्द-शब्द शीतल करे, शब्द करें अति घाव

|| 45 ||

शब्द-शब्द से भावना, घृणा-ममता-प्यार
पलभर में पैदा करे, मन में शब्द-विकार।

|| 46 ||

शब्द-शब्द परमात्मा, शब्द निशाचर वृत्ति
शब्दों का उपवन भरे, हृदय अद्‌भुत भक्ति।

|| 47 ||

शब्द-शब्द सद आचरण, शब्द सिखाता योग
शब्द-शब्द व्यवहार का, इंगित करे प्रयोग।

|| 48 ||

शब्द-शब्द का आंचमन, गंगाजल की भाँति
शब्द-शब्द अपराध को, धुने रूअर ज्यों ताँति।

|| 49 ||

मात-पिता-परिवार-सुख, सबको मिला समान!
जादू शब्दों ने किया, बालक राम महान।।

|| 50 ||

कहाँ सुदामा-कृष्ण हैं? कहाँ परशु-बलराम?
शब्द शक्ति योगी सभी, कर्म-धर्म-निष्काम।।

|| 51 ||

शब्द-शब्द सुख-शान्ति है, शब्द बनें जंजाल!
शब्द-शब्द लक्ष्मी बसें, शब्द करें कंगाल।।

|| 52 ||

शब्दों में पतझर छुपा, शब्द भरा मधुमास!
शब्दों में दुर्भावना, शब्द पगा विश्वास।।

|| 53 ||

शब्दों में दुर्गा बसें, करें भस्म सब पाप!
शब्द क्रोध में डूबकर, बन जाते अभिशाप।।

|| 54 ||

अपराधी के सामने, शब्द हुए यदि मौन!
फिर, तेरी रक्षा सखे! यहाँ करेगा कौन।।

|| 55 ||

पीपल सब गुमसुम खड़े, बरगद बैठे मौन!
पिलखन की पीड़ा यहाँ, हाय! समझता कौन?।

|| 56 ||

गलियारे गायब हुए, छली गयी चौपाल!
पनघट सब सूने पड़े, खिसक गये पाताल।।

|| 57 ||

घर के दर-पट बन्द हैं, अन्दर है कुछ शोर
सड़कें सब सूनी पड़ीं, गलियारे में भोर।

|| 58 ||

वह तिल-तिल में रम रहा, रहता पल-पल साथ
रूप भले ही कुछ रहे, उसका सब पर हाथ।

|| 59 ||

मंगलमय हो जन्म दिन, जीवन हो खुशहाल
मनोकामना पूर्ण हो, ईश्वर करे कमाल

|| 60 ||

पत्ता टूटा डाल से, गिरा धरा पर आय
मानव जीवन भी यही, टपक एक दिन जाय

|| 61 ||

नया वर्ष दे आपको, यश-वैभव-समृद्धि
मनोकामना पूर्ण हो, मिले ऋद्धि औ' सिद्धि

|| 62 ||

नये वर्ष में आपको, प्रभु दें ऐसी शक्ति
जीवन भर करते रहें, मात-पिता-गुरू-भक्ति!

|| 63 ||

अर्द्धशती जीवन हुआ, रखिये इतना ध्यान
दालें यदि सेवन करीं, होंगी गरल समान!

|| 64 ||

वात रोग पैदा करें, एसिड विविध प्रकार
प्रौढ़ अवस्था में करें, दालें बहुत विकार।

|| 65 ||

नित प्रति सैंधा नमक का, रखिए भोज-निवेश!
वात-पित्त-कफ सन्तुलन, तन में रखे विशेष।।

|| 66 ||

बाल-युवक औ' युवतियाँ, करें दाल का भोग!
प्रौढ़ों में पैदा करें, वात-पित्त-कफ रोग।।

|| 67 ||

बाल-युवा औ' प्रौढ़ यदि, हरी सब्जियाँ खाय!
वात-पित्त-कफ रोग से, तन छुटकारा पाय।।

|| 68 ||

नमन! नमन! जगदम्बिके! माते! ललित ललाम!
क्षीर भवानी माँ! करूँ, चरणों में प्रणाम।।

|| 69 ||

माते! जग में शान्ति हो, फूले-फले जहॉन!
जन हित में वरदान दो, भारत बने महान।।

|| 70 ||

जन्म दिवस से पूर्व ही, मिला आपका प्यार।
धन्य! धन्य! शुभकामना, धन्य! जन्म उपहार।।

|| 71 ||

दिव्य दृष्टि दी आपने, मेरे जीवन-प्राण!
जल-थल-नभ देखे बहुत, करते हुए प्रयाण।।

|| 72 ||

शुभ कर्मों के वास्ते, दिए हाथ औ' पैर।
जीवन भर करता रहा, बिन कारण जग-बैर।।

|| 73 ||

घ्राण शक्ति दी आपने, ज्ञान-शक्ति के साथ।
भला-बुरा समझा नहीं, फिर भी हे रघुनाथ!!

|| 74 ||

जीभ-कान औ' रूप के, दिए महा उपहार!
समझ न पाया मित्रवर! सत्य-अहिंसा-प्यार।।

|| 75 ||

करने सृजन शक्ति का, मिली पेट की आग!
पर हम खुश होते रहे, जला आग में राग।।

|| 76 ||

वसुधा के कल्याण को, सुन्दर मिला शरीर!
बना दिया हमने इसे, धन के हेतु फकीर।।

|| 77 ||

मिली मात के गर्भ से, हमको अद्‌भुत सोच!
हाय! स्वार्थ ने आदमी, बना दिया अति पोच।।

|| 78 ||

गुरूवर की कृपा हुई, मिला ज्ञान-विज्ञान,
बन भस्मासुर कर रहे, ईश्वर का अपमान।।

|| 79 ||

हे प्रभु! इतनी शक्ति दो, जो जीवन है शेष!
मानवता का हित वरूँ, कुछ तो करूँ विशेष।।

|| 80 ||

बाल न बांका कर सकें, आतंकी-परिवार!
देश-धर्म की भावना, ईश! मिले उपहार।।

|| 81 ||

हार न कोई मानता, उठ-उठ करते युद्ध!
हार-जीत विस्मित करें, जन को अतिशय क्रुद्ध।।

|| 82 ||

सुन्दर, स्वस्थ शरीर भी, रहता नहीं सुडौल!
भोजन में सयंम नहीं, बन जाता बेडौल।।

|| 83 ||

शब्द ईर्ष्या-द्वेश के, पैदा करें विकार!
धीरे-धीरे आदमी, इनका बने शिकार।।

|| 84 ||

क्रोध भावना अस्त्र है, इसका ध्येय विकास!
लेकिन अतिशय क्रोध भी, पल में करे विनाश।।

|| 85 ||

बिना बात आलोचना! चौराहों पर आम।
बता रही दुर्भावना, सफल हुआ है काम।।

|| 86 ||

अपनी गलती को सदा, सहज भाव लो मान!
इससे तो व्यक्तित्व की, बढ़ जाती है शान।।

|| 87 ||

कोई ऊँच न नीच है, और न राजा-रंक!
अन्त समय सबको मिले, धरती का पर्यंक।।

|| 88 ||

केवल कर्म-अकर्म का, जग लेता संज्ञान।
जले चिता की अग्नि सब, रहे कर्म-विज्ञान।।

|| 89 ||

यादों के लेकर दिये, चले जा रहे यार!
तेरे जीवन में रहे, सदा बरसता प्यार।।

|| 90 ||

नए-नए सपने लिए, चले जा रहे संग!
मंगलमय हो प्यार के, नए-नए सब रंग।।

|| 91 ||

जब तक नेता देश के, मरें नहीं दो-चार।
तब तक कम होगा नहीं, हे प्रभु! भ्रष्टाचार।।

|| 92 ||

पुनर्जन्म यदि विश्व में, मिले कर्म अनुसार!
केवल भारतवर्ष में, देना जगदाधार।।

|| 93 ||

तरह-तरह के ढोंग में, हुआ आदमी व्यस्त!
मानो जग सारा हुआ, आज बहुत अभ्यस्त।।

|| 94 ||

जनता का धन लुट रहा, जन-जन है लाचार।
देश देखता, मौन है, संसद का आचार।।

|| 95 ||

लूट रहे हैं देश को, आतंकी-मक्कार!
संसद में भी घुस गये, देश द्रोही गद्दार।।

|| 96 ||

उठो युवक! अब देश के, गहो कलम-तलवार!
अपनी सृजन-शक्ति से, करो देश उद्धार।।

|| 97 ||

दुनिया को तुमने दिया, यार! बहुत सम्मान!
लेकिन भारत देश का, सदा रखा है मान।।

|| 98 ||

यह कैसा इन्साफ है, कैसा रचा विधान?
मर्म समझ आया नहीं, नभ में तना वितान।।

|| 99 ||

चन्द्रकान्त जी! आपकी, मिलती नहीं मिसाल!
शिक्षा औ' साहित्य में, अनुपम किया कमाल।।

|| 100 ||

जा-जा तेरे द्वार पर, फिरे बाँधते सूत!
यह कैसा विश्वास है, मिले न फिर भी पूत।।

|| 101 ||

बिन माँगे कुछ को दिए, तुमने छह-छह रत्न!
कुछ के निष्फल कर दिए, पल में सभी प्रयत्न।।

|| 102 ||

ममता-ललिता-सोनिया, मायाश्री-अखिलेश!
लालू-राहुल-केजरी, बेच रहे सब देश।।

|| 103 ||

रहे आदमी यदि नहीं, शब्दों का पाबन्द!
स्वाभिमान-इज्जत नहीं, डूब जाय आनन्द।।

|| 104 ||

जीवन का संग्राम है, युद्ध-युद्ध हर ओर!
कोई हारे-जीतता, दुःख-सुख दोनों छोर।।

|| 105 ||

युग-युग से इस विश्व में, बाँट रहा उपहार!
यह लौढ़ी का पर्व है, देता कितना प्यार।।

|| 106 ||

मानव के कल्याण की, लोढ़ी देती सीख!
भाव भूमि पंजाब की, रही दिलों को सींच।।

|| 107 ||

लोढ़ी के प्रकाश की, उठी धरा से ज्वाल!
वैर-द्वेष-अन्याय के, भस्म कर रही ब्याल।।

|| 108 ||

फैलाता संचेतना, लोढी का यह पर्व!
बाल-युवा-नर-नारियॉ, नृत्य कर रहे सर्व।।

|| 109 ||

आओ! मिलकर बाँट दें, लोढ़ी का सन्देश!
आतंकी के सामने, झुके न मेरा देश।।

|| 110 ||

भारत के सम्मान पर, आये कभी न आंच!
लोढी हमसे कह रही, यही पर्व का सांच।।

|| 111 ||

लोढ़ी पर शुभकामना, देना सबको मीत!
मंगलमय यह पर्व हो, रचो प्यार के गीत।।

|| 112 ||

ओछे-कामुक-लालची, भ्रष्ट-दुष्ट इन्सान!
इनकी संगत से मिले, पग-पग पर अपमान।।

|| 113 ||

अहंकार-नाकामियाँ, करतीं जब बदरंग!
रिश्ते तब बदलें सभी, गिरगिट जैसे रंग।।

|| 114 ||

सुन्दर चितवन, मन, बदन, सौम्य, सरल मुस्कान!
शुभे! सादगी दृष्टि में, दिव्य रूप! भगवान।।

|| 115 ||

बाल सूर्य का नित करें, दर्शन प्रातः काल!
उसे सहज डॅसता नहीं, महाकाल का ब्याल।।

|| 116 ||

बैठे मनुज विमान में, आँखें अपनी मींज!
लूट रहे आकाश में, उधर बेचकर चीज।।

|| 117 ||

शीत लहर, अति ठण्ड है, ठिठुर रहे हैं अंग!
काम कठिन, चलना कठिन, हुआ रंग में भंग।।

|| 118 ||

पुत्र! तुम्हारे सदन में, बरसें खुशी असीम!
सदा साथ चलते रहे, हनुमत-राम-रहीम।।

|| 119 ||

स्वस्थ रहो, सानंद हो! जीवन हो शुभलाल!
बल-विद्या-वैभव बढ़े, जन्म दिवस खुश हाल।।

|| 120 ||

स्वस्थ रहो! मंगल मिले, हो वैभव उत्कर्ष!
परिणय-जीवन में सदा, रहे हर्ष ही हर्ष।।

|| 121 ||

तबियत हुई खराब यदि, बढ़े परस्पर प्रेम!
पति-पत्नी-परिवार सब, रहें पूछते क्षेम।।

|| 122 ||

उठो! देशभक्तों उठो! लो हाथों हथियार!
देश द्रोहियों पर करें, घातक वार प्रहार।।

|| 123 ||

देश द्रोह समझे नहीं, सत्य-अहिंसा-प्यार!
उसे भयंकर मृत्यु का, केवल दो उपहार।।

|| 124 ||

काल चक्र भी देखकर, लगे भींचने दांत!
देश द्रोहियों की सखे! निर्मम खींचो आंत।।

|| 125 ||

देश द्रोहियों को सखे! जो भी दे आशीष!
लेश चूक करना नहीं, धाड़ से काटो शीष।।

|| 126 ||

सबसे पहले देश है, फिर मानव-संसार!
देशप्रेम औ' विश्व का, रक्षक घर-परिवार।।

|| 127 ||

करते अपने देश का, पग-पग पर अपमान!
उन्हें बन्धुओं! गाढ़ दो! सागर-तट-शमसान।।

|| 128 ||

भारतमाता की सखे! करिये जय-जयकार!
इससे बढ़कर है नहीं, पूजा औ' मनुहार।।

|| 129 ||

माँ ममता-सुख-स्वर्ग है, माँ है निश्छल प्यार!
माँ रूंठी जग रूंठता, माँ शाश्वत उपहार।।

|| 130 ||

ममता-प्यार-दुलार की, माँ है सच्चा रूप!
माँ की गोदी में ढले, दुनिया भर के भूप।।

|| 131 ||

माता के अपमान में, छुपा हुआ अभिशाप!
पलभर में सब डूबता, यश-वैभव चुपचाप।।

|| 132 ||

जीते जी क्या दे सका, तू माता को प्यार!
फिर जाकर शमसान में, रखता दिया पजार।।

|| 133 ||

जन्म दिवस हो आपको, बहुत-बहुत शुभ मित्र!
समय-शिला पर प्रेम के, रचो निरन्तर चित्र।।

|| 134 ||

गुरूओं ने संसार का, युग-युग बदला चित्र!
नमन! नमन! हे पूज्यवर! निश्छल परम पवित्र।।

|| 135 ||

हे दीपक! तुम धन्य हो! रहते बहुत सचेत!
त्यागवीर की भावना, रहती नहीं अचेत।।

|| 136 ||

प्रकृति औ' अध्यात्म की, शिक्षा मिले अनन्त।
कितने सुन्दर चित्र हैं, शाश्वत औ' जीवन्त।।

|| 137 ||

चन्दन-रोली का तिलक, बहिन लगाया भाल!
आयु-बुद्धि-वैभव बढ़े, अनुज रहे खुशहाल।।

|| 138 ||

बाँध कलाई में दिया, रक्षा-सूत्र संभाल!
पद-रज लेकर बहिन की, हृदय किया निहाल।।

|| 139 ||

दिया बहिन ने अनुज को, हृदय से आशीष।।
हे प्रभु! मेरे अनुज का, झुके न जग में शीष!

|| 140 ||

पावन राखी-पर्व यह, खुशियाँ मिलें अपार!
भैया! पाओ तुम सदा, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 141 ||

आती है संध्या कहीं, होता कहीं प्रभात!
ईश्वर की इस सृष्टि में, झिलमिल हैं दिन-रात।।

|| 142 ||

यहाँ-वहाँ चारों तरफ, है उल्लू का राज!
उल्लू के संकेत पर, होते सारे काज।।

|| 143 ||

आसमान में उड़ रहे, कौऐ-चीलें-गिद्ध!
आयेगा तूफान अब, बता रहे हैं सिद्ध।।

|| 144 ||

सीधी-सीधी बात को, लिखें नहीं अखबार!
जनता को ये दे रहे, हा! कैसा उपहार।।

|| 145 ||

अखबारों की भूमिका, करें मनों पर घात!
लगे सनसनीखेज अति, सरल-सहज हो बात।।

|| 146 ||

लील गये अखबार हैं, जीवन के आदर्श!
नयी कहानी-सी लिखें, नहीं कथा-निष्कर्ष।।

|| 147 ||

खड़ी बिलखती रो रही, पत्रकारिता आज!
पूँजीपतियों ने लिया, उसके सिर से ताज।।

|| 148 ||

हाय! लेखनी क्या करे, कैसे लिखे स्वतंत्र!
पूँजीपतियों ने किया, पत्रकार परतंत्र।।

|| 149 ||

चाटुकारिता बन गयी, पत्रकार की शान!
दो पैसे में बिक रही, पलभर की मुस्कान।।

|| 150 ||

पलक झपकते बिक गया, अखबारों का तंत्र!
ऊपर से नीचे तलक, वशीकरण का मंत्र।।

|| 151 ||

जाति, धर्म औ' क्षेत्र के, बजें सुरीले राग!
फुंकारे-सी मारते, पत्रकार ज्यों नाग।।

|| 152 ||

धनबल-भुजबल-राजबल, सजा रहे अखबार।
अपराधी- भूमाफिया, पत्रकार-सरदार।।

|| 153 ||

जगह-जगह पर देख लो, भू के खड़े विवाद!
पत्रकार-नेता-पुलिस, मिलें करें अनुवाद।।

|| 154 ||

किसमें साहस रोक ले, पकड़ कहीं भी हाथ?
पत्रकार-नेता-पुलिस, यदि कोई है साथ।।

|| 155 ||

पत्रकार चाहे अगर, तिल का बनता ताड़!
पत्रकार के सामने, भरे न सिंह दहाड़।।

|| 156 ||

पत्रकार हर्षित अगर, बैठा देगा अर्श!
रूंठ गया तो देख लो! पटकी देगा फर्श।।

|| 157 ||

भली-बुरी होती नहीं, खबरें बनतीं रोज!
पत्रकार यदि चाहता, बने खबर भी खोज।।

|| 158 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त की, करो नहीं अब बात!
पत्रकार की कलम में, भरी हुई है घात।।

|| 159 ||

कुछ सोचे, कुछ बोलता, लिखता है कुछ और!
पलभर में बदले सभी, अपने निर्णय ठौर।।

|| 160 ||

केवल निज हित सोचता, जाय भाड़ में रीति!
बहती नदिया स्वार्थ की, उलट-पुलट सब प्रीति।।

|| 161 ||

ऊपर से नीचे तलक, है पूँजी का राज!
पत्रकारिता फब रही, पूँजीपति का ताज।।

|| 162 ||

टी॰वी॰ या अखबार हों, पैसा है सर्वस्व!
राम-राज की कल्पना, रावण का वर्चस्व।।

|| 163 ||

भौतिकता के सिन्धु में, डूब गये अखबार!
पत्रकारिता मर गयी, हुआ नहीं उपचार।।

|| 164 ||

नहीं असंभव देश को, करना कोई काम!
निश्छल मन राजा करे, सभी कर्म निष्काम।।

|| 165 ||

मंगलमय हो आपको, विजयादशमी पर्व!
माँ दुर्गा कृपा करें, वैभव-फल दें सर्व।।

|| 166 ||

जब तक नेता देश के, मरें नहीं दो-चार!
तब तक कम होगा नहीं, देश-विरोध प्रचार।।

|| 167 ||

उठो! कमर कसकर उठो! लो हाथों तलवार!
देश-विरोधी हों जहाँ, उन पर करो प्रहार।।

|| 168 ||

बिना दण्ड सुधरें नहीं, ये पाजी-गद्दार!
करो बगावत देशहित, इनको डालो मार।।

|| 169 ||

देश-विरोधी भावना, पर्यावरण अशुद्ध!
पहले इनको मार दो, फिर हो सीमा-युद्ध।।

|| 170 ||

यहाँ-वहाँ चारों तरफ, फैले हैं गद्दार!
इनको मारो! फूँक दो, यही एक उपचार।।

|| 171 ||

भारत माता रो रही, हृदय अति बेचैन।
प्यार कपूतों को दिया, लूट लिया सुख-चैन।।

|| 172 ||

उठो! देश के वासियों, नव दुर्गा का पर्व!
बलि बेदी पर दो चढ़ा, देश-विरोधी सर्व।।

|| 173 ||

राजनीति ने देश का, फूंक दिया सम्मान!
कंस और रावण मिलें, भेजो अब शमंसान।।

|| 174 ||

काला चश्मा आँख पर, तन पर काला वस्त्र!
मौन निमंत्रण प्रीत का, श्याम सलौना अस्त्र।।

|| 175 ||

गीत और संगीत ने, मिलकर किया कमाल!
सृष्टि-मंच पर आ गया, करने प्रेम धमाल।।

|| 176 ||

ज्यों-ज्यों धन-वैभव बढ़े, त्यों-त्यों बढ़े जुनून।
धनपतियों ने धर लिया, मुट्ठी में कानून।।

|| 177 ||

विधि का जब सोटा चले, वैभव करे न काम।
पलभर में विज्ञान सब, होते हैं नाकाम।।

|| 178 ||

रावण के पुतले जलें, फैल रही दुर्गन्ध।
गधे मिठाई खा रहे, सूंघे सुअर सुगन्ध।।

|| 179 ||

उल्लू की अठखेलियाँ, भरते बाज उड़ान।
कौआ-कुत्ता-लोमड़ी, गीदड़ करें बखान।।

|| 180 ||

रोती मौसी लोमड़ी, करता गधा विलाप।
पूछ रहा अब भेड़िया, कब है राम-मिलाप?

|| 181 ||

जात-पांत औ' स्वार्थ में, डूबा देश-समाज।
अपने-अपने कायदे, अपनी अलग नमाज।।

|| 182 ||

यश-वैभव-विद्या बढ़े, प्रगति मिले अनूप!
मंगलमय नववर्ष हो, तन-मन बने सुरूप।।

|| 183 ||

फौज उल्लुओं की खड़ी, भरते बाज उड़ान।
राजनीति के भेड़िये, बैठे उच्च मचान।।

|| 184 ||

अरे उपाय सुझाइये, करो नहीं हड़ताल!
राष्ट्र विरोधी भावना, बन्द करो तत्काल।।

|| 185 ||

बन्द तिजौरी में किया, लूट देश का माल!
आज देश जब पूछता, करते हो हड़ताल।।

|| 186 ||

वापस लो हड़ताल को, बनिये नहीं कपूत।
वरना जनता देश की, गिन-गिन मारे जूत।।

|| 187 ||

लूट-लूटकर देश को, भरा तिजोरी माल!
अब करते हड़ताल हैं, हम कुचलेंगे गाल।।

|| 188 ||

सोच-समझकर द्रोहियों! रखना अपने पॉव।
रोकें हम हड़ताल को, नगर-नगर हर गाँव।।

|| 189 ||

पाक निरन्तर कर रहा, भारत का अपमान!
अब तो केवल युद्ध ही, लौटाये सम्मान।।

|| 190 ||

वाणी को गन्दा करें, लिख-लिख गन्दे बोल।
खोलें अपनी सभ्यता, संस्कृति की पोल।।

|| 191 ||

नहीं किसी से द्वेष है, नहीं किसी से वैर।
अपना मन तो माँगता, सब दुनिया की खैर।।

|| 192 ||

यश-वैभव-समृद्धि की, बढ़े निरन्तर बेल।
मगंलमय हो जन्मदिन, रहे परस्पर मेल।।

|| 193 ||

सिसक रही सम्भावना, गोल हुये आदर्श।
मानवता करती रूदन, रूंठ गये निष्कर्ष।।

|| 194 ||

क्रोध न रिश्ता देखता, क्रोध न समझे मान।
तीक्ष्णता अति क्रोध की, ले लेती है जान।।

|| 195 ||

वीर शहीदों ने किया, निज जीवन उत्सर्ग।
दे आजादी देश को, बैठ गये जा स्वर्ग।।

|| 196 ||

वीर शहीदों को नमन! धन्य! त्याग-बलिदान!
कभी न भूले देश यह, सदा करे गुणगान।।

|| 197 ||

हे प्रेरक दिव्यात्मा! भारत माँ के लाल!
युग-युग में तुमने किया, ऊँचा माँ का भाल।।

|| 198 ||

जैसी इच्छा राम की, माँ देती सन्देश।
अपना तो कुछ भी नहीं, माने दास विशेष।।

|| 199 ||

खगकुल, कुल-कुल कर रहे, चिड़ियाँ गातीं गीत।
निखिल सृष्टि में बज रहा, प्रातः का संगीत।।

|| 200 ||

मुकुट सजेगा एक दिन, भारत-माँ के शीष।
हिंदी भाषा राष्ट्र की, बने इला-आशीष।।

|| 201 ||

जनता भी चालाक है, इसे समझता कौन?
जगह-जगह पर खिल रहा, कमल सरीखा मौन।।

|| 202 ||

यहाँ-वहाँ चारों तरफ, देश भक्ति का जाल।
देश द्रोहियों! समझ लो, नहीं गलेगी दाल।।

|| 203 ||

सत्य-अहिंसा से नहीं, सुधरे यह परिवेश।
उठो! युवाओं देश के, क्रान्ति माँगता देश।।

|| 204 ||

राजनीति ने देश को, बना दिया व्यापार।
हुआ अराजक आदमी, भूल गया आचार।।

|| 205 ||

अपराधी नेता हुए, मनो मरखने बैल।
सांटा पड़ता पीठ पर, आ जाता है गैल।।

|| 206 ||

विनय-भावना-प्रेम को, कहाँ समझते मूढ़?
हाथी पर अंकुश पड़े, चले उठाकर सूंड।।

|| 207 ||

कदाचार नेता करें, लगे भयानक रोग।
रिश्वत ले नामित करें, संस्थाओं में लोग।।

|| 208 ||

गाय चराता ग्वालिया, नेता बना सपूत।
पलक झपकते कर लिया, धन का ढेर अकूत।।

|| 209 ||

महानगर से गाँव तक, दुराचार का जाल।
अधिकारी-नेता सभी, लेते रिश्वत-थाल।।

|| 210 ||

गलत काम रूकता नहीं, होता सही न काम।
अलग-अलग हर काम के, अलग-अलग हैं दाम।।

|| 211 ||

अधिकारी बेटा बना, नेता बना कपूत।
भव्य भवन में भर गयी, दौलत यार! अकूत।।

|| 212 ||

होली का त्यौहार है, आओ खेलें खेल।
रंग डालते सब चलें, करें परस्पर मेल।।

|| 213 ||

होली का माहौल है, परिवर्तन का दौर।
सारे भारत में हुआ, कमल-गुलाबी और।।

|| 214 ||

एक बार फिर देश में, खिले कमल के फूल।
हिंसा औ' आतंक के, लुप्त हुए हैं शूल।।

|| 215 ||

समय सुनहरा शान्ति का, हुई मनोरम भोर।
शमसानों में कर रहे, उल्लू जाकर शोर।।

|| 216 ||

होली पावन पर्व है, तजो वैर-विद्वेष।
भेदभाव को छोड़कर, कुछ तो करो विशेष।।

|| 217 ||

नारी के सम्मान का, मन से लें संकल्प।
राष्ट्र-विरोधी भावना, बचे न कहीं विकल्प।।

|| 218 ||

लाल-हरा-पीला-सभी, मुखपर मलें गुलाल।
रंगों की बौछार से, धूमिल करें मलाल।।

|| 219 ||

देश-भक्ति ऐसी बढ़े, रखें देश की लाज।
भारत माता विश्व में, बने विश्व सरताज।।

|| 220 ||

मंगलमय हो आपको, रंगों की मनुहार।
घर-घर में खुशियाँ भरें, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 221 ||

हाथी उल्टा गिर गया, हुई सायकिल वर्स्ट।
हाथ-पैर टूटे सभी, कमल आ गया फर्स्ट।।

|| 222 ||

झुक-झुक करती जा रही, जतिवाद की रेल।
परम्परा-आदर्श के, ब्रेक हुए सब फेल।।

|| 223 ||

सदियों का सौहार्द्र तो, हुआ कभी का खत्म।
जातिवाद-नासूर का, कौन भरेगा जख्म??

|| 224 ||

तंत्र-मंत्र-पंचायतें मेला-सभा-चुनाव।
बचा न कोई संगठन, जहॉ न जाति-तनाव।।

|| 225 ||

ऊँची-शिक्षा-योग्यता, गुणवत्ता-पद-पात्र।
जातिवाद के समाने, बन्दा हुआ अपात्र।।

|| 226 ||

जातिवाद का भेड़िया, जब घुस जाता गाँव।
अपना कुनबा छोड़कर, निगले सबकी छाँव।।

|| 227 ||

अगड़ी-पिछड़ी जातियाँ, भूखे-नंगे लोग।
जातिवाद के नाम पर, खायें छप्पन भोग।।

|| 228 ||

अपनी-अपनी जातियाँ, सबकी अपनी सोच।
जातिवाद ने कर दिया, हाय! आदमी पोच।।

|| 229 ||

जातिवाद के अश्व पर, नेता हुआ सवार।
बन्द करो सब रास्ते, चाहो अगर सुधार।।

|| 230 ||

पूजा-अर्चन-वन्दना, जप-सत्संग-नमाज।
जातिवाद का कैंसर, ग्रसित सकल समाज।।

|| 231 ||

उठो! कमर कसकर उठो! करो जलाकर खाक।
जातिवाद के भूत की, दीखे कहीं न राख।।

|| 232 ||

युवा-शक्ति जब देश की, लेगी दृढ़ संकल्प।
नेताओं के सामने, बचे न जाति-विकल्प।।

|| 233 ||

कुत्ते भौं-भौं कर रहे, समय चल रहा चाल।
पथिक चले गन्तव्य पर, लाख बजाओ गाल।।

|| 234 ||

प्रातकाल की ताजगी, सुबह सुनहरी शीत।
ज्यों विधवा की सादगी, ज्यों यौवन की प्रीत।।

|| 235 ||

मनमोहक अद्भुत छटा, प्रातकाल की भोर।
नववधु-सी चलती पवन, खगकुल करते शोर।।

|| 236 ||

इक्का-दुक्का जा रहे, पथिक लक्ष्य की ओर।
दूर कहीं पर आरती, बना रही मधु भोर।।

|| 237 ||

धरती से आकाश तक, झीना तम-प्रकाश।
ऋतु बसंत मुस्का रही, देख-देख मधुमास।।

|| 238 ||

क्यारी-क्यारी खिल रहे, गेंदा विविध गुलाब।
देख बाल अठखेलियाँ, भगता दूर तनाव।।

|| 239 ||

सुबह-सुबह हम भी चले, धारवाड़ की ओर।
हिंदी के सन्देश की, कर में पकड़े डोर।।

|| 240 ||

धारवाड़ में दो दिवस, हो हिंदी सत्संग।
शिक्षक सीताराम जी, आयोजक के रंग।।

|| 241 ||

पहुँचें देश-विदेश से, भाषा के विद्वान।
हिंदी-माँ की आरती, गायेंगे श्रीमान।।

|| 242 ||

हिंदी भाषा राष्ट्र की, बने एक दिन मीत!
भाषाएँ सब प्रान्त की, करें परस्पर प्रीत।।

|| 243 ||

गोवा भारतवर्ष में, अद्‌भुत रत्न समान।
मानो अम्बर बीच में, उड़ता हुआ विमान।।

|| 244 ||

पर्वत-घाटी-सिन्धु-वन, दृश्य मनोहर रूप।
बैठा हो दरबार में, मानो कोई भूप।।

|| 245 ||

अति मनमोहक दृश्य हैं, करते भाव-विभोर।
मन करता अठखेलियाँ, जैसे चन्द्र चकोर।।

|| 246 ||

धरती उपवन-सी लगे, हरा-भरा चहुँ ओर।
नभ में मेघा नाचते, थिरक-थिरक सब ओर।।

|| 247 ||

सिन्धु करे अठखेलियाँ, छूने को तट-रेख।
जैसे करता मनचला, कमसिन युवती देख।।

|| 248 ||

बड़ा मनोरम दृश्य है, सिन्धु-धरा के तीर।
बार-बार पद चूमता, ज्यों माता के वीर।।

|| 249 ||

कभी उफनता-गरजता, देख देश के हाल।
सिन्धु ताड़ना दे रहा, भटक रहे जो लाल।।

|| 250 ||

डाट-डपट औ' झिड़कियाँ, ममता-प्यार-दुलार।
मुखिया ज्यों परिवार का, सिन्धु करे मनुहार।।

|| 251 ||

चंचल चित ज्यों देखकर, चले चंचला चाल।
त्यों सागर लहरें बुनें, मादकता का जाल।।

|| 252 ||

युवक-युवतियाँ देखकर, भरता सिन्धु तरंग।
मानो तन-मन सींचता, लहरों छुपा अनंग।।

|| 253 ||

चन्द्र बदन-सी गोरियाँ, सागर-जल में मस्त।
जल-क्रीड़ा रवि देखकर, हुए शर्म से अस्त।।

|| 254 ||

करता आत्मविभोर है, गोवा का परिदृश्य।
देख अनूठे दृश्य मन, करे मयूरी नृत्य।।

|| 255 ||

सुन्दर पर्वत-घाटियाँ, भरता सिन्धु हिलोर।
कौतुक देख समुद्र के, प्रेमी भाव-विभोर।।

|| 256 ||

प्रकृति वधू नित बाँटती, नये-नये उपहार।
अम्बर से मेघा करें, अमृत जल बौछार।।

|| 257 ||

रंग-बिरंगे उड़ रहे, खगकुल नभ में शोर।
मनमोहक लगते बड़े, संध्या हो या भोर।।

|| 258 ||

बड़े मनोरम दृश्य हैं, गोवा है छवि-धाम।
धरती से अम्बर तलक, मनहर सुबहो-शाम।।

|| 259 ||

भवन-शिल्प-विज्ञान का, गोवा है आवास।
सुन्दरता औ' सादगी, सड़कें स्वच्छ प्रकाश।।

|| 260 ||

दम्भ-द्वेष-पाखण्ड से, गोवा है अतिदूर।
सर्वधर्म-सद्भाव से, भरे जख्म-नासूर।।

|| 261 ||

मन लगता, रमता यहाँ, शान्त धरा आकाश।
निर्मल पर्यावरण का, गोवा में आवास।।

|| 262 ||

एक बार तो जाइये, लालच छोड़ विराग।
मानवता का जल रहा, गोवा मध्य चिराग।।

|| 263 ||

जहाँ भाव-प्रयत्न में, रहता सम अनुपात।
किस्मत भी करती वहाँ, फूलों की बरसात।।

|| 264 ||

मन में दृढ़ संकल्प ले, चले लक्ष्य की ओर।
उसे न कोई रोकता, दुनिया करले जोर।।

|| 265 ||

रिश्वत लेने आदमी, जितने चलता दाँव।
मंजिल उतनी छूटती, बढ़ता जितना पाँव।।

|| 266 ||

नैनों में सपने बसें, नजरें रहीं तलाश।
नैन लजीले खिल रहे, सर में मनो पलाश।।

|| 267 ||

मुख-मण्डल पर चाँदनी, यौवन करे विहार।
नैन-भौंह-मुख-नासिका, देते भाल निखार।।

|| 268 ||

तोते जैसी नासिका, कमल-पंखुरी-ओठ।
भाल-शिला बैठे हुए, नैन करें उरचोट।।

|| 269 ||

नैनों ने चिट्ठी लिखी, दूर प्यार के नाम।
खोज रहा घर डाकिया, हुई जिन्दगी शाम।।

|| 270 ||

अस्पताल अद्भुत बने, घोर पाप की मोट।
कहीं न सेवा-भावना, सारे कफन-खसोट।।

|| 271 ||

उठो युवाओं! देश के, छोड़ों सब तकरार।
भेदभाव को भूलकर, हाथ गहो तलवार।।

|| 272 ||

देश द्रोहियों की करो, बद जुवान को बन्द।
युवको! यदि माने नहीं, करो जीभ स्वच्छन्द।।

|| 273 ||

जाति-धर्म औ' क्षेत्र के, भव्य भवन चहुँओर।
कर न सकें अठखेलियाँ, जहाँ प्रभाती भोर।।

|| 274 ||

जाति-धर्म औ' क्षेत्र का, फैल रहा है तंत्र।
किसमें साहस फूँक दे, निशाचरी षड्यन्त्र।।

|| 275 ||

यहाँ न कोई पात्र है? है न कोई अपात्र।
जातिवाद का नृत्य है, नाचो बनो सुपात्र।।

|| 276 ||

खादी पैसा बाँटती, क्रय करती ईमान।
नेता-जनता सब कहें, धन्य! धन्य! भगवान।।

|| 277 ||

धन्य! धन्य! हे बन्धुवर! कीर्ति बढ़े चहुँ ओर।
जीवन के हर मोड़ पर, मिलें प्रभाती भोर।।

|| 278 ||

याद रहेगा आपका, सरल-मधुर व्यवहार।
अपनेपन का जो मिला, अति स्नेहिल उपहार।।

|| 279 ||

धन्य! धन्य! हे बन्धुवर! रहो सदा सानन्द!
कृपा नित करते रहें, तुम पर परमानन्द।।

|| 280 ||

जीवन-पथ पर नित्य ही, रहें बरसते फूल।
कभी न चरणों में चुभें, असफलता के शूल।।

|| 281 ||

स्वस्थ रहें! वैभव बढ़े, जीवन बने मिसाल!
मगंलमय हो जन्म दिन, सदा रहो खुशहाल।।

|| 282 ||

गाली देने से कभी, होगा नहीं सुधार!
अपराधी को जिन्दगी, देना नहीं उधार।।

|| 283 ||

हम वंशज श्री राम के, और कृष्ण के भक्त!
रगों हमारी बह रहा, वीरवरों का रक्त।।

|| 284 ||

स्वाभिमान-सम्मान का, सदा रहा है ख्याल!
ताकत पर विश्वास है, नहीं बजाते गाल।।

|| 285 ||

सबकी माता-बहिन हैं, सबका है सम्मान!
गाली हैं कमजोरियाँ, सामाजिक अपमान।।

|| 286 ||

धन्य बन्धुओं! चेतना, धन्य! एकता भाव!
लेकिन, कभी न क्रोध से, भूलो! तुम सद्भाव।।

|| 287 ||

स्वाभिमान का एक पल, रखना बन्धु! संभाल!
रहा नहीं सम्मान तो, नृपति है कंगाल।।

|| 288 ||

करें नहीं जो समय की, मन में चिन्ता लेश!
समय साथ रहता नहीं, उनका वैभव शेष।।

|| 289 ||

समय दौड़ता जा रहा, बदल-बदल कर चाल!
लक्ष्य साधना हो अगर, बनो समय की ढाल।।

|| 290 ||

अगले पल की योजना, कौन जानता मीत?
मैं तो केवल देखता, भोगा हुआ अतीत।।

|| 291 ||

जीवन-पथ में चल रहे, मीत अनेकों साथ!
रोज छोड़कर जा रहे, बिना बताये हाथ।।

|| 292 ||

जब तक तन में शक्ति है, और जेब में माल!
तब तक रिश्ते पूछते, खुशी-खुशी हर हाल।।

|| 293 ||

लोक-सिन्धु में नित्य ही, आता कहीं उफान!
जीवन-नौका डूबती, भरे न हंस उड़ान।।

|| 294 ||

लोग अनेकों जा रहे, नित्य छोड़ संसार!
कभी-कभी मन को लगे, टूट गये सब तार।।

|| 295 ||

नहीं काल को है सरल, कवि के लेना प्राण!
कवि की चलती लेखनी, काल बने निष्प्राण।।

००० बिटियाँ ०००

|| 296 ||

बिटियाँ हर घर की खुशी, बिटियाँ हैं संसार!
बिटियाँ इस भूलोक में, मानवता-उपहार।।

|| 297 ||

बिटियों के बिन विश्व का, कोई नहीं स्वरूप।
बिटियों ने ही विश्व को, दिया सुनहरा रूप।।

|| 298 ||

बिटियों ने संसार का, किया सदा निर्माण।
बिटियों के कारण मिला, पुरूषों को निर्वाण।।

|| 299 ||

बिटियों से ही खिल रहा, यह सारा संसार।
बिटियों ने ही विश्व को, दिए मनुज उपहार।।

|| 300 ||

बिटियों के बिन विश्व की, धूमिल सब पहचान।
बिटियों ने ही विश्व को, सदा दिए भगवान।।

|| 301 ||

बिटियों ने बाँटा सदा, ममता-प्यार-दुलार।
आधि-व्याधि हरकर सभी, बिटियाँ दें मनुहार।।

|| 302 ||

माता-पत्नी-बहिन हैं, बिटियों के ही रूप।
अपने ऊपर ओढ़ती, जीवन की हर धूप।।

|| 303 ||

लेकिन आज समाज में, लगे सैकड़ों रोग।
बिटियों को समझे मनुज, मानो कोई भोग।।

|| 304 ||

बिटियों का अब हो रहा, पग-पग पर अपमान।
माता-पत्नी-बहिन का, कहाँ रहा सम्मान??

|| 305 ||

गॉव-गली-खलिहान हो, महानगर हर धाम।
बिटियों का अपमान ही, आज हो रहा आम।।

|| 306 ||

यह निकृष्ट समाज है, अथवा है यह नर्क?
बिटियों की रक्षा नहीं, होगा बेड़ा गर्क।।

|| 307 ||

कितनी हम प्रगति करें, या कहलायें सभ्य?
बिटियों की रक्षा बिना, मानव-सभ्य असभ्य।।

|| 308 ||

यदि असुरक्षित बेटियाँ, जीवन का क्या अर्थ?
सारी प्रगति चेतना, मानव-जीवन व्यर्थ।।

|| 309 ||

बिटियों का सम्मान हो, ऐसे करो उपाय।
दण्ड कठोर विधान हो, कोई नहीं सताय।।

|| 310 ||

बिटियों का सम्मान हो, आय धरा पर स्वर्ग।
जीवन का उद्देश्य भी, मिले मोक्ष-अपवर्ग।।

|| 311 ||

आओ! मिलकर रोक दें, बिटियों का अपमान।
बिटियों के हर रूप का, करें सहज़ सम्मान।।

|| 312 ||

बेटी राजा-रंक की, अथवा किसी फकीर।
दुर्घटना के बाद में, धूमिल पड़े लकीर।।

|| 313 ||

घटना की संवेदना, कुछ दिन रखे सतर्क।
घर-बाहर-शमसान में, चलते रहें कुतर्क।।

|| 314 ||

तार-तार रिश्ते हुए, मानवता बेहाल।
कामुकता ने कर दिया, बिटियों को बदहाल।।

|| 315 ||

वरना युग में बेटियाँ, लें दुर्गा का रूप।
महाशक्ति की अग्नि में, बचे न मनुज स्वरूप।।

|| 316 ||

यह कवि की चेतावनी, मन में लो संकल्प।
वरना, मृत्यु संवार लो, कोई नहीं विकल्प।।

|| 317 ||

बिटियों का संसार यह, कहाँ समझता दर्द?
रिश्ते-नाते सब हुए, बर्फ-सरीखे सर्द।।

|| 318 ||

धरती-अम्बर देखते, रह जाते सब मौन।
बिटियों की संसार में, व्यथा समझता कौन??

|| 319 ||

चाची-ताई-बहिन हो, दादी-नानी-सास।
बुआ-भतीजी-सालियाँ, भाभी-मौसी खास?

|| 320 ||

माता-पत्नी-सहचरी, नारी रूप अनूप।
बेटी बिन संसार के, रिश्ते सभी कुरूप।।

|| 321 ||

बिटियों का हर रूप है, आकर्षण का सिन्धु।
सकल सृष्टि यह घूमती, इस कीली के बिन्दु।।

|| 322 ||

रिश्तों का उपवन सजा, भाँति-भाँति फल-फूल।
हर लतिका, हर वृक्ष की, बिटियाँ ही हैं मूल।।

|| 323 ||

सूख गया यदि वृक्ष है, देते उसको काट।
लेकिन बिटिया-विटप को, कर टुकड़े दें पाट।।

|| 324 ||

जिनको बिटिया-बहिन का, मिला नहीं उपहार।
मनुज नहीं वे जानते, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 325 ||

बिटियों पर हो त्राषदी, देख रहे चुप कौन?
केवल राक्षस देखकर, रह जाता है मौन।।

|| 326 ||

जिस घर बहिन न बेटियाँ, बाग बिना फल-फूल।
चुभे न कांटे पैर में, वे क्या जाने शूल?।

|| 327 ||

बेटी की पीड़ा अगर, नहीं समझता बाप।
सात जन्म तक भोगना, पड़े दुष्ट को शाप।।

|| 328 ||

देती बहिन न बेटियाँ, अभिशापों का हार।
अगर दे दिया दर्द ने, निष्फल जाय न बार।।

|| 329 ||

बहिन-बेटियों को सता, नहीं मिलेगा चैन।
जीवन-पथ में देख ले, हो बिन बदली रैन।।

|| 330 ||

मार-पीट, अपमान की, है घर-घर में बात।
कत्ल, अपहरण, आग की, मिली उसे सौगात।।

|| 331 ||

पढ़-लिखकर बिटिया बनी, ऊँची हौदेदार।
फिर भी मिले दहेज में, खटमल रिश्तेदार।।

|| 332 ||

गाँव-गली-कस्बा-नगर, महानगर-मैदान।
बिटिया का अपमान कर, नाच रहा शैतान।।

|| 333 ||

जिधर देखिए उधर ही, शोषण पलता खूब।
बिटिया की इज्जत हुई, ज्यों कल्लर की दूब।।

|| 334 ||

यहाँ सैकड़ों जल मरीं, बिटिया अग्नि-दहेज।
भ्रष्ट व्यवस्था अंक में, लेती साक्ष्य सहेज।।

|| 335 ||

बहिन-बेटियों की अगर, पड़े सुनायी चीख।
भेदभाव-भय छोड़कर, पहुँच मान ले सीख।।

|| 336 ||

सीता-गीता-गायत्री, आदि शक्ति के रूप।
रूप भले ही कुछ रहे, सारे रूप अनूप।।

|| 337 ||

अरे यार! तू मान ले, यह तेरा अस्तित्व।
तेरे जितने रूप हैं, बिटियों के कृतित्व।।

|| 338 ||

बिटिया ने झपकी पलक, रहे न तेरा मोल।
पलभर में प्यारे सभी, बदल जाय भूगोल।।

|| 339 ||

काली-दुर्गा रूप को, भूल गया विकराल।
महिषासुर की मर्दिनी, मात बनी तत्काल।।

|| 340 ||

सीता-गीता-द्रौपदी, वह झांसी की नार।
चेनम्मा के रूप में, कभी न मानी हार।।

|| 341 ||

भिन्न-भिन्न धर रूप में, लड़ी बराबर युद्ध।
हार न मानी बेटियाँ, लड़ती रहीं विशुद्ध।।

|| 342 ||

जौहर पर जौहर किए, बनी पुरूष की ढाल।
जल-थल-नभ-मैदान में, अनुपम किए कमाल।।

|| 343 ||

बिटियों के हर कृत्य में, मानवता निष्काम।
विजय-हार हर रूप में, है छवियों की धाम।।

|| 344 ||

घर-परिवार-समाज हो, ग्राम-देश-संसार।
बिन बिटियों के सृष्टि की, व्यर्थ कल्पना यार!!

|| 345 ||

मानव के अस्तित्व की, जब बिटियाँ हैं मूल।
फिर क्यों मानव भौंकता, पावन उर में शूल।।

|| 346 ||

खाली कोई दिन नहीं, और न कोई रात।
मनुज-निशाचर कर रहा, बिटियों के संग घात।।

|| 347 ||

छेड़छाड़ तो आम हैं, दुर्घटना हैं रोज।
नायक-खलनायक-मनुज, बिटियों का हो भोज।।

|| 348 ||

मौन व्यवस्था देखती, अथवा क्यों लाचार?
कहाँ मनुजता मर गयी? क्यों कर हुआ विकार।।

|| 349 ||

बहुत पढ़ गया आदमी, बिटियाँ हुई महान।
लेकिन, घटिया सोच के, जन का नहीं निदान।।

|| 350 ||

ऊपर से तो आदमी, करता मीठी बात।
किन्तु चूक करता नहीं, करे समय पर घात।।

|| 351 ||

आखिर कब तक करेगा? मनुज-भेड़िया राज?
और मुखर हो किस दिवस? बिटियों की आवाज??

|| 352 ||

किस दिन निज अस्तित्व का, बिटियों को हो भान?
किस दिन बिटियाँ देश की, तोड़ेंगी निज आन।।

|| 353 ||

किस दिन होगा जागरण, किस दिन हो अवतार?
किस दिन बिटियों का करें, दुर्गा बेड़ा पार??

|| 354 ||

किस दिन महिला जगत का, पुरूष करे उद्धार?
किस दिन भय का आवरण, जग से जाय सिधार??

|| 355 ||

सृजन औ' वक्तव्य में, बिटिया बनी महान।
समय पटलने पर हुई, बिटिया वही मसान।।

|| 356 ||

तेरी-मेरी और की, क्या पड़ता है फर्क।
बेटी तो बेटी रहे, 'रवि' को कहते अर्क।।

|| 357 ||

आती बिटिया रूप में, धरे अनेकों रूप।
इसी रूप ने विश्व को, दिए श्रेष्ठतम भूप।।

|| 358 ||

राम-श्याम-गौतम हुए, महावीर श्रीमान।
बिटियाँ की ही कोख से, जन्में सब भगवान।।

|| 359 ||

युग-युग में जिसने रचा, मानवता-इतिहास।
उस सृजक की लेखनी, थी बिटियों के पास।।

|| 360 ||

साधु-सन्त-परमात्मा, राजा-रंक-फकीर।
बिटिया ने सबकी रची, निज हाथों तकदीर।।

|| 361 ||

जल-थल-नभ में, खींच दी, जिसने कहीं लकीर।
झलक रही हर रेख में, बिटिया की तस्वीर।।

|| 362 ||

राम-कृष्ण परमात्मा, साधे-सधें न साध्य।
सीता-राधा जोड़कर, सध जाते आराध्य।।

|| 363 ||

शिवजी की पूजा करो, बिना भवानी आप।
निशा-दिवस रटते रहो, पूरा होय न जाप।।

|| 364 ||

आदि शक्ति बिन विश्व में, पूर्ण नहीं भगवान।
लेकिन दुर्गा, इन्दिरा, चलें धानुष बिन बान।।

|| 365 ||

यों तो करते सब पुरूष, बिटियों का सम्मान।
पर, घटनायें बोलतीं, हाय! बहुत अपमान।।

|| 366 ||

प्रश्न भावना से जुड़ा, बिटियों का सम्मान।
राष्ट्रद्रोह से कम नहीं, बिटियों का अपमान।।

|| 367 ||

बहुत हो चुका देख लो, कितना क्रूर समाज।
बिना दण्ड सुधरे नहीं, यह शैतान मिजाज।।

|| 368 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त के, सारे ध्वस्त उसूल।
शैतानों के सामने, मठ में छुपे रसूल।।

|| 369 ||

बाबा राम-रहीम से, जब हों सन्त फकीर।
बिटियों का सम्मान है, पानी खिंची लकीर।।

|| 370 ||

राजनीति की गन्दगी, कुररी करे विलाप।
बिटियों के अपमान का, कौन करेगा माप??

|| 371 ||

जब तक बने न देश में, मृत्युपरक कानून।
तब तक करते रहेंगे, शोषण अफलातून।।

००० भक्ति ०००

|| 372 ||

रहती कृपा राम की, हर पल बचते प्राण।
वरना, यह जीवन बने, पलभर में निष्प्राण।।

|| 373 ||

कालशीष पर नाचता, लेते सहज बचाय।
हे प्रभु! तुम बिन कौन है? पल-पल करे सहाय।।

|| 374 ||

तुम ही मेरे सखा हो, स्वामी-रक्षक-मित्र।
मेरे जैसे मूर्ख को, देते कृपा-इत्र।।

|| 375 ||

रोम-रोम कृतज्ञ है! शब्द करें आभार।
भावुक मन पहचानता, मेरे प्राणाधार!!

|| 376 ||

तेरी कृपा का सखे! कैसे करूँ बखान।
दिव्य लेखनी में नहीं, ऐसी शक्ति महान।।

|| 377 ||

तन-मन नतमस्तक रहे, चरण-कमल में ध्यान।
क्षमा भूल करते रहो, मेरे प्राण-सुजान।।

|| 378 ||

अगले पल का हे सखे! बोध हमें कुछ नाय।
तुम पथ दिखलाते जिधर, कदम उधर बढ़ जाय।।

|| 379 ||

मैं पापी, सच मूर्ख हूँ, फिर भी करते प्यार।
वरना, इस संसार में, करता कौन दुलार??

|| 380 ||

कालशीष पर नाचता, मृत्यु चल रही साथ।
बाल न बाँका हो सके, जकड़ रखा जब हाथ।।

|| 381 ||

दुनिया में प्रख्यात है, भारत की आवाज!
बच्चा-बच्चा देश का, करता इस पर नाज।।

|| 382 ||

हिंदी है इस देश की, मर्म-आत्मा-प्यार!
हिंदी का नित दीजिए, जन-जन को उपहार।।

|| 383 ||

हिंदी मेरी आत्मा, हिंदी मेरा धर्म!
हिंदी को अर्पित करूँ, अपना जीवन-धर्म।।

॥ 384 ॥

धन्य! लिया भोपाल ने, हिंदी का संज्ञान!
हिंदी अब बनकर रहे, दुनिया का विज्ञान॥

॥ 385 ॥

उड़-उड़कर पंछी गये, अपने-अपने नीड़!
स्वर-गूँजा आकाश में, देख रही है भीड़॥

॥ 386 ॥

गज़ल-हायकू आज तक, लिखे नहीं नवगीत!
हिंदी-हिन्दुस्तान से, करूँ असीमित प्रीत॥

॥ 387 ॥

अर्द्ध निमीलित नैन हैं, ओठों पर मुस्कान!
वाह! वाह! तेरी कृति, बालरूप भगवान॥

॥ 388 ॥

यह कह देना अति सरल, जीता है बाजार!
लेकिन, आया जीतता, आँसू-प्यार-दुलार॥

॥ 389 ॥

मूल्य कभी हारे नहीं, हारा है बाजार!
मानवता की खोज में, हर पल बढ़ता प्यार॥

॥ 390 ॥

संत न छोड़े संतई, समय न बदले चाल!
सत्य कभी मरता नहीं, झुके न उसका भाल॥

॥ 391 ॥

जब-जब बदले आदमी, गिरगिट जैसा रंग।
मानवता के दायरे, तब-तब होते तंग॥

|| 392 ||

जकड़ बुढ़ापे ने लिया, जब यौवन का छोर!
चलो-चलें अब बन्धुवर! 'वृन्दावन की ओर'।।

|| 393 ||

रामचन्द्रजी रच गये, कर्मो का इतिहास!
मानवता के कुँज में, उच्च सोच विश्वास।।

|| 394 ||

अनुभव-चिन्तन-सोच का, मिलता ओर न छोर!
प्रेम-भक्ति औ' कर्म दे, चलो स्वर्ग की ओर।।

|| 395 ||

दिया अनूठा विश्व को, सारस्वत प्रसाद!
रामचन्द्र-सिय रूप लख, मन होता आह्लाद।।

|| 396 ||

गीति काव्य-लय छंद का, सारस्वत विन्यास!
राम काव्य में भरा है, प्रेम-भक्ति मधुमास।।

|| 397 ||

राम-काव्य सृजक सभी, स्वस्थ रहें सानंद!
सिया-राम कृपा रहे, पायें परमानंद।।

|| 398 ||

अपराधी को दी अगर, प्रथम बार ही छूट!
निश्चित अगली बार में, बड़ी करेगा लूट।।

|| 399 ||

कितने सुन्दर भवन हैं, स्वर्ग सरीखे धाम!
बसे प्रकृति की गोद में, दिव्य-भव्य अभिराम।।

|| 400 ||

समय-समय का फेर है, समय-समय की बात!
पलभर की छवियाँ बनें, जीवन की सौगात।।

|| 401 ||

धनतेरस, दीपावली, गौ-धन, भैया दूज!
कुबेर, लक्ष्मी, सरस्वती, राम, श्याम को पूज।।

|| 402 ||

प्रभु से करते प्रार्थना, हो मंगलमय पर्व!
स्वस्थ-सुखी-सानन्द हों, जग के प्राणी सर्व।।

|| 403 ||

शक्ति-भक्ति-वैभव मिले, शान्ति रहे संसार!
हो विनाश आतंक का, बढ़े प्यार-मनुहार।।

|| 404 ||

गूँजे सारे विश्व में, भारत की आवाज!
विश्व गुरू फिर से बने, भारत माँ का ताज।।

|| 405 ||

लिपटा हुआ गुलाब में, मनो कमल का फूल!
अथवा नभ का चन्द्रमा, गया रास्ता भूल।।

|| 406 ||

काले विषधर केश ज्यों, श्याम सलोने नैन!
अरूण कमल-से ओंठ हैं, मृदुल मनोहर बैन।।

|| 407 ||

तोते जैसी नासिका, उच्च मनोरम भाल!
अनुपम लोल कपोल हैं, ओंठ कंज से लाल।।

|| 408 ||

शीत सुनहरी धूप-सी, शोभा बदन अपार!
तोता-खंजन डाल पर, रहे अनार निहार।।

|| 409 ||

उत्तम रचना ईश की, अनुपम भव्य रसाल!
वाह! वाह! परमात्मा, अद्भुत किया कमाल।।

|| 410 ||

माँ वाणी! कृपा करो, दो हमको आशीष!
चरण-कमल में रात-दिन, नवा रहे हम शीष।।

|| 411 ||

करूँ भावना-सुमन की, मात! समर्पित माल!
हृदय में आकर बसो, विनय कर रहा लाल।।

|| 412 ||

भारत के परिवेश में, लगी धर्म की आग!
'चरर-चरर' माँ जल रहे, समता-ममता-राग।।

|| 413 ||

अट्टहास कर घूमते, नर-भक्षक चहुँ चोर!
पलक झपकते लीलते, प्रेम-आस्था भोर।।

|| 414 ||

जाति-धर्म के नाम पर, मार-काट-आतंक!
बाल-युवा-नर-नारियाँ, अमीर बचे न रंक।।

००० नेता ०००

|| 415 ||

पागलपन सिरमौर है, नेता सब मदहोश!
राजनीति की गोटियाँ, सिहांसन का जोश।।

|| 416 ||

कौआ, उल्लू, भेड़िया, गधा, लोमड़ी, बाज!
सिंहासन पर बैठने, आतुर वन्य समाज।।

|| 417 ||

भाँति-भाँति की बोलियाँ, आग लगाते ब्यान!
शब्दों की तलवार भी, छुपा रखी है म्यान।।

|| 418 ||

राजनीति वाचालता, भ्रष्ट किया परिवेश!
माते! कुछ ऐसा करो, सुधरे भारत देश।।

|| 419 ||

राजनीति-मैदान में, लड़ें जुबानी-जंग!
गिरगिट जैसे हो गये, नेताओं के रंग।।

|| 420 ||

हरी घास देखे जिधर, उधर जानवर जाय!
नेताओं की जिन्दगी, रहा नियंत्रण नाय।।

|| 421 ||

इधर-उधर पशु भागते, हरा-भरा मैदान!
रहें परस्पर उलझते, बिन कारण शैतान।।

|| 422 ||

पशुओं से बदतर हुई, नेताओं की जात!
स्वाभिमान-इज्जत नहीं, नेता कुछ बदजात।।

|| 423 ||

युग बदला, बदले सभी, नेताओं के भाव!
हाय! राष्ट्र-अपमान पर, लेश न आता ताव।।

|| 424 ||

जब तक नेता देश के, अपराधी-फनकार!
तब तक छवि सुधरे नहीं, कोई हो सरकार।।

|| 425 ||

जनता का धन लूटते, तनिक न आती लाज!
नेता काले नाग-से, धन पर करते राज।।

|| 426 ||

कल तक तो फुटपाथ पर, ये करते थे सैर!
अब अम्बर में उड़ रहे, नहीं धरा पर पैर।।

|| 427 ||

घोटाले की मछलियाँ, सटक गये श्रीमान!
सीना ताने खड़े हैं, बगुला-सम ईमान।।

|| 428 ||

पूछताछ के नाम पर, ये हो जाते मौन!
बाज-बधिक के सामने, उड़ पाया है कौन।।

|| 429 ||

जात-पांत औ' धर्म का, वाह! भतीजावाद!
नेता बाँटें रेबड़ी, घर अपना आबाद।।

|| 430 ||

एक बार कुर्सी मिली, पकड़-जकड़ते हाथ!
फिर हाथी भी खींचता, नहीं छूटता साथ।।

|| 431 ||

बंगला-कोठी-कार तो, है छोटी-सी बात!
भरी विदेशी बैंक में, दौलत दिन औ' रात।।

|| 432 ||

लूट-लूट घर भर लिया, धन कर लिया अकूत!
घोटालों की जिन्दगी, छोड़े नहीं सबूत।।

|| 433 ||

हुआ गरीब, गरीब है, नेता नित धनवान!
यह कैसा इन्साफ है, देख रहे भगवान!।

|| 434 ||

अजगर जैसा पेट है, आती नहीं डकार!
घोटालों की व्याधियाँ, फिर भी नहीं विकार।।

|| 435 ||

कुछ नेता पागल हुये, मात! बुद्धि दो फेर!
भारत पर कृपा करो, बहुत हो चुकी देर।।

|| 436 ||

जात-पात औ' धर्म के, करो भेद माँ! दूर!
नेता के अरमान सब, कर दो चकनाचूर।।

|| 437 ||

नर-नारी के बीच में, ऊँच-नीच का भेद!
माँ! ऐसा संज्ञान दो, मिटे जगत का खेद।।

|| 438 ||

ऊँची-नीची जातियाँ, कितने पूत-कपूत?
नेता ने पैदा किया, छुआछूत का भूत।।

|| 439 ||

नर-नारी सब एक हैं, ऊँच-नीच का भाव!
कसक रहा यह देखकर, हाय! पुराना घाव।।

|| 440 ||

वैसे राम-रहीम हैं, ईसा-मूसा एक!
बुद्ध शुद्ध है आत्मा, फिर कैसा अविवेक।।

|| 441 ||

नर-नारी-सम्बन्ध का, आदि-अन्त है प्यार!
जन्म प्रीत-विज्ञान का, अद्‌भुत है उपहार।।

|| 442 ||

जन्म हुआ सब एक-से, बनते राम-रहीम!
महावीर-मूसा बने, ईसा-बुद्ध-फहीम।।

|| 443 ||

मूल्यहीनता देश में, संस्कृति का अपमान!
देश-प्रेम की भावना, लुप्त राष्ट्र सम्मान।।

|| 444 ||

लूट रहा है देश को, राजनीति का तंत्र!
नेता-अभिनेता सभी, अद्‌भुत हुए स्वतंत्र।।

|| 445 ||

शासन-प्रशासन सभी, मनमौजी स्वच्छंद!
राजनीति भटकी हुई, सोच हो गयी कुंद।।

|| 446 ||

सबको चिन्ता वोट की, चाहें, पक्ष-विपक्ष!
नेता अर्जुन की तरह, देखे मछली-अक्ष।।

|| 447 ||

सेवक-अधिकारी मनो, सबकी चिन्ता एक!
भ्रष्ट आचरण-साधना, पद-वैभव पर टेक।।

|| 448 ||

रिश्वत लेकर गलत की, सही करें परिमाप!
बिन पैसा सम्भव नहीं, भले बुला लो बाप।।

|| 449 ||

वेतन-भत्ता-चाकरी, पद दो देश-विदेश!
बिना लोभ देता नहीं, नेता शुभ सन्देश।।

|| 450 ||

सेवक-अधिकारी सभी, हर पद है अनमोल!
आँख बन्द कर दीजिए, राजनीति का मोल।।

|| 451 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त की, करो नहीं अब बात!
जेब गर्म करते रहो, नेताजी की तात!।

|| 452 ||

नेता मुखिया राष्ट्र का, हुआ वही पथ-भ्रष्ट!
बात करो परिवार की, सुनकर होगा कष्ट।।

|| 453 ||

आज जहाँ जो भी खड़ा, लिये गुणा औ' भाग!
कसर न कोई छोड़ता, खूब लगाता आग।।

|| 454 ||

पटरी से उतरी हुई, लोकतंत्र की रेल!
ढर्रा बिगड़ा देश का, नेता खेलें खेल।।

|| 455 ||

बचा न एक विभाग भी, भरे भ्रष्ट-मक्कार!
नीचे वाले भेजते, ऊपर को उपहार।।

|| 456 ||

हर विभाग में गर्म है, रिश्वत का बाजार!
बना नौकरी को दिया, नेता ने व्यापार।।

|| 457 ||

यहाँ नौकरी का हुआ, सब्जी जैसा मोल!
जैसा बना विभाग है, वैसा उसमें बोल।।

|| 458 ||

भ्रात-सखा-परिवार से, कितना रिश्ता खास!
नेता हो कितना सगा, करना मत विश्वास।।

|| 459 ||

नेता कभी न मानता, सज्जन मन की बात!
धन-वैभव-अपराध से, करता कभी न घात।।

|| 460 ||

राष्ट्र-द्रोह की कर रहे, नेता खुलकर बात!
केवल कुर्सी के लिए, करें देश से घात।।

|| 461 ||

अब वैसे नेता कहाँ, करें देश आबाद!
दोनों हाथों लूटते, करें देश बर्बाद।।

|| 462 ||

संस्कृति, भाषा, राष्ट्र का, रहा नहीं सम्मान!
नेता पग-पग कर रहे, खुले आम अपमान।।

|| 463 ||

सत्ता मद में हो रहे, नेता इतने चूर!
जनता-देश-समाज के, सपने चकनाचूर।।

|| 464 ||

सौ-सौ मोदी देश का, कर न पायें विकास!
शिक्षा का होता रहे, जब तक घोर विनाश।।

|| 465 ||

आज जहाँ जो हो रहा, दंगा और फिसाद!
धर्म-जाति औ' क्षेत्र ने, पैदा किए विवाद।।

|| 466 ||

दुराचार नेता करें, बोलें कडुबे बोल!
राजनीति में शिष्टता, हुई ढोल का पोल।।

|| 467 ||

नेताओं का आचरण, ज्यों हाथी के दन्त!
बाहर से मन मोहते, घुसे पेट तो अन्त।।

|| 468 ||

नेता पागल देश का, बेईमान-बदजात!
मानवता औ' देश के, घातक जात-कुजात।।

|| 469 ||

नेताओं की फौज में, सुअर, भेड़िया, बाघ!
बिल्ली, बन्दर, लोमड़ी, अजगर, खच्चर, घाघ।।

|| 470 ||

जब-जब नेता बोलता, तब-तब करता चोट!
उसे न चिन्ता देश की, मगर चाहिए वोट।।

|| 471 ||

केवल अपना हित सधे, सुखी रहे सन्तान!
धर्म, जाति-परिवार हित, नेता की पहचान।।

|| 472 ||

अपना औ' परिवार का, हित केवल संज्ञान!
जिसे न चिन्ता देश की, नेता भ्रष्ट महान।।

००० शिक्षा ०००

|| 473 ||

शिक्षा की परिकल्पना, हुई देश में फेल!
अधिकारी, नेता बने, समझी शिक्षा-खेल।।

|| 474 ||

शिक्षा नीति न राष्ट्र की, बीते सत्तर साल!
इसीलिए तो देश का, अब भी बत्तर हाल।।

|| 475 ||

शिक्षा की चिन्ता किसे, भ्रष्ट हुआ परिवेश!
नेता-अधिकारी सभी, लूट रहे मिल देश।।

|| 476 ||

नेता-अधिकारी मिले, रिश्वत का अम्बार!
सेवक व्यापारी हुए, शिक्षा का व्यापार।।

|| 477 ||

शिक्षा-मन्दिर हो गये, भ्रष्ट जनों के धाम!
नगर-वधू-सी बिक रही, शिक्षा सुबहो-शाम।।

|| 478 ||

जुआरी-भ्रष्ट-दलाल-ठग, रिश्वतखोर-कमीन!
शिक्षा के स्वामी बने, बातें करें हंसीन।।

|| 479 ||

राजनीति औ' मीडिया, सारा तंत्र गुलाम!
इनकी चर्चा के बिना, पाता नहीं मुकाम।।

|| 480 ||

किसमें साहस है भला, बोले बोल विरूद्ध!
दाउद के भी बाप ये, शिक्षा-रत्न विशुद्ध।।

|| 481 ||

सी॰एम॰ पी॰एम॰, राष्ट्रपति, आते शिक्षा-द्वार!
जैसी जिसकी भावना, ले जाते उपहार।।

|| 482 ||

किसमें ताकत-सोच है, बदले शिक्षा नीति!
सबको प्यारी जिन्दगी, पद-कुर्सी से प्रीति।।

|| 483 ||

बड़े-बड़े ठग-माफिया, दाउद-इब्राहीम!
शिक्षा के बाजार में, लालू विजय-रहीम।।

|| 484 ||

सत्ता-पक्ष-विपक्ष हो, न्याय-मीडिया-तंत्र!
बैठे शिक्षा-माफिया, चलता उनका मंत्र।।

|| 485 ||

वाह! वाह! इस देश की, शिक्षा नीति महान!
अंधकार में भर रहा, शिक्षा-हंस उड़ान।।

|| 486 ||

अगणित मोदी भी अगर, आयें मिलकर साथ!
शिक्षा-सेवी मिल सभी, बाँधे उनके हाथ।।

|| 487 ||

संसद में प्रस्ताव को, लग जायेगी जंग!
शिक्षा के प्रस्ताव पर, संसद होगी भंग।।

|| 488 ||

जब तक शिक्षा-नीति में, होगा नहीं सुधार!
तब तक शिक्षा देश की, देगी कष्ट अपार।।

|| 489 ||

जनक-राम-श्री कृष्ण से, शिक्षा-क्षेत्र विहीन!
भस्मासुर-रावण सदृश, अगणित कंस कमीन।।

|| 490 ||

रावण-अहिरावण बहुत, कुम्भ कर्ण से लोग!
भरे हुए हैं राक्षस, शिक्षा-क्षेत्र कुभोग।।

|| 491 ||

भस्मासुर की कामना, है शिक्षा का क्षेत्र!
होगा बन्धु! सुधार जब, शिव खोलेंगे नेत्र।।

|| 492 ||

कर में जब श्रीरामजी, लेंगे तीर-कमान!
होगा शिक्षा-सिन्धु का, निश्चित ही कल्यान।।

|| 493 ||

पुलिस व्यवस्था देश की, महाभ्रष्ट-मक्कार!
शोषण करती रात-दिन, है अद्‌भुत गद्‌दार।।

|| 494 ||

बुद्ध रहे! ईसा रहे! राम रहे! रहमान!
नाम-रूप कुछ भी रहे, हैं तो सब इन्सान।।

|| 495 ||

सबका ईश्वर एक है, अलग-अलग बस नाम!
ज्यों दुनिया है एक-सी, बने अलग बस धाम।।

|| 496 ||

क्या ईश्वर की जाति है? उसका कहाँ निवास?
उसका मज़हब-धर्म क्या? पहने कौन लिबास??

|| 497 ||

जाति-धर्म-मजहंब नहीं, सबका मालिक एक!
उसके बन्दों ने यहाँ, खोया सभी विवेक।।

|| 498 ||

सबका मालिक एक है, अलग-नाम औ' रूप!
जैसे इस संसार के, अलग-अलग हैं भूप।।

|| 499 ||

जन्म प्रक्रिया एक है, पालन-पोषण एक!
कलाकार की तूलिका, भरती भाव अनेक।।

|| 500 ||

जाति-धर्म कोई नहीं, झूठे सभी विवाद!
अपने-अपने स्वार्थ में, पैदा करें फिसाद।।

|| 501 ||

हम सब केवल जन्म से हैं, सच्चे इन्सान!
भेदभाव की जिन्दगी, किसने दी भगवान!।

|| 502 ||

बहुत हो चुका देख लो! मन में करो विचार!
जाति-धर्म औ' भेद के, फूंको सभी विकार।।

|| 503 ||

एक आदमी भी अगर, ले सच्चा संकल्प!
जाति-धर्म का राक्षस, पाये नहीं विकल्प।।

|| 504 ||

दिया मीत को प्यार में, चुम्बन का उपहार!
मीत वही कहने लगा, तुम 'हिन्दू' हो यार!!

|| 505 ||

चुम्बन अतिशय प्रीत का, सूचक है संकेत!
निर्मल उर की भावना, रहती सदा सचेत।।

|| 506 ||

चुम्बन करना प्यार में, यदि है बड़ा गुनाह!
फिल्मों में क्यों नायिका, देती इसे पनाह।।

|| 507 ||

सुन्दरता में ईश का, रहता सदा निवास!
निर्मल मन से चूमना, होता नहीं विलास।।

|| 508 ||

पाप-पुण्य कुछ भी कहो, दोनों मन की राह!
दृष्टि अगर दूषित हुई, चुम्बन बने गुनाह।।

|| 509 ||

चुम्बन निर्मल भावना, यही प्यार का मूल!
खिलते वृक्ष गुलाब में, साथ फूल औ' शूल।।

|| 510 ||

यह सारा संसार है, पाप-पुण्य का खेल!
यार! सहज चलते रहो, सबसे करते मेल।।

|| 511 ||

अपने-अपने स्वार्थ में, बना लिए कानून!
जनता का शोषण करें, नंगे अफलातून।।

|| 512 ||

धर्म ध्वजाधारी बने, जनता को अभिशाप!
नियम बनाते आप हैं, नियम तोड़ते आप।।

|| 513 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त के, अलग-अलग हैं धाम!
युवक-युवतियों को करें, धर्म-ध्वजा बदनाम।।

|| 514 ||

पंडित-मुल्ला-पादरी, साधू-सन्त-दरवेश!
बदल न पाये आज तक, दुनिया का परिवेश।।

|| 515 ||

युवक-युवतियों विश्व के, उठो! क्रान्ति के काज!
वरना तो लुटती रहे, धर्म-नाम पर लाज।।

|| 516 ||

आओ! मिलकर फूक दें, दुनियाभर के धर्म!
केवल मानव धर्म है, वरना सभी कुकर्म।।

|| 517 ||

मानव-मानव के लिए, करे समर्पण-प्यार!
भेदभाव को त्यागकर, बांटे जग-उपहार।।

|| 518 ||

भेदभाव की भावना, है घृणित अभिशाप!
जाति-धर्म की कामना, बहुत बड़ा है पाप।।

|| 519 ||

रहते कितने पास हो, फिर भी कितनी दूर!
नदिया के दो पाट ज्यों, मिलने से मजबूर।।

|| 520 ||

तुम जो कहते हो सखे! करता हूँ वह काम!
अपना तो कोई नहीं, स्वामी तुम बिन राम।।

|| 521 ||

तुम जानो, मैं जानता, मेरे मन की बात!
भला-बुरा कोई कहे, फर्क न पड़ता तात!!

|| 522 ||

नन्ही-सी [illegible]
मंगलमय हो जन्मदिन, पाओ प्रगति-मचान।।

|| 523 ||

आयु-बुद्धि-वैभव बढ़े, जीवन हो खुशहाल!
मात-पिता-परिवार का, गौरव चूमे भाल।।

|| 524 ||

भाव, भावना में बहा, रहा न कुछ भी पास।
छोड़ पुरानी लीक को, आगे की रख आस।।

|| 525 ||

साथ-साथ चलते हुये, जुड़े रहे निष्पक्ष।
आज अलग तुमसे हुये, बने आँख का अक्ष।।

|| 526 ||

जग में हिंसक जीव सब, देख भगें पदचाप।
बिन छेड़े काटे नहीं, कभी विषैला साँप।।

|| 527 ||

चलते ओछी चाल हैं, कायर-चोर-लबार।
भद्रपुरुष करते नहीं, हिंसा किसी प्रकार।।

|| 528 ||

कटते मानव शीष हैं, मानवता बेचैन।
देख-देख चुप जा रहे, समझ दिवस को रैन।।

|| 529 ||

भव्य भवन के शीष पर, करता सिंह निवास।
आँगन में कुटिया बनी, रहती अजा उदास।।

|| 530 ||

जब तक है [illegible] [illegible] अपराधी का पास।
रहे भवन में आदमी, पल-पल निकले साँस।।

|| 531 ||

नहर बीच जल बह रहा, भरता नहीं उफान।
तोड़ किनारे जब चला, काटे धार किसान।।

|| 532 ||

छेड़ पुरानी बात को, करो न व्यर्थ विवाद।
वरना अपयश भी मिले, दंगा और फिसाद।।

|| 533 ||

भला-बुरा जो कुछ किया, रख तू खुली किताब।
आगे को चल सोचकर, देना पड़े हिसाब।।

|| 534 ||

मानवता के दायरे, तोड़ मिला क्या मान?
जीवन क्या जीवन रहा, मिली धूल में शान।।

|| 535 ||

जग में झूँठों की चमक, रहती है दिन चार।
लोहा पर टिकती नहीं, कनक-पानि की धार।।

|| 536 ||

सीधे-सादे लोग ज्यों, वीणा-ढोलक-बोल।
छुओ प्यार से बज उठें, क्रोध खोलते पोल।।

|| 537 ||

जब तक नदिया जल भरी, तक तक है सम्मान।
सूख गया जल जीव भी, करें सभी अपमान।।

|| 538 ||

नया वर्ष लो आ गया, ले नव-नव सन्देश।
भेद-भाव को भूलकर, रचें नया परिवेश।।

|| 539 ||

काट अंगूठा दाहिना, दिया द्रोण को वीर।
पल में बदली शिष्य की, गुरुवर ने तकदीर।।

|| 540 ||

मूल-फूल बिन पात के, तरु पर पलती बेल।
तैसे मानव-विटप पर, शंका करती खेल।।

|| 541 ||

पृथ्वी औ' आकाश का, कहाँ हुआ है मेल?
क्षितिज-रेख करती रही, आँख-मिचौनी-खेल।।

|| 542 ||

कायर-भीरू-स्वार्थी, क्या जाने सम्मान?
मिलता, उनके साथ में, पग-पग पर अपमान।।

|| 543 ||

अपनों ने शोषण किया, खूब किया बदनाम।
बदल गया मन-बावरा, घर-बाहर गुमनाम।।

|| 544 ||

वीर-निडर-परमार्थी, इनका साथ महान।
पा इनके संसर्ग को, बनता मूर्ख सुजान।।

|| 545 ||

आज न कोई मानता, हानि-लाभ की बात।
बाहर-भीतर स्वार्थ में, जकड़े हैं दिन-रात।।

|| 546 ||

करते हैं उद्घोषणा, अर्थ हुआ है मोल।
साँप बदलकर केंचुरी, खोल रहा है पोल।।

|| 547 ||

जग में अपना कौन है? और पराया कौन?
आँख मिची तो जग लगे, दूर-दूर तक मौन।।

|| 548 ||

सत्य बोलने की सजा; मिली उसे सब ओर।
साथ छोड़ चलते बने, चतुर-चितेरे-घोर।।

|| 549 ||

जग से शिकवा क्या करें? बनी अजब तकदीर।
खेल खिलाते थे जिन्हें, घोंप रहे शमशीर।।

|| 550 ||

टूट गयी सब रीतियाँ, बिखर गये सब मेल।
हवा चली है कौन-सी, बिसर गये सब खेल।।

|| 551 ||

क्या जाने किस पाप की, सजा भोगते लोग।
सुबह-शाम चंगे मिलें, पल में लगते रोग।।

|| 552 ||

बिन पानी ज्यों फूलते, नदिया के तट काँस।
अर्थहीन त्यों जिन्दगी, ज्यों बूढ़े की साँस।।

|| 553 ||

मन कितना विक्षुब्ध है, दूर-दूर तक त्रास।
अग-जग में मधुमास है, तन-मन में संत्रास।।

|| 554 ||

जूता पैरों में रहे, रगड़ करे बहुबार।
चलो पहनकर दूर तक, माने तुमसे हार।।

|| 555 ||

कौन किसे रखता यहाँ, जीवन-भर ही याद।
जब तक तन में साँस हैं, रहता मन आबाद।।

|| 556 ||

पीड़ा हृदय में बसी, किसका कहें क़सूर।
अपनों ने धोखा दिया, घाव बना नासूर।।

|| 557 ||

पीड़ा-धन को बाँटकर, रखो सदन-उर सींच।
भैया! दुनिया में सदा, चमक, रहेगी बीच।।

|| 558 ||

अब तो मन रमता नहीं, सुख-वैभव भरपूर।
सुख में रमकर हो गया, तन-मन चकनाचूर।।

|| 559 ||

बदल गये संसार के, रीति-नीति औ' धर्म।
मानस वनमानस बना, लोक-लाज क्या शर्म।।

|| 560 ||

शब्द करें नित चाकरी, मन परवशता हाथ।
स्वत्व नहीं जो पालता, भला न उसका साथ।।

|| 561 ||

जब-जब वाणी का हुआ, मन पर अत्याचार।
तब-तब वसुधा पर हुआ, भीषण नर-संहार।।

|| 562 ||

वाणी मधुरस से पगी, मुखड़ा चाँद-समान।
वह क्या देगा और को, जो खुद बने महान।।

|| 563 ||

चमक-दमक को देखकर, बदल गया व्यापार।
लोभ-चाँदनी कर गयी, मन पर अत्याचार।।

|| 564 ||

जिसको निजपद की नहीं, गरिमा लेश न मीत!
षड्यन्त्रों के बाहुबल, हृदय लेता जीत।।

|| 565 ||

आज नहीं तो कल कभी, आयेगा तूफान।
चींटी-सा प्रबाह में, बह जाये शैतान।।

|| 566 ||

सुजन कभी डरते नहीं, मिले दुष्ट का संग।
शूलों में खिलते सुमन, कभी न छोड़ें रंग।।

|| 567 ||

दर्द- घुटन- मजबूरियाँ, भूख- शोक- संत्रास।
जिस मानव में ये पलें, वही समझता प्यास।।

|| 568 ||

भले लोग पथ में मिलें, रहता मंगलवास।
पल-दो-पल का साथ भी, बन जाता मधुमास।।

|| 569 ||

दुःख में भी छूटे नहीं, सुजनशीलता-रंग।
हँसते सुमन गुलाब के, बस काँटों के संग।।

|| 570 ||

समदर्शी के सामने, छोटा-बड़ा न कोय।
दण्ड पड़े जब चाँद पर, पैर पसारे सोय।।

|| 571 ||

देख दुःखद इतिहास को, लई न फिर भी सीख।
कहाँ गयी वह भावना, फिरें माँगते भीख।।

|| 572 ||

जिनके पास न नीति है, नहीं नियम- सिद्धान्त।
ऐसे नर का साथ नित, रहता दुःखद नितान्त।।

|| 573 ||

आज जगत के सामने, मंजिल अमित-अनेक।
मृगतृष्णा-मन चुलबुला, दरसाता अविवेक।।

|| 574 ||

दीन-दुःखी को देखकर, मत कर बंदे! मान।
जितना तुझसे बन सके, दे दे उसको दान।।

|| 575 ||

कानन चाहे शान्ति तू, कानन के सरदार।
सबसे कर तू दोस्ती, बाँट सभी को प्यार।।

|| 576 ||

सब ऋतु रहें न एक-सी, मौसम बदले वान।
समय-समय की बात है, वीर न छोड़ें आन।।

|| 577 ||

मौसम के आघात से, बिखरे तरु के पात।
ज्यों बेटा की लात से, पीछे गिरती मात।।

|| 578 ||

अधिकारों की बात सब, करते हैं दिन-रात।
क्या हमने सोची कभी, निज करतब की बात।।

|| 579 ||

कुर्सी पर आकर टिकी, रखवालों की दृष्टि।
अपना घर खुद लूटते, वाह! वाह री! सृष्टि।।

|| 580 ||

अपनी-अपनी आज सब, मना रहे हैं खैर।
'ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर'।।

|| 581 ||

निखिल सृष्टि रसमय बड़ी, लगे विरोधाभास।
बदलो! अपनी दृष्टि को, लगे-सुखद आभास।।

|| 582 ||

आज भावना लुप्त है, हुआ ज्ञान-विस्फोट।
किसको देवें दोष हम, सब कर्मों की खोट।।

|| 583 ||

जीवन-तरु पतझर हुआ, शेष रह गये शूल।
मन शूलों को देखता, कभी खिलेंगे फूल।।

|| 584 ||

तन-मन सब शीतल हुआ, पुलक प्रफुल्लित गात।
मन के द्वारे चढ़ गयी, सुधियों की बारात।।

|| 585 ||

अब नदियों में जल नहीं, दूर-दूर तक रेत।
आँधी औ' तूफान में, सूख गया सब हेत।।

|| 586 ||

सूरज की सरगर्मियाँ, बढ़ती जातीं रोज।
चूर-चूर मानव हुआ, नेह रहा है खोज।।

|| 587 ||

आज डगर सूनीं पड़ीं, पथिक गये पथ भूल।
अनजाने पथ पर चले, चुभते जाते शूल।।

|| 588 ||

बदल जाय आकाश तो, बदल जाय परिवेश।
सज्जन-दुर्जन के लिये, अलग-अलग उपदेश।।

|| 589 ||

बड़े-बड़े आदर्श की, बातें करें फिजूल।
कहाँ टिके व्यवहार में, युग-युग बने उसूल।।

|| 590 ||

नियम-नीति-सिद्धान्त का, कहाँ खोजते मेल?
यारों! तुम तो बावरे, राजनीति का खेल।।

|| 591 ||

आता बचपन याद जब, हृदय चुभते शूल!
सड़क बनीं पगडण्डियाँ, चढ़ी मनों पर धूल।।

|| 592 ||

ईश्वर की इस सृष्टि का, अद्भुत बना विधान।
हर घटना में छुप रहा, कोई लक्ष्य महान।।

|| 593 ||

परमेश्वर की शक्ति को, कौन सका पहचान?
रहा निरन्तर खोज में मानव-मन अज्ञान।।

|| 594 ||

मैंने जो कुछ भी रचा, शब्द-अर्थ बहुरूप।
मेरा अपना कुछ नहीं, सब उसका प्रारूप।।

|| 595 ||

लोकतंत्र संसार के निश्चित भव्य महान!
पर, भारत-गणतत्र तो, बैठा विश्व-मचान।।

|| 596 ||

मंगलमय हो आपको, भारत का गणतंत्र!
बने विश्व-सरताज यह, युग-युग रहे स्वतंत्र।।

|| 597 ||

सीधा-सादा आदमी, जब खाता है चोट
तब मन का आक्रोश ही, कर देता विस्फोट।

|| 598 ||

भला कहीं विस्फोट से, पैदा होती शांति
अन्यायों के दौर में, कहाँ रूकी है क्रांति।

|| 599 ||

तज कड़ुवाहट बोल मृदु, बदल जाय संसार।
ज्यों मुख मिसरी की डली, उपजाती रसधार।।

|| 600 ||

श्रम की पूजा से हुई, यह दुनिया आबाद।
धन की चकमक ने किया, धरती को बर्बाद।।

|| 601 ||

नभ क्या तेरे बाप का, बाज़ करे अधिकार।
चुन-चुन कर खग मारता, किस कारण प्रतिकार।।

|| 602 ||

बाज! बड़ा स्वच्छंद तू, उड़ता अम्बर बीच।
अन्य खगों को मारता, तू है कितना नीच!!

|| 603 ||

अंधा जग का दौर है, कहाँ मूल्य आदर्श?
हिंसा-घृणा-स्वार्थ से, मिला किसे उत्कर्ष??

|| 604 ||

जब तक तन में प्राण हैं, तब तक जग-परिवार।
द्वार खुला पंछी उड़ा, फिर पिंजड़ा बेकार।।

|| 605 ||

बिना बात के लोग जब, करें व्यर्थ बकवास।
मन की सुन्दर वृत्तियाँ, पातीं सहज विनाश।।

|| 606 ||

पहले तो परिचय किया, अपना लिया बनाय।
अब अधभर में छोड़ते, तुमको लाज न आय।।

|| 607 ||

जब मन में शंका पले, नहीं दीखती मौत।
पत्नी को लगने लगे, तब घर-दहरी सौत।।

|| 608 ||

आज बने कैसे नियम, जाने ऊँच न नीच।
पत्थर तनिक उछालिए, उछल पड़ेगी कींच।।

|| 609 ||

गहा किसी का हाथ तो, मत अधभर में छोड़।
साथ-साथ यदि चल पड़े, तू तो साथ न तोड़।।

|| 610 ||

मौत घूमती आ रही, जगत नहीं भयभीत।
मनुज झूमता जा रहा, गाता जीवन-गीत।।

|| 611 ||

मानवता औ' मित्रता, है भारत के गाँव।
भेदभाव बिन बाँटते, समता-ममता-छाँव।।

|| 612 ||

जाते हैं गन्तव्य पर, धरती के इन्सान।
लेकिन, विरला देखते, जन-जन में भगवान।।

|| 613 ||

इस जीवन की रेल में, करें यात्रा लोग।
डिब्बा-डिब्बा में भरे, बड़े भयंकर रोग।।

|| 614 ||

यह फूलों-सी जिन्दगी, अधरों पर मृदुहास।
झरता सुमन-पराग-सा, महक रहा मधुमास।।

|| 615 ||

अधरों की मुस्कान ही, इंगित करती प्यार।
छुपा हुआ मुस्कान में, इस जीवन का सार।।

|| 616 ||

भले आदमी खूब तुम, भला निभाया साथ।
बीच राह में छोड़कर, चले गये तुम हाथ।।

|| 617 ||

जीवन पथ दुष्कर बड़ा, बड़ी कीमती जान।
सहज भाव से बाँटता, चल अपनी मुस्कान।।

|| 618 ||

तूने दुनिया को दिए, हिंसा और अकाल।
द्वेष-वैर की जिन्दगी, छोड़ अरे! तत्काल।।

|| 619 ||

यदि पल की मुस्कान से, बनता वैर मिलाप।
जीवन-भर के चैन को, कुररी कर न विलाप।।

|| 620 ||

बाला, बामा, कामिनी, नारी नाम हजार।
लेकिन जब तक है बहू, तब तक खुशी अपार।।

|| 621 ||

कुछ भी तो घटता नहीं, अधर धरें मुस्कान।
कहता है हर आदमी, 'हँसमुख है इन्सान'।।

|| 622 ||

आम आदमी के लिए, समय नहीं अनुकूल।
मानवता के दायरे, आज हुए प्रतिकूल।।

|| 623 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम के, बदल गये सब अर्थ।
हिंसा औ' आतंक से, जूझ रहे अब व्यर्थ।।

|| 624 ||

सीधी-सादी बात अब, पैदा करती रोष।
गलती करके आदमी, दे दूजे को दोष।।

|| 625 ||

रहा-कहाँ अब आदमी, कैसी चली बयार?
दो पैसा में बिक रहा, अब मानव का प्यार।।

|| 626 ||

पता नहीं किस हेतु को, जुटा लिया धन-धाम।
पल भर में आँधी चले, टपक पड़े ज्यों आम।।

|| 627 ||

बड़ा अराजक दौर है, इस धरती पर आज।
शोषक-पोषक बन गये, आती जिन्हें न लाज।।

|| 628 ||

केवल मीठे बोल ही, हैं जीवन का सार।
कटु बचनों के तीर से, जीवन बनता खार।।

|| 629 ||

सुबह-शाम पूजा करें, संध्या-जप-तप-नेम।
बदल अरे! व्यवहार को, जो तू चाहे क्षेम।।

|| 630 ||

बाहर से बदला सभी, खान-पान-व्यवहार।
लेकिन, मन के द्वार पर, पड़ा आवरण-भार।।

|| 631 ||

बदल गयी अभिव्यक्तियाँ, बदल गये लय-छंद।
पर, मन की अनुभूतियाँ, रह न सकीं स्वच्छंद।।

|| 632 ||

देख भ्रष्ट-अन्यायी को, करती रही बयान।
पता नहीं क्यों चुप हुई, ताला लगी जुबान।।

|| 633 ||

शायद मेरे देश को, हुआ कैंसर रोग।
लूट-लूटकर खा रहे, नेता मधुमय भोग।।

|| 634 ||

प्राची में सूरज उगा, लिए रक्त-सी भोर।
खड़ी सभ्यता रो रही, क्रंदन चारों ओर।।

|| 635 ||

अब सूरज को देखकर, चन्दा हँसता नाय।
सिसक रही है चाँदनी, फंदा कसता जाय।।

|| 636 ||

खेत और खलिहान में, दीखें नहीं किसान।
गाँव-घेर सूने पड़े, बैल न गाय-जवान।।

|| 637 ||

बोलो! अब किससे कहें, अपने मन की बात।
खड़े-खड़े हम देखते, लोग करें हैं घात।।

|| 638 ||

कल तक जो भरते रहे, देशभक्ति के भाव।
आज लूटते देश को, तनिक न खाते ताव।।

|| 639 ||

उजड़ रही वन-सभ्यता, टूट रहे तरू-पात
ज्यों पर्वत से छूटता, कोई जल-प्रपात।

|| 640 ||

बाल देखकर पालना, होता भाव-विभोर
ज्यों जल नदियाँ बीच में, झिलमिल भरे हिलोर।

|| 641 ||

बहुत कही मानी नहीं, सुनी न कोई बात
आँधी औ' तूफान में, बीत गयी सब रात।

|| 642 ||

रक्त भेड़ियों ने पिया, वन में पड़ा अकाल
तत्त्ववेत्ता ले गये, शेष बचे कंकाल।

|| 643 ||

भावों से अनुबंध कर, मन होता ग़मगीन
भरे समुन्दर बीच में, नीर बहाती मीन।

|| 644 ||

आज हुई पगडण्डियाँ, दुष्टों के आधीन
पल-पल जो नित लूटते, वे हैं सत्तासीन।।

|| 645 ||

आज युवक ग़मगीन हैं, लक्ष्य द्रौपदी चीर।
दुर्योधन के राज में, कुंठित अर्जुन वीर।।

|| 646 ||

रखो राम-सी जिन्दगी, करो कृष्ण-से काम।
अर्जुन जैसा लक्ष्य हो, शबरी जैसा धाम।।

|| 647 ||

भ्रष्ट आचरण बन गया, जीवन की पतवार।
बिन पीटे कैसे बने, लोहा से हथियार।।

|| 648 ||

राजनीति के कुँज में, भरे विषैले सांप।
माली भागा बाग से, गये सपेरे भांप।।

|| 649 ||

भरी उमस के बीच में, बीते वर्ष पचास।
ओला - झंझावात ले, पवन उड़ें उनचास।।

|| 650 ||

जब तक नेता देश का, भ्रष्ट और मक्कार।
तब तक हालत देश की, क्या सुधरेगी यार??

|| 651 ||

पापी को देकर सजा, मुक्त करो घर-द्वार।
भला होय उस भीम का, दिया दुशासन मार।।

|| 652 ||

पता नहीं क्यों मौन है, युवकों की आवाज?
वरना तो इस देश का, बदल जाय आगाज।।

|| 653 ||

यात्रा-पथ में चल रहे, हाथ लिए सन्दूक।
किस्मत खोटी हो गयी, बन्द पड़ी बंदूक।।

|| 654 ||

सब दरवाजे बन्द कर, काल हँसे पुरजोर।
लात मारकर तोड़ दो, बनो नहीं कमजोर।।

|| 655 ||

भ्रष्ट व्यवस्था दूर हो, केवल एक इलाज
जूता ले ले हाथ में, जाये बदल मिजाज।

|| 656 ||

युवा शक्ति-कल्याण का, केवल एक उपाय
शुभ सत्ता संघर्ष हित, उठें सभी समुदाय।

|| 657 ||

काँट-छाँट माली करे, ज्यों तरू बाग-निकुँज
तैसी जगहित भूमिका, वरो शक्ति के पुँज!

|| 658 ||

गाँव-गली-घर में घुसे, आज विषैले नाग
जब तक फन कुचलो नहीं, फिरें उलगते आग।

|| 659 ||

जूते-चप्पल चल रहे, अब संसद के कक्ष
मीन-सभ्यता रो रही, फूट गया है अक्ष।

|| 660 ||

लोकतंत्र के कक्ष में, रचे स्वयंवर मौन।
हाय! कहाँ अर्जुन गया, मीन गिराये कौन।।

|| 661 ||

सत्य, अहिंसा, प्रेम की, मत कर रचना मीत!
रचना है तो रच अरे! आग उगलते गीत।।

|| 662 ||

जो कुछ भी अब तक हुआ, करो न चिन्ता यार!
सहज भाव से कर अरे! तू जन-जन से प्यार।।

|| 663 ||

आज आदमी को लगा, जाने कैसा रोग।
डूबा है व्यभिचार में, करे रात-दिन भोग।।

|| 664 ||

आज देश के सामने, विकट समस्या एक।
देश-प्रेम के भाव की, कौन जगाए टेक।।

|| 665 ||

आओ बच्चों! हम करें, जीवन का विस्तार।
दीन-दुःखी में बाँट दें, अपना-अपना प्यार।।

|| 666 ||

कौन जानता किस घड़ी, देवे काल पछाड़।
चलते-चलते देखते, राई बने पहाड़।।

|| 667 ||

कुलटा नारि न जानती, देना मन को धीर।
जीवन में भोगी नहीं, उसने प्रसब - पीर।।

|| 668 ||

चौपालें खाली पड़ीं, सूनी पिलखन-छाँव।
पता नहीं किस दौर से, गुजर रहा है गाँव।।

|| 669 ||

राधे की चौपाल पर, जमती रोज ज़मात।
दिन भर की कड़ुबाहटें, पातीं सहज निजात।।

|| 670 ||

जमकर जड़ें उखाड़िये, दूब न छोड़े खेत।
जितना ही प्रतिबंध हो, बढता उतना हेत।।

|| 671 ||

धूं-धूं कर सपने जलें, जले चिता में चाह।
जीवन-भर ढोते रहें, हम कितनों की आह!!

|| 672 ||

अनगढ़ ज्यों नाविक-तनय, छुई नहीं पतवार।
बिन नाविक त्यों खे रहे, हम नौका जलधार।।

|| 673 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम को, करता लहू-लुहान।
अरे दुष्ट! खुद को कहे, वाणी की सन्तान।।

|| 674 ||

कूड़ा - कर्कट - गंदगी, खूब सजायी यार!
मन को आकर्षित करे, वैश्या का श्रृंगार।।

|| 675 ||

सजा-सजाकर बेचले! मन के गन्दे भाव।
बिना भंवर के देखले! डूबेगी यह नाव।।

|| 676 ||

मुख-मंडल पर सोहता, अर्द्ध चन्द्र-सा भाल।
सनी बतीसी रक्त मनु, अरूण-कमल-से गाल।।

|| 677 ||

पता नहीं किस कुँज में, जाय छुपा मृदुहास?
अथवा धन के लोभ ने, रचा नया उपहास।।

|| 678 ||

ऊँचे पद पर बैठकर, भूला अपना ठेर।
थोड़ा-सा मधु पाय कर, तू इतराया बेर।।

|| 679 ||

सहज भाव से जो मिले, करिये उसे कबूल।
कुछ अनुचित घटता नहीं, रहते अगर उसूल।।

|| 680 ||

देता सुख की जिन्दगी, मन को विनयी भाव।
उलट-पुलट होता सभी, जब आता है ताव।।

|| 681 ||

धन के बैठी ढ़ेर पर, नारी चतुर सुजान।
मिले न ममता भावना, मिटे प्यार मुस्कान।।

|| 682 ||

पता नहीं क्यों काल ने, बदली अपनी राह?
गुम-सुम नैना देखते, प्राण -निकलते आह।।

|| 683 ||

भोला-भाला-सा पथिक, चला जा रहा तेज।
टूट अचानक ही पड़ा, काल लिए कर-तेग।।

|| 684 ||

मेघ नहीं, पानी नहीं, अम्बर तडित न वात।
उठा बगूला काल का, हुई धरा पर रात।।

|| 685 ||

कल तक खुशियों से भरा, उमग रहा घर-बार।
आज आँसुओं की लड़ी, बिखर गयी घर-द्वार।।

|| 686 ||

गुम-सुम बच्चे खाट पर, बैठे माँ के पास।
इधर उधर बर्तन पड़े, लेटा श्वान उदास।।

|| 687 ||

दुष्कर जीवन गाँव का, गली-लगी में कींच।
बड़ी कठिन है जिन्दगी, भरी उमस के बीच।।

|| 688 ||

सुख-साधन औ' सम्पदा, नहीं गाँव के पास।
भोला बचपन खेत में, छील रहा है घास।।

|| 689 ||

धरती पर सोये हुए, धरे अनूठा मौन।
अब दो पल की जिन्दगी, दे पायेगा कौन??

|| 690 ||

प्रमुदित मन घर से चले, ले उदेश्य महान।
अरे काल! निष्ठुर बना, छीन लई मुस्कान।।

|| 691 ||

जैसा होता आदमी, करता वैसी बात।
कांणा-कुबड़ा-काइयाँ, करते पग-पग घात।।

|| 692 ||

समझ मनुज- व्यवहार को, अरे! बोलिए बोल।
जैसा डंका मारते, वैसा बोले ढोल।।

|| 693 ||

क्या जाने व्यवहार को, मूर्ख-दुष्ट-वाचाल।
गौरेया मृदु बोल की, पल में करें हलाल।।

|| 694 ||

पथ से भटके मीत की, करिए अनत सहाय।
प्रीति-नीति माने नहीं, उत्तम दण्ड उपाय।।

|| 695 ||

वट-पीपल या आम हों, सत्य - नदी के कूल।
बह जाते मँझधार में, जब दिन हों प्रतिकूल।।

|| 696 ||

अधिक दिनों तक धर्म भी, सहे न जन के पाप।
बन जाता दुष्कर्म ही, मानव का अभिशाप।।

|| 697 ||

वर्ग-जाति - भाषा-कुली, समुदायों का रंग।
अगर चढ़े उतरे नहीं, करे शांति को भंग।।

|| 698 ||

अतिथि-देवता मानकर, उनको किया सलाम।
उसने समझा आदमी, दीखे एक गुलाम।।

|| 699 ||

नमन किया तो दे रहे, वे हमको अभिशाप।
पता नहीं क्यों शिष्ठता, बदल गयी चुपचाप।।

|| 700 ||

हृदय ने पूछा बहुत, नैनों से दिन-रात।
घर से आँगन कब गया, छोड़ देहरी तात!!

|| 702 ||

छान गया, चलनी गयी, गया छोड़ कर सूप।
चौपालों से उड़ गयी, सुबह-शाम की धूप।।

|| 703 ||

भरी-भीड़ में देखकर, किसने किया प्रणाम।
मैंने देखा आदमी, है यह कौन अनाम??

|| 704 ||

हमसे तो पशु भी भले, रखें स्वच्छता ध्यान।
पूँछ झाड़कर बैठता, धरती पर ही श्वान।।

|| 705 ||

क्या श्रम क्या मजबूरियाँ, नहीं बड़ी कुछ बात।
क्या कुछ पल तू कर रहा, सोच जरा ले तात!!

|| 706 ||

सोच-समझ के दायरे, कर अपने अनुकूल।
जो कुछ भी अब तक घटा, है तेरी ही भूल।।

|| 707 ||

नयी कली-सी खिल रही, अधरों पर मुस्कान।
बरखा ऋतु में दमकती, ज्यों बिजली की तान।।

|| 708 ||

बहुत थके हो यार! तुम, आओ खेलें साथ।
हँसी-खुशी की जिंदगी, बाँटे सबके हाथ।।

|| 709 ||

साँसों की पटरी पड़ी, उस पर जीवन रेल।
दौड़ लगाती जा रही, बिन सीटी बिन तेल।।

|| 710 ||

मानव-मानव को सभी, करें परस्पर प्यार!
मज़हब की बीमारियाँ, होवें खत्म विकार।।

|| 711 ||

जाति-धर्म-मजहब सभी, होवे इनका नाश!
मानवता ही विश्व में, पाये सदा विकास।।

|| 712 ||

वैभव पा भगवान को, पल में जाता भूल।
दुख के जंगल में फँसें, चुभने लगते शूल।।

|| 713 ||

सुख-दुख हैं परमात्म के, दायें-बायें हाथ।
हाथ कभी क्या छोड़ते, कहीं मनुज का साथ।।

|| 714 ||

हाय! मनुज ही हाथ को, दे संकट में डाल।
कटें-फटें जब हाथ तो, झुक जाता है भाल।।

|| 715 ||

हम-सब ईश्वर अंश हैं, उसकी हैं सन्तान।
वैभव पा कहता मनुज, स्वयं को भगवान।।

|| 716 ||

मात-पिता इस सृष्टि में, जड़-चेतन के प्राण।
उन्हें न भूले आदमी, बन जाता संप्राण।।

|| 717 ||

मनुज भूलकर ईश को, बनता माई-बाप।
जीवन-भर फिर भोगता, रिश्तों का अभिशाप।।

|| 718 ||

सुख-दुख दोनों में रहे, परमेश्वर की टेक।
रूप भले ही कुछ रहे, लक्ष्य रहे पर एक।।

|| 719 ||

स्वामी-सेवक का रहे, ईश्वर से सम्बन्ध।
शिथिल न होने दे कभी, जीवन भर अनुबन्ध।।

कभी खिलेंगे फूल

अपनी बात

मनुष्य का जीवन आशा–निराशा के पलड़ों के बीच झूलता रहता है। जीवन–पथ पर चलते हुए यदि कहीं वांछित फल की प्राप्ति में सफलता मिलती है तो मन आशा–विश्वास और हर्ष की अनुभूतियों से भर जाता है। ठीक इसके विपरीत अगर असफलता मिलती है तो मन निराशा, अविश्वास और दुःख की अनुभूतियों से भर जाता है। मनुष्य का समग्र जीवन इन्हीं सुखद–दुखद अनुभूतियों से भरा है। 'आशा' निरन्तर चलने जाने का नाम है तो 'निराशा' रूक जाने का नाम है। निराशा हमें सोचने को बाध्य करती है। लेकिन निराश होने पर हम अपनी जीवन–यात्रा को विराम लगा दें; यह कदापि नहीं होना चाहिए। कभी–कभी निराश व्यक्ति मानवीय मूल्यों की होली फूँक देता है। समाज और व्यवस्था के विरूद्ध विद्रोह की ज्वाला जला देता है। उसके निराश हृदय में उत्पन्न क्रोध सातवे आसमान पर पहुँच जाता है, जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए, क्योंकि –

"अगर निराशा मिल गयी, तोड़ो नहीं उसूल!
सखे! लक्ष्य छोड़ों नहीं, कभी खिलेंगे फूल।।"

'कभी खिलेंगे फूल' में समाहित रचनाओं का यही उद्देश्य है। युवा–पीढ़ी को एक दिशा देना है। वाणी की सहजता ने मेरे मनतव्य को सरल एवं सहज बना दिया है। मुझे विश्वास है इस

संग्रह की रचनाएँ आपकों सुखद अनुभूमि करायेंगी। यदि मेरा यह प्रयास किंचिद रूपेण अपने उद्देश्य में सफल हुआ तो मेरा यह श्रम सार्थक हो जायेगा। आपकी प्रतिक्रिया की मुझे प्रतीक्षा रहेगी।

8 मार्च, 2018

विनीत

डॉ महेश 'दिवाकर'

००० दोहे ०००

रंग रंग के दृश्य

|| 1 ||

प्यार पगे, सम्मान से, अरे! बोलिए बोल।
बंद पड़े जो रास्ते, देंगे उनको खोल।।

|| 2 ||

धूप-छाँव के बीच में, गुजर रहा हर साल।
कसता जाता देश पर, आतंकों का जाल।।

|| 3 ||

कंचन मिले सुगंध में, करता भव्य सुनार।
रचना की आलोचना, पैदा करे निखार।।

|| 4 ||

वह घर बनता स्वर्ग-सा, रहता सुख का वास।
जिस घर में पलता रहे, प्रेम और विश्वास।।

|| 5 ||

वर्तमान की लोग सब, करते हैं परवाह।
मिलती सदा अतीत से, मन को प्रेरक राह।।

|| 6 ||

बारूदों के ढेर पर, बैठी है मुस्कान।
हँसी-खुशी की जिन्दगी, बाँट अरे इन्सान।।

|| 7 ||

मानवता के रास्ते, आज हुए हैं तंग।
लोहा-सा माहौल है, लगी हुई है जंग।

|| 8 ||

बेच दिय साहित्य को, व्यापारी के हाथ।
कविता कुंठित हो गयी, कमल-काव्य के साथ।।

|| 9 ||

समय नहीं, पैसा नहीं, बेकारी-अनुभाग।
विधवा की गति प्राप्त है, शिक्षा-जगत-विभाग।।

|| 10 ||

मन करता कुछ और है, हो जाता कुछ और।
बुरे दिनों कें फेर में, सहज बदलता ठौर।।

|| 11 ||

पशु-पक्षी करते नहीं, ऊँच नीच का भेद।
इन्सानों के बीच में, क्यों ऐसा मतभेद??

|| 12 ||

खुशी-खुशी में कैक्टस, आँगन लई उगाय।
शूल चुभे तो कह रहे, 'यह तो बुरी बलाय'।।

|| 13 ||

अनुबंधों के दायरे, करो न इतने तंग।
सम्बन्धों की अल्पना, संजो न पाये रंग।।

|| 14 ||

सत्य, अहिंसा, प्रेम की, मत कर रचना मीत!
रचना है तो रच अरे! आग उगलते गीत।।

|| 15 ||

आओ बच्चों! हम करें, जीवन का विस्तार।
दीन-दुःखी में बाँट दें, अपना-अपना प्यार।।

|| 16 ||

चौपालें खाली पड़ीं, सुनी पिलखन-छाँव।
पता नहीं किस दौर से, गुजर रहा है गाँव।।

|| 17 ||

जैसा होता आदमी, करता वैसी बात।
कांणा-कुबड़ा काइयाँ, करते पग-पग घात।।

|| 18 ||

नमन किया तो दे रहे, वे हमको अभिशाप।
पता नहीं क्यों शिष्टता, बदल गयी चुपचाप।।

|| 19 ||

बहुत थके हो यार! तुम, आओ खेलें साथ।
हँसी-खुशी की जिंदगी, बाँटे सबके साथ।।

|| 20 ||

देता है केवल वही, जिसका भाव विशाल।
हमने देखे सैकड़ों, धन रहते कंगाल।।

|| 21 ||

आज देश की आत्मा, फँसी विदेशी चाल।
तड़प मीन-सी मर रही, मछुआरे के जाल।।

|| 22 ||

यार! कहाँ कुछ बँट रहा, कहाँ धरा है मोल?
पगले! मीठे बोल को, नहीं तुला में तोल।।

|| 23 ||

राजनीति से आ रही, अपराधी-दुर्गन्ध।
गधे मिठाई खा रहे, पाते सुअर सुगन्ध।।

|| 24 ||

स्वाभिमान का एक पल, मन को रखे संभाल।
चला गया सम्मान तो, धनपति हैं कंगाल।।

|| 25 ||

पग-पग पर धोखा मिला, असन्तोष-अभिशाप।
लिख-लिखकर धूमिल करूँ, सारे पश्चाताप।।

|| 26 ||

आज ज्ञान के क्षेत्र में, राजनीति का खेल।
नेता झंडी दे रहा, गुरु चलाता रेल।।

|| 27 ||

छूट गयीं पगडंडियाँ, टूट गयीं सब लीक।
उलटी गंगा बह रही, आज देश के बीच।।

|| 28 ||

होता घृणा-प्यार में, अद्भुत ही सम्बन्ध।
दोनों मन की वृत्तियाँ, बदबू और सुगन्ध।।

|| 29 ||

दुष्ट कभी छोड़े नहीं, जीवन के छल-छंद।
जैसे रस्सी के जले, नहीं छूटते फंद।।

|| 30 ||

नियम-नीति क्या जानते, करते रहें विलाप।
यह शोषण के पुंज है, कैसे करें मिलाप।।

|| 31 ||

यह कैसा दस्तूर है, या विधि का अभिशाप।
अंधे को गढ्ढा मिले, अंधे को ही साँप।।

|| 32 ||

देख श्राद्ध-सम्मान-पद, काग हुआ बाचाल।
अपनी गति को छोड़कर, चला हंस की चाल।।

|| 33 ||

कौआ को तमगा मिला, भरने लगा उड़ान।
काँव-काँव करता फिरे, बनने लगा महान।।

कुरूक्षेत्र-दर्शन

|| 34 ||

ब्रह्मसरोवर सृष्टि पर, साक्षात है स्वर्ग!
ब्रह्मसरोवर देखकर, मिल जाता अपवर्ग।।

|| 35 ||

जल ही जल है दूर तक, भरा हुआ आगार।
युग-मानवता ब्रह्म का, मान रही आभार।।

|| 36 ||

जलधि सरीखा जल भरा, उठती सहज तरंग।
श्रावण या मधुमास हो, करता नृत्य अनंग।।

|| 37 ||

ब्रह्मसरोवर देखकर, मन हो गया किशोर।
राग-द्वेष को भूलकर, तन-मन हुआ विभोर।।

|| 38 ||

कुरुक्षेत्र के युद्ध का, सच्चा यही ग़वाह।
कौरव-पांडव सभी को, इसने दिया पनाह।।

|| 39 ||

ब्रह्मसरोवर में सभी, करते थे स्नान।
कौरव-पांडव सभी का, मानो यह भगवान।।

|| 40 ||

विस्तृत और विराट है, **ब्रह्मसरोवर** ताल।
इसने भारत का किया, जग में ऊँचा भाल।।

|| 41 ||

ब्रह्मसरोवर देखकर, होता यह आभास।
ब्रह्माजी का है यही, सचमुच में आवास।।

|| 42 ||

दर्शन कर इसके मिले, अजब तरह की शान्ति।
सत्य-अहिंसा-कर्महित, करे मनुज मन क्रान्ति।।

|| 43 ||

अर्जुन को **श्रीकृष्ण** ने, दिया यहाँ उपदेश।
इसके कण-कण ने सुना, गीता का सन्देश।।

|| 44 ||

ब्रह्मसरोवर के निकट, है थोड़ी-सी दूर।
कुरुक्षेत्र का **ज्योति-सर,** माथे का सिन्दूर।।

|| 45 ||

बहुत पुरातन **'बट'** तरू, खड़ा हुआ गम्भीर।
अर्जुन की **श्रीकृष्ण** ने, यहीं हरी थी पीर।।

|| 46 ||

अति अद्भुत, रोमांचित, **'ज्योति-सर'** धर्म स्थान।
यहीं मिला था पार्थ को, **श्रीकृष्ण** से ज्ञान।।

|| 47 ||

गीता रूपी ज्ञान का, हुआ यहीं अवतार।
सकल विश्व हित कृष्ण ने, किया अमिट उपकार।।

|| 48 ||

ब्रह्मसरोवर, ज्योतिसर, दोनों अद्भुत धाम।
इनके कण-कण में बसें, **राधा** के घनश्याम।।

|| 49 ||

दूर-दूर तक दिव्यता, यहाँ धर्म का वास।
साक्षात् परब्रह्म का, होता मनु आभास।।

|| 50 ||

कृष्ण सहित **अर्जुन** यहाँ, करते ब्रह्म निवास।
ब्रह्मसरोवर, ज्योतिसर, दुर्गुण करें विनाश।।

|| 51 ||

ब्रह्मसरोवर में बना, **कल्याणी** का कूप।
इसके दर्शन कर खिले, मानवता की धूप।।

|| 52 ||

भव्य-दिव्य रथ पर यहाँ, **अर्जुन-कृष्ण** सवार।
ब्रह्मसरोवर दे रहा, सबको यह उपहार।।

|| 53 ||

यहीं **द्रोपदी-घाट** है, **कुन्ती** का भी **घाट।**
दोनों ममता-प्यार को, सहज रहे हैं बाँट।।

|| 54 ||

ब्रह्मसरोवर, ज्योतिसर, मेंटे सभी कुसंग।
गीता-गंगा-ज्ञान का, मिले यहाँ सत्संग।।

|| 55 ||

कुरुक्षेत्र की यह धरा, पावन बड़ी महान।
अर्जुन औ' **श्रीकृष्ण** का, सहज मिले संज्ञान।।

|| 56 ||

ब्रह्मसरोवर, ज्योतिसर, **कृष्ण-ब्रह्म** के नेत्र।
पुण्य फले तो आदमी, जाता है **कुरुक्षेत्र।।**

|| 57 ||

पंडित-मुल्ला-पादरी, बाबा-सन्त फकीर!
किसी धर्म में है कहीं, इनके लिए लकीर।।

|| 58 ||

यार! छोड़ जायें कहीं, यह मिथ्या संसार!
हृदय से झिलते नहीं, व्यंग्य-वाण-प्रहार।।

|| 59 ||

रक्त पिला पाला जिन्हें, किए हवन सब स्वप्न!
ममता-प्यार-दुलार को, वहीं कर रहे दफ़न।।

|| 60 ||

बिन कारण, बिन बात ही, बुनते मकड़ी जाल!
सिसक रही है जिन्दगी, खिंचे बाल की खाल।।

|| 61 ||

अज़ब तरह के लोग हैं, अजब तरह का प्यार!
इनसे अच्छे जानवर, समझें सहज दुलार।।

|| 62 ||

तानाशाही या कहूँ, अंहकार की बाढ़!
अथवा पागल जिन्दगी, तिल का करती ताड़।।

|| 63 ||

अपने हित की बात को, अपने समझें घात!
फिर चुप रहने में भला, सबका हित है तात!!

|| 64 ||

दुनिया में सबसे कठिन, ममता-नेह-दुलार!
लेकिन, सबसे ही कठिन, निश्छल करना प्यार।।

|| 65 ||

भेदभाव की भावना, पीड़ा देती यार!
बने जिन्दगी स्वर्ग-सी, करो किसी को प्यार।।

|| 66 ||

कितनी ही पीड़ा मिले, कितना हो संत्रास!
मगर प्यार की जिन्दगी, रहती नहीं उदास।।

|| 67 ||

मीत अगर सच्चा मिले, करता निश्छल प्यार!
इससे बड़ा न सृष्टि में, कोई भी उपहार।।

|| 68 ||

पल में पीड़ा बाँटता, देता नव विश्वास!
केवल निश्छल मित्र ही, है सच्चा मधुमास।।

|| 69 ||

अगर मित्र सच्चा मिला, देता नव पहचान!
निर्मल मन की भावना, देती नई उड़ान।।

|| 70 ||

भरे लबालव स्वार्थ से, रिश्ते-नाते व्यर्थ!
अगर मित्र में भावना, होगा नहीं अनर्थ।।

|| 71 ||

जाति-धर्म औ' क्षेत्र की, खड़ी करी मीनार!
रोक न पाती मित्रता, दुनिया की दीवार।।

|| 72 ||

बहुत हो चुका देख लो, करो न ऐसे भेद!
कहीं न पछताना पड़ें, हो जीवन-भर खेद।।

|| 73 ||

मुझे शर्म इस बात की, क्या कुछ बोलें लोग?
वरना तो यह जिन्दगी, है दो पल का रोग।।

|| 74 ||

मात-पिता-सन्तान की, रहे एक-सी सोच!
आधि-व्याधि आती नहीं, हो जाती है पोच।।

|| 75 ||

मात-पिता-परिवार का, जो करता अपमान!
उसको दुनिया में कहीं, नहीं मिले सम्मान।।

|| 76 ||

पता नहीं क्या हो गया, इस दुनिया को यार!
उगल रहे बिन अग्नि के, क्यों कर रिश्ते क्षार??

|| 77 ||

रिश्तों की महफिल हुई, हाय! बहुत बदरंग!
मानो रिश्तों में छिड़ी, बहुत भयानक जंग।।

|| 78 ||

भूल गये रिश्ते सभी, लोक लाज औ' धर्म!
जैसी जिसकी भावना, करते दुष्ट कुकर्म।।

|| 79 ||

उल्लू सम रिश्ते हुए, देखें नहीं विहान!
अहंकार-अज्ञान की, बैठे उच्च मचान।।

|| 80 ||

रक्तजनित रिश्ते हुए, वैभव पा मदमस्त!
नहीं रही संवेदना, मानो हो उन्मत्त।।

|| 81 ||

ममता के मानक गये, घर से कितनी दूर!
सारे रिश्ते हो गये, कैसे चकनाचूर।।

|| 82 ||

जाति-धर्म की भावना, है अवनति का मूल!
आँख मूँदकर चल रहे, क्यों न चुभेंगे शूल।।

|| 83 ||

राष्ट्रोदय लेकर चले, भारत माँ से प्यार!
हिन्दी की अवमानना, क्यों करते हो यार??

|| 84 ||

राष्ट्रोदय की भावना, पैदा करती मेल!
त्याग-समर्पण-प्यार में, होता नहीं खमेल।।

|| 85 ||

आजादी हमको मिली, अंग्रेजी से प्यार!
हिन्दी का अपमान हम, क्यों झेलेंगे यार??

|| 86 ||

जाने-अनजाने सही, अंग्रेजी से प्यार!
ऐसी आजादी हमें, मीत! नहीं स्वीकार।।

|| 87 ||

कैसी आजादी मिली, अभी दासता शेष!
भाषा के अपमान के, कीट-रक्त अवशेष।।

|| 88 ||

महाशक्तियाँ कर रहीं, निज भाषा सम्मान!
केवल भारतवर्ष में, भाषा का अपमान।।

|| 89 ||

भाषाई अपमान का, पल-पल पीते घूँट!
देश-प्रेम की जिन्दगी, हाय! बन गयी ठूंठ।।

|| 90 ||

देश भक्ति के संगठन, कहाँ गया वह प्रेम?
भाषा का अपमान हो, कहाँ कुशलता-क्षेम।।

|| 91 ||

हिन्दी भाषा रो रही, बीते सत्तर साल!
आजादी इस देश की, अब भी बत्तर हाल।।

|| 92 ||

आजादी के बाद भी, हिन्दी हित संघर्ष!
खून न खौले देश का, कैसा राष्ट्र विमर्श।।

|| 93 ||

किम ज्योंग-सा देश में, जन्मे तानाशाह!
तभी करेंगे लोग सब, हिन्दी की परवाह।।

|| 94 ||

अथवा आयें राम जी, लेकर तीर-कमान!
भाषा का रावण करें, फिर से प्रभु संधान।।

|| 95 ||

हुआ न अब तक देश में, भाषा-क्रान्ति शहीद!
अपनी-अपनी होलियाँ, अपनी-अपनी ईद।।

|| 96 ||

लेकर लंका लक्ष्य को, चले अवध से राम!
कठिन लक्ष्य-संकल्प से, जीता लंका-धाम।।

|| 97 ||

सरल नहीं दुष्कर बहुत, होता जग-कल्याण!
लेकिन, जिसने भी किया, बना वही भगवान।।

|| 98 ||

केवल मन की सादगी, लेकर दृढ़ विश्वास!
कठिन लक्ष्य की साधना, बन जाती मधुमास।।

|| 99 ||

मंत्र तो गोकि मंत्र है, रहे शाश्वत मंत्र!
सत्य-अहिंसा-प्रेम का, सदा एक-सा तंत्र।।

|| 100 ||

हिंसा-घृणा-झूठ का, रहता अल्प प्रभाव!
सदाचार की भावना, शाश्वत गंग-बहाब।।

|| 101 ||

शब्द-शब्द संवाद है, शब्द-शब्द आनंद!
शब्द-अर्थ के मेल में, बसते परमानन्द।।

|| 102 ||

कोई कुछ कहता रहे, चलो लक्ष्य की ओर!
समय साथ देती निशा, सखे! मनोरम भोर।।

|| 103 ||

लक्ष्य दूर जाता बहुत, छोड़ा यदि गन्तव्य!
भटकन कैसी भी रहे, भटकाती मन्तव्य।।

|| 104 ||

आधि-व्याधि आयीं बहुत, लक्ष्य न छोड़ा राम!
सकल विश्व कल्याण के, कर्म किये अविराम।।

|| 105 ||

कहने को कुछ भी कहो, सत्य सदा है सत्य!
किया कर्म मन से अगर, मिल जाता है लक्ष्य।।

|| 106 ||

मन में दृढ़ विश्वास कर, रखो आस्था साथ!
लक्ष्य अगर है साधना, पकड़ मित्र का हाथ।।

|| 107 ||

धर्मों की मन मानियाँ, कर देती बेचैन!
विवश प्यार मरता सखे! सिसक-सिसक दिन-रैन।

|| 108 ||

यहाँ किसी को चाहना, यारों! बड़ा गुनाह!
जाति-धर्म का राक्षस, पल में करे तबाह।।

|| 109 ||

यहाँ न कोई दीखता, भैया! आदमजात!
जाति-धर्म में बँट गयी, प्यार-प्यार की बात।।

|| 110 ||

धरती पर आकर बना, क्या से क्या इन्सान!
लेकिन, बना न आदमी, तेरा यह भगवान!!

|| 111 ||

महको फूल गुलाब-सी, गंगा-सी गम्भीर!
विश्व पटल पर सुन्दरी! बने स्वच्छ तस्वीर।।

|| 112 ||

दृष्टि मनोहर, मोहिनी, सहज-सरल मुस्कान!
जीवन-पथ पर नित बढ़ों, पाओ लक्ष्य महान।।

|| 113 ||

तुमसे मिलकर यों लगा, मानो पाया रत्न!
प्रीत-कमल का खिल रहा, पुष्प बिना ही यत्न।।

|| 114 ||

कहाँ यार! कुछ घट रहा, और नहीं कुछ मोल?
पगली! चुम्बन प्यार का, नहीं तुला में तोल।।

|| 115 ||

जिसको अपना मान लो, करो समर्पण मीत!
अन्तिम पल तक मित्रवर! सदा निभाओ प्रीत।।

|| 116 ||

दुनिया के बाजार में, बिकने सब तैयार!
लेकिन कीमत प्यार की, नहीं समझते यार!!

|| 117 ||

उड़ते अम्बर बीच में, बैठे हुए विमान!
जहाँ जिन्दगी मौत का, मिलता नहीं निसान।।

|| 118 ||

धुँआ-धुँआ-सा उड़ रहा, छुपे धुँआ में मेघ!
करते हैं बरजोरियाँ, चला रहे हैं तेग।।

|| 119 ||

जो भी आता पास है, हो जाता है दूर!
जाति-धर्म की बन्दिशें, कर देतीं मजबूर।।

|| 120 ||

जीवन की मजबूरियाँ, कौन सुने फरियाद?
केवल जो हृदय बसें, वे ही रहते याद।।

|| 121 ||

दूर-दूर तक नारियल, भव्य सुपारी दृश्य!
असम चाय-बागान का, मनो स्वर्ग परिदृश्य।।

|| 122 ||

दूर अकेले जा रहे, मन है अति बैचेन!
साथ! अगर होते सखे! मिलता कितना चैन।।

|| 123 ||

हा! मजहब की बेड़ियाँ, कसे तुम्हारे पाँव'
साथ-2 चलना कठिन, कहाँ मिलेगी छाँव??

|| 124 ||

जीवन की मजबूरियाँ, या वैभव की चाह!
दूर देश में आ गये, छोड़ प्यार की राह।।

|| 125 ||

दूर देश आकर सखे! आती कितनी याद!
घाटी-पर्वत-झील से, करते हैं संवाद।।

|| 126 ||

उठा गिरों को लीजिए, दो प्यासे को नीर!
मिलता जब आशीष है, जग जाती तक़दीर।।

|| 127 ||

तुम कहते हो भूलकर, जाओ हमसे दूर!
सखे! बदन से आत्मा, कब जाती है दूर??

|| 128 ||

यारों! जबसे मिल गयी, सहज प्रीत की राह!
दुनिया के बाजार की, नहीं रही अब चाह।।

|| 129 ||

तेरा-मेरा है सखे! रिश्ता परम पवित्र!
भेदभाव समझे नहीं, प्रेम-सरीखा-इत्र।।

|| 130 ||

इस दुनिया में हो रहा, षडयन्त्रों का खेल!
लोग प्यार से खेलते, कहाँ समझते मेल??

|| 131 ||

हमने देखे जगत में, बड़े-बड़े बदरंग!
अन्तस में कीचड़ भरी, बाहर से सत्संग।।

|| 132 ||

भेदभाव-दुर्भावना, नहीं समझता प्यार!
मानव के कल्याण को, करता सदा दुलार।।

|| 133 ||

चलो चलें उस देश को, जहाँ रह रहे मीत!
जहाँ हवा रस घोलती, कण-कण करता प्रीत।।

|| 134 ||

चैन छीनकर कह रहे, करो सखे! आराम!
मचा हुआ चारों तरफ, जबकि घोर कुहराम।।

|| 135 ||

सखे! प्यार का घाव है, कसक रहे ज्यों शूल!
धीरे-धीरे एक दिन, जायेंगे सब भूल।।

|| 136 ||

एक कहानी प्यार की, हो पृष्ठों में दर्ज!
याद रहेगा मित्रवर! खूब निभाया फ़र्ज।।

|| 137 ||

मज़हब की मजबूरियाँ, या फिर युवा-जुनून!
निश्छल बन्धन प्यार का, मिले न छोड़ सुकून।।

|| 138 ||

तुम्हें अकेला छोड़कर, चले गये हम यार!
पर्वत-नदिया-झील तट, खोज रहे हैं प्यार।।

|| 139 ||

ऊँची पर्वत श्रृंखला, वृक्ष हुए सब मौन!
दर्द भरे हर प्रश्न का, उत्तर दे अब कौन??

|| 140 ||

लोग देखते जा रहे, करे न कोई बात!
कहीं अजनबी आदमी, करे न कोई घात।।

|| 141 ||

यहाँ समझता कौन है, परदेशी का दर्द!
मज़हब की घातें करें, सखे! दि़लों को सर्द।।

|| 142 ||

शयन कक्ष में आ पड़े, द्वार-खिड़कियाँ बन्द!
सखे! तुम्हारी याद में, लिखते कविता-छन्द।।

|| 143 ||

यादों की तन्हाइयाँ, लेकर आयी रात!
दूर-दूर तक तुम नहीं, फिर भी करते बात।।

|| 144 ||

लिखने-पढ़ने के सिवा, और नहीं कुछ काम!
हो जाता है दर्द कम, मिलता है आराम।।

|| 145 ||

गहरी काली रात भी, बजा रही नव साज!
ब्रहमपुत्र की आ रही, कल-कल की आवाज।।

|| 146 ||

आजादी की डोर को, खींच रहे गद्दार!
लूट रहे हैं देश को, दुष्ट-भ्रष्ट मक्कार।।

|| 147 ||

बचा न एक विभाग भी, सभी जल रहे ठौर!
देश-प्रेम का अर्थ भी, हुआ और से और।।

|| 148 ||

जाति-धर्म औ' क्षेत्र की, खूब लग रही आग!
होली जलती प्यार की, खेल रहे सब फाग।।

|| 149 ||

पागल पूरा देश है, किसे देश का ध्यान!
सभी पुजारी हो गये, बेच रहे हैं मान।।

|| 150 ||

मानवता की खींचते, पत्थर बीच लकीर!
मन्दिर-मस्जिद में घुसे, नेता बने फकीर।।

|| 151 ||

युवक-युवतियाँ देश के, करते नहीं सवाल?
सुधरेगा यह देश तब, मिलकर करें बबाल।।

|| 152 ||

दो पल आये थे सखे, मेरे हृदय-द्वार?
नींद चुराकर नैन से, खिसक गये हर बार।।

|| 153 ||

सुबह-सुबह की बन्दगी, करिये सखे! कुबूल!
बहती नौका सिन्धु में, तोड़े नहीं उसूल।।

|| 154 ||

मेरा-तेरा जन्म है, दोनों बड़े विचित्र!
गीता और कुरान से, अद्भुत और पवित्र।।

|| 155 ||

मैं मन्दिर की धूल हूँ, तुम हो पाक नमाज़!
दोनों का रब एक है, जाने सकल समाज।।

|| 156 ||

धरती-अम्बर की तरह, मेरा-तेरा धर्म!
योग-भोग की जिन्दगी, दुनिया भर के कर्म।।

|| 157 ||

धर्म-कर्म की भावना, मानव का कल्यान!
तुम जिसे 'अल्लाह' कहो, मैं कहता भगवान।।

|| 158 ||

मज़हब अथवा धर्म हो, सबमें प्यार समान!
लक्ष्य सभी का 'प्रेम' है, गीता और कुरान।।

|| 159 ||

सभी जन्म से एक हैं, सबके राम-रहीम!
कहने को कुछ भी कहो, बुद्धा याकि फहीम।।

|| 160 ||

अपने-2 स्वार्थ में, करते लोग विवाद!
नर-नारी के नाम पर, पैदा करें फिसाद।।

|| 161 ||

सभी धर्म हैं मानते, नारी योग-प्रतीक!
लेकिन, मज़हब मानता, उसको भोग-अतीक।।

|| 162 ||

नर-नारी के बीच में, लेश न रचना-भेद!
दोनों मिल संसार से, मिटा रहे हैं खेद।।

|| 163 ||

नर-नारी के प्रेम का, प्रतिफल है संसार!
मानव के कल्याण हित, सखे प्रेम उपहार।।

|| 164 ||

ऊँच-नीच की गन्दगी, करो जलाकर क्षार!
ईद-दिवाली प्यार से, सदा मनाओ यार!!

|| 165 ||

अपने-अपने कर्म का, लिखो नया इतिहास!
भेदभाव को छोड़कर, रचो नया मधुमास।।

|| 166 ||

उठा गिरों को लीजिए, सखे! बढ़ाकर हाथ!
फिर तेरा संसार में, नहीं झुकेगा माथ।।

|| 167 ||

हे गुरूवर! करता तुम्हें, शत-शत बार प्रणाम!
मेरा जीवन कर दिया, तुमने ललित ललाम।।

|| 168 ||

बहते जीवन-सिन्धु में, नौका करें विहार!
मिलें परस्पर भाग्यवश, लेते प्रेम-निखार।।

|| 169 ||

कहाँ यार! तुम खो गये, क्योंकर हुए उदास!
कानों में आयी नहीं, वाणी भरी मिठास।।

|| 170 ||

चलो, देर से ही सही, तुमको आयी याद!
हृदय-उपवन में सखे! सदा रहो आबाद।।

|| 171 ||

सखे! सत्य तुमने कहा, हुई जिन्दगी व्यस्त!
दर्द प्यार का सह रहे, हुए बहुत अभ्यस्त।।

|| 172 ||

मन करता है चूम लूँ, किसलय जैसे ओठ!
सखे! गुलाबी ओंठ ये, करते उर पर चोट।।

|| 173 ||

बीत रहा जो वक्त है, कभी न आता पास!
चुम्बन निश्छल प्यार में, बन जाता है खास।।

|| 174 ||

अपनी संस्कृति-धर्म का, करो नहीं अपमान!
हर मानव को चाहिए, करे सदा सम्मान।।

|| 175 ||

रिश्ते नये न बन सकें, करिये नहीं मलाल!
टूट न जाये प्यार के, रिश्ते रखिए ख्याल।।

|| 176 ||

राज, राह, कोई हुनर, सखे! बताओ रीत!
साथ न छूटे यार का, और न टूटे प्रीत।।

|| 177 ||

दूर-दूर रहते सखे! हुआ नहीं स्पर्श!
ऐसा रिश्ता प्यार का, गिर जाता है फर्श।।

|| 178 ||

कोई भी रूंठे नहीं, रहे सभी का साथ!
गुजर जाय यह जिन्दगी, पकड़ सखे का हाथ।।

|| 179 ||

नहीं टूटने दीजिए, प्यार-वचन-विश्वास!
लम्बा पतझर झेलकर, खिलता है मधुमास।।

|| 180 ||

पत्ता टूटा डाल से, करता है आगाज!
हृदय-रिश्ते टूटते, करें नहीं आवाज।।

|| 181 ||

जिसे न रिश्तों की कदर, होता खड़ा न साथ!
ऐसा रिश्ता प्यार का, झटको पल में हाथ।।

|| 182 ||

अगर समर्पण-प्यार को, मीत समझता नाय!
छोड़ो! ऐसे मीत को, व्यर्थ समय सब जाय।।

|| 183 ||

जहाँ समर्पण-प्यार है, रहता नहीं दुराव!
सच्चे मन की वेदना, होता नहीं छुपाव।।

|| 184 ||

जीवन-पथ पर यदि मिला, तुमको सच्चा प्यार!
भेदभाव को छोड़कर, करो समर्पण यार!!

|| 185 ||

सखे! प्यार की भावना, रखिये पूरा ध्यान!
झूंठा रिश्ता प्यार का, चढ़ता नहीं मचान।।

|| 186 ||

अद्‌भुत रिश्ता प्यार का, चाहे केवल प्यार!
बिना झिझक बस कीजिए, सखे! प्यार को प्यार।।

|| 187 ||

पी गंगाजल प्रीत का, प्यार चढ़े परवान!
मुख दिनकर का चूमकर, खिले पुष्प मुस्कान।।

|| 188 ||

प्यार, वासना है नहीं, यह केवल मनुहार!
चुम्बन निश्छल प्यार का, है निर्मल उपहार।।

|| 189 ||

आता जीवन-सिन्धु में, अक्सर भाटा-ज्वार!
पुण्य अगर फलते कभी, मिलता सच्चा प्यार।।

|| 190 ||

मिलता सच्चा प्यार जब, वैभव मिले असीम!
वरना तो संसार में, सब कुछ रहे ससीम।।

|| 191 ||

उठो! सखे! अब हो रहा, सुन्दर स्वर्ण विहान!
खगकुल कलरब कर रहे, जाते खेत किसान।।

|| 192 ||

कुछ भी दे दो प्यार में, हमको भेंट कुबूल!
निभा रहे हैं प्यार के, हम तो सखे! उसूल।।

|| 193 ||

गया समय आता नहीं, और न बनता खास!
पकड़ समय को राखिये, भैया! अपने पास।।

|| 194 ||

देश-धर्म-कुल-जाति का, पड़े न आयु प्रभाव!
निश्छल बन्धन प्रीत का, उपजाता सद्भाव।।

|| 195 ||

यह अंग्रेजी-साल है, अभी कहाँ नव वर्ष?
ताण्डव करती शीत ऋतु, कहाँ दीखता हर्ष??

|| 196 ||

धरती से आकाश तक, धुँआ-धुँआ सब ओर!
कल भी कुहरा था घना, अब भी है हर छोर।।

|| 197 ||

इस अंग्रेजी साल का, होने आया अन्त!
नगर-गाँव, हर डगर में, कांप रहे हैं कन्त।।

|| 198 ||

अंग्रेजी नववर्ष हो, बहुत मुबारक मित्र!
वैभव फैले विश्व में, जैसे खुश्बू इत्र।।

|| 199 ||

नवसंवत-नववर्ष है, होता नया विहीन!
धरती से अम्बर तलक, करती सृष्टि बखान।।

|| 200 ||

उसे न धोखा कीजिए, करते जिसको प्यार!
निश्छल मन से दीजिए, दुर्लभ सब उपहार।।

|| 201 ||

सखा मिले जिस रूप में, खूब कीजिए प्यार!
निर्मल चित से कीजिए, उसको सदा दुलार।।

|| 202 ||

जिसकों तुमने प्यार से, हृदय लिया बसाय!
साथ न उसका छोड़िये, करिये सभी उपाय।।

|| 203 ||

बहुत कठिन संसार में, मिलना सच्चा प्यार!
अगर कहीं पर मिल गया, छोड़ न देना यार!!

|| 204 ||

अभी घाव गम्भीर है, कसक रहे हैं शूल!
धीरे-धीरे मित्रवर! जायेंगे सब भूल।।

|| 205 ||

अगर सदा खुश देखना, चाहो अपना प्यार!
प्राण! कभी बदलो नहीं, तुम अपना व्यवहार।।

|| 206 ||

अगर नहीं मन को रूचे, करिये अभिनय आप!
लेकिन, अपने प्यार का, मत बनिये अभिशाप।।

|| 207 ||

वापस फिर मिलता नहीं, छूट गया यदि प्यार!
टूटी माला प्यार की, जुड़े न फिर से यार!!

|| 208 ||

प्यार किया जाता नहीं, हो जाता है यार!
पलभर की मुस्कान पर, हृदय जाता हार।।

|| 209 ||

बिना समर्पण त्याग के, टिकता कभी न प्यार!
पलक झपकते मित्रवर! जीवन जाते हार।।

|| 210 ||

प्रेम न बन्धन मानता, प्रेम न माने हार!
फलते हैं शुभ कर्म जब, तब मिलता है प्यार।।

|| 211 ||

हो जाता है स्वर्ग तब, मिल जाता जब प्यार!
वरना तो संसार में, नर्क बहुत है यार!!

|| 212 ||

दिल का दिल पर राज हो, दिल सुनता आवाज!
पर्वत-नदियाँ-घाटियाँ, सब करते आगाज।।

|| 213 ||

युग-युग झेले प्यार ने, बड़े-बड़े प्रतिशोध!
रोक न पाये प्यार को, पर्वत-से अवरोध।।

|| 214 ||

प्यार न मज़हब मानता, और न जाति-समाज!
प्यार है पूजा-साधना, प्यार है पाक-नमाज।।

|| 215 ||

सखे! प्यार का रास्ता, सीधा-सरल-सपाट!
भेदभाव औ' द्वेष के, खुलते नहीं कपाट।।

|| 216 ||

प्यार-प्यार की भावना, निर्मल बहुत पवित्र!
गंगाजल-सी बह रही, युग-युग से सर्वत्र।।

|| 217 ||

नैन-नैन को देखकर, करें न कोई घात!
नैन-नैन की भावना, मौन समझते बात।।

|| 218 ||

भला-बुरा देखे नहीं, घृणा अथवा प्यार!
बहुत बड़ा खुद गर्ज है, व्यक्ति सखे! संसार।।

|| 219 ||

अपनी ही सन्तुष्टि को, करिये अच्छे काम!
भले प्रशंसा हो नहीं, पर, खुश होते राम।।

|| 220 ||

मन्दिर-मस्जिद-चर्च में, रोज जलाते दीप!
अंधकार गहरा रहा, पर हृदय के बीच।।

|| 221 ||

सभी सुखद स्मृतियाँ, धन्यवाद! आभार!
सखे! लिए हम जा रहे, अतिथि नेह सत्कार।।

|| 222 ||

धन-वैभव संसार का, नहीं चाहिए यार!
सखे! सहज मिलता रहे, मुझे तुम्हारा प्यार।।

|| 223 ||

जबसे देखा है तुम्हें, सहज हो गया प्यार!
हर पल लगता है मुझे, सखे! करूँ मनुहार।।

|| 224 ||

ईश्वर की इस सृष्टि में, सुन्दर दिव्य अनेक!
लेकिन, तुम मेरे लिए, प्राण प्रिये हो एक।।

|| 225 ||

खुला गगन, उपवन-चमन, केवल तुम हो साथ!
गोद तुम्हारी लेटकर, रहूँ चूमता माथ।।

|| 226 ||

ऊँची पर्वत चोटियाँ, हो नदिया का तीर!
प्राण! तुम्हारी गोद हो, बहती प्रेम-समीर।।

|| 227 ||

नौका हो सखि! प्यार की, नदिया-झरना-सिन्धु!
प्राण! चूमता मैं रहूँ, ओंठ-नैन तिल बिन्दु।।

|| 228 ||

सागर-तट पर साथ हो, सखे! दूर संसार!
खुले गगन-एकान्त में, प्यार करें मनुहार।।

|| 229 ||

प्राण! साथ बस चाहिए, और न कोई चाह!
जीवन-पथ पर हम चलें, सदा प्यार की राह।।

|| 230 ||

जो आता, जाता वहीं, सब मिट जाता यार!
लेकिन, इस संसार में, जिन्दा रहता प्यार।।

|| 231 ||

काशी-कावा की तरह, गंगा जल-सा प्यार!
जिसने इसको चख लिया, अमर हुआ संसार।।

|| 232 ||

होता सच्चे प्यार में, परमेश्वर का वास!
प्यार न नफ़रत जानता, प्यार सत्य मधुमास।।

|| 233 ||

जीवन में होता नहीं, सबको प्यार नसीब!
मिले प्यार का रत्न जब, रहता कहाँ गरीब??

|| 234 ||

धन-वैभव संसार में, होता आया फेल!
युग-युग से जीवित रहा, प्यार-प्यार का खेल।।

|| 235 ||

मिले प्यार-सम्मान जब, मिलती नई उमंग!
बच्चों की अठखेलियाँ, भरती कई तरंग।।

|| 236 ||

अम्बर में उड़ते हुए, मनको रूचे विमान!
अगर साथ में प्यार हो, फिर है स्वर्ग समान।।

|| 237 ||

चलो मित्रवर! साथ में, गंगा-जमुना-तीर!
जहाँ प्यार करता रमण, गाती गीत समीर।।

|| 238 ||

चाँद-सितारे रात में, जल को रहे निहार!
उतर स्वर्ग से प्यार भी, नौका करे विहार।।

|| 239 ||

यह है नगरी प्रीत की, चले न कोई रीत!
धरती से आकाश तक, प्रीत-प्रीत बस प्रीत।।

|| 240 ||

कौन कह रहा प्रीत में, छिड़ी वासना-जंग!
प्रीत-भावना-इत्र है, प्रीत गुलाबी-रंग।।

|| 241 ||

मंगलमय हर रूप है, प्रीत महा-आनन्द!
दिया प्रीत ने विश्व को, सच्चा परमानन्द।।

|| 242 ||

मन्दिर-मस्जिद-चर्च हों, अथवा गुरू-दरबार!
कावा से कैलाश तक, बाँट रहे सब प्यार।।

|| 243 ||

ईसा-मूसा-बुद्ध हो, मोहन-राम-रहीम!
दुनिया का हर धर्म ही, करता प्यार असीम।।

|| 244 ||

कहने को कुछ भी कहो, प्यार-पुण्य या पाप!
अटल सत्य है प्यार ही, सबका माई-बाप।।

|| 245 ||

किसी रूप में देख लो, सजे प्यार के रंग!
जहाँ प्यार होता नहीं, सब होता बदरंग।।

|| 246 ||

बिना प्यार सम्भव नहीं, कोई लक्ष्य महान!
जीत लिया है प्यार ने दुनिया का विज्ञान।।

|| 247 ||

भ्रष्ट आचरण है जहाँ, होगा वहाँ न प्यार!
दुराचार के मूल में, नफ़रत भरी हजार।।

|| 248 ||

हत्या-चोरी-अपहरण, लूटपाट-संहार!
होगा पतित समाज वह, जहाँ न होता प्यार।।

|| 249 ||

नेता बनकर देश को, लूट रहे मक्कार!
देश-प्रेम की भावना, कुचल रहे गद्दार।।

|| 250 ||

जैसे-जैसे बढ़ रहा, नफ़रत का बाजार!
तैसे-तैसे पल रहा, आतंकी आचार।।

|| 251 ||

मानवता की भावना, होती जितनी सुप्त!
उधर प्यार की भावना, होती उतनी लुप्त।।

|| 252 ||

पता नहीं क्यों प्यार को, कहते यहाँ गुनाह!
नफ़रत-हिंसा-क्रूरता, देते उन्हें पनाह।।

|| 253 ||

प्यार-प्यार की जिन्दगी, होती सच्ची स्वर्ग!
सखे! प्यार में कीजिए, जीवन निज उत्सर्ग।।

|| 254 ||

सभी समस्या विश्व की, पायेंगी अवसान!
अगर परस्पर आदमी, प्यार करे अवदान।।

|| 255 ||

नफ़रत-हिंसा द्वेष के, जब तक पलें विचार!
तब तक जग में आदमी, छोड़े नहीं विकार।।

|| 256 ||

मटर-चना-जौ-गेहूँ के, लुप्त हो रहे खेत!
पीली सरसों गुम गयी, सुप्त हो गया हेत।।

|| 257 ||

जैसी जिसकी भावना, करता है वह बात!
अन्धे की मजबूरियाँ, कहे दिवस को रात।।

|| 258 ||

बिना बात ही लोग क्यों, मन में रखते वैर?
हमतो ममसे चाहते, जग में सबकी खैर।।

|| 259 ||

विष-अमृत की भाँति हैं, कडुवे-मीठे बोल!
घृणा दो या प्यार दो, सबका अपना मोल।।

|| 260 ||

क्षणभर की मुस्कान से, मिले किसी को चैन!
यार! फ़र्क पड़ता नहीं, मुस्काऊँ दिन-रैन।।

|| 261 ||

सहनशीलता गुम गयी, क्रोध नहीं कन्ट्रोल!
माचिस जरा दिखाइये, जल उठता पैट्रोल।।

|| 262 ||

व्रत-पूजा-रोजा करो, अथवा पढ़ो नमाज!
नहीं बने यदि आदमी, जीवन-व्यर्थ समाज।।

|| 263 ||

मुख है मानो चन्द्रमा, श्याम सलौने बाल!
मन करता है चूम लूँ, फूलों जैसे गाल।।

|| 264 ||

ओठ गुलाबी-पंखुरी, भृकुटि नैन विशाल!
उच्च भाल, मन-मोहिनी, तेरी कहाँ मिसाल??

|| 265 ||

बहुत दूर बैठी हुई, तुम नदिया के तीर!
चला दृष्टि के वाण को, देती हृदय चीर।।

|| 266 ||

नैनों ने देखा सखे! औचक पहली बार!
पता नहीं कब जुड़ गया, सहज प्यार का तार।।

|| 267 ||

ऊँचे आसन बैठकर, लेश न कीजे गर्व।
नहीं नियति का कुछ पता, मिट जाता है सर्व।।

|| 268 ||

अपनी भाषा-राष्ट्र से, कोई बड़ा न मित्र!
तनिक लगा लो प्यार से, अपने तन यह इत्र।।

|| 269 ||

अपनी भाषा-राष्ट्र से, करिये सच्चा प्यार!
सदा मिले सम्मान भी, नहीं मिलगी हार।।

|| 270 ||

केवल सच्चा प्यार ही, दे देता है जीत!
पद-वैभव-सम्मान सब, हासिल करती प्रीत।।

|| 271 ||

वैसे तो संसार में, मतलब का व्यवहार!
लक्ष्य अगर है जीतना, कर तू सबसे प्यार।।

|| 272 ||

मात-पिता-भाई-बहिन, रिश्ते करें दुलार!
सहज भाव सब समय पर, मिलती खुशियाँ प्यार।।

|| 273 ||

जीवन में जो भी मिले, करो राम के नाम!
दुनिया को देते रहो, सखे! प्यार-पैगाम।।

|| 274 ||

धोखा-छल औ' द्वेष का, कहाँ प्यार में काम!
प्यार-प्यार के वास्ते, सब कुछ करता नाम।।

|| 275 ||

बढ़ी महत्वाकांक्षा, अति के हुए शिकार!
पद-वैभव-सम्मान के, बढ़ने लगे विकार।।

|| 276 ||

स्वाभिमान किंचिद नहीं, करें चरण-स्पर्श!
लोक-लाज का आवरण, चिन्तन खाक विमर्श।।

|| 277 ||

केवल सच्चा मीत ही, चले पकड़कर हाथ!
भले-बुरे हर वक्त में, देता खुलकर साथ।।

|| 278 ||

बहुत कठिन संसार में, मिलना सच्चा प्यार!
लेकिन उससे भी कठिन, निभे सदा व्यवहार।।

|| 279 ||

माँ-बेटी-पत्नी-बहिन, सब नारी के रूप!
पर, मज़हब ने भेंट की, इन्हें करारी धूप।।

|| 280 ||

नारी का शोषण करे, हर मज़हब, हर धर्म!
नर ने केवल स्वार्थ में, रचे अनेक कुकर्म।।

|| 281 ||

नारी, नर की सहचरी, सौन्दर्य प्रतिमान!
लेकिन, पुरूषों ने दिया, शोषण का वरदान।।

|| 282 ||

क्रेता-विक्रेता पुरूष, नारी का बाजार!
लगी हुई हैं ढेरियाँ, किये साज-श्रृंगार।।

|| 283 ||

पैसा फैंको क्रय करो, कोई नहीं अभाव!
यह नारी-बाजार है, जलता हुआ अलाव।।

|| 284 ||

युग-युग में बिकती रही, नारी खड़ी बजार!
यह नारी की अस्मिता, बिकती रोज हजार।।

|| 285 ||

युग-परिवर्तन हो गया, बदल गये उपचार!
अब नारी बिकती नहीं, खुले आम बाजार।।

|| 286 ||

जागी नव संचेतना, परिवर्तन सिरमौर!
शिक्षा-समता-सोच का, अब आया है दौर।।

|| 287 ||

ऊँची शिक्षा प्राप्त कर, बदल रही है सोच!
अर्जित कर आजीविका, रही नहीं अब पोच।।

|| 288 ||

ज्यों-ज्यों शिक्षा बढ़ेगी, हो नारी-उत्थान!
त्यों-त्यों शोषित जिन्दगी, पायेगी अवसान।।

|| 289 ||

गूँज रही हर क्षेत्र में, नारी की आवाज!
बचा न कोई क्षेत्र है, जहाँ नहीं आगाज।।

|| 290 ||

शनैः शनैः बदले सभी, नारी के सब रूप!
कई देश में विश्व के, बनी हुई है भूप।।

|| 291 ||

नारी में नवचेतना, बदल रहा संसार!
समता की दीवार पर, अब करती है प्यार।।

|| 292 ||

भला-बुरा वह जानती, रखती बड़ा विवेक!
केवल सच्चे मित्र का, करती है अभिषेक।।

|| 293 ||

खंजन जैसे नैन हैं, पुष्प सरीखे बैन!
मुख है मानो चन्द्रमा, देखे पड़े न चैन।।

|| 294 ||

रीति अनूठी प्यार की, हर पल चाहे साथ!
घर-बाहर-एकान्त में, चले पकड़कर हाथ।।

|| 295 ||

आग लगे दोनों तरफ, तभी उपजता प्यार!
वरना तो संसार में, कौन करे मनुहार।।

|| 296 ||

भेदभाव जाने नहीं, हर पल जीता प्यार!
तन का, मन का, आवरण, फेंके प्रेम उतार।।

|| 297 ||

दुनिया कितनी भी गिरे, नहीं मरेगा प्यार!
रहें फरिश्ते प्यार के, नहीं मिटेंगे यार।।

|| 298 ||

अब भी अच्छे लोग हैं, भरा दिलों में प्यार!
सखे! प्यार के नाम पर, सब कुछ देते वार।।

|| 299 ||

बुरी नज़र को झेलता, प्रेम सदा चुपचाप!
करता रक्षा प्यार की, प्यार अकेला आप।।

|| 300 ||

दुनिया की हर दौड़ में, सफल रहा है प्यार!
केवल चुम्बन प्यार का, हरता सभी विकार।।

|| 301 ||

कितना ऊँचा लक्ष्य हो, हो जाता आसान!
केवल सच्चा प्यार ही, करता सभी निदान।।

|| 302 ||

बिना प्यार के जिन्दगी, हो जाती है व्यर्थ!
हुआ किसी से प्यार तो, बदले जीवन-अर्थ।।

|| 303 ||

भर देता है प्यार ही, मन में नई उड़ान!
प्यार-प्यार को चाहता, देता नई मचान।।

|| 304 ||

कोई बने पसन्द यदि, बड़ी नहीं यह बात!
कोई करे पसन्द तो, बहुत बड़ी है बात।।

|| 305 ||

बुरा अगर कहता हमें, मत कर दिल नाशाद!
अरे यार! यह सोच ले, करता तो है याद।।

|| 306 ||

अगर नहीं है आपको, चीजों का संज्ञान!
चर्चा-परिचर्चा करो, जब तक मिले न ज्ञान।।

|| 307 ||

कोई तुमको चाहता, क्या कम है यह बात!
वरना तो संसार में, रिश्ते करते घात।।

|| 308 ||

बदन छरहरा, चन्द्रमुख, विषधर जैसे बाल!
अधर सुधारस से भरे, करते नैन कमाल।।

|| 309 ||

मानो आयी चाँदनी, कर सोलह श्रृंगार!
अथवा आयी स्वर्ग से, सुषमा अमित अपार।।

|| 310 ||

कहने को साहित्य के, सेवक बनें महान!
लेश नहीं संवेदना, बाँटे कविता ज्ञान।।

|| 311 ||

खिलते फूल गुलाब के, कितने भाव विभोर!
जग को खुशियाँ बाँटते, मेरे नन्द किशोर।।

|| 312 ||

इस दुनिया की भीड़ से, सखे! चलें एकान्त!
हो पर्वत की चोटियाँ, या तट सिन्धु प्रशान्त।।

|| 313 ||

साथ-साथ घूमें-फिरे, स्वच्छ चाँदनी रात!
झिल मिल तारों से करें, शुभे! प्यार की बात।।

|| 314 ||

नदिया, सागर-झील हो, नौका करें विहार!
शुभे! तुम्हारी गोद में, पाये प्रीत निखार।।

|| 315 ||

हृदय से एकान्त में, कभी पूछना यार!
करे कुमुदिनी चन्द्र से, कितना निश्छल प्यार।।

|| 316 ||

वाणी के षड्यन्त्र से, बनता कौन महान!
जिसकी वाणी रस-भरी, बैठा वही मचान।।

|| 317 ||

चलें क्षितिज के पास हम, खुले गगन के बीच!
स्वच्छ चाँदनी है जहाँ, रही धरा को सींच।।

|| 318 ||

तरह-तरह के रूप धर, पहुँच रहा इन्सान!
मन्दिर-मस्जिद-चर्च में, सभी जगह शैतान।।

|| 319 ||

रिश्वत खाते-लूटते, अधिकारी बदजात!
भला-बुरा समझें नहीं, ज्यों कुत्ते की जात।।

|| 320 ||

लेश शर्म इनको नहीं, मिलते रहें छदाम!
अगर दिया पैसा नहीं, कर दें काम-तमाम।।

|| 321 ||

महापुरूष कहते जिन्हें, या कहते भगवान!
देखो! उनके मूल में, गुरूओं का वरदान।।

|| 322 ||

कोई भी युग देख लो, रचा नया इतिहास!
जो भी युग नायक रहा, था गुरू का विश्वास।।

|| 323 ||

राम-कृष्ण के युग रहे, या कलियुग का काल!
नाम रूप कुछ भी रहे, दी गुरूओं ने ढाल।।

|| 324 ||

त्याग- समर्पण- साधना- सेवा- निष्ठा-प्यार!
यही शिष्य से चाहिए, गुरूवर को उपहार।।

|| 325 ||

गुरूवर की कृपा हुई, हुए असम्भव काम।
गुरू-कृपा ने ही दिये, राम-कृष्ण-बलराम।।

|| 326 ||

सीमा पर शासन करें, बेईमान-मक्कार!
क्या होगा उस देश का, जहाँ लोग गद्दार।।

|| 327 ||

तेरे-मेरे बीच में, मजहब की दीवार!
जब तक यह टूटे नहीं, रहे सिसकता प्यार।।

|| 328 ||

दो पल मिलने से सखे! बढ़ता है विश्वास!
वह दो पल की जिन्दगी, बन जाती मधुमास।।

|| 329 ||

पहले-पहले प्यार के, दो पल रहते याद!
दो पल पहले प्यार के, रहा मौन संवाद।।

|| 330 ||

रेल सदा चलती रहे, होती रहे नमाज!
मानवता के दायरे, करो न तंग ज़नाब।।

|| 331 ||

भारत के गणतंत्र का, फैला विश्व प्रकाश!
आओ! सब मिलकर करें, उन्नति हेतु प्रयास।।

|| 332 ||

मानो प्रतिमा मोम की, अथवा रूप-अनूप!
या फिर देवी प्यार की, आयी धरकर रूप।।

|| 333 ||

उठा जिन्हें फुटपाथ से, दी उनकी पहचान!
आज घूरते जा रहे, जैसे हों अनजान।।

|| 334 ||

बैठे आज मचान पर, भूल गये औकात!
यार अजनबी से हुए, वाह! प्यार सौगात।।

|| 335 ||

पद-वैभव औ' सम्पदा, उन पर हुई अकूत!
सखे! अभावों का नहीं, देते कहीं सबूत।।

|| 336 ||

औरत हो या आदमी, सभी अलग श्रीमान!
सबके अपने आचरण, अलग-अलग ईमान।।

|| 337 ||

पता नहीं क्यों आदमी, जाता भूल अतीत!
अहंकार का आवरण, रखता उसे सभीत।

|| 338 ||

पद-वैभव जिसने दिया, गया उसी को भूल!
पल दो पल का प्यार भी, लगे उसे महसूल।।

|| 339 ||

भले आदमी! भूल मत, जीवन में उपकार!
पल दो पल की जिन्दगी, मत कर तू अपकार।।

|| 340 ||

लोकतंत्र संसार के, निश्चित भव्य महान!
पर, भारत-गणतन्त्र के, बैठा विश्व मचान।।

|| 341 ||

सुन्दर हो नाजुक बहुत, करते प्यार-दुलार!
भेदभाव की जिन्दगी, हमें न भाती यार!!

|| 342 ||

मगंलमय हो आपको, भारत का गणतंत्र!
बने विश्व-सरताज यह, युग-युग रहे स्वतंत्र।।

|| 343 ||

जाति-धर्म-मज़हब सभी, होवे इनका नाश!
मानवता ही विश्व में, पाये सदा विकास।।

|| 344 ||

मज़हब की बैसाखियाँ, बाँध रही हैं हाथ!
वरना, हम चलते सखे! पकड़ हाथ में हाथ।।

|| 345 ||

ईश्वर! मेरे देश का, करिये जरा इलाज!
बदल जाए इन्सान का, मज़हब-जाति - मिज़ाज।।

|| 346 ||

यह तन-मन की सादगी, फिर भी अति लाचार!
घुटन भरी यह जिन्दगी, क्यों दे दी करतार??

|| 347 ||

बड़ा प्यार से हो गया, मानो मज़हब-धर्म!
सहज समर्पण प्यार में, होती कैसी शर्म।।

|| 348 ||

प्यार नहीं कुछ चाहता, चाहे केवल प्यार!
निश्छल बन्धन प्यार का, चाहे बस मनुहार।।

|| 349 ||

है छत्तीस का आंकड़ा, प्यार-वासना बीच!
प्यार इबादत खुदा की, और वासना-कींच।।

|| 350 ||

मन है मीत! पतंग-सा, बँधा प्रीत की डोर!
चाह उड़ा लो! काट लो! हाथ तुम्हारे छोर।।

|| 351 ||

उड़ती अम्बर बीच में, ऊँची प्रीत-पतंग!
अगर कटी, मिलती नहीं, लूटें सभी मलंग।।

|| 352 ||

जीवन-पथ पर चल रहे, गहे प्यार का हाथ!
ऐसी ज़िद भी मत करो, छूट जाय जो साथ।।

|| 353 ||

होती सच्चे प्यार की, दीवारें मजबूत!
कभी गिरा पाते नहीं, मज़हब के यमदूत।।

|| 354 ||

टेढ़े-मेढ़े रास्ते, मंजिल जिद्दी-मस्त!
पता नहीं कल का सखे! करें हौंसले पस्त।।

|| 355 ||

सखे! तोड़ पाये नहीं, महजब की दीवार!
एक ओर को झुक गयी, पीसा की मीनार।।

|| 356 ||

सखे! मज़हबी-बेड़ियाँ, पड़ी गले औ' पैर!
जो तोड़े उसकी यहाँ, नहीं रहेगी खैर।।

|| 357 ||

यहाँ प्यार-संवेदना, कोरी है बकवास!
निश्छल बन्धन प्यार का, केवल है उपहास।।

|| 358 ||

यहाँ न कोई शत्रु है, और न कोई मीत!
सखे! भावना की कभी, होगी यहाँ न जीत।।

|| 359 ||

फैली पर्वत श्रृंखला, हरियाली चहुँ ओर?
प्राकृतिक सुषमा अमित, मिलता ओर न छोर।।

|| 360 ||

चले छोड़कर तेजपुर, तीन दिनी प्रवास!
प्रेम और सद्भाव का, मिला स्वच्छ प्रकाश।।

|| 361 ||

ब्रहमपुत्र से पूछते, कहो कुशलता मात!
मौन हो गयी प्रश्न सुन, समझ समय की घात।।

|| 362 ||

याद रहेगा बन्धुवर! हिन्दी प्रेम महान!
जले तेजपुर बीच में, हिन्दी-दीप मचान।।

|| 363 ||

अगर निराशा मिल गयी, तोड़ो नहीं उसूल!
सखे! लक्ष्य छोड़ो नहीं, कभी खिलेंगे फूल।।

|| 364 ||

काम-क्रोध-मद-लोभ ये, कोई नहीं विकार!
ये मानव की शक्तियाँ, करें सदा उपकार।।

|| 365 ||

तुम क्या समझोगे सखे!, भावुकता-सम्बन्ध!
रहा तुम्हारी दृष्टि में, रिश्ता ज्यों अनुबन्ध।।

|| 366 ||

नारी का इतिहास है- शौर्य-समर्पण-प्यार!
पति का मिलन-विछोह भी, बनता उसे न भार।।

|| 367 ||

नारी मूरति त्याग की, सुषमा की है धाम!
उज्ज्वल गाथा प्रेम की, तीरथ-सी निष्काम।।

|| 368 ||

पहले क्या कुछ पास था, अब क्या कुछ है पास!
श्वांस रूकी सब कुछ गया, फिर क्यों रहे उदास।।

|| 369 ||

मन कोमल, सुन्दर बदन, धरें अधर मुस्कान!
नारी ऐसी चाहिए, मनो प्यार की खान।।

|| 370 ||

अभी-अभी नौकर हुआ, वन का मिला विभाग!
हरे-भरे वन में लगी, प्रथम माह ही आग।।

|| 371 ||

जनता ने बदला यहाँ, जब से अपना रूप।
तब से मौसम ने किया, निज को घोषित भूप।।

|| 372 ||

मानव जीवन गजब का, होवे यदि सत्संग!
वरना, तो प्रमाद से, हो जीवन बदरंग।।

|| 373 ||

मानव तन है गजब का, होवे यदि नीरोग!
वरना तो प्रमाद से, लगते सौ-सौ रोग।।

|| 374 ||

मानव बुद्धि विचित्र है, यदि हो ज्योतिर्मयि!
अहंकार से चेतना, होती तमोऽमयि।।

|| 375 ||

जंगल वह जंगल नहीं, जहाँ मिले थी शान्ति!
नाग, भेड़िए, बाज सब, करते खूनी क्रान्ति।।

|| 376 ||

अन्त समय तक एक भी, नहीं निभाता साथ।
माता-पत्नी-प्रेयसी, भगें छोड़कर हाथ।।

|| 377 ||

अपने सुख को भूलकर, कर सबका कल्यान!
आज नहीं कुछ दिवस में, पायेगा सम्मान।।

|| 378 ||

जो भी आये पास में, कर सबका उपकार।
सहज भाव जो भी बने, दे किंचिद् उपहार।।

|| 379 ||

कभी किसी को क्रोध में, मत दीजे अभिशाप!
खुद को ही पातक लगे, पड़े भोगना पाप।।

|| 380 ||

उसे क्रोध ने कर दिया, पागल इतना यार!
अपना सब कुछ भूलकर, गाली बके हजार।।

|| 381 ||

ईश्वर की कृपा हुई, मिला हमें गन्तव्य।
इसीलिए अब दर्द से, पूछ रहे मन्तव्य।।

|| 382 ||

दो पल यात्रा के मिले, करो नहीं बेकार।
पल दो पल में बाँट दो, तुम पथिकों में प्यार।।

|| 383 ||

वस्तु-व्यक्ति और स्थिति ने, पैदा किया विकार।
मानव, जीवन-सत्य को, भूला भली प्रकार।।

|| 384 ||

सत्य देखना है अगर, करो न बन्धु! कुतर्क।
'ही' औ' 'भी' सिद्धान्त का, बुद्धि! समझले फर्क।।

|| 385 ||

जीवन के उत्थान में, पैसा भी है तथ्य।
हाँ पैसा सब कुछ नहीं, यह भी जीवन-सत्य।।

|| 386 ||

वैभव ही 'आतिथ्य' है, और प्रतिष्ठा प्रेम!
घर की शोभा-'व्यवस्था', 'समाधान' सुख-क्षेम।।

|| 387 ||

सदाचार रहता जहाँ, वह घर जान सुवास!
प्रेम जहाँ आतिथ्य में, प्रभु का मान निवास।।

|| 388 ||

शोषण से पैसा मिले, ऐसा धन है पाप!
बढ़ता जिससे रोग हो, भोजन वह अभिशाप।।

|| 389 ||

बड़े चतुर ये जीव हैं, - कौआ - बगुला - गिद्ध!
पलक झपकते ही करें, अपना उल्लू सिद्ध।।

|| 390 ||

कर्कश बोल न बोलिये, होता कष्ट अपार!
तनक-मनक-सी बात थी, पैदा किया विकार।।

|| 391 ||

सूरज द्वेष न मानता, हवा न जा़ने वैर!
जल-थल-नभ-पावक सभी, रखें सृष्टि की खैर।।

|| 392 ||

कहीं न कोई कष्ट है, कहीं न कोई रोग!
अपने-अपने कर्मरत, रहें अगर सब लोग।।

|| 393 ||

ऊँचे-ऊँचे संत हैं, देते लंगर-भोज!
लेकिन, हाय! गरीब का, भरे न कोई ओज।।

|| 394 ||

संत अगर तू संत है, लगे तुझे क्यों रोग?
रोगी तन-मन से हुआ, साध रहा तू योग।।

|| 395 ||

दिवस ढला, सूरज गया, आयी काली रात!
हाथ न दीखे हाथ को, कहो करें क्या बात??

|| 396 ||

समय गया, इज्जत गयी, रही न वैसी आह!
बदल जाय जब राह तो, रहे न वैसी चाह।।

|| 397 ||
जीवन-मूल्यों की सखे! कौन करे परवाह?
सबके अपने राग हैं, सबकी अपनी चाह।।
|| 398 ||
राग-द्वेष जानें नहीं, समझे केवल प्यार!
बच्चों को बस चाहिए, हर पल ही मनुहार।।
|| 399 ||
स्वस्थ रहो! सानंद हो! वैभव बढ़े अपार!
मंगलमय हो जन्म दिन, मिले सभी का प्यार।।
|| 400 ||
सावधान हो जा मनुज! विषम समय का दौर!
झूंठ, द्वेष-अन्याय को, बना नहीं सिरमौर।।
|| 401 ||
पिंजरे में पंछी किये, अगणित चुन-चुन बंद!
निर्मम बंधन की सजा, है फांसी का फंद।।
|| 402 ||
कुत्ते जैसी जिन्दगी, भोग रहे तुम यार!
जब चाहे टुकड़ा दिया, जब चाहे दुत्कार।।
|| 403 ||
तुम अवसरवादी बड़े, कहाँ समझते प्यार!
कोमल रिश्तों की करी, तुमने मिट्टी ख्वार।।
|| 404 ||
सखे! आदमी की नहीं, बस धन की पहचान!
करते-रहते रात-दिन, अपनो का अपमान।।
|| 405 ||
उसका दण्डा है सबल, नियम सख्त प्रचण्ड!
तुमने जैसा किया है, पड़े भोगना दण्ड।।

|| 406 ||

उच्च चरित्र निर्माण के, प्रेरक हैं ये ग्रंथ।
अध्ययन-चिंतन-आचरण, हमें बताते संत।।

|| 407 ||

कौआ-कुत्ता और कवि, बैठें कभी न शान्त।
यदि हो जायें अशान्त ये, हो परिवेश अशान्त।।

|| 408 ||

झूंठ छिपाने के लिए, बोल रहे नित झूंठ।
झूंठ बोलने से सखे! मिटता कभी न झूंठ।।

|| 409 ||

आसमान में उड़ रही, वैभव भरी पतंग।
दो गज डोरी कर गयी, सब खुशियाँ बदरंग।।

|| 410 ||

झूंठ बोल धोखा दिया, और दिखाते आँख।
रावण अनुपम वीर था, फँसा बालि की काँख।।

|| 411 ||

चुगलखोर का रंग था, या मेरा व्यवहार।
प्रीति-नीति औ' सत्य की, देखी मैंने हार।।

|| 412 ||

बच्चों को शुभकामना, मधुर-मधुर व्यवहार।
पाप मिटे, वैभव बढ़े, कहना सबसे प्यार।।

|| 413 ||

बोल प्यार के बोलते, होता ख़त्म जमाव।
कटु बचनों को बोलकर, सिर कर लिया तनाव।।

|| 414 ||

कल तक जो सम्मान था, आज न वैसी बात।
चुगलखोर हैं साथ में, करें प्रसंशा-घात।।

|| 415 ||

भ्रष्ट कमाई से सखे! कभी न हो कल्यान।
निन्दा, अपयश, कायली, मिले अमित अपमान।।

|| 416 ||

साठ-गांठ कर झूंठ से, बना लिया जब तंत्र।
भला असर अब क्यों करे? बिच्छू वाला मंत्र।।

|| 417 ||

मानसरोवर छोड़कर, हंस उड़े परदेश।
प्रियतम को लगने लगा, अपना देश-विदेश।।

|| 418 ||

शेष बची है देख लो, केवल झूंठी शान।
सत्य साथ जब तक रहे, तब तक रहती आन।।

|| 419 ||

अरे! बता किस लक्ष्य हित, धन कर लिया अकूत।
कमी उसे रहती नहीं, जिसको मिला सपूत।।

|| 420 ||

अधिक समय टिकता नहीं, मनमानी का दौर।
फिर मेघों को चीरकर, रवि बनता सिरमौर।।

|| 421 ||

सच्चाई का कब तलक, बन्द रखो मुँह यार!
सच्चाई के सामने, टिकता नहीं विकार।।

|| 422 ||

उलझे-उलझे से रहे, जीवन के संवाद।
तनक-मनक-सी बात पर, होते रहे विवाद।।

|| 423 ||

बात अग़र कुछ थी नहीं, फिर क्यों हुआ बवाल?
कहीं नियत में खोट है, उठते मौन सवाल।।

|| 424 ||

शब्द न कोई बोलता, पता नहीं हम कौन?
निखिल सृष्टि इंगित करे, सूत्रधार है मौन!!

|| 425 ||

निन्दा, चोरी, अपहरण, वैर, द्वेष, अपमान।
अर्द्धशती के द्वार पर, देख रहे श्रीमान।।

|| 426 ||

अंधकार इस सृष्टि से, भागे कोसों दूर।
एक दीप की रोशनी, कर देगी मजबूर।।

|| 427 ||

सकल सृष्टि में साथ मिल, दीप जलाओ मीत!
मानवता के शयन में, गाओ लोरी-गीत।।

|| 428 ||

उच्च लक्ष्य तो चाहते, करें न सोच विचार।
उच्च लक्ष्य को चाहिये, उर में उच्च विचार।।

|| 429 ||

कविता करी न चाकरी, भानु-भास्कर नाम!
सूरज-दिनकर 'दिवाकर', अवि-रवि-कवि बदनाम।।

|| 430 ||

गली-गाँव औ' नगर में, सूरज-सविता-सोम!
दिनकर-दिनमणि-'दिवाकर', अरूण-अर्क अब कौम।।

|| 431 ||

आँखों में आँसू भरे, छुपा दर्द का घाव!
महानगर के चौक पर, खोज रहे हम गाँव।।

|| 432 ||

स्वस्थ रहें! सानन्द सब, हो सुखमय परिवार!
मनोकामना पूर्ण हो, रहे मधुर व्यवहार।।

|| 433 ||

यदि होवे मतभेद भी, करें प्यार-सम्मान!
वाणी औ' व्यवहार से, हो न कभी अपमान।।

|| 434 ||

गलत फ़हमियों की दवा, केवल है संवाद!
निंदा-चुगली-ईर्ष्या, पैदा करें विवाद।।

|| 435 ||

अपने-अपने काम में, रहें मस्त परिवार!
सभी परस्पर बाँट लें, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 436 ||

बदल गयी सरकार है, बदल गये ईमान!
रूप बदलकर भेड़िये, बन बैठे श्रीमान।।

|| 437 ||

बात-बात में ही गया, खुद से इतना दूर!
इसीलिए तू हो रहा, खुद इतना मजबूर।।

|| 438 ||

पति-पत्नी सम्बन्ध है, जीवन का संवाद!
एक अवतरण प्यार का, दूजा है अनुवाद।।

|| 439 ||

दो पल यात्रा के मिले, करो नहीं बेकार।
पल दो पल में बाँट दो, तुम पथिकों में प्यार।।

|| 440 ||

कर्कश बोल न बोलिये, होता कष्ट अपार!
तनक-मनक-सी बात थी, पैदा किया विकार।।

|| 441 ||

स्वस्थ रहो! सानंद हो! वैभव मिले अनन्त!
मंगलमय जीवन बने, उन्नति फले दिगन्त।।

|| 442 ||

स्वागत करता सिन्धु है, लहरें भरें हिलोर।
नाच रहे हैं क्रूज पर, युवती-युवक-किशोर।।

|| 443 ||

युवक-युवतियाँ नाचते, हृदय छुपा अनंग।
सिन्धु करे अठखेलियाँ, अद्‌भुत भाव-तरंग।।

|| 444 ||

नभ से मेघा देखते, आतुर बहुत अधीर।
सबके मुख को चूमती, शीतल सिन्धु समीर।।

|| 445 ||

निर्मल नीला सिन्धुजल, विस्तृत और अपार।
समा गया क्यों सिन्धु में, यह अम्बर साकार।।

|| 446 ||

भला-बुरा सब कर दिया, मैंने तेरे नाम।
चाहें मुझे संवारले, चाहें कर बदनाम।।

|| 447 ||

पटरी से उतरी हुई, मानवता की रेल।
हुए ब्रेक आदर्श के, अनजाने ही फ़ेल।।

|| 448 ||

गिरा इस क़दर आदमी, फैल रही दुर्गंध।
बात-बात में खा रहा, बच्चों की सौगंध।।

|| 449 ||

ऊँच-नीच के भेद का, बंद करो अब खेल।
हवा-सरीखे तुम बहो, करते सबसे मेल।।

|| 450 ||

दुनिया के मज़दूर सब, हो जायें यदि एक।
अमीर, ग़रीब के समक्ष, घुटने देगा टेक।।

|| 451 ||

प्रेम नहीं, आतंक की, भाषा है आतंक।
गद्दारों को मार दो! राजा हो या रंक।।

|| 452 ||

शांति और सद्भाव का, एक यही है मंत्र।
सारा जग-परिवार है, एक ईश का तंत्र।।

|| 453 ||

भला कभी होगा नहीं, करलो कितने युद्ध।
जीत-जीतकर हारते, दोनों पक्ष विरूद्ध।।

|| 454 ||

अपने वैभव-इत्र की, रखना शीशी बंद।
खुले हुए माहौल में, टिकती नहीं सुगंध।।

|| 455 ||

घर का चूल्हा तोड़कर, अलग पकायी खीर।
अपने किए कुकर्म की, भोग रहे अब पीर।।

|| 456 ||

महानगर आये हुए, बीत रहे हैं साल।
ऐसी भी क्या बेरुख़ी, नहीं पूछते हाल।।

|| 457 ||

यहाँ-वहाँ कचरा पड़ा, बनी गंदगी ठेर।
महानगर की जिंदगी, है कष्टों का ढेर।।

|| 458 ||

महानगर में पहुँचकर, भूल गया वह प्यार।
भव्य भवन को देखकर, गयी झोंपड़ी हार।

|| 459 ||

महानगर में हो गयीं, दिल की गलियाँ तंग।
इसीलिए छिड़ने लगी, बात-बात में जंग।।

|| 460 ||

कितने सुंदर है अधर, ज्यों गुलाब की कोर।
अथवा सूरज की किरन, मुस्काती हो भोर।।

|| 461 ||

बोले किस अंदाज में, प्यार-भरे दो बोल।
जीवन-भर देते रहे, हम दो पल का मोल।।

|| 462 ||

दो पल जिनसे भी मिलो, मन में रहे विचार।
वह दो पल की ज़िन्दगी, बन जाये उपहार।।

|| 463 ||

बोल बोलने की नहीं, जिनको रही तमीज।
वही शिष्टता की हमें, करते भेंट कमीज़।।

|| 464 ||

दर्द-घुटन-पीड़ा-रुदन, असफल तंत्र तमाम।
जाते-जाते कर गयी, सदी हमारे नाम।।

|| 465 ||

कितने ढोंगी आप हैं, खुद से पूछो आप।
तनसे, मनसे, रोज ही, करते कितने पाप।।

|| 466 ||

सहज-सरल अभिव्यक्ति ही, बन जाती है छंद।
निश्छल मन-व्यवहार से, कट जाते सब फंद।।

|| 467 ||

ज़रा-ज़रा-सी बात पर, करते खड़ा विवाद।
यह छोटी-सी जिंदगी, करते क्यों प्रतिवाद।।

|| 468 ||

भूखे-नंगों को दिया, जब रक्षा अधिकार।
अरे यार! तुम खोजते, अब अपना घर बार।।

|| 469 ||

उठो! कमर कस कर उठो! लो हाथों तलवार।
सत्य-अहिंसा से भला, किसे मिले अधिकार।।

|| 470 ||

सत्य, अहिंसा, प्यार के, निष्फल रहें उपाय।
युवकों! फिर तो दंड ही, करता सही सहाय।।

|| 471 ||

जन-सेवक शोषण करें, भ्रष्ट हुए बदजात।
झूठे सपनों का महल, खड़ा करें दिन रात।।

|| 472 ||

अब पूरा महौल है, त्रस्त और बेचैन।
आम आदमी को नहीं, पल दो पल का चैन।।

|| 473 ||

पल-पल बढ़ता जा रहा, निर्मम भ्रष्टाचार।
मौन खड़ा क्यों आदमी, देख रहा व्यभिचार।।

|| 474 ||

निगल गया है देश को, रिश्वतरूपी नाग।
बचा सको तो लो बचा, युवको! अपना राग।।

|| 475 ||

जिस आसन पर बैठकर, बना विश्व सिरमौर।
उसी देश में चल रहा, भ्रष्ट व्यवस्था दौर।।

|| 476 ||

रोज़ आदमी मर रहा, भूख खड़ी लाचार।
मंदिर-मस्जिद कर रहे, मौतों का व्यापार।।

|| 477 ||

आज बनावट का चलन, बदल गये दस्तूर।
सड़न दिमाग़ों में पली, घुसता जाय फितूर।।

|| 478 ||

मन का रहा न आचरण, जीवन बारह वाट।
हिंदु-मुस्लिम हो गये, नदिया के दो पाट।।

|| 479 ||

घर-घर में दीपक जलें, जीवन हो खुशहाल।
वैभव-सुख-समृद्धि की, मानव बने मिशाल।।

|| 480 ||

धन की चकमक ने किया, कुछ ऐसा व्यवहार।
टुकड़े-टुकड़े कर दिया, मनुज-मनुज का प्यार।।

|| 481 ||

देह भले बदले नहीं, बदल जाय पर ध्येय।
महिमा है सत्संग की, मानव बने अजेय।।

|| 482 ||

ईश्वर! मेरे देश का, करिये जरा इलाज!
बदल जाय इन्सान का, मज़हब-जाति-मिजाज।।

|| 483 ||

जय! जय! जय! माँ सरस्वती! हंसवाहिनी मात!
निखिल विश्व को ज्ञान की, देती माँ! सौगात।।

|| 484 ||

ज्ञान अगर देती नहीं, जग रह जाता मूढ़!
बिना ज्ञान के आदमी, किंकर्तव्य विमूढ़।।

|| 485 ||

सकल ज्ञान के स्रोत सब, तब हो जाते बन्द!
कभी रचित होते नहीं, ललित कला नव छन्द।।

|| 486 ||

भव्य-शिल्प-निर्माण का, होता नहीं विकास!
पशुओं जैसी जिन्दगी, मानव-जन्म-विनाश।।

|| 487 ||

भोजन-वस्त्र-मकान की, करता चिन्ता कौन।
स्वच्छ खुले आकाश में, बैठे-सोते मौन।।

|| 488 ||

यहाँ प्रगति के नाम पर, आता क्यों विज्ञान!
यत्र-तत्र-सर्वत्र ही, फलता तम-अज्ञान।।

|| 489 ||

इस वसुधा पर जन्म का, क्या रह जाता अर्थ!
मानव-सपने-जिन्दगी, हो जाती तब व्यर्थ।।

|| 490 ||

भावुक-रिश्तों का यहाँ, होता कहाँ स्वरूप!
बिना ज्ञान के जिन्दगी, हो जाती अपरूप।।

|| 491 ||

रह जाता जग आदमी, जीवन भर गुमनाम!
बन्जारों-सा घूमता, मर जाता निष्काम।।

|| 492 ||

हे माँ! तुमने ज्ञान का, दिया महा उपहार!
सृष्टि मनोहर हो गयी, करती माँ मनुहार।।

|| 493 ||

बच्चे-बच्चे को मिला, एक सार्थक नाम!
रहा नहीं अब आदमी, पलभर को गुमनाम।।

|| 494 ||

रिश्तों का माता! दिया, सुन्दर-सा गुलदान!
गुँथे भावना-डोर से, मानव-पुरूष जहाँन।।

|| 495 ||

हे माँ! खोले ज्ञान के, तुमने नव-नव द्वार!
अब जीवन लगता नहीं, इनके कारण भार।।

|| 496 ||

धरती-जल-आकाश पर, नित्य हो रहे शोध!
हे माँ! तेरा ज्ञान ही, हमें दे रहा बोध।।

|| 497 ||

मानवता को दे रहा, मनुज नित्य उपहार!
भिन्न-भिन्न परिवेश में, लगता जग-परिवार।।

|| 498 ||

धरती पर टिकते नहीं, आज मनुज के पाँव!
उड़ पहुँचा आकाश में, उन तारों की छाँव।।

|| 499 ||

परी-लोक की कथाएँ, आज हुईं साकार!
अब सपनों की बात को, मात! मिला आकार।।

|| 500 ||

हुआ चतुर्दिक ज्ञान का, अद्‌भुत ही विस्फोट!
दानवता पर कर रहा, मानव भारी चोट।।

|| 501 ||

नृत्य-कला-संगीत को, मिले विविध आयाम!
गूँज रहा साहित्य में, माते! तेरा नाम।।

|| 502 ||

हे माँ! करता वन्दना अर्चन बारम्बार!
तेरी माया विश्व में, कितनी अपरम्पार??

|| 503 ||

तेरी कृपा का सदा, सुमन मिले उपहार!
मिले विश्व को रोशनी, मानव को मनुहार।।

|| 504 ||

व्रत-पूजा जानूँ नहीं, सत्य-आस्था साथ!
चरण-कमल में रात-दिन, झुका रहे माँ! माथ।।

|| 505 ||

मानवता पर छा रहा, भारी संकट आज!
भेदभाव-आतंक का, हुआ चतुर्दिक राज।।

|| 506 ||

रिश्तों का दर्पण हुआ, कैसा चकनाचूर!
धन का लोभी हो गया, मनुज आज भरपूर।।

|| 507 ||

जिन रिश्तों को रात-दिन, रहता था कुर्बान!
उन रिश्तों की अब नहीं, रही उसे पहचान।।

|| 508 ||

ऊपर से रिश्ते करें, मीठी-मीठी बात!
लेकिन हटते ही नजर, कडुवी-कडुवी घात।।

|| 509 ||

घर हो अथवा देश हो, गाँव-गली-परिवार!
जिधर देखता हूँ उधर, दीख रही बस हार।।

|| 510 ||

चाहें देश-विदेश हो, अथवा हुआ पड़ोस!
अहंकार में चूर है, ज्ञान हाय! बेहोश।।

|| 511 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम को, कायर कहे समाज!
शान्ति और सद्भाव की, पढ़ते नहीं नमाज।।

|| 512 ||

वाणी औ' व्यवहार से, गरल रहा है बांट!
बैठा है जिस डाल पर, रहा उसी को काट।।

|| 379 ||

कभी किसी को क्रोध में, मत दीजे अभिशाप!
खुद को ही पातक लगे, पड़े भोगना पाप।।

|| 380 ||

उसे क्रोध ने कर दिया, पागल इतना यार!
अपना सब कुछ भूलकर, गाली बके हजार।।

|| 381 ||

ईश्वर की कृपा हुई, मिला हमें गन्तव्य।
इसीलिए अब दर्द से, पूछ रहे मन्तव्य।।

|| 382 ||

दो पल यात्रा के मिले, करो नहीं बेकार।
पल दो पल में बाँट दो, तुम पथिकों में प्यार।।

|| 383 ||

वस्तु-व्यक्ति और स्थिति ने, पैदा किया विकार।
मानव, जीवन-सत्य को, भूला भली प्रकार।।

|| 384 ||

सत्य देखना है अगर, करो न बन्धु! कुतर्क।
'ही' औ' 'भी' सिद्धान्त का, बुद्धि! समझले फर्क।।

|| 385 ||

जीवन के उत्थान में, पैसा भी है तथ्य।
हाँ पैसा सब कुछ नहीं, यह भी जीवन-सत्य।।

|| 386 ||

वैभव ही 'आतिथ्य' है, और प्रतिष्ठा प्रेम!
घर की शोभा-'व्यवस्था', 'समाधान' सुख-क्षेम।।

|| 387 ||

सदाचार रहता जहाँ, वह घर जान सुवास!
प्रेम जहाँ आतिथ्य में, प्रभु का मान निवास।।

|| 388 ||

शोषण से पैसा मिले, ऐसा धन है पाप!
बढ़ता जिससे रोग हो, भोजन वह अभिशाप।।

|| 389 ||

बड़े चतुर ये जीव हैं, - कौआ - बगुला - गिद्ध!
पलक झपकते ही करें, अपना उल्लू सिद्ध।।

|| 390 ||

कर्कश बोल न बोलिये, होता कष्ट अपार!
तनक-मनक-सी बात थी, पैदा किया विकार।।

|| 391 ||

सूरज द्वेष न मानता, हवा न जाने वैर!
जल-थल-नभ-पावक सभी, रखें सृष्टि की खैर।।

|| 392 ||

कहीं न कोई कष्ट है, कहीं न कोई रोग!
अपने-अपने कर्मरत, रहें अगर सब लोग।।

|| 393 ||

ऊँचे-ऊँचे संत हैं, देते लंगर-भोज!
लेकिन, हाय! गरीब का, भरे न कोई ओज।।

|| 394 ||

संत अगर तू संत है, लगे तुझे क्यों रोग?
रोगी तन-मन से हुआ, साध रहा तू योग।।

|| 395 ||

दिवस ढला, सूरज गया, आयी काली रात!
हाथ न दीखे हाथ को, कहो करें क्या बात??

|| 396 ||

समय गया, इज्जत गयी, रही न वैसी आह!
बदल जाय जब राह तो, रहे न वैसी चाह।।

|| 397 ||

जीवन-मूल्यों की सखे! कौन करे परवाह?
सबके अपने राग हैं, सबकी अपनी चाह।।

|| 398 ||

राग-द्वेष जानें नहीं, समझे केवल प्यार!
बच्चों को बस चाहिए, हर पल ही मनुहार।।

|| 399 ||

स्वस्थ रहो! सानंद हो! वैभव बढ़े अपार!
मंगलमय हो जन्म दिन, मिले सभी का प्यार।।

|| 400 ||

सावधान हो जा मनुज! विषम समय का दौर!
झूंठ, द्वेष-अन्याय को, बना नहीं सिरमौर।।

|| 401 ||

पिंजरे में पंछी किये, अगणित चुन-चुन बंद!
निर्मम बंधन की सजा, है फांसी का फंद।।

|| 402 ||

कुत्ते जैसी जिन्दगी, भोग रहे तुम यार!
जब चाहे टुकड़ा दिया, जब चाहे दुत्कार।।

|| 403 ||

तुम अवसरवादी बड़े, कहाँ समझते प्यार!
कोमल रिश्तों की करी, तुमने मिट्टी ख्वार।।

|| 404 ||

सखे! आदमी की नहीं, बस धन की पहचान!
करते-रहते रात-दिन, अपनो का अपमान।।

|| 405 ||

उसका दण्डा है सबल, नियम सख्त प्रचण्ड!
तुमने जैसा किया है, पड़े भोगना दण्ड।।

|| 406 ||

उच्च चरित्र निर्माण के, प्रेरक हैं ये ग्रंथ।
अध्ययन-चिंतन-आचरण, हमें बताते संत।।

|| 407 ||

कौआ-कुत्ता और कवि, बैठें कभी न शान्त।
यदि हो जायें अशान्त ये, हो परिवेश अशान्त।।

|| 408 ||

झूंठ छिपाने के लिए, बोल रहे नित झूंठ।
झूंठ बोलने से सखे! मिटता कभी न झूंठ।।

|| 409 ||

आसमान में उड़ रही, वैभव भरी पतंग।
दो गज डोरी कर गयी, सब खुशियाँ बदरंग।।

|| 410 ||

झूंठ बोल धोखा दिया, और दिखाते आँख।
रावण अनुपम वीर था, फँसा बालि की काँख।।

|| 411 ||

चुगलखोर का रंग था, या मेरा व्यवहार।
प्रीति-नीति औ' सत्य की, देखी मैंने हार।।

|| 412 ||

बच्चों को शुभकामना, मधुर-मधुर व्यवहार।
पाप मिटे, वैभव बढ़े, कहना सबसे प्यार।।

|| 413 ||

बोल प्यार के बोलते, होता ख़त्म जमाव।
कटु बचनों को बोलकर, सिर कर लिया तनाव।।

|| 414 ||

कल तक जो सम्मान था, आज न वैसी बात।
चुगलखोर हैं साथ में, करें प्रसंशा-घात।।

|| 415 ||

भ्रष्ट कमाई से सखे! कभी न हो कल्यान।
निन्दा, अपयश, कायली, मिले अमित अपमान।।

|| 416 ||

साठ-गांठ कर झूंठ से, बना लिया जब तंत्र।
भला असर अब क्यों करे? बिच्छू वाला मंत्र।।

|| 417 ||

मानसरोवर छोड़कर, हंस उड़े परदेश।
प्रियतम को लगने लगा, अपना देश-विदेश।।

|| 418 ||

शेष बची है देख लो, केवल झूंठी शान।
सत्य साथ जब तक रहे, तब तक रहती आन।।

|| 419 ||

अरे! बता किस लक्ष्य हित, धन कर लिया अकूत।
कमी उसे रहती नहीं, जिसको मिला सपूत।।

|| 420 ||

अधिक समय टिकता नहीं, मनमानी का दौर।
फिर मेघों को चीरकर, रवि बनता सिरमौर।।

|| 421 ||

सच्चाई का कब तलक, बन्द रखो मुँह यार!
सच्चाई के सामने, टिकता नहीं विकार।।

|| 422 ||

उलझे-उलझे से रहे, जीवन के संवाद।
तनक-मनक-सी बात पर, होते रहे विवाद।।

|| 423 ||

बात अग़र कुछ थी नहीं, फिर क्यों हुआ बवाल?
कहीं नियत में खोट है, उठते मौन सवाल।।

|| 424 ||

शब्द न कोई बोलता, पता नहीं हम कौन?
निखिल सृष्टि इंगित करे, सूत्रधार है मौन!!

|| 425 ||

निन्दा, चोरी, अपहरण, वैर, द्वेष, अपमान।
अर्द्धशती के द्वार पर, देख रहे श्रीमान।।

|| 426 ||

अंधकार इस सृष्टि से, भागे कोसों दूर।
एक दीप की रोशनी, कर देगी मजबूर।।

|| 427 ||

सकल सृष्टि में साथ मिल, दीप जलाओ मीत!
मानवता के शयन में, गाओ लोरी-गीत।।

|| 428 ||

उच्च लक्ष्य तो चाहते, करें न सोच विचार।
उच्च लक्ष्य को चाहिये, उर में उच्च विचार।।

|| 429 ||

कविता करी न चाकरी, भानु-भास्कर नाम!
सूरज-दिनकर 'दिवाकर', अवि-रवि-कवि बदनाम।।

|| 430 ||

गली-गाँव औ' नगर में, सूरज-सविता-सोम!
दिनकर-दिनमणि-'दिवाकर', अरूण-अर्क अब कौम।।

|| 431 ||

आँखों में आँसू भरे, छुपा दर्द का घाव!
महानगर के चौक पर, खोज रहे हम गाँव।।

|| 432 ||

स्वस्थ रहें! सानन्द सब, हो सुखमय परिवार!
मनोकामना पूर्ण हो, रहे मधुर व्यवहार।।

|| 433 ||

यदि होवे मतभेद भी, करें प्यार-सम्मान!
वाणी औ' व्यवहार से, हो न कभी अपमान।।

|| 434 ||

गलत फ़हमियों की दवा, केवल है संवाद!
निंदा-चुगली-ईर्ष्या, पैदा करें विवाद।।

|| 435 ||

अपने-अपने काम में, रहें मस्त परिवार!
सभी परस्पर बाँट लें, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 436 ||

बदल गयी सरकार है, बदल गये ईमान!
रूप बदलकर भेड़िये, बन बैठे श्रीमान।।

|| 437 ||

बात-बात में ही गया, खुद से इतना दूर!
इसीलिए तू हो रहा, खुद इतना मजबूर।।

|| 438 ||

पति-पत्नी सम्बन्ध है, जीवन का संवाद!
एक अवतरण प्यार का, दूजा है अनुवाद।।

|| 439 ||

दो पल यात्रा के मिले, करो नहीं बेकार।
पल दो पल में बाँट दो, तुम पथिकों में प्यार।।

|| 440 ||

कर्कश बोल न बोलिये, होता कष्ट अपार!
तनक-मनक-सी बात थी, पैदा किया विकार।।

|| 441 ||

स्वस्थ रहो! सानंद हो! वैभव मिले अनन्त!
मंगलमय जीवन बने, उन्नति फले दिगन्त।।

|| 442 ||

स्वागत करता सिन्धु है, लहरें भरें हिलोर।
नाच रहे हैं क्रूज पर, युवती-युवक-किशोर।।

|| 443 ||

युवक-युवतियाँ नाचते, हृदय छुपा अनंग।
सिन्धु करे अठखेलियाँ, अद्‌भुत भाव-तरंग।।

|| 444 ||

नभ से मेघा देखते, आतुर बहुत अधीर।
सबके मुख को चूमती, शीतल सिन्धु समीर।।

|| 445 ||

निर्मल नीला सिन्धुजल, विस्तृत और अपार।
समा गया क्यों सिन्धु में, यह अम्बर साकार।।

|| 446 ||

भला-बुरा सब कर दिया, मैंने तेरे नाम।
चाहें मुझे संवारले, चाहें कर बदनाम।।

|| 447 ||

पटरी से उतरी हुई, मानवता की रेल।
हुए ब्रेक आदर्श के, अनजाने ही फ़ेल।।

|| 448 ||

गिरा इस क़दर आदमी, फैल रही दुर्गंध।
बात-बात में खा रहा, बच्चों की सौगंध।।

|| 449 ||

ऊँच-नीच के भेद का, बंद करो अब खेल।
हवा-सरीखे तुम बहो, करते सबसे मेल।।

|| 450 ||

दुनिया के मज़दूर सब, हो जायें यदि एक।
अमीर, ग़रीब के समक्ष, घुटने देगा टेक।।

|| 451 ||

प्रेम नहीं, आतंक की, भाषा है आतंक।
गद्दारों को मार दो! राजा हो या रंक।।

|| 452 ||

शांति और सद्भाव का, एक यही है मंत्र।
सारा जग-परिवार है, एक ईश का तंत्र।।

|| 453 ||

भला कभी होगा नहीं, करलो कितने युद्ध।
जीत-जीतकर हारते, दोनों पक्ष विरूद्ध।।

|| 454 ||

अपने वैभव-इत्र की, रखना शीशी बंद।
खुले हुए माहौल में, टिकती नहीं सुगंध।।

|| 455 ||

घर का चूल्हा तोड़कर, अलग पकायी खीर।
अपने किए कुकर्म की, भोग रहे अब पीर।।

|| 456 ||

महानगर आये हुए, बीत रहे हैं साल।
ऐसी भी क्या बेरुख़ी, नहीं पूछते हाल।।

|| 457 ||

यहाँ-वहाँ कचरा पड़ा, बनी गंदगी ढेर।
महानगर की जिंदगी, है कष्टों का ढेर।।

|| 458 ||

महानगर में पहुँचकर, भूल गया वह प्यार।
भव्य भवन को देखकर, गयी झोंपड़ी हार।

|| 459 ||

महानगर में हो गयीं, दिल की गलियाँ तंग।
इसीलिए छिड़ने लगी, बात-बात में जंग।।

|| 460 ||

कितने सुंदर है अधर, ज्यों गुलाब की कोर।
अथवा सूरज की किरन, मुस्काती हो भोर।।

|| 461 ||

बोले किस अंदाज में, प्यार-भरे दो बोल।
जीवन-भर देते रहे, हम दो पल का मोल।।

|| 462 ||

दो पल जिनसे भी मिलो, मन में रहे विचार।
वह दो पल की ज़िन्दगी, बन जाये उपहार।।

|| 463 ||

बोल बोलने की नहीं, जिनको रही तमीज।
वही शिष्टता की हमें, करते भेंट कमीज़।।

|| 464 ||

दर्द-घुटन-पीड़ा-रुदन, असफल तंत्र तमाम।
जाते-जाते कर गयी, सदी हमारे नाम।।

|| 465 ||

कितने ढोंगी आप हैं, खुद से पूछो आप।
तनसे, मनसे, रोज ही, करते कितने पाप।।

|| 466 ||

सहज-सरल अभिव्यक्ति ही, बन जाती है छंद।
निश्छल मन-व्यवहार से, कट जाते सब फंद।।

|| 467 ||

ज़रा-ज़रा-सी बात पर, करते खड़ा विवाद।
यह छोटी-सी जिंदगी, करते क्यों प्रतिवाद।।

|| 468 ||

भूखे-नंगों को दिया, जब रक्षा अधिकार।
अरे यार! तुम खोजते, अब अपना घर बार।।

|| 469 ||

उठो! कमर कस कर उठो! लो हाथों तलवार।
सत्य-अहिंसा से भला, किसे मिले अधिकार।।

|| 470 ||

सत्य, अहिंसा, प्यार के, निष्फल रहें उपाय।
युवकों! फिर तो दंड ही, करता सही सहाय।।

|| 471 ||

जन-सेवक शोषण करें, भ्रष्ट हुए बदजात।
झूठे सपनों का महल, खड़ा करें दिन रात।।

|| 472 ||

अब पूरा महौल है, त्रस्त और बेचैन।
आम आदमी को नहीं, पल दो पल का चैन।।

|| 473 ||

पल-पल बढ़ता जा रहा, निर्मम भ्रष्टाचार।
मौन खड़ा क्यों आदमी, देख रहा व्यभिचार।।

|| 474 ||

निगल गया है देश को, रिश्वतरूपी नाग।
बचा सको तो लो बचा, युवको! अपना राग।।

|| 475 ||

जिस आसन पर बैठकर, बना विश्व सिरमौर।
उसी देश में चल रहा, भ्रष्ट व्यवस्था दौर।।

|| 476 ||

रोज़ आदमी मर रहा, भूख खड़ी लाचार।
मंदिर-मस्जिद कर रहे, मौतों का व्यापार।।

|| 477 ||

आज बनावट का चलन, बदल गये दस्तूर।
सड़न दिमाग़ों में पली, घुसता जाय फितूर।।

|| 478 ||

मन का रहा न आचरण, जीवन बारह वाट।
हिंदु-मुस्लिम हो गये, नदिया के दो पाट।।

|| 479 ||

घर-घर में दीपक जलें, जीवन हो खुशहाल।
वैभव-सुख-समृद्धि की, मानव बने मिशाल।।

|| 480 ||

धन की चकमक ने किया, कुछ ऐसा व्यवहार।
टुकड़े-टुकड़े कर दिया, मनुज-मनुज का प्यार।।

|| 481 ||

देह भले बदले नहीं, बदल जाय पर ध्येय।
महिमा है सत्संग की, मानव बने अजेय।।

|| 482 ||

ईश्वर! मेरे देश का, करिये जरा इलाज!
बदल जाय इन्सान का, मज़हब-जाति-मिजाज।।

|| 483 ||

जय! जय! जय! माँ सरस्वती! हंसवाहिनी मात!
निखिल विश्व को ज्ञान की, देती माँ! सौगात।।

|| 484 ||

ज्ञान अगर देती नहीं, जग रह जाता मूढ़!
बिना ज्ञान के आदमी, किंकर्तव्य विमूढ़।।

|| 485 ||

सकल ज्ञान के स्रोत सब, तब हो जाते बन्द!
कभी रचित होते नहीं, ललित कला नव छन्द।।

|| 486 ||

भव्य-शिल्प-निर्माण का, होता नहीं विकास!
पशुओं जैसी जिन्दगी, मानव-जन्म-विनाश।।

|| 487 ||

भोजन-वस्त्र-मकान की, करता चिन्ता कौन।
स्वच्छ खुले आकाश में, बैठे-सोते मौन।।

|| 488 ||

यहाँ प्रगति के नाम पर, आता क्यों विज्ञान!
यत्र-तत्र-सर्वत्र ही, फलता तम-अज्ञान।।

|| 489 ||

इस वसुधा पर जन्म का, क्या रह जाता अर्थ!
मानव-सपने-जिन्दगी, हो जाती तब व्यर्थ।।

|| 490 ||

भावुक-रिश्तों का यहाँ, होता कहाँ स्वरूप!
बिना ज्ञान के जिन्दगी, हो जाती अपरूप।।

|| 491 ||

रह जाता जग आदमी, जीवन भर गुमनाम!
बन्जारों-सा घूमता, मर जाता निष्काम।।

|| 492 ||

हे माँ! तुमने ज्ञान का, दिया महा उपहार!
सृष्टि मनोहर हो गयी, करती माँ मनुहार।।

|| 493 ||

बच्चे-बच्चे को मिला, एक सार्थक नाम!
रहा नहीं अब आदमी, पलभर को गुमनाम।।

|| 494 ||

रिश्तों का माता! दिया, सुन्दर-सा गुलदान!
गुँथे भावना-डोर से, मानव-पुरूष जहाँन।।

|| 495 ||

हे माँ! खोले ज्ञान के, तुमने नव-नव द्वार!
अब जीवन लगता नहीं, इनके कारण भार।।

|| 496 ||

धरती-जल-आकाश पर, नित्य हो रहे शोध!
हे माँ! तेरा ज्ञान ही, हमें दे रहा बोध।।

|| 497 ||

मानवता को दे रहा, मनुज नित्य उपहार!
भिन्न-भिन्न परिवेश में, लगता जग-परिवार।।

|| 498 ||

धरती पर टिकते नहीं, आज मनुज के पाँव!
उड़ पहुँचा आकाश में, उन तारों की छाँव।।

|| 499 ||

परी-लोक की कथाएँ, आज हुई साकार!
अब सपनों की बात को, मात! मिला आकार।।

|| 500 ||

हुआ चतुर्दिक ज्ञान का, अद्‌भुत ही विस्फोट!
दानवता पर कर रहा, मानव भारी चोट।।

|| 501 ||

नृत्य-कला-संगीत को, मिले विविध आयाम!
गूँज रहा साहित्य में, माते! तेरा नाम।।

|| 502 ||

हे माँ! करता वन्दना अर्चन बारम्बार!
तेरी माया विश्व में, कितनी अपरम्पार??

|| 503 ||

तेरी कृपा का सदा, सुमन मिले उपहार!
मिले विश्व को रोशनी, मानव को मनुहार।।

|| 504 ||

व्रत-पूजा जानूँ नहीं, सत्य-आस्था साथ!
चरण-कमल में रात-दिन, झुका रहे माँ! माथ।।

|| 505 ||

मानवता पर छा रहा, भारी संकट आज!
भेदभाव-आतंक का, हुआ चतुर्दिक राज।।

|| 506 ||

रिश्तों का दर्पण हुआ, कैसा चकनाचूर!
धन का लोभी हो गया, मनुज आज भरपूर।।

|| 507 ||

जिन रिश्तों को रात-दिन, रहता था कुर्बान!
उन रिश्तों की अब नहीं, रही उसे पहचान।।

|| 508 ||

ऊपर से रिश्ते करें, मीठी-मीठी बात!
लेकिन हटते ही नजर, कडुवी-कडुवी घात।।

|| 509 ||

घर हो अथवा देश हो, गाँव-गली-परिवार!
जिधर देखता हूँ उधर, दीख रही बस हार।।

|| 510 ||

चाहें देश-विदेश हो, अथवा हुआ पड़ोस!
अहंकार में चूर है, ज्ञान हाय! बेहोश।।

|| 511 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम को, कायर कहे समाज!
शान्ति और सद्भाव की, पढ़ते नहीं नमाज।।

|| 512 ||

वाणी औ' व्यवहार से, गरल रहा है बांट!
बैठा है जिस डाल पर, रहा उसी को काट।।

|| 513 ||

बारूदों के ढेर पर, जा बैठा विज्ञान!
कोस रहा है आदमी, बना हुआ अज्ञान।।

|| 514 ||

रहा नहीं यदि आदमी, फैल जाय अज्ञान!
रह जाये किस काम का, ज्ञान और विज्ञान।।

|| 515 ||

अपने सुख की कल्पना, करो न समझो यार!
कारण यही अशान्ति का, बढ़ा पाप का भार।।

|| 516 ||

दुनिया भर का आदमी, एक बाप-औलाद!
विविध धर्म औ' जाति का, बोझ अरे! मत लाद।।

|| 517 ||

निखिल सृष्टि-आकाश का, महानियन्ता एक!
जग-संचालित कर रहा, उसका महाविवेक।।

|| 518 ||

अरे! बुलबुले की तरह, नर! तेरी औकात!
उसे चुनौती दे रहा, जिसने दी सौगात।।

|| 519 ||

माँ! सद्बुद्धि देना हमें, करें विश्व हित काम!
सृजन औ' व्यवहार में, रहें हमारे राम।।

|| 520 ||

ऐसा सृजन जन करें, जो दे आदर भाव!
भरें विश्व समुदाय में, प्रेम और सद्भाव।।

|| 521 ||

ज्ञान दायिनी ज्ञान दो! माते! ललित ललाम!
आधि-व्याधि संसार से, मेंटे ज्ञान तमाम।।

|| 522 ||

हे माँ! हृदय में बसो, जाना कभी न दूर!
ऐसा सृजन-ज्ञान दो, करे विषमता दूर।।

|| 523 ||

मनुज नारियों का करे, विविध रूप सम्मान!
कभी भूल से आदमी, करे नहीं अपमान।।

|| 524 ||

नारी-शक्ति महान है, आदि शक्ति का वास!
नारी के हर रूप में, करते देव निवास।।

|| 525 ||

जन्मी भारतवर्ष में, महिला-शक्ति अनेक!
समय-सिला पर लिख दिया, अपना कर्म-विवेक।।

|| 526 ||

लिखा नहीं इतिहास ने, जो उनका अवदान!
जीवन साथी को किया, यद्यपि महत्व प्रदान।।

|| 527 ||

यहाँ असंख्य नारियाँ, जिनका था इतिहास!
जन्मी भारत वर्ष में, मिला घात-विश्वास।।

|| 528 ||

भारत माता भी इन्हें, रही देखती मौन!
नारी के कृतित्व को, समझ सका है कौन।।

|| 529 ||

धन्य भरत की भूमि यह, अद्‌भुत छटा अपार!
इसके कण-कण में भरा, सत्य-अहिंसा-प्यार।।

|| 530 ||

काले-काले मेघ ले, गरज रहा आकाश!
चमक रही चपला चपल, छुप-छुप करे प्रकाश।।

|| 531 ||

धरती से आकाश तक, अन्धकार का राज!
निखिल सृष्टि पहना रही, काल चक्र को ताज।।

|| 532 ||

पशु-पक्षी-कानन-नदी, मानव-सिन्धु-पहाड़!
मनुज-बगीचे-धरा सब, काँपें सुनें दहाड़।।

|| 533 ||

सरर-सरर बहती हवा, कहे कान के पास!
घर जाकर छुप जाइये, समय आज है खास।।

|| 534 ||

भय से अति भयभीत हो, लुप्त हुये नक्षत्र!
मानो महा प्रलय हुई, यत्र-तत्र सर्वत्र।।

|| 535 ||

गरज-बरस अम्बर रहा, मानो धरा डुबाय!
कौन सुने! किससे कहें? गिरिधर! कहाँ उपाय।।

|| 536 ||

धरा बधू भी कांपती, कांप रहा आकाश!
तड़ित और तूफान का, सबको था आभास।।

|| 537 ||

घर के छप्पर उड़ रहे, टूट रहे थे पेड़!
घोर निराशा दूर तक, कुछ भी सकी न हेर।।

|| 538 ||

जब आता तूफान है, घटता तभी विशेष!
यादों की परछाइयाँ, मन पर रहें अशेष।।

|| 539 ||

बिटिया यदि कुलशील तो, घर-भर का सम्मान!
वरना तो कुल-पीढ़ियाँ, सहती हैं अपमान।।

|| 540 ||

मात-पिता-परिवार की कन्या है आदर्श!
पीहर औ' सुसराल को, कन्या दें उत्कर्ष।।

|| 541 ||

बेटी से परिवार दो, पाते हैं सम्मन!
यह तो देश-समाज का, करती है उत्थान।।

|| 542 ||

यश-वैभव-धन-सम्पदा, निखिल ऋद्धियाँ हाथ!
जिस घर में बिटियाँ पले, सकल सिद्धियाँ साथ।।

|| 543 ||

बिन बिटिया के विश्व की, करे कल्पना कौन!
बिन बिटिया के विश्व में, सारे रिश्ते मौन।।

|| 544 ||

जिस घर में बेटी नहीं, वे घर नहीं महान!
कठ्या पंडित की तरह, उनका रहे जहांन।।

|| 545 ||

जिस घर में बेटी नहीं, होता वहाँ न मान!
बालक उस परिवार के, हो जाते शैतान।।

|| 546 ||

बिटिया है संवेदना, बिटिया है मुस्कान!
मैका या ससुराल हो, सबको दे पहचान।।

|| 547 ||

बेटी यदि होगी नहीं, क्या जीवन का अर्थ!
बेटी-भगिनी-संगिनी, इनके बिन सब व्यर्थ।।

|| 548 ||

चाहें जो भी रूप हो, कन्या कुल की शान!
गंगा-सी पावन सदा, मानवता की खान।।

|| 549 ||

कन्या का इस विश्व में, अन्य कहाँ उपमान?
मात-पिता-परिवार का, गौरव कन्यादान।।

|| 550 ||

मात-पिता-परिवार को, देती नव उत्साह!
दुर्लभ सुख इस दान में, करना सुता विवाह।।

|| 551 ||

होता अद्भुत दृश्य है, करूणा भरा विलाप!
बिटिया की होती विदा, बिछुड़न छुपा मिलाप।।

|| 552 ||

अकथ कहानी प्रेम की, मात-पिता के बीच!
बिटिया इस संसार को, रही प्रेम से सींच।।

|| 553 ||

मात-पिता की भावना, जब चढ़ती परवान!
बिटिया रूपी पुष्प को, तब देता भगवान।।

|| 554 ||

गम हो अथवा हों खुशी, मिलन-विरह-मुस्कान!
तैसे ही जाते उतर, पल में ज्यों तूफान।।

|| 555 ||

सहज भाव सब चल रहे, मिलन-विरह के खेल!
रहती सदा न दुश्मनी, रहता सदा न मेल।।

|| 556 ||

मिली खुशी तो उड़ गये, मिला कष्ट तो घात!
केवल ओछे लोग ही, समझ न पाते बात।।

|| 557 ||

जिनके मन में आस्था, और धीर विश्वास!
वे नर घबराते नहीं, सुख हो या संत्रास।।

|| 558 ||

मिली चुनौती तो तुम्हें, करो सहज स्वीकार!
इसकी चिन्ता क्यों करो, मिले जीत या हार।।

|| 559 ||

जीवन में संघर्ष ही, देता है उत्कर्ष!
जहाँ नहीं संघर्ष है, वहॉ खड़ा अपकर्ष।।

|| 560 ||

हर घटना के मूल में, छुपा हुआ है अर्थ!
पल-पल की यह जिन्दगी, जाये कभी न व्यर्थ।।

|| 561 ||

अगर रहे परिवार में, सहज समर्पण प्यार!
कितना रहे अभाव भी, कभी न लगता भार।।

|| 562 ||

छोटी-छोटी गलतियाँ, बन जाती नासूर!
खट्टे करती दांत सब, छोटी-सी अमचूर।।

|| 563 ||

पति-पत्नी-परिवार की, करें उपेक्षा नाय!
वरना जीवन में कभी, शान्ति रहेगी नाय।।

|| 564 ||

सोच-समझ के दायरे, जब रहते प्रतिकूल!
वैर-द्वेष औ' कलह तब, हो जाते अनुकूल।।

|| 565 ||

गृहस्थ-धर्म को चाहिए, त्याग-समर्पण-प्यार!
रहे परस्पर एकता, बढ़ता प्रेम अपार।।

|| 566 ||

मुखिया-मन की सोच से, एक रहे परिवार!
कभी न पड़ता पोच घर, लक्ष्य अगर हो प्यार।।

|| 567 ||

भटक गये यदि लक्ष्य से, लक्ष्य न फिर से आय!
यह मानव का जन्म भी, हाय! व्यर्थ हो जाय।।

|| 668 ||

महाप्रयोजन के लिए, करो दलित के काज!
देख रहा है आपको, कातर नैन समाज।।

|| 569 ||

शोषण औ' अन्याय का, दलित समाज शिकार!
दीन-हीन-असहाय को, दो जीवन आधार।।

|| 570 ||

छुआछूत के गरल से, सिसक रहे हैं लोग!
रक्त चूंसकर महाजन, करें प्राण का भोग।।

|| 571 ||

हुआ दलित असहाय है, उसे नहीं अधिकार!
शोषित है हर रूप में, जीवन को धिक्कार।।

|| 572 ||

डूबा शोषण-सिन्धु में, सारा दलित-समाज!
अब इनके उद्धार का, करिये महाइलाज।।

|| 573 ||

सिसक-सिसक कर मर रहे, दलितों के अरमान!
शासन और समाज में, इन्हें मिले सम्मान।।

|| 574 ||

सत्ता और समाज में, भरिये भाव-विमर्श!
दलितों के सम्मान को, करना हो संघर्ष।।

|| 575 ||

आये हो संसार में, करो अनूठे काम!
मानवता हित मर मिटो, रहे युगों तक नाम।।

|| 576 ||

धर्म-जाति के नाम पर, होता है अन्याय!
पद-दौलत के सामने, झुक जाता है न्याय।।

|| 577 ||

घोर प्रदूषण सब तरफ, दीखे कहीं न चैन!
फुटपाथों पर जिन्दगी, पड़ी हुई बेचैन।।

|| 578 ||

बाल, युवा औ' वृद्ध को, खींच रहे हैं श्वान!
दलित-दीन पाता नहीं, भोजन-वस्त्र-मकान।।

|| 579 ||

दलित-दीन-असहाय का, जीवन कितना नर्क!
छुआछूत की गन्दगी, करती बेड़ा गर्क।।

|| 580 ||

जिधर देखिए, उधर ही, दलित खड़ा मजबूर!
बना महाजन ने रखा, बंधक-तन मजदूर।।

|| 581 ||

ऐसा भी क्या काम जो, देखे दिवस न रात!
पलभर की फुर्सत नहीं, कर पाये जो बात।।

|| 582 ||

पत्नी जीवन-संगिनी, सुख-दुख हरपल मीत!
समय नहीं उसके लिए, फिर काहे की प्रीत।।

|| 583 ||

वैवाहिक बंधन बँधो, ले फेरे - सौगन्ध!
साथ-साथ सुख-दुख कटें, जीवन-पथ अनुबन्ध।।

|| 584 ||

जीवन-पथ का यह मिलन, बनें अपरिचित मीत!
पति-पत्नी के रूप में, युग को बाँटें प्रीत।।

|| 585 ||

यह कैसा पति-आचरण, यह कैसी है नीत!
पति-पत्नी की दूरियाँ, निष्फल करतीं जीत।।

|| 586 ||

दलित करोड़ों देश में, सदियों से बीमार!
शासन को चिन्ता नहीं, कौन करे उपचार।।

|| 587 ||

भोजन-वस्त्र-मकान भी, सबको नहीं नसीब!
छुआछूत अपमान को, सहकर बने अजीब।।

|| 588 ||

तंत्र-मंत्र-षड्यंत्र का, दलित समाज शिकार!
आधि-व्याधि-अन्याय से, शोषित करें पुकार।।

|| 589 ||

देख-देख अन्याय को, तड़प रहे हैं नैन!
चीख-पुकारें कान को, करती हैं बेचैन।।

|| 590 ||

दलितों पर संकट बड़ा, शोषण करे शिकार!
जकड़ गुलामी में रहा, तन-मन ग्रस्त विकार।।

|| 591 ||

अंग्रेजों ने चाल से, भारत किया गुलाम!
हाय! गुलामों के बने, सारे दलित गुलाम।।

|| 592 ||

अंग्रेजी पड्यन्त्र से, अब है देश स्वतन्त्र!
किन्तु दलित तो देश में, अब भी हैं परतंत्र।।

|| 593 ||

शोषण औ' अन्याय का, क्रूर मानसिक दौर!
गाँव-गाँव औ' नगर में, बना हुआ सिरमौर।।

|| 594 ||

भेदभाव की जिन्दगी, मनुज-मनुज के बीच!
छुआछूत की गन्दगी, नगर-गाँव में कींच।।

|| 595 ||

यह कैसी है जिन्दगी, यह कैसा आचार!
पशुओं से भी है गिरा, मनुज-मनुज-व्यवहार।।

|| 596 ||

विविध जातियों-धर्म में, बँटा विश्व-समुदाय!
एक दूसरे को सभी, कहते निम्न निकाय।।

|| 597 ||

मन्दिर-कुँआ-तलाब पर, छुआछूत का रोग!
धर्म-कर्म के नाम पर, बड़े भयानक लोग।।

|| 598 ||

ईश्वर कहते हैं, जिसे, सब उसकी सन्तान!
आना-जाना एक-सा, जन्म और अवसान।।

|| 599 ||

जन्म-मृत्यु के बीच में, कोई नहीं विभेद!
अपने-अपने स्वार्थ को, किए मनुज ने भेद।।

|| 600 ||

भेदभाव बिन बाँटती, प्रकृति सभी उपहार!
जड़-चेतन सबके लिए, करती सम मनुहार।।

|| 601 ||

फिर यह मानव कौन है, इसमें कितनी खोट!
जाति-धर्म के नाम पर, करता गहरी चोट।।

|| 602 ||

चुप होकर अन्याय को, जो सहता है दीन!
उससे बड़ा न विश्व में, कोई मनुज कमीन।।

|| 603 ||

रोक नहीं सकता तुम्हें, कोई व्यर्थ अकाज!
शोषण औ' अन्याय से, चलता नहीं समाज।।

|| 604 ||

दीन-दलित मानो हुआ, भेड़-बकरिया-ऊँट!
जीवन रूपी खेत में, खड़ा हुआ ज्यों ठूँट।।

|| 605 ||

बोल न निकले, सिर झुके, कटने को तैयार!
उफ् तक भी करते नहीं, भौंको छुरे हजार।।

|| 606 ||

ऐसे भी हैं कुछ यहाँ, मिले शक्ति के साथ्!
हाथ उठाये जा रहे, और झुकाये माथ।।

|| 607 ||

उठो, कमर कसकर उठो! साहस रखो प्रचण्ड!
छुआछूत जो मानते, उन्हें दिलाओ दण्ड।।

|| 608 ||

मन्दिर-कुआँ-तलाब पर, सबका सम अधिकार!
ऊँच-नीच की भावना, करती है अपकार।।

|| 609 ||

नदी-कूप-तालाब में, है प्राकृतिक नीर!
सकल सृष्टि को सींचते, सूरज और समीर।।

|| 610 ||

किसी धर्म, जन-जाति की, प्रकृति नहीं जागीर!
भेदभाव की मनुज ने, खड़ी करी प्राचीर।।

|| 611 ||

निखिल सृष्टि कल्याण का, मन में रखो विचार!
ऊँच-नीच की भावना, पैदा करे विकार।।

|| 612 ||

नदी-कूप-तालाब का, करें सभी उपभोग!
मानव के कल्याण हित, है इनका उपयोग।।

|| 613 ||

गन्दा जो इनको करे, रोको उनके हाथ!
बन्धु! बुराई का कभी, भूल न देना साथ।।

|| 614 ||

ऊँच-नीच की भावना, सामाजिक अपराध!
खड़ा हुआ कानून है, देगा दण्ड अबाध।।

|| 615 ||

हाथ-उठाकर लो शपथ, सहें नहीं अन्याय!
ऊँच-नीच की रीढ़ को, तोड़ें यही उपाय।।

|| 616 ||

जगह-जगह सत्याग्रही, होगा दलित समाज!
सामाजिक अपराध का, फिर क्यों चले कुराज।।

|| 617 ||

अपने-अपने काम में, रहें मस्त सब लोग!
तो फिर इस संसार में, लगे न कोई रोग।।

|| 618 ||

ऊँच-नीच की भावना, इससे बड़ा न पाप!
छुआ छूत संसार में, बहुत बड़ा अभिशाप।।

|| 619 ||

धर्म-जाति-विद्वेष ने, पैदा किए विकार!
नस्लभेद-आतंक से, बोझिल हुए विचार।।

|| 620 ||

धर्म-जाति के नाम पर, करें देश संहार!
नहीं रहा यदि आदमी, कैसा हो संसार।।

|| 621 ||

बारूदों के ढेर पर, महाशक्ति का ताज!
एटमबम के जोर पर, करें शक्तियाँ राज।।

|| 622 ||

आज नहीं तो कल सभी, होगा मटियामेंट!
मिट जायेगी जिन्दगी, चढ़े सनक की भेंट।।

|| 623 ||

धीरे-धीरे मिट रहे, पशु-पक्षी-इन्सान!
अहंकार के सामने, बचा नहीं शैतान।।

|| 624 ||

अपने सुख की कामना, दुर्गति करे जरूर!
मिटे अचानक आदमी, रहता नहीं गुरूर।।

|| 625 ||

दीन-हीन-असहाय की, सेवा करना धर्म!
भेदभाव की भावना, बहुत बड़ा दुष्कर्म।।

|| 626 ||

महापुरूष जितने हुए, सबका जीवन सार!
दीन-दलित के वास्ते, खूब लुटाया प्यार।।

|| 627 ||

सत्यकर्म, व्यवहार शुभ, जो करता इन्सान!
मान लिया संसार ने, उसको ही भगवान।।

|| 628 ||

दीन-दलित उद्धार को, राम गये वनवास!
शबरि-जटायु-निषाद को, भेंट किया मधुमास।।

|| 629 ||

तुम उसकी सन्तान हो, जहाँ सच्चिदानन्द!
भेदभाव की जिन्दगी, छोड़ करो आनन्द।।

|| 630 ||

विश्वगुरू कहते जिसे, वह है भारतवर्ष!
राम-कृष्ण की भूमि पर, रहा हर्ष ही हर्ष।।

|| 631 ||

भेदभाव ने जन्म कब, लिया यहाँ पर आन!
छुआछूत ने ले लिये, जाने कितने प्रान।।

|| 632 ||

भेदभाव की भावना, पैदा करती फूट!
छुआछूत ने दे दिए, दंगा-हत्या-लूट।।

|| 633 ||

धन का जो लोभी हुआ, उसे न पड़ता फर्क़!
भेदभाव होता जहाँ, करता बेड़ा ग़र्क।।

|| 634 ||

यहाँ नहीं छोटा, बड़ा, जन्मे सभी समान!
मानवता जिसमें भरी, बनता वही महान।।

|| 635 ||

पशु-पक्षी बिन भेद के, पानी पीते ताल!
अपने-अपने ठौर पर, सब रहते खुशहाल।।

|| 636 ||

देश-धर्म औ' जाति का, पैदा हुआ बुखार!
पता नहीं कब आदमी, इनका हुआ शिकार।।

|| 637 ||

ऊँच-नीच के भेद में, जबसे बँटा अवाम!
तबसे ही अंग्रेज का, भारत बना गुलाम।।

|| 638 ||

अपने घर की फूट का, पहले करो इलाज!
बदल जाए इस देश का, शोषण भरा मिजाज।।

|| 639 ||

भेदभाव को छोड़कर, चलें एक ही राह!
आज़ादी के सुमन की, पूरी होगी चाह।।

|| 640 ||

अंग्रेजों के पाप का, उठा रहे सब भार!
समझ आ गयी देश को, कड़ुबी होती हार।।

|| 641 ||

अंग्रेजो ने देश का, शोषण किया अकूत!
दमन-फूट-षड्यन्त्र से, मारे बहुत सपूत।।

|| 642 ||

युवा-वृद्ध-नर-नारियाँ, बालक मरे अबोध!
लेना होगा देश को, नित उनका प्रतिशोध।।

|| 643 ||

सत्याग्रह से दुष्ट पर, पड़े न कोई फर्क़!
केवल मृत्यु प्रचण्ड ही, करती बेड़ा गर्क़।।

|| 644 ||

आतंकित इस्लाम से दुनिया के सब लोग!
आतंकी के सामने, चले न कोई योग।।

|| 645 ||

बुरे दिनों के फेर में, करें न देव सहाय।
व्रत-पूजा-जप-साधना, निष्फल रहें उपाय।।

|| 646 ||

मन में दृढ़ विश्वास हो, घोर आस्था साथ।
आधि-व्याधि छूती नहीं, राम-भक्त का हाथ।।

|| 647 ||

जन्म-मरण औ' जिन्दगी, कर लो लाख उपाय।
होनहार होकर रहे, कुछ भी नहीं बसाय।।

|| 648 ||

समय-समय की बात है, दुःख चढ़ता परवान।
किन्तु समय के साथ ही, दुःख का हो अवसान।।

|| 649 ||

दर्द, कसक, पीड़ा, घुटन, घोर निराशा जाय।
माता का आंचल रहे, संकट टिकता नाय।।

|| 650 ||

सुघड़-सलौनी-षोडसी, बिजली जैसा गात।
चंचलता-माधुर्य की, मनो चाँदनी-रात।।

|| 651 ||

सोच-समझ के दायरे, जब होते अनुकूल।
शुभ दिन होते सामने, घटे न कुछ प्रतिकूल।।

|| 652 ||

केवल तन की सुन्दरी, वाणी कर्कश बोल।
ऐसी वधू न चाहिए, बड़े ढोल की पोल।।

|| 653 ||

सुन्दरता इस लोक में, अति मनमोहक मंत्र।
निष्फल इसके सामने, दुनियाभर के तंत्र।।

|| 654 ||

सन्त, ऋषि औ' देवगण, सबने मानी हार।
सुन्दरता संसार में, ऐसा है उपहार।।

|| 655 ||

नैन-नैन से जब मिलें, आकर्षित हों नैन।
नैन-नैन को देखकर, परवश हों बेचैन।।

|| 656 ||

नैन देखते नैन को, बरवश खिंचते नैन।
प्रथम दृष्टि भूलें नहीं, नर-नारी दिन-रैन।।

|| 657 ||

नारी को संचेतना, अलग मिली है सृष्टि।
नर को नारी जानती, कैसी दृष्टि-कुदृष्टि।।

|| 658 ||

अम्बर में पंछी उड़ें, छोड़-छोड़ निज नीड़।
मानो मन भयभीत हों, देख-देखकर भीड़।।

|| 659 ||

अनहोनी होकर रहे, मिले न कहीं सहाय।
सब कुछ पल-पल घट रहा, कुछ भी नहीं बसाय।।

|| 660 ||

हर संकट के मूल में, जुड़ा व्यक्ति का स्वार्थ।
घायल भारत-आत्मा, हार गया परमार्थ।।

|| 661 ||

समय-समय पर देश ने, झेला है आतंक।
आतंकी-घटना घटे, बचे न राजा-रंक।।

|| 662 ||

आतंकी पाता शरण, धर्म-जाति के नाम।
फिर होता विध्वंस है, गिर जाते हैं धाम।।

|| 663 ||

धर्म-जाति औ' क्षेत्र में, बँटा हुआ है देश।
आतंकी पाते शरण, स्वार्थ भरा परिवेश।।

|| 664 ||

तनक-मनक-सी बात पर, करते वाद-विवाद।
देश द्रोह की भावना, दंगा और फिसाद।।

|| 665 ||

व्यक्ति बड़ा होता नहीं, कोई नहीं विशेष।
घर की रक्षा है वहाँ, जहाँ सुरक्षित देश।।

|| 666 ||

जन्मे है इस देश में, धर्म-जाति-परिवार।
सब आपस में एक हैं, फिर कैसी तकरार।।

|| 667 ||

गिने-चुने कुछ लोग ही, करें अटपटे काम।
उनके कारण देश की, इज्जत हो नीलाम।।

|| 668 ||

आपस के बिखराव से, लेता जन्म तनाव।
परसेवा की भावना, पैदा करे जुड़ाव।।

|| 669 ||

पत्नी-भगिनी-बेटियाँ, माता सभी समान।
कभी क़लह होगी नहीं, सबका रखिए मान।।

|| 670 ||

अपने-अपने स्वार्थ में, डूब गये परिवार।
रहा परस्पर अब नहीं, ममता-प्यार-दुलार।।

|| 671 ||

जन्मे जिस परिवार में, ग्राम-प्रान्त औ' देश।
मानव हित, कल्याण के, भाव बचे क्या शेष??

|| 672 ||

हिंसा औ' आतंक का, बना हुआ पर्याय।
शासक बनने देश का, करता क्रूर उपाय।।

|| 673 ||

आपस की कमजोरियाँ, लुटता हिन्दुस्तान।
आगे बढ़ता जा रहा, नित प्रति यह शैतान।।

|| 674 ||

कुछ अपने ही लोग हैं, हुए लोभवश साथ।
उन्हें न चिन्ता देश की, स्वार्थ झुकाया माथ।।

|| 675 ||

एक-एक घर लुट रहा, बढ़ते रोज गुलाम।
दुश्मन की चालाकियाँ, सोचा हुआ मुकाम।।

|| 676 ||

लालच से षड्यन्त्र में, फँस जाते हैं लोग।
कुंठित होती सोच में, लग जाता है रोग।।

|| 677 ||

देश भक्ति की भावना, घायल राष्ट्र चरित्र।
युवा शक्ति भटकी हुई, कोई नहीं पवित्र।।

|| 678 ||

अपने-अपने आंकड़े, अलग-अलग हैं गोट।
उलझी-उलझी चाल में सीधी-सीधी चोट।।

|| 679 ||

आग लगी घर जल रहे, देखे खड़ा पड़ोस।
सामाजिक दायित्व का, किसे रहा है होश??

|| 680 ||

आओ सब मिलकर करें, भारत का गुणगान।
स्वर्ग सरीखी यह धरा, देवों की सन्तान।।

|| 681 ||

रक्षक है परमात्मा, कृषक जीवन-प्राण।
धर्म-कर्म-विज्ञान में, अखिल विश्व संप्राण।।

|| 682 ||

दिया ज्ञान-विज्ञान का, दुनिया को आलोक।
कर्म-संस्कृति से खिला, निखिल लोक-परलोक।।

|| 683 ||

ऋतुओं से रहते मुदित, तीज और त्यौहार।
दुर्लभ जीवन-रत्न हैं, मंगलमय उपहार।।

|| 684 ||

सत्य-अहिंसा-प्रेम का, देता युग-सन्देश।
वसुधा को घर मानता, भारत जगत विशेष।।

|| 685 ||

जन्म भूमि यह 'भरत' की, 'भारत' इसका नाम।
कण-कण में इस देश के, बसें राम-घनश्याम।।

|| 686 ||

फँसे विदेशी चाल में, राजा और नवाब।
किंकर्तव्यविमूढ़ सब, ओढ़े हुये नकाब।।

|| 687 ||

ऊपर से गोरे बड़े, अन्दर काली कींच।
बधिकों से बदतर सभी, गोरे कितने नीच।।

|| 688 ||

त्याग-समर्पण-वीरता, कहाँ देश-अभिमान।
पता नहीं खोया कहाँ, वीर धरा का मान।।

|| 689 ||

जगह-जगह पर हो रहे, अगणित वीर शहीद।
शोषण-भय-आतंक में, मनें दिवाली-ईद।।

|| 690 ||

मन करता है लगा दूँ, राज-मुकुट में आग।
तब शायद कोई मिले, आजादी का राग।।

|| 691 ||

गहन ईर्ष्या-द्वेष में, फँसे राज-दरबार।
सत्ता-सुख की लालसा, भस्म किये परिवार।।

|| 692 ||

वोट हड़पने के लिए, चालें चलें तमाम।
मानो भारत देश में, नेता बने इमाम।।

|| 693 ||

कोई कुछ बकता रहे, उधर न दे तू ध्यान।
रखो काम से काम तुम, खूब बढ़ाओ ज्ञान।।

|| 694 ||

बदल रहे हैं देश की, संस्कृति औ' इतिहास।
अपना पतझर थोपते, ले जाते मधुमास।।

|| 695 ||

सोना-चाँदी-धातुऐं जाती सभी विदेश।
हीरा-मोती-रत्न सब, गायब हुये विशेष।।

|| 696 ||

सोने की चिड़िया कभी, कहलाता था देश।
आज भिखारी की तरह, बचा न घर में लेश।।

|| 697 ||

निकले तोड़ पहाड़ को, जल की माला फूट।
त्यों जनता की एकता, पड़े दुष्ट पर टूट।।

|| 698 ||

टिके न कोई साम, जनता करे बबाल।
प्राण बचाते भागते, नेता करें सबाल।।

|| 699 ||

फिर कोई बचता नहीं, जनता करती चोट।
जनता का होता सदा, भीषणतम विस्फोट।।

|| 700 ||

तानाशाही रेत की, होती है दीवार।
अधिक समय टिकती नहीं, सहे न अपना भार।।

|| 701 ||

जिस दिन जनता देश की, खाने लगी उबाल।
जगह-जगह तब देश में, होंगे बहुत बवाल।।

|| 702 ||

जब तक जनता देश की, करती नहीं विद्रोह।
तब तक जन-मन में रहे, भारी ऊहापोह।।

|| 703 ||

भरती है जन चेतना, जन-जन में उत्साह।
हम सबका दायित्व है, बनें न लापरवाह।।

|| 704 ||

देश हमारा प्राण है, देश हमारी शक्ति।
देश-धर्म की भावना, पैदा करती भक्ति।

|| 705 ||

देश-धर्म पर जो मिटे, सदा मिले सम्मान।
युग-युग उनको मानता, दुर्गा औ' भगवान।।

|| 706 ||

दृढ़ निश्चय कर आदमी, जब लेता संकल्प।
खड़ी सफलता हेरती, पग-पग मिलें विकल्प।।

|| 707 ||

तानाशाही का करें, जन-जन घोर विरोध।
टिके नहीं फिर सामने, बड़े-बड़े अवरोध।।

|| 708 ||

जब होता पथ भ्रष्ट नर, बनता तानाशाह।
जनता को ही लूटता, बन जनता का शाह।।

|| 709 ||

जनता माँ! का एक दिन, लगे खौलने खून।
पैदा जनता में करे, सच्चा मनुज जुनून।।

|| 710 ||

अस्त्र-शस्त्र ले हाथ में, हो जाते एकत्र।
चलने फिर देते नहीं, तानाशाही-सत्र।।

|| 711 ||

जनता को जाग्रत कहें, उठा हाथ तलवार।
तभी मिलेगी देश को, आजादी-उपहार।।

|| 712 ||

बड़ा कठिन यह काम है, नहीं असंभव लक्ष्य।
मरना अपने देशहित, जीवन सुन्दर सत्य।।

|| 713 ||

प्राची के आकाश में, होने लगा प्रभात।
बाल अरूण की रश्मियाँ, लगीं दिखाने गात।।

|| 714 ||

चली थिरकती रश्मियाँ, खगकुल करते शोर।
मन्द-मन्द बहता पवन, मलय सुवासित भोर।।

|| 715 ||

युद्ध-कला औ' ज्ञान के, नर क्या ठेकेदार?
क्या नारी को है नहीं, निज रक्षा अधिकार?।

|| 716 ||

जब तक नारी देश की, पढ़े न लेती ज्ञान।
तब तक उसको विश्व में, मिले नहीं सम्मान।।

|| 717 ||

सुख-दुख दोनों की रहे, ईश्वर हाथ कमान।
सुख-दुख दोनों में रहे, मानव एक समान।।

|| 718 ||

हमको भेजा ईश ने, दिया प्रयोजन साथ।
पूर्ण प्रयोजन जब हुआ, ईश खींचता हाथ।।

|| 719 ||

मनुज कहीं पर मर गया, बचा कहाँ अनुराग।
देश-देश के बीच में, लगी द्वेष की आग।।

|| 720 ||

महाशक्तियाँ लड़ रही, पर हित बना विकार।
हिंसा औ' आतंक ने, पागल किये विचार।।

|| 721 ||

भवन-शिल्प-निर्माण का, ऊँचा तना वितान!
श्वेत कंगूरे यों लगें, नभ में उड़ें विमान।।

|| 722 ||

भव्य भवन की चोटियाँ, चूम रहीं हैं चाँद!
ललित कला-विज्ञान भी, गया क्षितिज को फाँद।।

|| 723 ||

सड़कें, गलियाँ, मॉल्स हों, चौराहे, बाजार!
शोर कहीं मचता नहीं, अनुपम है आचार।।

|| 724 ||

कचरा, कागज, गन्दगी, पड़े डस्टबिन बीच!
स्वच्छ राष्ट्र की भावना, रही दिलों को सींच।।

|| 725 ||

नियम-नीति जो तोड़ता, मिलता दण्ड कठोर!
पाता फाँसी की सजा, यहाँ मिलावटखोर।।

|| 726 ||

यहाँ न कोई चूक है, सजा पाय उद्दण्ड!
राष्ट्रद्रोह में भोगता, केवल मृत्यु प्रचण्ड।।

|| 727 ||

जल-थल-नभ में स्वच्छता, बहती शुद्ध बयार!
वन-उपवन औं कुंज में, रहती सदाबहार।।

|| 728 ||

नगर-गाँव औ' बस्तियाँ, अस्पताल-स्कूल!
शोर-प्रदूषण है नहीं, अद्भुत बने उसूल।।

|| 729 ||

अपने-अपने समय का, सबको रहता ध्यान!
सभी नागरिक देश के, करें समय-सम्मान।।

|| 730 ||

महाशक्ति सब बन गये, छोटे योरूप-देश!
अनुशासन ने देश का, बदल दिया परिवेश।।

|| 731 ||

महाशक्तियाँ कर रहीं, ऊँची-ऊँची बात!
राष्ट्र भावना उच्च है, सहे न कोई घात।।

|| 732 ||

सेन नदी से फ्रांस का, अद्‌भुत हुआ विकास!
युगों-युगों की सभ्यता, बसे नदी के पास।।

|| 733 ||

'एफिल टॉवर' विश्व में, पाता है सम्मान!
'अनुपम डिजनीलैण्ड' है, धूमिल सब उपमान।।

|| 734 ||

योरूप देशों की रही, यों तो प्रगति ससीम!
समय सिद्ध विज्ञान से, उन्नति हुई असीम।।

|| 735 ||

सभी तरह सम्पन्न है, यह 'वैभव का देश'!
विश्व पटल पर दे रहा, अपना दृढ़ सन्देश।।

|| 736 ||

ऊँची पर्वत श्रेणियाँ, दूर-दूर तक बर्फ।
बिछे हुए सब ओर हैं, मानो चाँदी-बर्क।।

|| 737 ||

धुँआ-धुन्ध-सी बर्फ का, देखा बड़ा कमाल।
दुनिया में मिलती नहीं, इसकी कहीं मिसाल।।

|| 738 ||

बर्फ-बर्फ चहुँ ओर है, अति मन भावन दृश्य।
वाह ईश! अनुपम कला, अद्‌भुत यह परिदृश्य।।

|| 739 ||

स्विटजरलैण्ड अगम्य है, पर्वत दृश्य अनूप।
धन्य! धन्य! यह देश है, स्वर्ग सरीखा रूप।।

|| 740 ||

झीलें, झरने, वादियाँ, हरा-भरा सब ओर।
ऊँची पर्वत चोटियाँ, रजतशिरोमणि छोर।।

|| 741 ||

प्राकृतिक सौन्दर्य का, यहाँ चतुर्दिक राज।
कला और विज्ञान का, मिलकर बजता साज।।

|| 742 ||

सड़कें स्वच्छ सपाट हैं, चलती हैं दिन-रात।
सब वाहन सधकर चलें, करे न कोई घात।।

|| 743 ||

जल-थल-नभ में एकता, ज्ञान प्रगति का मूल।
अद्‌भुत स्विटजरलैण्ड है, नहीं प्रदूषण-शूल।।

|| 744 ||

अपनी भाषा-देशहित, रहते हैं कुर्बान।
करते अपने देश पर, लोग बहुत अभिमान।।

|| 745 ||

वाणी औ' व्यवहार में, यहाँ टपकता प्यार।
धर्म-कर्म-विज्ञान का, दें सचमुच उपहार।।

|| 746 ||

भला-बुरा जो कुछ कहो, पड़े न कोई फर्क।
श्री चरणों में राम के, रहूँ चढ़ाता अर्क।।

|| 747 ||

म्हानगर में रह रहे, देखा मिले न यार!
पत्थर-दिल कितने हुए, कैसा है यह प्यार??

|| 748 ||

जाति-धर्म-मज़हब सभी, होते बहुत उदार।
लेकिन, लोगो ने दिया, इनका रूप बिगार।।

|| 749 ||

दो पग भी चलना कठिन, बिना प्यार के साथ।
सोचो! क्या हासिल किया, झटक प्यार का हाथ।।

|| 750 ||

सखे! जरूरी तो नही, सबको मिले मुकाम।
पलभर की अवहेलना, कर देती नाकाम।।

|| 751 ||

कच्चे धागे की तरह, सखे! प्यार की डोर।
नहीं टूटने दीजिये, रख़ो पकड़कर छोर।।

|| 752 ||

परिणय-बन्धन की सखे, बहुत मुबारक गाँठ।
इसी बहाने ही सही, लें प्रणय को साँठ।।

|| 753 ||

मन में अति उत्साह हो, ममता-नेह दुलार।
चुम्बन द्योतक प्यार का, है पावन उपहार।।

|| 754 ||

अपनापन अब है नहीं, शेष न प्यार-लगाव।
व्यर्थ सभी रिश्ते हुए, बुझता मनो अलाव।।

|| 755 ||

घोर उपेक्षा, स्वार्थ ने, खूब लगायी आग।
धूं-धूंकर रिश्ते जलें, रहा न जल-अनुराग।।

|| 756 ||

कथनी-करनी में सखे, रहे न जब तक मेल।
बन जाता घर प्यार का, ज्यों माटी का खेल।।

गुरू नानकदेव के प्रति

|| 757 ||

अत्याचारी-दौर में, पैदा होते सन्त!
नैतिक-बल के बाण से, उसका करते अन्त।।

|| 758 ||

पाप-झूठ-अन्याय का, चहुँ दिशि फैला राज।
गुरूनानक का आगमन, हुआ विश्व के काज।।

|| 759 ||

गुरूनानक के जन्म से, शोभित हिन्दुस्तान।
'तलवंडी-लाहौर' अब, हिस्सा पाकिस्तान।।

|| 760 ||

'आदिदेव', 'नानक' हुए, 'पातशाह' गुरूदेव।
'ननकाना साहब' कहें, विविधनाम जनलेव।।

|| 761 ||

'कल्याणदास मेहता'-पिता, 'तृप्ता' मात सुनाम।
बेदीवंश, खत्री जाति, 'ननकाना' गुरूधाम।।

|| 762 ||

हर कार्तिक की पूर्णिमा, जगत मनाता हर्ष।
गुरूनानक का जन्म दिन, उत्सव हो प्रतिवर्ष।।

|| 763 ||

'आदिगुरू' का हुआ था, ब्याह 'सुलखिनी' साथ।
'लक्ष्मीचन्द', 'श्रीचन्दजी', पुत्र-रत्न दो नाथ।।

|| 764 ||

छोड़ दिया गुरूदेव ने, जगहित निज घर-वार।
घोर तपस्या-त्याग से, मिला ज्ञान उपहार।।

|| 765 ||

सकल विश्व बन्धुत्व का, समरसता सन्देश।
सत्य-अहिंसा-प्रेम का, गुरूवर का उपदेश।।

|| 766 ||

वैर-द्वेष को छोड़कर, करो देश से प्रेम।
भाईचार, एकता, भरे विश्व में क्षेम।।

|| 767 ||

रूस-अरब-ईराक औ', तुर्की-तुर्किस्तान।
लंका-फारस-मिस्स्र हो, पहुँचे पाकिस्तान।।

|| 768 ||

तिब्बत-ब्रहमा-चीन में, भारत का उपहार।
बाँट दिया गुरूदेव ने, सकल विश्व में प्यार।।

|| 769 ||

बदल रही है सभ्यता, बदल रहे उपमान।
जो 'गुरूवाणी' को सुने, सुधर जाय इन्सान।।

|| 770 ||

विकट समय है विश्व पर, भय-विपदा-आतंक।
'गुरवाणी' को मानिए, चुभे न कोई डंक।।

आदि गुरू शंकराचार्य

|| 771 ||

जन्मे केरल प्रान्त में, 'आदि शंकराचार्य'।
धर्म निष्ठ माता बड़ी, नाम अम्बिका आर्य।।

|| 772 ||

सन् सात सौ अट्ठासी, औ' 'कालन्दी' ग्राम।
शिवजी के साधक हुए, पिता 'शिवगुरू' नाम।।

|| 773 ||

मिला पिता को पुत्र का, 'शंकर' रूप प्रसाद।
शिवजी-कृपा से मिटा, जीवन का अवसाद।।

|| 774 ||

जन्मजात 'शकर' हुए, अद्भुत प्रतिभावान।
बसी सरस्वती कण्ठ में, शिवजी का वरदान।।

|| 775 ||

'ब्रहम सत्य, जगती असत' 'ब्रहम-आत्मा एक'।
आदि शंकराचार्य ने, ज्ञान दिया अति नेक।।

|| 776 ||

वेद-शास्त्र के ज्ञान का, जगहित किया प्रसार।
'आदि गुरू' शंकर बने, कर संस्कृति प्रचार।।

|| 777 ||

जीवन भर करते रहे, जन-जन के हित काम।
कथनी-करनी एक-सी, कर्म किये निष्काम।।

|| 778 ||

निखिल सृष्टि के हित किए, ऐसे-ऐसे काम।
सदा रहेगा विश्व में, 'आदि गुरू' का नाम।।

|| 779 ||

सत्य-अहिंसा-कर्म का, दिया योग का ज्ञान।
जड़-चेतन के हित दिया, मानव को संज्ञान।।

|| 780 ||

दिया विश्व-कल्याण का, अद्‌भुत ही सन्देश।
बने स्वर्ग संसार यह, यदि माने उपदेश।।

|| 781 ||

उत्तर-दक्षिण-पूर्ब औ', पश्चिम किया प्रयाण।
चार पीठ दे आदि गुरू, किया महाप्रस्थान।।

|| 782 ||

जब तक मानव-सभ्यता, सूरज-चन्द्र जहाँन।
तब तक देगा रोशनी, 'आदि गुरू' का ज्ञान।।

गुरू रवीन्द्रनाथ ठाकुर

|| 783 ||

'जोड़ा साँको' कलकता, 'देवेन्द्रनाथ परिवार।
मिला पिता को पुत्र का, 'रवीन्द्रनाथ' उपहार।।

|| 784 ||

अल्प आयु में पुत्र ने, अध्ययन किया तमाम।
वेद-शास्त्र, साहित्य के, पढ़कर ग्रंथ ललाम।।

|| 785 ||

घूमे देश-विदेश में, धर्म-कर्म हितधाम।
ग्रंथ अनेकों ज्ञान के, रचे कमाया नाम।।

|| 786 ||

सर्व धर्म समभाव की, 'गीतांजली' मिशाल।
मानवता नित हो रही, पढ़-पढ़ बड़ी निहाल।।

|| 787 ||

ईश्वर कहते हैं जिसे, उसकी शक्ति असीम।
मानव उसका अंश है, लेकिन शक्ति समीम।।

|| 788 ||

ईश्वर बसता प्रेम में, गुरूवर का सन्देश।
सकल विश्व कल्याण कर, जन-सेवा उपदेश।।

|| 789 ||

'गीतांजली' ने विश्व का, अमित किया कल्यान।
'नौवल प्राइज' का मिला, उन्हें विश्व सम्मान।।

|| 790 ||

जीवन भर करते रहे, सृजन कर उपकार।
गुरूवर! हम भूलें नहीं, दिया ललित उपहार।।

मीराबाई

|| 791 ||

जन्म 'मेड़ता' में हुआ, राठौरों के वंश।
'मीरा जी' के पिता थे, 'रत्न सिंह' अवतंस।।

|| 792 ||

बचपन में ही हो गया, 'श्रीकृष्ण' से प्यार।
एक मात्र पति मानकर, सौंपा जीवन-हार।।

|| 801 ||

शैशब में माता गयीं, हुआ स्वर्ग में वास।
चाचा वीरमदेव ने, बुला लिया निज पास।।

|| 802 ||

श्री कृष्ण की साधना, व्रत-पूजा-सत्संग।
नृत्य-गान-सृजन करें, रग-रग शक्ति उमंग।।

|| 803 ||

चाचा-चाची-पिता ने, 'मीरा जी' का साथ।
थमा दिया मेवाड़ के, 'भोजराज' के हाथ।।

|| 804 ||

मीरा विधवा हो गयी, बहुत सहे उत्सर्ग।
उधर काल ने पिता को, भेज दिया हा! स्वर्ग।।

|| 805 ||

छोड़ दिया घर-वार सब, हुई साधना मग्न।
सृजन औ' सत्संग में, प्रति पल रही निमग्न।।

|| 806 ||

श्री कृष्ण की साधिके! सृजन-भक्ति महान।
मीरा जी की साधना, भूले नहीं जहाँन।।

सुभद्रा कुमारी चौहान

|| 807 ||

सन् उन्नीस सौ चार का, बसंत पंच की फाग।
जन्म 'सुभद्रा' का हुआ, भारत वर्ष 'प्रयाग'।।

|| 808 ||

कब बचपन, यौवन बना, शैशब गया सहर्ष।
बीत गये कब आयु के, पहले पन्द्रह वर्ष।।

|| 809 ||

'खण्डवा' मध्य प्रदेश के 'लक्ष्मण सिंह चौहान'।
ब्याह 'कुमारी' से बनी, 'सुभद्रा जी चौहान''।।

|| 810 ||

राजपूत-कुल बालिका, जन्म जात उत्साह।
राजनीति-साहित्य की, कठिन पकड़ ली राह।।

|| 811 ||

पति-पत्नी के बीच में, अद्भुत मन का मेल।
कई बार दोनों गये, आजादी-हित जेल।।

|| 812 ||

राष्ट्रप्रेम की भावना, रही नहीं खामोश।
देश भक्ति रचना रचीं, खूब बढ़ाया जोश।।

|| 813 ||

'झासी की रानी' रची, मनहर रची 'बंसत'।
'जलियांवाला बाग' का, वर्णन है जीवंत।।

|| 814 ||

धन्य! धन्य! वीरांगना, धन्य! देश-गुणगान।
राजनीति-साहित्य में, अमर रहे अवदान।।

डॉ॰ मुनीश्वर लाल चिन्तामणि, मॉरिशस के प्रति

|| 815 ||

कवे मुनीश्वर लाल का, 'चिन्तामणि उपनाम।
जन्म 'मॉरिशस' देश में, धन्य 'त्रियोले' ग्राम।।

|| 816 ||

मात-पिता-परिवार का, अमिट रहेगा त्याग।
लाल मुनीश्वर रूप में, अद्भुत दिया चिराग।।

|| 817 ||

शिक्षाहित साहित्य के, आये भारत देश।
हिन्दी का वैभव लिया, लौट गये निज देश।।

|| 818 ||

हिन्दी भाषा ज्ञान का, अतुलित किया प्रचार।
मॉरिशस में तब हुआ, हिन्दी ललित प्रसार।।

|| 819 ||

हिन्दी में कविता रचीं, विशद लिखा इतिहास।
लेख लिखे, लघु कथाएँ, बालकाव्य रस-रास।।

|| 820 ||

हिन्दी-हिन्दुस्तान को, सदा किया मनुहार।
सहज, सरल, निश्छल, मधुर, वाणी का उपहार।।

|| 821 ||

'हिन्दी लेखक-संघ' का, बना मॉरिशस धाम।
अमर मुनीश्वर लाल जी, 'चिन्तामणि' युग नाम।।

|| 822 ||

सारस्वत कर साधना, हिन्दी का उत्कर्ष।
धन्य! मुनीश्वर लाल जी, मॉरिशस आदर्श।।

|| 823 ||

अमर मुनिश्वर लाल जी, धन्य! सन्त! संवेश!
नमन! नमन! स्वर्गस्थ हे! नमन! मॉरिशस देश।।

|| 824 ||

भाव-सुमन श्रद्धांजलि, स्वीकारों कवि मीत!
अमर रहे माँ भारती, सदा रहेगी प्रीत।।

❁ ❁ ❁

डॉ० महेश 'दिवाकर' : एक परिचय

नाम : डॉ० महेश चन्द्र साहित्यिक नाम : 'दिवाकर'

जन्म तिथि : 25-1-1950

जन्म स्थान : ग्राम- महलकपुर मॉफी, देहली-राष्ट्रीय राजमार्ग, पो० पाकबड़ा (मुरादाबाद) उ०प्र०, भारत

पिता का नाम : स्व० ठाकुर कृपाल सिंह पंवार

माता का नाम : स्व० विद्यादेवी सिंह पंवार

पत्नी का नाम : डॉ० चन्द्रा पंवार, पी-एच०डी० (हिन्दी), एम०ए० (समाजशास्त्र); वी०एड०

शिक्षा : पी-एच.डी., डी.लिट.(हिन्दी), पी.जी. डिप्लोमा इन जर्नलिज्म

सम्प्रति : पूर्व अध्यक्ष, एसोशिएट प्रोफेसर एवं शोध निदेशक, पत्रकारिता, उच्च हिन्दी अध्ययन एवं शोध विभाग, गुलाबसिंह हिन्दू (स्नातकोत्तर) महाविद्यालय, चाँदपुर-स्याऊ (विजनौर) उ०प्र०, भारत

अनुभव : १४ सितम्बर १६७६ से २५ दिसम्बर १६७६ तक हिन्दी प्रवक्ता
: २८ दिसम्बर १६७६ से फरवरी १६८३ तक रू०वि०वि०, बरेली में शोध कार्य।
: १ मार्च सन् १६८३ से ३० जून २०१३ तक अध्यापन
: १६ मार्च, २०१३ से निरन्तर प्रोफेसर इमेरिटस (हिन्दी), जे॰जे॰टी॰ यूनि॰, राज॰।
: जुलाई, २०१४ से निरन्तर सरकारी संविदा प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद (उ०प्र०)

शैक्षिक-प्रशासनिक उपलब्धियाँ :

- **राष्ट्रीय सेवा योजना अधिकारी (१६८६ से १६६१)**
- **प्रौढ़ शिक्षा अधिकारी (१६८६ से १६६१)**
- **भारत स्काऊट गाइड कमान्डर (१६६० से १६६१)**
- **क्रीड़ा अधिकारी (१६६५ से १६६६)**
- **कॉलेज स्मारिका सम्पादक (१६६६ से २००६)**
- **मुख्य अनुशासक (२००४ से २००५)**
- **सहायक केन्द्राध्यक्ष, अतिरिक्त वरिष्ठ केन्द्राध्यक्ष, परीक्षा पर्यवेक्षक विश्वविद्यालय परीक्षा**
- **शोध निदेशक (हिन्दी विषय, १६६६ से निरन्तर)**
- **40 से अधिक शोध छात्रों को पी-एच०डी० उपाधि निर्देशन।**
- **2000 से अधिक छात्र-छात्राओं को लघुशोध प्रबंध में निर्देशन।**

- विश्वविद्यालय/महाविद्यालय की विविध प्रशासनिक/अकादमिक समितियों के सदस्य
- श्री जगदीश प्रसाद झबरीमल तिबरेवाला विश्वविद्यालय, राजस्थान द्वारा प्रोफेसर इमेरिट्स (हिन्दी) नामित- मार्च, सन् २०१३ से निरन्तर
- राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी के संचालक एवं आयोजक
- सांस्कृतिक समितियों में विभिन्न पदों पर कार्य
- लगभग १०० राष्ट्रीय (भारत) और अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों (विदेश) में प्रतिनिधित्व
- महाविद्यालय/विश्वविद्यालय और प्रान्तीय शिक्षक महासंघों में विभिन्न पदों पर कार्य।
- नॉर्वे, स्वीडन, ट्रिनिडाड एवं टुबैगो, उज़्बेकिसतान, मॉरिशस, नेपाल, श्रीलंका, सिंगापुर दुबई, आबूधाबी, फ्रांस, स्विटजरलैण्ड, इटली और आस्ट्रेलिया देशों की सांस्कृतिक यात्रा।

लेखन विधाएं : कविता, नयी कविता, गीत, मुक्तक, कहानी, निबन्ध, रेखाचित्र, संस्मरण, शोध, समीक्षा, सम्पादन, पत्रकारिता, यात्रावृत्त, अनुवाद, साक्षात्कार।

प्रकाशित कृतियाँ :

(क) मौलिक कृतियाँ :

(अ) शोध ग्रंथ

1. हिन्दी नयी कहानी का समाजशास्त्रीय अध्ययन (पी-एच०डी०) -१९९०
2. बीसवीं शती की हिन्दी कहानी का समाज-मनोवैज्ञानिक अध्ययन (डी०लिट्०) -१९९२

(आ) समीक्षा-ग्रंथ

3. सर्वेश्वर का कवितालोक -१९९४
4. डॉ० परमेश्वर गोयल की साहित्य साधना- २००५
5. बाबू बाल मुकुन्द गुप्त : जीवन और साहित्य- २००७
6. नवगीतकार डॉ० ओमप्रकाश सिंह : संवेदना और शिल्प - २०१०
7. साहित्यकार पं० रमेश मोरोलिया : व्यक्तित्व और कृतित्व - २०११
8. हिन्दी गीतिकाव्य के विविध सोपान - २०१२

(इ) साक्षात्कार संग्रह

9. भोगे हुए पल (वीस साक्षात्कारों का संग्रह)-२००५
10. आपकी बात : आपके साथ (इक्कीस साक्षात्कारों का संग्रह)-२००६

(ई) नयी कविता संग्रह

11. अन्याय के विरूद्ध -१९९७
12. काल भेद -१९९८

(उ) गीत संग्रह

13. भावना का मन्दिर -१९९८

14. आस्था के फूल -१९९९

(ऊ) मुक्तक-गीति संग्रह

15. भाव-सुमन-१९९६
16. पथ की अनुभूतियाँ -१९९७
17. विविधा -२००३
18. युवको! सोचो! -२००३
19. सूत्रधार है मौन! -२००७
20. रंग-रंग के दृश्य -२००९
21. नया भारत- २०१२
22. हिंदी की मुस्कान - २०१८
23. कभी खिलेंगे फूल - २०१८

(ए) खण्ड काव्य

24. वीरवाला कुँवरि अजबदे पंवार -१९९७, २०१४
25. महासाध्वी अपाला -१९९८
26. रानी चेन्नम्मा -२०१०
27. जय गुरुजी! जय शिवजी!! - २०११
28. समदर्शन- २०१२
29. त्यागमूर्ति रमाबाई- २०१४
30. वीरव्रता गजना वाल्मीकि-२०१५

(ऐ) यात्रा-वृत्त

31. सौन्दर्य के देश में - २००९
32. कर्मवीरों के देश में - २०११
33. श्रमजीवी के देश में - २०१२
34. संवेदना के देश में - २०१३
35. सदाचार के देश में - २०१३
36. दशानन के देश में - २०१४
37. अनुशासन के देश में- २०१४
38. संभावना के देश में- २०१५
39. वैभव के देश में - २०१६
40. सुरंगों के देश में - २०१६
41. ललित कला के देश में - २०१६
42. कैप्टन जेम्स कुक के देश में- २०१७

(ओ) संस्मरण एवं रेखाचित्र

43. धरती के अवतंस - २०१३
44. दिये यादों के - २०१५

(ख) सम्पादित अभिनन्दन ग्रंथ :

1. बाबू सिंह चौहान : अभिनंदन ग्रंथ ('६८)
2. प्रो० विश्वनाथ शुक्लः एक शिव संकल्प(अभिनंदन ग्रंथ) (२००२)
3. गंधर्व सिंह तोमर 'चाचा' : अभिनन्दन ग्रंथ (२०००)
4. प्रो० रामप्रकाश गोयल : अभिनन्दन ग्रंथ (२००१)
5. बाबू लक्ष्मण प्रसाद अग्रवाल : अभिनंदन ग्रंथ (२००७)
6. महाकवि अनुराग गौतम : अमृत महोत्सव ग्रंथ ('०६)
7. प्रो० हरमहेन्द्र सिंह बेदी : अभिनंदन ग्रंथ ('०६)
8. प्रवासी साहित्यकार सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' अभिनन्दन ग्रंथ ('०६)
9. प्रवासी साहित्यकार प्रो० हरिशंकर आदेश : अमृत महोत्सव ग्रंथ ('११)
10. मेजर शेर बहादुर सिंह : अमृत महोत्सव ग्रंथ ('१५)

(ग) सम्पादित स्मृति ग्रंथ :

1. स्व० डॉ० रामकुमार वर्मा : स्मृति ग्रंथ ('०१)
2. स्व० कैलाशचन्द्र अग्रवाल : जीवन और काव्य-सृष्टि ('६१)

(घ) सम्पादित कोश :

1. रूहेलखण्ड के स्वातंत्र्योत्तर प्रमुख साहित्यकार : संदर्भ कोश ('६६)
2. भारत की हिन्दी सेवी प्रमुख संस्थाएँ : संदर्भ कोश (२०००)
3. दोहा संदर्भ कोश-१ (२००७)
4. दोहा सन्दर्भ कोश-२ (२०११)
5. उत्तर प्रदेश के हिन्दी साहित्यकार सन्दर्भ कोश (२०११)
6. उत्तर प्रदेश के हिन्दी साहित्यकार सन्दर्भ कोश भाग-२ (२०१२)

(ङ) सम्पादित काव्य संकलन :

1. यादों के आर-पार ('८८)
2. प्रणय गंधा ('६०)
3. प्रेरणा के दीप ('६२)
4. अतीत की परछाइयाँ (कहानी संकलन)('६३)
5. नेह के सरसिज ('६४)
6. काव्यधारा ('६५)
7. वंदेमातरम् (देशभक्ति की गीति रचनाएँ)('६८)
8. नई शती के नाम ('०१)
9. हे मातृभूमि भारत! (देशभक्ति की गीति रचनाएँ)('०१)
10. आखर-आखर गंध ('०२)
11. क्या कह कर पुकारूँ? (भक्ति एवं आध्यात्मिक गीति रचनाएँ)('०३)

12. बाल-सुमनों के नाम ('६६)
13. समय की शिला पर (दोहा संकलन)('६७)
14. आजू-राजू ('६८)
15. नन्हें-मुन्नें ('६८)
16. भ्रष्टाचार के विरूद्ध (काव्य संकलन) (२०१२)
17. संस्कृति के कमल (२०१४)

(च) सम्पादित काव्य संकलन (विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम में समाहित) :

1. विद्यापति वाग्विलास ('८३) (एम०ए० प्रथम वर्ष हिन्दी के लिए)
2. विद्यापति सुधा ('८५) (एम०ए० प्रथम वर्ष हिन्दी के लिए)
3. एकांकी संकलन ('६०) (बी०ए० द्वितीय वर्ष हिन्दी के लिए)

(छ) सम्पादित काव्य संकलन (साहित्यकार विशेष)

1. नूतन दोहावली ('६४)
2. ओरे साथी! ('०६)
3. सर्वाधारा : पं०रमेश मोरोलिया ('१६)

(ज) सम्पादित विशिष्ट ग्रंथ

1. तुलसी वांगमय ('८६)
2. अभिव्यक्ति : समाज और वाङ्गमय ('०२)
3. हिन्दी पत्रकारिता : स्वरूप, आयामं और सम्भावना ('०६)
4. पर्यावरण और वांगमय ('०७)
5. हिन्दी का वैश्विक परिदृश्य ('१३)
6. हिन्दी : अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ ('१४)
7. हिन्दी : दशा और दिशा ('१४)
8. विश्व पटल पर हिन्दी ('१५)
9. देश-विदेश में हिन्दी ('१६)
10. हिन्दी का वैश्विक पर्यावरण ('१६)
11. हिन्दी की वैश्विक महत्ता ('१७)
12. हिन्दी की सामर्थ ('१८)

सम्मान/पुरस्कार :

1. काव्य लोक, जमशेदपुर द्वारा **'विद्यालंकार'** (97)
2. संस्कृति, साहित्यिक संस्था, मुरैना (म०प्र०) द्वारा **'संस्कृति-सम्मान-97'**
3. साहित्यकार परिषद, मुरादावाद द्वारा **'साहित्य शिरोमणि सम्मान-99'**।
4. विवेक गोयल **स्मृति साहित्य पुरस्कार- 1999** (बरेली)।

5. श्री साईंदास बालूजा साहित्य कला अकादमी, नयी दिल्ली द्वारा **प्रशस्ति-पत्र-सम्मान-2000**
6. साहित्य लोक, नाँगल (बिजनौर) द्वारा **साहित्य साधना सम्मान-2000**
7. दिल्ली साहित्य समाज द्वारा '**साहित्य गौरव- 2001**'
8. साहित्य साधना परिषद, मैनपुरी द्वारा '**कैलाशोदेवी स्मृति साहित्य सम्मान- 2001**'
9. संस्कार भारती, हापुड़ द्वारा '**स्व०महेशचन्द्र गुप्त स्मृति सम्मान-2001**'
10. भारतीय साहित्य परिषद, मुरादाबाद शाखा द्वारा '**साहित्यकार सम्मान- 2001**' महामहिम राज्यपाल, उ०प्र० **प्रो० विष्णुकान्त शास्त्री** के कर-कमलों द्वारा मुरादाबाद में प्रदत्त।
11. प्रकाश समाज सेवा-समिति, उ०प्र० लखनऊ द्वारा '**रुहेलखण्ड साहित्यकार सम्मान- 2001**' उ०प्र० सरकार द्वारा बरेली में प्रदत्त।
12. साहित्य प्रोत्साहन हिन्दी सेवी संस्था, लखनऊ '**स्व. भगवतीचरण वर्मा-स्मृति-सम्मान-2002**'
13. बैसवारा हिन्दी शोध संस्थान, रायबरेली द्वारा '**स्व० शिवमंगल सिंह 'सुमन' स्मृति साहित्य-सम्मान-2003**'
14. महाकौशल संस्कृति व साहित्य परिषद, मध्यप्रदेश द्वारा स्व० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी स्मृति '**साहित्य शिरोमणी सम्मान-2004**'
15. तुलसी पीठ, जबलपुर द्वारा स्व० सुनृत कुमार वाजपेयी स्मृति स्वरूप '**तुलसी सम्मान- 2004**'
16. कादम्बरी, जबलपुर द्वारा '**रामेन्द्र तिवारी स्मृति सम्मान - 2004**'
17. मानव भारती, हिसार द्वारा '**साहित्य शिरोमणि सम्मान- 2006**'
18. लायनेस क्लब, मुरादाबाद द्वारा हिन्दी दिवस पर '**शिक्षक एवं साहित्यकार सम्मान- 2007**'
19. परमार्थ साहित्यिक संस्था, मुरादाबाद द्वारा '**शकुन्तला प्रकाश गुप्ता स्मृति साहित्य सम्मान-2008**'
20. अहिन्दी हिन्दी भाषी लेखक संघ, दिल्ली द्वारा '**विशिष्ट सम्मान-2008**'
21. भारतीय-नार्वेजीय अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक फोरम (नॉर्वे) द्वारा '**विशिष्ट साहित्य सम्मान-2008**'
22. हिन्दी साहित्य एवं कला परिषद्, अमृतसर (पंजाब) द्वारा '**विशिष्ट सम्मान-2009**'
23. राष्ट्रीय हिन्दी परिषद, मेरठ द्वारा '**हिन्दी रत्न सम्मान-2009**'
24. अखिल भा०राष्ट्र भाषा विकास संगठन, गाजियावाद द्वारा '**वरिष्ठ राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान-2009**'
25. संस्कार भारती, मुरादाबाद द्वारा '**संस्कार भारती सम्मान-2011**'
26. हिन्दी साहित्य एवं कला परिषद, अमृतसर (पंजाब) द्वारा '**साहित्य शिरोमणि सम्मान-2011**'
27. भारतीय विद्या संस्थान, ट्रिनिडाड एवं टुबैगो (वैस्ट इण्डीज) द्वारा '**ट्रिनिडाड हिन्दी शिखर सम्मान- 2011**'
28. **चन्द्रावती फिल्मस्, मुंबई** द्वारा '**विशिष्ट साहित्य सम्मान- २०११**'
29. साहित्य मण्डल, श्रीनाथद्वारा (राजस्थान) द्वारा '**शिक्षक साहित्य मनीषी सम्मान-2012**'
30. आदर्श कला संगम, मुरादाबाद द्वारा, **प्रोफेसर महेन्द्र प्रताप स्मृति सम्मान- 2012**'
31. सृजन संस्था, रायपुर (छत्तीगढ़) द्वारा, ताशकन्द (उज़्बेकिसतान) में **सृजन श्री सम्मान- 2012**'

32. आधारशिला संस्था, (मॉरिशस, यू०के०) द्वारा, मॉरिशस में **विश्व हिन्दी सेवी सम्मान- 2012'**
33. अखिल भारतीय मंचीय कवि पीठ, उत्तर प्रदेश, द्वारा **'शारदा सम्मान - 2012'**
34. विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर (विहार) द्वारा **विद्यासागर** उपाधि **सम्मान- 2012'**
35. अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य कला मंच, द्वारा नेपाल में लाला जयनारायण स्मृति चेरिटेवल ट्रस्ट, चेन्नै द्वारा **विश्व हिन्दी सेवी सम्मान- 2013**
36. वैश्विक हिन्दी संस्थान, नागपुर (महाराष्ट्र) द्वारा श्रीलंका में **निराला सृजन सम्मान- 2013**
37. अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य कला मंच द्वारा सिंगापुर में **'साहित्यश्री सम्मान - 2014'**
38. सोनान्चल साहित्य संस्थान, देवगढ़ (सोनभद्र) उ०प्र० द्वारा **'प्रभाश्री सम्मान - 2014'**
39. धरोहर स्मृति न्यास (बिजनौर) उ०प्र० द्वारा **'नारी सशक्तिकरण सम्मान - २०१४'**
40. तमिलनाडु हिन्दी अकादमी (चन्नै) द्वारा **'साहित्य सम्मान- २०१४'**
41. एम०एच० (पी०जी) कॉलेज, मुरादाबाद द्वारा **'विशिष्ट साहित्य सम्मान- २०१५'**
42. भारतीय वांगमय पीठ कोलकाता द्वारा **'साहित्य शिरोमणि सम्मान- २०१५'**
43. अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कला मंच द्वारा दुबई में **'विश्व हिन्दी-सेवी सम्मान-2015'**
44. संस्कार भारती, पीलीभीत द्वारा महामहिम राज्यपाल द्वारा-**संस्कार भारती रत्न सम्मान- 2016'**
45. भारत विकास परिषद, उ०प्र० द्वारा-**भारत गौरव सम्मान-2016'**
46. आचार्य ज्यूलब्लॉख (फ्रांस) स्मृति **विश्व हिन्दी सेवी सम्मान-2016'**
47. भारत विकास परिषद, उ०प्र० द्वारा **विशिष्ट साहित्य सम्मान-२०१६**
48. नेपाल हिन्दी प्रतिष्ठान, नेपाल द्वारा **हिन्दी साहित्य सेवा सम्मान- २०१६**
49. साहित्यिक संघ, वाराणसी द्वारा **सेवक स्मृति साहित्यश्री सम्मान- २०१६**
50. राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा **साहित्य गौरव सम्मान- २०१७**
51. अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कला मंच द्वारा आस्ट्रेलिया में **महाकवि मैथिलीशरण गुप्त स्मृति हिन्दी सेवी सम्मान- २०१७**

अन्य साहित्यिक उपलब्धियाँ :

- **सदस्य**-केन्द्रीय हिन्दी सलाहकार समिति, भारत सरकार द्वारा नामित-**2016-2019** तक
- **संस्थापक अध्यक्ष** : अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कला मंच, भारतवर्ष
- **पूर्व संयुक्त सचिव**- हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद (राज्यपाल उ०प्र० द्वारा नामित) (13 दिसम्बर, 2001 से 13 दिसम्बर, 2004)
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : सृजन के विविध आयाम (400 पृष्ठ)** - 1995
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : सृजन के बीच (200 पृष्ठ)** - 1999
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : समीक्षा के निकष पर (720 पृष्ठ)** - 2011

- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : व्यक्ति और रचनाकार** शीर्षक पर **लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ से** एम० फिल० लघु शोध प्रबंध- 2003
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' का जीवन व साहित्य** शीर्षक पर **कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय से** एम०फिल०- 2003
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' की प्रकाशित कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन** शीर्षक पर **एम० जे० पी० रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली से** एम०ए० लघु शोध प्रबंध।
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में राष्ट्रीय चेतना** शीर्षक पर **एम० जे० पी० रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली से** एम० ए० लघु शोध प्रबंध
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में विविध स्वर** शीर्षक पर **एम० जे० पी० रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली से** एम० ए० लघु शोध प्रबंध
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : संवेदना व शिल्प** शीर्षक पर **एम० जे० पी० रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली से** एम० ए० लघु शोध प्रबंध
- **डॉ० महेश 'दिवाकर'** की कृति **'अन्याय के विरूद्ध'** में चित्रित संघर्ष एम०फिल० 2006-07, **कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र।**
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' : की साहित्य साधना** शीर्षक पर **कामराज मदुरै विश्वविद्यालय से** एम०फिल० - 2007
- **डॉ० महेश 'दिवाकर' का साहित्य : संवेदना और शिल्प** शीर्षक पर रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय में पी-एच०डी० प्रदत्त- सन् 2008
- **मुरादाबाद जनपद के साहित्यकारों के सन्दर्भ में डा० महेश 'दिवाकर' के साहित्य का अध्ययन** शीर्षक पर रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय में पी-एच०डी० प्रदत्त- सन् 2009
- **वीरबाला कुँवर अजबदे पंवार (खण्डकाव्य) पर गुरूनानकदेव विश्वविद्यालय, अमृतसर (पंजाब)** से एम०फिल-2008
- **डॉ० महेश 'दिवाकर'** की काव्य कृति **'रंग-रंग के दृश्य : कथ्य और शिल्प' कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र** से एम०फिल० 2008-09.
- **डॉ० महेश 'दिवाकर'** के काव्य संग्रह **'सूत्रधार है मौन'** का मूल्यांकन, दयालबाग शिक्षण संस्थान (डीम्ड यूनिवर्सिटी), आगरा से लघु शोध प्रबंध 2009
- **'वीरबाला कुँवर अजबदे पंवार'** तथा **'महासाध्वी अपाला'** खण्डकाव्यों का समग्र अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, **कुमायूँ विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा,** २००९-२०१०.

- ❖ आकाशवाणी और दूरदर्शन से समय -समय पर अनेक रचनाएँ प्रसारित।
- ❖ राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों में आयोजित अनेकशः संगोष्ठियों और सेमिनारों में विविध विषयों पर व्याखान।
- ❖ देश-विदेश की अनेकशः पत्र-पत्रिकाओं और काव्य संकलनों में समय-2 पर विविध विधाशः रचनाएँ प्रकाशित।
- ❖ **नार्वे और स्वीडन** में अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सेमीनार - ५ से १६ दिसम्बर २००८ तक।
- ❖ **ट्रिनिडाड एवं टुबैगो** में अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सेमीनार - ८ से १५ अगस्त २०११ तक।
- ❖ **ताशकन्द-समरकन्द (उज़्बेकिस्तान)** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, २४ जून से १ जुलाई २०१२ तक।
- ❖ **मॉरिशस** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, २७ अक्टूबर से ०३ नवम्बर २०१२ तक।
- ❖ **नेपाल** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा- ८ जून, २०१३ से ११ जून २०१३ तक
- ❖ **श्रीलंका** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, ८ नवम्बर से १३ नवम्बर २०१३ तक।
- ❖ **सिंगापुर** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, २ फरवरी से ७ फरवरी २०१४ तक।
- ❖ **तमिलनाडु** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा; ८ से १५ अक्टूबर २०१४ तक।
- ❖ **दुबई-आबूधाबी** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, ५ जून से ६ जून २०१५ तक।
- ❖ **फ्रांस-स्विटजरलैण्ड-इटली** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, १० से २० जून, २०१६ तक
- ❖ **आस्ट्रेलिया** की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्रा, १० जून से १८ जून २०१७ तक।

सम्पर्क :

डॉ० महेश 'दिवाकर', डी०लिट्०

'सरस्वती भवन', १२-मिलन विहार, दिल्ली रोड, मुरादाबाद (उ०प्र०) पिन - 244001

मोबाईल : **9927383777, 9837263411, 9319696216**

E-mail: **mcdiwakar@gmail.com**
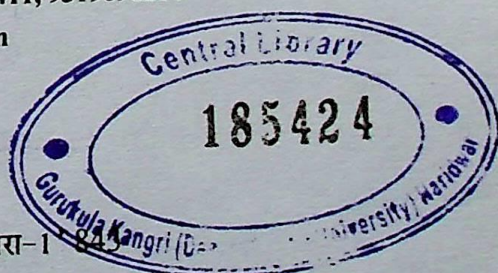
डॉ. महेश 'दिवाकर'
डी-लिट्०

विश्व पुस्तक प्रकाशन
नई दिल्ली